कर्नाटक में हिन्दी का प्रचार और प्रसार

डॉ. अंजलि मुकुंद कागतिकर



प्रकाशक :
श्रीमती एस. जी. केण्डदमठ
गंगा कावेरी पब्लिशिंग हाऊस
डी. ३५/७७, जंगमवाड़ी मठ
वाराणसी - २२१ ००१
दूरभाष : (०५४२) २४५१९३६

ISBN : 81-85694-60-5

कर्नाटक में हिन्दी का प्रचार और प्रसार

प्रथम संस्करण २००९

मूल्य : रु. ४००.००

मुद्रक
मित्तल ऑफसेट
कौशलेश नगर
सुन्दरपुर, वाराणसी

अनुक्रमणिका



भूमिका

हिन्दी लगभग एक हज़ार वर्षों से भारत की सम्पर्क भाषा, राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा है। हिन्दी के माध्यम से भारत की संस्कृति, साहित्य, तत्त्वचिंतन, आध्यात्मिक साधना, जीवन-दर्शन, सामाजिक मान्यताओं, पारिवारिक, सामाजिक तथा विभिन्न राष्ट्रीय संगठनों में सतत प्रवाहित होने वाले त्याग, निष्ठा एवं साधना से पूर्ण जिन आदर्शात्लिक तत्त्वों का उद्घाटन किया गया है, वे भारत के विभिन्न प्रान्तों, भाषाओं एवं संप्रदायों को सैकड़ों वर्षों से एक सूत्र में आबद्ध करते रहे हैं।

वास्तव में हिन्दी उन प्राचीन राष्ट्रीय भाषाओं की उत्तराधिकारिणी है जिन्हें क्रमशः वैदिक, संस्कृत, प्राकृत, पालि और अपभ्रंश के नाम से संबोधित किया जाता है। यद्यपि हिन्दी की दीर्घकालीन परंपरा तथा समन्वयवादी प्रकृति का प्रभाव प्रारंभ से भारतीय जन जीवन तथा प्रशासन पर पड़ना स्वाभाविक था जिसके परिणामस्वरूप उसे सैकड़ों वर्षों से सम्पर्क भाषा, राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा की संज्ञा प्रदान की गयी है।

किसी भी लोकतान्त्रिक देश में जनता और सरकार के बीच लोकभाषा ही संपर्क भाषा के रूप में सार्थक कार्य करती है। बहुभाषी देश की संप्रेषण व्यवस्था में यह संपर्क भाषा ही ऐसी होती है जो राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा दोनों भूमिकाएँ निभाने में समर्थ होती है। इसीलिए संविधान निर्माताओं ने संविधान में देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी को संघ की राजभाषा का सम्मान दिया। हिन्दी को सम्मान इसलिए दिया गया क्योंकि भारत में इस भाषा को बोलने एवं समझने वाले अन्य भाषाओं से अधिक हैं। मातृभाषा के रूप में इसका व्यवहार क्षेत्र अन्य भाषाओं की अपेक्षा सर्वाधिक है और दूसरी भाषा के रूप में इसे बोलने वालों की संख्या भी सबसे ज्यादा है। हिन्दी भाषा खड़ी बोली प्रदेश से पनप कर और मानवीकृत होकर अपनी सीमा को पार कर क्षेत्र निरपेक्ष और सार्वदेशिक भाषा बन गयी है। शिक्षा, प्रेस आदि से इसका रूप काफ़ी समृद्ध और स्थिर हो गया है। इसमें अपनी बोलियों के साथ-साथ अन्य भारतीय एवं विदेशी भाषाओं के शब्द और अभिव्यक्तियाँ काफ़ी मात्रा में समा गयी हैं। हिन्दी का प्रयोग विभिन्न कार्यक्षेत्रों में होने लगा है और इसकी अपनी

पारिवारिक शब्दावली विकसित हो रही है। इस प्रकार हिन्दी का शब्द भण्डार विभिन्न भाषाओं के प्रभाव को ग्रहण करते हुए समृद्ध और सशक्त होता जा रहा है।

आधुनिक सन्दर्भ में हिन्दी का प्रयोग मुख्यतः तीन अर्थों में हो रहा है :-

(१) भौगोलिक अर्थ में,
(२) साहित्यिक अर्थ में, और
(३) प्रयोग-विस्तार के अर्थ में,

भौगौलिक अर्थ में हिन्दी का प्रयोग हिन्दी भाषी प्रदेशों में बोली जाने वाली अट्ठारह बोलियों के क्षेत्र के रूप में हो रहा है। यह बोलियाँ हैं- खड़ी बोली, ब्रजभाषा, अवधी, भोजपुरी, हरियाणवी, कन्नौजी, मैथिली, बघेली, छत्तीसगढ़ी, मगही, बुंदेली, जयपुरी, मारवाड़ी, मेवाती, मालवी, गढ़वाली, कुमाऊनी एवं हिमाचली।

साहित्यिक अर्थ में हिन्दी का प्रयोग काव्य विधा में खड़ी बोली, ब्रजभाषा, अवधी, मैथिली तथा राजस्थानी के रूप में माना गया है। इन बोलियों में पद्य और गद्य काव्य की जो रचना हुई है उसे हिन्दी साहित्य के रूप में स्वीकार किया गया है।

प्रयोग-विस्तार के अर्थ में यह खड़ी बोली से विकसित और मानक भाषा है, जिसका प्रयोग भारत संघ की राजभाषा के रूप में हो रहा है। अन्य बोलियों में लोक साहित्य की रचना हो रही है, इस दृष्टि से हिन्दी व्यापक अर्थ में क्षेत्र-निरपेक्ष और सार्वदेशिक भाषा है।

हिन्दी का क्षेत्र बिहार, झारखंड, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ तथा दिल्ली तक फैला हुआ है। इन्हें हिन्दी भाषिक क्षेत्र कहा जाता है। इन प्रदेशों की सीमाएँ पश्चिम-बंगाल, उड़िसा, महाराष्ट्र, गुजरात और पंजाब के राज्यों के साथ जुड़ी हुई हैं।

हिन्दी महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, अण्डमान-निकोबार, और गोवा प्रदेशों में दूसरी भाषा के रूप में भी बोली जाती है। इसके अतिरिक्त हिन्दी भाषा दक्षिण भारत के आन्ध्र-प्रदेश, तमिलनाडु, केरल और कर्नाटक राज्यों में भी बोली जाती है। इस प्रकार हिन्दी न केवल प्रथम भाषा के रूप में बोली जाती है बल्कि हिन्दीतर भाषी प्रदेशों में भी इशके बोलने वालों की संख्या अधिक है। इसका व्यवहार क्षेत्र इतना व्यापक हो गया है कि भारत के अधिकांश क्षेत्रों में हिन्दी का प्रयोग सम्पर्क भाषा के रूप में हो रहा है।

अपनी ऐतिहासिक परंपरा, जनपदीय बोलियों से लगाव, विकासशीलता और आधुनिकता के साथ-साथ सार्वदेशिकता के कारण हिन्दी का व्यापक रूप उभर कर आया है, जो राष्ट्रीय स्तर पर ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी अपनी गरिमा प्रदान करता है। इस संदर्भ में हिन्दी के तीन स्वरूप स्पष्ट रूप से दिखायी देते हैः-

(१) जनपदीय स्वरूप,
(२) राष्ट्रीय स्वरूप, और
(३) अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप ।

जनपदीय भाषा के रूप में हिन्दी अलग-अलग बोलने वालों के लिए अलग पहचान बनाये रखने का सशक्त साधन है। हिन्दी भाषी राज्य में लोग अपने-अपने क्षेत्रों में अपनी बोली का प्रयोग मातृभाषा के रूप में करते हैं। अन्य बोली बोलने वालों के साथ वे इसका प्रयोग प्रथम भाषा के रूप में करते हैं। प्रथम भाषा वह भाषा होती है जिसका व्यवहार व्यक्ति सबसे अच्छी तरह से करता है।

हिन्दी का दूसरा स्वरूप राष्ट्रीय है। भारत में विभिन्न भाषाओं के बोलने वाले लोग अपास में हिन्दी का प्रयोग प्रायः दूसरी भाषा के रूप में करते हैं। इसीलिए राष्ट्रीय सन्दर्भ में हिन्दी के दो रूप दिखायी देते हैं- (१) लोकभाषा के रूप में (२) राजभाषा के रूप में। लोक भाषा के रूप में हिन्दी-हिन्दीतर भाषियों द्वारा प्रमुख आद्यौगिक केन्द्रों, रेलवे स्टेशनों, ऐतिहासिक स्थानों, पर्यटन केन्द्रों, तीर्थ-स्थलों आदि जगहों पर प्रयुक्त की जाती है। इसके साथ ही हिन्दी सिनेमा और दूरदर्शन में भी हिन्दी का लोकभाषा रूप हिन्दीतर भाषा-भाषियों में निखर कर आया है। इसके व्यापक प्रयोग के कारण बम्बईया हिन्दी, पंजाबी हिन्दी, कलकतिया हिन्दी, मद्रासी हिन्दी, हैदराबादी हिन्दी जैसे अनेक रूप उभर कर आये हैं।

राजभाषा के रूप में हिन्दी राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से समूचे राष्ट्र की वाणी है, जो भारत को एकता के सूत्र में बाँधने का कार्य कर रही है। सरकारी काम-काज की भाषा के रूप में यह सरकार और जनता को मिलाती है। अन्तर प्रादेशिक सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी समूचे भारत की सामाजिक अस्मिता का आधार बन गयी है और भारत के अन्य भाषा-भाषी वर्गों के परस्पर बढ़ रहे निरंतर संपर्क से अन्तर भारतीय स्वरूप धारण करती जा रही है और अन्य भारतीय भाषाओं से शब्द-सम्पदा और भाषिक प्रयोगों को अपने अन्दर समेटती जा रही है।

अन्तर्राष्ट्रीय सन्दर्भ में हिन्दी का प्रयोग भारत के बाहर भी हो रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में इसके कई रंग एवं पक्ष उभर कर आये हैं। इनमें दो पक्ष मुख्य हैं– (१) सामाजिक–सांस्कृतिक अस्मिता का पक्ष, (२) प्रयोजनपरक पक्ष। नेपाल, बांग्लादेश, श्रीलंका, कम्बोडिया, अफगानिस्तान आदि के बड़े–बड़े नगरों में हिन्दी समझने वाले लोग काफी संख्या में मिल जाते हैं, जहाँ यह भाषा सामाजिक–सांस्कृतिक प्रेरणा की भूमिका निभाती है। मॉरीशस, फिजी, सूरीनाम, त्रिनिदाद, गुयाना आदि दूरस्थ देशों में हिन्दी का प्रयोग काफी होता है। इन देशों में भारतीय मूल के लोग रहते हैं, जिनके पूर्वज भारत से मज़दूर के रूप में काम करने गये थे। यह लोग हिन्दी का प्रयोग न केवल भाषा व्यवहार में लाते हैं, बल्कि उसे अपनी संस्कृति का एक अंग भी मानते हैं। यहाँ हिन्दी ऐतिहासिक सम्बन्धों और सामाजिक–सांस्कृतिक अस्मिता की भाषा बन रही है। इन देशों में हिन्दी जन–सम्पर्क और सांस्कृतिक अनुष्ठानों की भाषा का रूप धारण कर रही है।

इसके अतिरिक्त जापान, कोरिया, चीन, रूस, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, रोमानिया, अमेरिका आदि विभिन्न देशों के कई विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन–अध्यापन हो रहा है, जो इसका प्रयोजनपरक पक्ष है। वस्तुतः हिन्दी के इस अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप में हिन्दी का क्षेत्र व्यापक होता जा रहा है जो इसे विश्व भाषा का रूप प्रदान कर रहा है। हिन्दी के इन तीनों संदर्भों के कारण यह विभिन्न बोलियों और भाषाओं के रूप–रंग, स्पर्श–गंध तथा ध्वनि–रस से अपनी अलग पहचान बना रही है।

इस ग्रन्थ का प्रथम अध्याय है– "हिन्दी का प्रचार और प्रसार"। इसके अन्तर्गत हिन्दी की उत्पत्ति और विकास; विश्व में हिन्दी–विदेशों में पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी का प्रचार और प्रसार, विश्व हिन्दी सम्मेलन; भारत में हिन्दी, संविधान में हिन्दी, संविधान के राजभाषा संबंधी अनुच्छेद तथा धाराएँ, हिन्दीं के प्रयोग संबंधी राष्ट्रपति के आदेश, राजभाषा आयोग (१९५५), संसदीय राजभाषा समिति, संघीय राजभाषा के संबंध में राष्ट्रपति का आदेश (१९६०), राजभाषा अधिनियम (१९६३), राजभाषा के संबंध में समिति, केन्द्रीय अधिनियमों आदि का प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद, कतिपय दशाओं में राज्य अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद, उच्च न्यायालयों के निर्णयों आदि में हिन्दी या अन्य राजभाषा का वैकल्पिक प्रयोग, नियम बनाने की शक्ति, कतिपय उपबंधों का जम्मू–कश्मीर पर लागू न होना, राजभाषा नियम, राज्यों और केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों से भिन्न कार्यालयों के

साथ पत्रादि, केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि; दक्षिण भारत में हिन्दी, तमिलनाडु में हिन्दी, आन्ध्र में हिन्दी एवं केरल में हिन्दी जैसे विषयों पर विवेचना की गयी है।

ग्रन्थ का द्वितीय अध्याय है– "गाँधीजी और हिन्दी"। इस अध्याय में गाँधीजी की भाषा नीति अर्थात् हिन्दी से संबंधित गाँधीजी के विचार तथा गाँधीजी का मातृभाषा पर प्रेम आदि का विश्लेषण किया गया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ का तृतीय अध्याय है– "कर्नाटक का भाषिक भूगोल और इतिहास"। इसमें कर्नाटक का भौगोलिक लक्षण; कर्नाटक शब्द की उत्पत्ति एवं उसकी महत्ता; कन्नड़ का भाषिक भूगोल; अन्य भाषाओं द्वारा प्रभावित कन्नड़; दक्खिनी हिन्दी; दक्खिनी के प्रमुख कवि एवं उनकी रचना; दक्खिनी के उद्भव और विकास की परिस्थितियाँ; दक्खिनी के विकास की अवस्थाएँ; राजनीतिक अवस्था; धार्मिक अवस्था; सामाजिक अस्वस्था; दक्खिनी और मुसलमानों का संबंध; दक्खिनी और हिन्दी का संबंध; दक्खिनी और क्षेत्रीय भाषाओं का संबंध तथा कर्नाटक के संबंध में दक्खिनी हिन्दी जैसे विषयों को प्रस्तुत किया है।

ग्रन्थ का चतुर्थ अध्याय है– "कर्नाटक में हिन्दी का प्रयोग और प्रसार"। इसके अन्तर्गत कर्नाटक में हिन्दी; हिन्दी से संबंधित कर्नाटक सरकार के नियम; कर्नाटक में हिन्दी प्रचार संस्थाएँ– मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद्, कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति, कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा (धारवाड़); कर्नाटक में हिन्दी प्रचार के अन्य स्थान एवं संस्थाएँ– मैसूर राजघराने द्वारा हिन्दी प्रचार, दक्षिण कन्नड़ प्रदेश में हिन्दी प्रचार, बैंगलोर की अन्य संस्थाओं द्वारा हिन्दी प्रचार, राष्ट्रभाषा प्रचार सभा (चामराजपेट), हिन्दी प्रचार स्थायी समिति (बैंगलोर), कर्नाटक स्वैच्छिक हिन्दी संस्था संघ (बैंगलोर), हिन्दी साहित्य परिषद् (बैंगलोर), भारतीय संस्कृत विद्यापीठ, आदर्श हिन्दी विद्यालय (बैंगलोर); बेलगाँव में हिन्दी प्रचार; हिन्दी शैक्षणिक सेवा समिति (बिजापुर), कर्नाटक हिन्दी प्रचार सभा (गुलबर्गा), हिन्दी प्रचार सभा (कोडगु), हिन्दी प्रचार सभा (तुमकूर), कर्नाटक के बैंकों में हिन्दी, कॉर्पोरेशन बैंक, मण्डल कार्यालय, हुबली; मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालय, हुबली में हिन्दी का प्रयोग एवं प्रसार; कर्नाटक के शैक्षणिक संस्थाओं में हिन्दी, स्कूलों में हिन्दी, कॉलेजों में हिन्दी, विश्वविद्यालयों में हिन्दी तथा हिन्दी शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण जैसे महत्त्वपूर्ण विषयों को प्रस्तुत किया गया है।

ग्रन्थ का पाँचवा अध्याय है– "कर्नाटक में जनसंचार माध्यमों द्वारा हिन्दी का प्रचार एवं प्रसार"। इसके अन्तर्गत जनसंचार का माध्यम– पत्रकारिता, पत्रकारिता का विकास, पत्रकारिता का अर्थ एवं परिभाषा, पत्रकारिता का उद्देश्य, पत्रकारिता का क्षेत्र, कर्नाटक में पत्रकारिता की शुरुआत, कर्नाटक में हिन्दी पत्रकारिता, पत्रिकाओं का संक्षिप्त विवरण, कर्नाटक से प्रकाशित कुछ राजभाषा हिन्दी की गृह पत्रिकाओं का विवरण, कर्नाटक के रेडियो कार्यक्रमों में हिन्दी का प्रयोग एवं प्रसार, आकाशवाणी धारवाड़ में हिन्दी का प्रयोग एवं प्रसार, आकाशवाणी केन्द्र का हिन्दी अनुभाग एवं उसका कार्यक्षेत्र, हिन्दी में प्रसारित कार्यक्रमों का विवरण, हिन्दी के कार्यान्वयन के लिए विभिन्न बैठकों का आयोजन, हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन, हिन्दी दिवस, हिन्दी सप्ताह का आयोजन, प्रशिक्षण की स्थिति, प्रोत्साहन योजनाएँ, पुस्तकालय, कर्नाटक में दूरदर्शन द्वारा हिन्दी का प्रचार और प्रसार से संबंधित जानकारियाँ इस अध्याय में प्रस्तुत की गयी है।

ग्रन्थ का छठवाँ अध्याय है– "कर्नाटक में मौलिक एवं अनूदित साहित्य द्वारा हिन्दी का प्रचार-प्रसार"। इस अध्याय के अन्तर्गत कर्नाटक में जितने भी सन्त, महात्मा, साहित्यकार हुए हैं उनके द्वारा रचित हिन्दी मौलिक कृतियों तथा हिन्दी से कन्नड़ एवं कन्नड़ से हिन्दी में अनूदित ग्रन्थों का जिक्र किया गया है।

ग्रन्थ का सातवाँ अध्याय है– "उपसंहार"। इसमें ग्रन्थ का सार तत्व रुपायित है। इस ग्रन्थ के उपसंहार में ग्रन्थ का निष्कर्ष निरुपित है। कर्नाटक में हिन्दी का प्रचार और प्रसार का कार्य कुल मिलाकर संतोषजनक है फिर भी इसमें और सुधार लाने के लिए कुछ सुझाव दिए गये हैं । इस ग्रन्थ के सात अध्यायों के उपरांत परिशिष्ट एवं सहायक ग्रन्थ सूची दी गयी है।



आभार

सर्वप्रथम मैं सुश्री डॉ. भारती हिरेमठ, प्रधानाचार्या, के.एस.जे. कला एवं एस.एम.एस. वाणिज्य महिला महाविद्यालय, धारवाड़ को धन्यवाद देती हूँ। जिन्होंने मेरे इस कार्य को पूर्ण करने में अमूल्य सहयोग और सुझाव दिया है, उनकी इस सहायता को शब्दों में प्रकट नहीं किया जा सकता।

कर्नाटक विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्रो. टी.वी. कट्टिमनी, डॉ. एस.एस. मुम्मिगट्टी, डॉ. यू.आर. मसूति एवं डॉ. पी.वी. भट्ट की भी मैं आभारी हूँ।

कर्नाटक के वयोवृद्ध हिन्दी के मूर्धन्य विद्वान प्रो. ना. नागप्पा की भी मैं आभारी हूँ। प्रो. नागप्पा से जब मैं बैंगलोर में उनके घर (सन् २००५) में मिलने गयी तब वे ९४ वर्ष के थे उसके बावजूद वे सहर्ष मुझसे मिले और उन्होंने अपना बहुमूल्य समय देकर कर्नाटक में हिन्दी की प्रचार और प्रसार से संबंधित बहुत सी जानकारियाँ प्रदान की तथा साथ ही कुछ महत्त्वपूर्ण पुस्तकें भी मुझे भेंट की। ऐसे विद्वान् से मुझे मिलने का जो अवसर प्राप्त हुआ वह मैं कभी नहीं भूल सकती।

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा– कर्नाटक शाखा, धारवाड़ के तत्कालीन हिन्दी के प्रो. दिलीप सिंह के प्रति भी मैं आभार प्रकट करती हूँ जिन्होंने दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा से संबंधित बहुत सी जानकारियाँ दीं।

डॉ. तिप्पेस्वामी, पूर्व प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, हिन्दी अध्ययन विभाग, मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर इनके प्रति भी आभारी हूँ क्योंकि मैं जब उनसे मिलने मैसूर गयी थी तब उन्होंने मेरे ग्रन्थ से संबंधित विषय पर मुझसे विशेष चर्चा की और कुछ सुझाव भी दिये। इस विषय से संबंधित कुछ पुस्तकें, कुछ पत्र–पत्रिकाएँ भी मुझे दिये जिसके लिए मैं उनका दिल से आभार व्यक्त करती हूँ।

मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् (बेंगलूर) के प्रधान सचिव डॉ. बी. रामसंजीवय्या, कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति (बेंगलूर) की प्रधान सचिव सुश्री बी.एस. शांताबाई इन दोनों को भी मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करती हूँ जिन्होंने अपनी–अपनी संस्थाओं से संबंधित महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ एवं सामग्री मुझे उपलब्ध करायी।

कर्नाटक विश्वविद्यालय ग्रन्थालय (धारवाड़), गुलबर्गा विश्वविद्यालय ग्रन्थालय (गुलबर्गा), मैसूर विश्वविद्यालय ग्रन्थालय (मैसूर), बेंगलूर विश्वविद्यालय ग्रन्थालय (बेंगलूर), काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ग्रन्थालय (वाराणसी) दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा ग्रन्थालय (धारवाड़) के ग्रन्थालयाध्यक्षों को मैं अपना धन्यवाद देती हूँ जिन्होंने अपने-अपने ग्रन्थालयों की सुविधाएँ मुझे प्रदान की।

मैं अपने आदर्श माता एवं पिता श्रीमती सुशीला केंडदमठ एवं डॉ. जी.सी. केंडदमठ की ऋणी हूँ, जिनके आशीर्वाद से मैं इस कार्य को पूरा कर सकी। मेरे भाई श्री राजशेखर केंडदमठ के प्रति भी मैं आभारी हूँ जो समय-समय पर इस कार्य को पूर्ण करने में मुझे प्रोत्साहित करते रहे। साथ ही मैं अपने पति श्री मुकुंद कागतिकर एवं मेरे पूज्यनीय सास-श्वसुर श्रीमती मंगल एवं श्री जी.एस. कागतिकर इन सभी को नमन करती हूँ जिन्होंने इस कार्य को पूर्ण करने में मुझे प्रोत्साहित किया।

अन्ततः मैं उन सभी व्यक्तियों एवं संस्थाओं के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ जिनसे मेरा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इस ग्रन्थ की पूर्णता में रञ्चमात्र भी सहायता मिली है। उन रचनाओं के रचनाकारों के प्रति भी मेरा विनम्र आभार है जिनकी रचनाओं का उपयोग इस ग्रन्थ में हुआ है। यह मेरी प्रथम कृति होने के कारण कुछ त्रुटियाँ या भूलें हो जानी स्वाभाविक है, सुधी जनों से क्षमा प्रार्थी हूँ तथा विद्वानों से सुझावों की अपेक्षा करती हूँ जिनको अगली आवृत्ती में सुधार कर सम्मिलित करने की प्रयास करूँगी।

अंजलि मुकुंद कागतिकर



अध्याय १

हिन्दी का प्रचार और प्रसार

१.१ हिन्दी की उत्पत्ति और विकास

इस अध्याय में यह उल्लेख करना उचित समझा गया कि हिन्दी का प्रचार और प्रसार हिन्दी क्षेत्र के अलावा अन्य देशों में व भारत के अहिन्दी प्रान्तों में कितना हुआ है। उपरोक्त विषय की गहराई में जाने से पहले यह जानना उचित होगा कि हिन्दी की उत्पत्ति और विकास कब और किस तरह हुआ। हिन्दी शब्द का प्रयोग दो अर्थों में होता रहा है– एक तो हिन्दुस्तान के निवासी के अर्थ में दूसरा हिन्दी भाषा के अर्थ में। ईरान के बादशाह नौशेखाँ (५३१-५७८ ई.) के आदेश से किये गये *पंचतन्त्र* पर आधारित *'कर्कटक'* और *'दिमनक'* के अनुवाद *'कलीला'* व *'दिमना'* में लिखा गया है कि यह अनुवाद 'जबान-ए-हिन्दी' में किया गया है। यहाँ हिन्दी का अर्थ 'हिन्दुस्तान' से है। जबान-ए-हिन्दी अर्थात् हिन्दुस्तान की भाषा। अमीर खुसरो ने हिन्दी का प्रयोग 'हिन्दुस्तानी मुसलमानों' के अर्थ में किया है। इकबाल ने भी हिन्दी का प्रयोग देश के अर्थ में ही किया है। एक भाषा-विशेष के अर्थ में 'हिन्दी' का अर्थ है– 'हिन्दुस्तान की भाषा'। जैसे– 'जापान की भाषा जापानी', 'रूस की भाषा रूसी'। इसके अतिरिक्त इस शब्द का प्रयोग उत्तर भारत की भाषा के संदर्भ में होता है।[१]

१४ सितम्बर १९४९ भारतीय प्रजातंत्र के लिए अपूर्व सफलता का दिन था, कारण, इसी दिन हिन्दी का संघ की राजभाषा बनना। प्राचीन काल में केन्द्रीय प्रशासन में संभ्रान्त वर्ग की भाषा संस्कृत का वर्चस्व था। मध्ययुग में केन्द्रीय प्रशासन का कार्य फ़ारसी में होने लगा और अंग्रेजी राज की स्थापना के कुछ दिन बाद फ़ारसी की जगह अंग्रेजी ने ले ली। लेकिन जिस देश में भाषा की कोई गिनती न हो अर्थात् जहाँ अनेक भाषाएँ बोली जाती हों, जहाँ सन् १८५३ से ही मैकाले और उनके बंधुओं के प्रयासों के कारण शिक्षा के ढाँचे पर अंग्रेजी ऐसी हावी हो गयी थी

कि विद्यार्थी आमतौर पर ज्यादा से ज्यादा समय अंग्रेजी सीखने में लगाते थे[२] और जो पढ़कर निकलते थे वे सिर्फ कहने को भारतीय रह गये क्योंकि वे खुद रुचि, मत, आचार और विचारों से अंग्रेज बन जाते थे[३] ऐसे देश के लिए सितम्बर १९४९ की उपलब्धि निश्चय ही बेजोड़ मानी जायेगी।

गौर करने वाली बात यह है कि आखिर हिन्दी का उद्भव कैसे हुआ इसके विकास में वे कौन सी दशाएँ एवं दिशाँए थीं कि हिन्दी इस स्तर तक पहुँची कि संघ की राजभाषा बनने का गौरव प्राप्त कर सकी? हिन्दी न तो सबसे समृद्ध है और न ही प्राचीन। भारतवर्ष में ऐसी अनेक भाषाएँ हैं जो हिन्दी से अधिक समृद्ध और प्राचीन हैं। तब क्यों अन्य भाषाओं को जानने वालों ने हिन्दी को संघ की राजभाषा के रूप में सहर्ष स्वीकार किया। यह कहना गलत नहीं होगा कि हिन्दी देश के बहुसंख्यकों की मातृभाषा है, क्योंकि यह विंध्याचल के उत्तर में स्थित नौ राज्यों में बोली जाती है और अधिकांश ऐसे राज्यों में जहाँ यह नहीं बोली जाती है, काफी लोग इसे समझते हैं, लेकिन राजभाषा के रूप में हिन्दी को अपनाने का एकमात्र यही कारण नहीं था। इस निर्णय के आधार औंर औचित्य को जानने के लिए अतीत में झाँकना होगा। भारत में प्राचीनकाल से निर्बाध गति से प्रवहमान ऐतिहासिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं में गहराई से उतरना होगा और भारतीय भाषाओं की आपसी घनिष्ठता और सादृश्य को समझना होगा, जिसकी वजह से स्वतंत्रता के सदियों पहले ही हिन्दी देश की संपर्क भाषा बन चुकी थी।

हमारे पूर्वज अपने कष्टों, विपत्तियों और सफलताओं के रिकार्ड रखने में बेहद उदासीन थे, इसलिए हमें भारतीय भाषाओं के विकास का कोई बना-बनाया विवरण उपलब्ध नहीं है। ३२६ ई.पू. के बाद जब सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया और सैल्यूकस अपने साथ मैगस्थनीज़ को लेकर आया, तब हमें पहली बार भारतीय इतिहास का ठोस प्रमाण मिलता है। लेकिन भाषाई परिवर्तनों के इतिहास को, जिसकी वजह से हिन्दी का आविर्भाव हुआ, लिखना सरल कार्य नहीं था। इसलिए हमें उन विद्वानों का आभार मानना चाहिए जिन्होंने विभिन्न कालों में लिखी साहित्यिक कृतियों को समेटकर उसे छानकर जो कुछ सामग्री मिल सकती थी, उससे हिन्दी का इतिहास लिखा।

भारत में चार परिवार-समूह की भाषाएँ बोली जाती है : (१) भारतीय आर्य, (२) द्रविड़, (३) ऑस्ट्रो-एशियाई, (४) तिब्बती-बर्मी । अंतिम दोनों ने पिछले

अनेक शताब्दियों में हुए महत्त्वपूर्ण भाषाई परिवर्तनों पर कोई प्रभाव नहीं डाला। द्रविड़ कुल की भाषाएँ, अर्थात् तमिल, तेलुगु, मलयालम और कन्नड़ अपेक्षाकृत सौभाग्यशाली रहीं। ७वीं से लेकर १७वीं शताब्दी तक उत्तरी भारत को जिन राजनैतिक तूफ़ानों का सामना करना पड़ा, दक्षिण भारत उससे प्रायः अप्रभावित रहा। इसलिए ये भाषाएँ शांतिपूर्ण ढंग से विकसित होती गयीं। (यहाँ तक कि अपनी सुरक्षा और अस्तित्व को बचाने के लिए संस्कृत को दक्षिण की शरण लेनी पड़ी।[४] जिसकी वजह से दक्षिण भारत में भी संस्कृत का प्रचार-प्रसार होने लगा)

दक्षिणी भाषाओं ने न केवल अपनी साहित्यिक विशिष्टता को सुरक्षित रखा, अपितु आर्यों की उन धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक परंपराओं को भी सही सलामत रखा जो हिन्दूकुश के पश्चिम से होने वाले भयंकर आक्रमणों के कारण उत्तर में तेजी से लुप्त हो रही थीं।

आर्यों की भाषा के विषय में प्रथम जानकारी वेदों से मिलती है। शुरू में आर्यों की भाषा सरल थी, न तो अलंकारों के बोझ से दबी हुई और न ही पाणिनि के व्याकरण के शिकंजे में कसी हुई। कठिन से कठिन भाव साधारण भाषा में, जो शायद उस समय की बोलचाल की भाषा थी, व्यक्त किये गये हैं।[५]

वैदिक भाषा मौखिक रूप से पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती गयी क्योंकि उस समय तक लेखन कला का विकास नहीं हुआ था और न ही भोजपत्रों की खोज हुई थी जिससे बाद में कागज का काम लिया जाता था। यह स्वाभाविक था कि भाषा बदलते हुए समय की शैलियाँ, अभिव्यक्तियाँ और विचार अपनाती और विभिन्न श्रोतों से आये हुए शब्दो को आत्मसात करती है। इसका परिणाम यह हुआ कि ८०० ई.पू. में, जब यास्क का जन्म हुआ, वैदिक भाषा का स्वरूप वह नहीं रह गया जो २५०० ई.पू. में था। वह इस समय तक काफी जटिल हो चुकी थी। यास्क ने *'निघण्टु'* और *'निरुक्तों'* की रचना करके उस भाषा की समृद्धि से सबको अवगत कराया।[६] बाद में वैदिक भाषा जनभाषा से दूर होती चली गयी और आगे चलकर वह केवल कर्मकाण्ड की भाषा बन कर रह गयी और अपने उसीरूप में वह आज भी देश के कई भागों में, विशेषतः दक्षिण में और उत्तर में वाराणसी के इर्द-गिर्द क्षेत्रों में प्रतिष्ठित है। ऐसी भाषा आम जनता के आपसी सम्पर्क का माध्यम नहीं बन सकती थी। इसलिए देश के विभिन्न भागों में बहुत सी भाषाएँ, जिन्हें विभाषा के नाम से जाना जाता था विकसित हुई और उत्तरी विभाषा से एक प्रभावशाली भाषा के रूप में

संस्कृत उभरी, जिसे ६०० ई.पू. में पाणिनि ने बेजोड़ व्याकरण से सजाया सँवारा। लेकिन व्याकरण की क्लिष्टता के कारण संस्कृत में लोच नहीं रह पायी और आज भी उसका स्वरूप वही है जो ईसा से पूर्व छठी शताब्दी में था। संस्कृत उत्तर के अधिकांश राज्यों की दरबारी भाषा बनी और इसमें अत्यन्त समृद्ध साहित्य की रचना भी हुई लेकिन सम्पर्क भाषा के रूप में यह संभ्रान्त वर्ग तक ही सीमित रही।

वहीं दूसरी ओर संस्कृत के साथ-साथ एक और भाषा का प्रयोग होने लगा जिसे प्राकृत के नाम से जाना जाता है। इसका विकास संस्कृत के साथ ही हुआ, कुछ लोगों का यहाँ तक कहना है कि 'आदि प्राकृत' उस समय भी प्रयुक्त होती थी जिस समय संस्कृत को कोई जानता भी नहीं था। लेकिन ६०० ई.पू. और ७०० ई. के बीच का समय प्राकृत-काल के नाम से जाना जाता है। जो कोई जनता से सम्पर्क करना चाहता था और उन्हें अपनी बातें, अपने विचार सुनाना चाहता था, वह प्राकृत का प्रयोग करता था क्योंकि इससे जनता के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो जाता था। जैन धर्म के तीर्थंकर भगवान महावीर और बौद्ध धर्म के संस्थापक भगवान बुद्ध ने जनता को अपने धर्म का उपदेश प्राकृत में ही दिया। अशोक के शिलालेख पाली में हैं, जो एक प्रकार की प्राकृत ही है। लेकिन इस भाषा के साथ भी वही सलूक किया गया जो संस्कृत के साथ किया गया था। वैयाकरणों ने इस भाषा के लिए भी व्याकरण के कड़े नियम तैयार कर दिये, जिसके परिणाम स्वरूप इसकी परिणति संस्कृत से भी बदतर हुई। क्योंकि उन शिक्षण संस्थानों को छोड़कर जहाँ यह पढ़ायी जाती है, अन्यत्र शायद ही इसे कोई ज़ानता हो। अपनी सरलता के कारण प्राकृत, संस्कृत से भिन्न थी। संस्कृत की बहुत सी ध्वनियाँ प्राकृत में थी ही नहीं। प्राकृत में केवल एकवचन और बहुवचन लिंग प्रयुक्त होते थे। प्राकृत के अनेक रूप थे, देश के एक भाग में बोली जाने वाली प्राकृत देश के दूसरे भाग में बोली जाने वाली प्राकृत से भिन्न थी, मध्य गंगा क्षेत्र में बोली जाने वाली प्राकृत को शौरसेनी कहते थे, पूरब में बोली जाने वाली प्राकृत को मागधी तथा दक्षिण और पश्चिम में बोली जाने वाली प्राकृत को महाराष्ट्री कहते थे। वहीं दूसरी तरफ संस्कृत और प्राकृत का एक साथ प्रयोग संस्कृत के नाटकों में देखने को मिलता है, लेकिन वहाँ संभ्रान्त वर्ग के लोगों को संस्कृत और निम्न वर्ग के लोगों को प्राकृत बोलते हुए दिखाया गया है।

लेकिन धीरे-धीरे पहली शताब्दी के आस-पास तक आते-आते प्राकृत भी जनसाधारण से दूर चली गयी और यह भी सिर्फ साहित्य की भाषा बन कर रह गयी।

धीरे-धीरे इसकी जगह जन-भाषा के रूप में अपभ्रंश आ गयी। संभ्रान्त वर्ग, जो संस्कृत को देवताओं की भाषा मानता था, इस नयी भाषा अपभ्रंश को हेय दृष्टि से देखता था। और इसे अभीरों की (निम्न जाति के लोग इसी नाम से जाने जाते थे) भाषा कहता था।[७] लेकिन बाद में इस भाषा को प्रतिष्ठा मिली।

अपभ्रंश के भी कई रूप देखने को मिलते हैं। दक्षिण में बोली जाने वाली अपभ्रंश, पूरब में बोली जाने वाली अपभ्रंश से भिन्न थी और पश्चिमी अपभ्रंश जिसे शौरसेनी कहते थे, अन्य अपभ्रंशों से अलग थी। शौरसेनी सब अपभ्रंशों से सशक्त और सबसे अधिक प्रचलित थी। शौरसेनी से पश्चिमी हिन्दी अर्थात् आदि हिन्दी निकली। शौरसेनी ने ही राजस्थानी, पंजाबी को जन्म दिया। आदि हिन्दी में अधिकतर बोचलाच के शब्दों का समावेश था और इस पर व्याकरणों के नियमों की कोई बंदिश नहीं थी। हिन्दी में अपभ्रंश से अनेक साहित्यिक खूबियाँ और गुण लिये। हिन्दी में रूप-विज्ञान की संरचना अपभ्रंश से ही आयी। हिन्दी के कविंयों ने दोहा-मात्रा का, जो अपभ्रंश की विशेषता थी, बड़ी सफलता से प्रयोग किया। पृथ्वीराज चौहान के समकालीन कवि चंदबरदाई द्वारा लिखा *'पृथ्वीराज रासो'* संभवतः हिन्दी की पहली रचना है, हालाँकि भाषा को यह नाम तब तक नहीं मिल सका था।

इस नयी भाषा को, जिसकी जड़ें संस्कृत और अपभ्रंश की परंपराओं में मज़बूती और गरहाई से गड़ी हुई थीं, बाहरी प्रभावों का सामना ही नहीं करना पड़ा, बल्कि उन्हें झेलना पड़ा। १२वीं शताब्दी में जब महुम्मद गौरी ने भारत पर आक्रमण किया तब वह यहाँ की समृद्धि और आराम की जिंदगी पर मोहित हो गया और उसने यहीं बसने का इरादा कर लिया। उसके इस निर्णय ने देश के राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन को उद्वेलित कर दिया और देश को विदेशी हमलावरों के अनेक वंशों के शासन के दौर से गुजरना पड़ा। स्वाभाविक है कि जब देश को इतने वंशों के शासन के दौर से गुजरना पड़े तो उसका असर साधरण जन-जीवन के साथ-साथ भाषा पर भी पड़ेगा। ये अधिशासी प्रशासनिक कार्य के लिए फ़ारसी का प्रयोग करते थे, पर अपनी रोज़मर्रा की जरूरतों के लिए जनता से सम्पर्क के लिए स्थानीय भाषा का ही सहारा ले सकते थे। इसलिए उन्होंने दिल्ली के आस-पास बोली जाने वाली स्थानीय भाषा को, जो एक प्रकार के अपभ्रंश थी और जो धीरे-धीरे 'खड़ी बोली' में परिवर्तित हो रही थी, सीखा और उसका इस्तेमाल करते समय उसमें अपनी भाषा के शब्दों का भी प्रचुर समावेश किया। उन्होंने इस भाषा को हिन्दी कहकर पुकारा

और इस तरह १२वीं शताब्दी के अंत में या १३वीं शताब्दी के शुरू में भारत की राजभाषा को 'हिन्दी' नाम फ़ारस के लोगों से मिला।

अपभ्रंश इस भाषा का आधार थी और संस्कृत इसकी शब्दावली का श्रोत। फ़ारसी और अरबी ने भी इसके शब्द भंडार को उदारता से समृद्ध बनाया। स्थानीय लोगों ने अधिवासियों की शब्दावली सीखी। वे इस भाषा को देवनागरी लिपि में लिखते थे, जो उस समय उत्तरी भारत में प्रयुक्त होती थी और अधिवासी फ़ारसी में क्योंकि वे स्थानीय लिपि नहीं जानते थे, इससे उन्हें आपस में संपर्क में सुविधा होती थी। धीरे-धीरे नयी भाषा उत्तर भारत की सम्पर्क भाषा बन गयी और जनता में अपने विचारों को फैलाने का इच्छुक हर व्यक्ति स्थानीय लोगों की ज़रूरत के अनुसार इसमें थोड़ा-बहुत फेरबदल कर इसका प्रयोग करता था। अरबी और फ़ारसी भाषाओं के कुछ शब्द इसमें रच बस गये। वहीं दूसरी ओर फ़ारसी भाषा जनता की भाषा नहीं बन सकी और केवल राजदरबारों और संभ्रान्त शासक वर्ग तक ही सीमित रही।

अमीर खुसरो ने जो शैली और अभिव्यक्तियाँ अपनायीं, वे शायद खड़ी बोली के, जो बाद में भारत की राजभाषा बनी, सबसे प्रारंभिक नमूने हैं।[८]

चूँकि नयी भाषा का जन्म मुख्यतया कैम्पों में रहने वाले सैनिकों और दूसरे लोगों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए हुआ था और उनके तथा जनता के पारस्परिक सम्पर्क की वजह से वह पनपी थी, इसलिए उच्चवर्ग के अधिवासी इसे हमेशा अवज्ञा की दृष्टि से देखते थे। उनके लिए फ़ारसी ही विश्व की सबसे सुन्दर भाषा थी। मुगलकाल में इस संभ्रान्त वर्ग ने नयी भाषा को 'उर्दू' की संज्ञा दी। उर्दू शब्द तुर्की भाषा के शब्द 'युर्ट' या 'ओर्दू' से निकला है जिसका अर्थ है फौजी छावनी।[९]

उर्दू की उत्पत्ति ब्रज, पंजाबी, सिंधी से बतायी जाती है किन्तु मान्य मत यह है कि इसका आधार भी दिल्ली के आसपास की वही खड़ी बोली है जो साहित्यिक हिन्दी का आधार है। उर्दू की उत्पत्ति का काल, १३वीं शती के प्रारंभ से दिल्ली के आसपास इस्लामी शासन की स्थापना के समय का है। इस्लामी शासन के साथ राजकाज की कामचलाऊ भाषा दक्षिण में पहुँची जहाँ यह दक्खिनी के नाम से प्रसिद्ध हुई। यहाँ इसमें साहित्य की रचना प्रारम्भ हुई। दक्खिनी के कवि 'वली' के उत्तर की ओर जाने पर यह भाषा फिर उत्तर भारत में पहुँची तथा मुसलमान शासकों का आश्रय पाकर फलती-फूलती रही।[१०] भाषा की संरचना को देखने से यह स्पष्ट

हो जाता है कि उर्दू हिन्दी से भिन्न भाषा नहीं है। इस दृष्टि से यह परिनिष्ठित हिन्दी का एक ऐसा उप-रूप अथवा शैली है जिसमें फ़ारसी, अरबी के शब्दों की संख्या पर्याप्त मात्रा में है तथा जिसके कुछ व्यकरणात्मक रूप हिन्दी से भिन्न हैं और जो अरबी पर आधारित लिपि में लिखी जाती है। मुस्लिम सम्प्रदाय के भारत में विकास के बावजूद भी इसे बोलने वालों की संख्या बहुत कम है। मुस्लिम सम्प्रदाय के लोग प्रायः अपने बोलचाल में हिन्दी का प्रयोग करते हैं, धर्म कार्यों में फ़ारसी का अतः उर्दू राजनीतिक क्षितिज के अतिरिक्त अब कहीं भी वर्तमान नहीं है।

लेकिन 'उर्दू' कहलाने के पूर्व 'उर्दू' भाषा ही थोड़े परिवर्तन के साथ अनेक नामों से प्रचलित थी। इसका सबसे प्राचीन नाम 'हिन्दवी' अथवा 'हिन्दुवी' है। इंशा अल्ला खाँ ने अपनी रचना *'रानी केतकी की कहानी'* में जब यह लिखा था कि "उसमें हिन्दवी पुट या अन्य किसी भाषा का पुट नहीं है" तब उनका तात्पर्य संभवतः इसी हिन्दवी से था। यह नाम १३वीं-१४वीं शताब्दी तक रहा।

मुसलमान शासकों के दक्षिण की ओर अग्रसर होने पर १३वीं शताब्दी के आसपास हिन्दवी कही जाने वाली भाषा का दक्षिण में प्रवेश हुआ। दक्षिण में इसे मुसलमान दरबार और मुसलमान कवियों का आश्रय मिला। दक्षिण की इस साहित्यिक भाषा को 'दक्खिनी', 'दाक्किनी' अथवा 'दाक्खिनी हिन्दी' नाम दिया गया। बंदानवाज़, निजामी आदि इसी दाक्खिनी के कवि थे।

दक्खिनी एवं उर्दू के बीच भाषा कड़ी 'रेख्ता' है। दक्खिनी का विकसित रूप जिसका प्रचार-प्रसार दक्षिण की अपेक्षा उत्तर भारत में अधिक हुआ, रेख्ता कहा जाता है। मुसलमान शासकों और जनता के बीच यह सम्पर्क का माध्यम बनी और वे जहाँ भी गये, इसे अपने साथ लेते गये। चूँकि जनता इसकी आदि हो चुकी थी, इसलिए जनता से सम्पर्क स्थापित करने के इच्छुक दूसरे लोग भी इसी भाषा को अपनाने लगे। भारतीय भाषाओं के समान-श्रोती होने कारण और हिन्दी के विस्तृत प्रयोग-क्षेत्र के कारण वे लोग भी, जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं थी, इसको मोटे तौर पर समझ सकते थे। १८वीं शती की रेख्ता ही १९वीं शती तक पहुँचते-पहुँचते 'उर्दू' बन गयी।[११]

कई सदियों तक और कम से कम मिर्ज़ा ग़ालिब के समय तक, हिन्दी और उर्दू समानार्थी समझे जाते थे। फ़ारसी लिपि इस्तेमाल करने के बावजूद मिर्ज़ा ग़ालिब ने कई बार अपनी भाषा को हिन्दी भी कहा। उनकी एक रचना का नाम ही है, *'उद्रे-हिन्दी'* अर्थात हिन्दी की सुगंध।

लेकिन धीरे-धीरे लिपि में ही नहीं बल्कि अभिव्यक्ति और शब्दावली में भी हिन्दी और उर्दू एक-दूसरे से दूर होती गयीं। हिन्दी अपने विकास के लिए संस्कृत और स्थानीय भाषाओं से सहयोग लेती रही और उर्दू फ़ारसी और अरबी से। अंग्रेजी के राजभाषा होने के बाद हिन्दी और उर्दू में राजकीय सम्मान के लिए होड़ लग गयी। पहले दौर में उर्दू जीती और अंग्रेजों ने १८३० के बाद से इसे उत्तर पश्चिम और अवध-प्रान्त, बिहार और मध्य प्रान्त में अदालतों की भाषा के रूप में मान्यता दी। हिन्दी को मान्यता बाद में मिल सकी, बिहार ने १८८० में, उत्तर-पश्चिम और अवध के प्रान्तों में १९०० में। बीसवीं शताब्दी के शुरू में हिन्दी भाषा के ये दोनों रूप न केवल सरकारी मान्यता के लिए, बल्कि शैक्षणिक और प्रशासनिक क्षेत्र में अधिकाधिक सुविधाओं के लिए भी एक दुखद पारस्परिक संघर्ष में जूझ रहे थे।[१२]

आगे चलकर हिन्दी और उर्दू के मध्य की एक भाषा का उदय हुआ जिसे हिन्दुस्तानी कहकर पुकारा गया। इसमें संस्कृत और फ़ारसी के कठिन शब्दों का अभाव था। यह भी दिल्ली के आसपास के क्षेत्रों में जन्मी और फली-फूली। हिन्दुस्तानी शब्द का प्रयोग चाहे जिस अर्थ में हुआ हो, परन्तु उसका प्रचार अंग्रेजों ने किया। राजनीतिक नेताओं के भाषा निर्माण के प्रयास की परिणति हिन्दुस्तानी है। पर भाषा गढ़ी नहीं जाती, निर्मित नहीं होती, वह जन-सामान्य के बीच अपने आप विकसित होती है। लेकिन आज यह लुप्तप्राय है। कतिपय विद्वान आज जन-सामान्य में इसी को विद्यमान मानते हैं पर यह उनका भ्रम है जिसका कोई आधार नहीं है। किसी भी भाषा में दूसरी भाषा के कुछ शब्दों का प्रचलन और व्यवहार, राजनीतिक, सांस्कृतिक प्रभाव का परिणाम है। यदि आज हिन्दी में अरबी, फ़ारसी के कुछ शब्द और ध्वनियाँ गृहीत हैं तो उसका कारण उर्दू नहीं बल्कि मुसलमानों के एक लम्बे काल का शासन और एक-दो जातियों के साथ रहने का परिणाम है। वे या तो मुस्लिम संस्कृति की देन हैं या यूरोपीय संस्कृति की जिसके साथ हम वर्षों रहे। स्वतंत्र भारत के गाँधी, नेहरू, मौलाना आज़ाद जैसे नेताओं ने हिन्दुस्तानी की पुनर्प्रतिष्ठा का प्रयास किया, उसे राजभाषा का पद भी देने की बात की पर जन-साधरण के बीच व्यवहार में न होने के कारण हिन्दुस्तानी का नारा नहीं चल पाया और हिन्दी राजाभाषा के पद पर प्रतिष्ठित हुई।[१३]

अब तक हिन्दी की उत्पत्ति और विकास के बार में हमने चर्चा की। इसके बाद हिन्दी का प्रयोग और प्रसार कहाँ-कहाँ और कैसे-कैसे हो रहा है उसके बारे में आगे चर्चा की गयी है।

१.२ विश्व में हिन्दी

हिन्दी की उत्पत्ति और विकाश के बारे में जानने के बाद हिन्दी का प्रयोग और प्रसार विश्वस्तर पर कितना और कैसे हो रहा है यह जानने की कोशिश यहाँ की गयी है। हिन्दी विश्व की तीसरी सबसे बड़ी भाषाओं में से एक है। हिन्दी एक ऐसी भाषा है जो भारत के अनेक विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जाती है, लेकिन साथ ही विश्व के अनेक देशों में भी इसके अध्ययन-अध्यापन के प्रति रूचि लगातार बढ़ती जा रही है। इससे स्पष्ट है कि हिन्दी विश्व भाषा का स्थान पाने के लिए पूरी तरह योग्य है। विदेशों में हिन्दी की पढ़ाई और उसके प्रचार-प्रसार का काम दो धाराओं में विभाजित है। पहली धारा के अन्तर्गत विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जाती है और दूसरी वह धारा है जहाँ प्रवासी भारतीय या भारतवंशी उन देशों में बड़ी संख्या में रहते हैं। भारत से बड़ी संख्या में जब मज़दूर और व्यापारी अपनी रोज़ी रोटी चलाने या अपनी जीविका की तलाश में जब विदेशों में जाकर बसने को मजबूर हुए तो संकट और संघर्ष की उन परिस्थितियों में अपने देश की धर्म और संस्कृति को अपनी भाषा को सुरक्षित रखा उसके अस्तित्व की रक्षा के लिए निरंतर संघर्ष किया। ये वे लोग थे जो सुशिक्षित और सुसंस्कृत नहीं थे फिर भी इन्होंने अपने प्रयासों से अपनी भाषा, संस्कृति और धर्म को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक विशिष्ट पहचान दी। फिजी, सूरीनाम, त्रिनिदाद, गुयाना, मॉरीशस आदि देशों में प्रवासी भारतीयों की यही धारा है। थाईलैण्ड, ब्रिटेन, सिंगापुर, मलेशिया आदि देशों में प्रवासी भारतीयों की संख्या अधिक होने के कारण हिन्दी ने अपनी एक विशिष्ट पहचान बना रखी है।

विदेशों में हिन्दी प्रचार को लोकप्रिय बनाने के उद्देश्य से सरकार की तरफ से प्रयत्न किये जा रहे हैं। हिन्दी प्रचार की योजना को सफल बनाने की दृष्टि से फिजी, मॉरीशस, त्रिनिदाद स्थित दूतावासों में राजभाषा अधिकारी एवं अतासे नियुक्त किये जाते हैं। इन हिन्दी अधिकारियों की सहायता से वहाँ हिन्दी पाठ्यक्रम के निर्माण और टेलिविजन के प्रसारण, मानस चतुःशती जैसे अवसरों पर सांस्कृतिक आयोजन किया जाता है।[१४]

प्रसिद्ध संस्थाओं द्वारा संचालित परीक्षाओं के आयोजन में भी विदेश में स्थित ये अधिकारी संस्थाओं को यथासंभव सहायता प्रदान करते हैं। अकेले मॉरीशस में ही हज़ारों की संख्या में लोग हिन्दी साहित्य सम्मेलन की विभिन्न परीक्षाओं में भाग लेते

हैं। परीक्षाओं के संचालन में विदेश मंत्रालय और विदेश स्थित हमारे दूतावास सम्पर्क सूत्र का कार्य करते हैं। विदेश मंत्रालय भारतीय दूतावासों में हिन्दी की श्रेष्ठ पुस्तकों को भेजने का कार्य करता है।[१५]

दूतावासों में कार्यरत अधिकारियों से यह अनुरोध किया जाता है कि वे हिन्दी जानने वाले सभी लोगों के साथ अपने व्यवहार में हर संभव हिन्दी का ही उपयोग करें और औपचारिक अवसरों पर हिन्दी में ही भाषण दें। राजदूतों से यह भी अनुरोध किया जाता है कि राजाध्यक्षों के सम्मुख अपने परिचय पत्र प्रस्तुत करते समय हिन्दी में अपना संक्षिप्त भाषण भी दें। दूतावासों को यह भी बताया गया है कि वे मंत्रालय के साथ अपने पत्र व्यवहार में हिन्दी का प्रयोग करें और ये खुशी की बात है कि कुछ दूतावास अपने पत्र-व्यवहार में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ा रहे हैं।[१६]

हिन्दी को विश्व पटल पर प्रमुख स्थान दिलाने के उद्देश्य से मानव संसाधन विकास मंत्रालय और विदेश मंत्रालय के सहयोग से हिन्दी के लेख़कों को पुरस्कार देने की योजना भी शुरु की गई है और कुछ लेखक पुरस्कृत भी किये जा चुके हैं।

भारत के बाहर अनेक विश्वविद्यालयों में हिन्दी के पठन-पाठन की विशेष व्यवस्था है और साथ ही वहाँ का युवा समाज भारतीय संस्कृति एवं हिन्दी को पढ़ने में अब विशेष रुचि ले रहा है।

पिछले कुछ वर्षों में हिन्दी की शब्द संख्या में जितना अधिक विस्तार हुआ है, उतना शायद ही विश्व की किसी अन्य भाषा में हुआ हो। शब्द संख्या की दृष्टि से आज हिन्दी संसार की सबसे समृद्ध भाषाओं में से एक मानी जाती है। विदेशों में हिन्दी की लोकप्रियता का अंदाज़ा निम्न तथ्यों से लगाया जा सकता है:-

इंग्लैण्ड में हिन्दी की पढ़ाई मुख्यतः लंदन प्राच्य संस्थान, कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय और यार्क विश्वविद्यालय में होती है। यह सभी हिन्दी की विविधता पूर्ण सामग्री का उपयोग करते हैं। और बोलने के अभ्यास पर पर्याप्त बल देते हैं। हिन्दी साहित्य पर शोध कार्य हिन्दी व्याकरण-लेखन, हिन्दी से अंग्रेजी में अनुवाद हिन्दी भाषा पर केंद्रित भाषा वैज्ञानिक लेख लिखने का क्रम इंग्लैण्ड में निरंतर चल रहा है।

अमेरिका में हिन्दी भाषा का कार्यक्रम भारत की स्वतंत्रता के बाद शुरु हुआ। गंपर्ज, पीटरहुक, वॉन ऑल्फन, फेयर बैंक्स आदि अमेरिकी विद्वानों ने हिन्दी के लिए उल्लेखनीय कार्य किया। ये सभी अमेरिकी विद्वान पूरी तरह हिन्दी और

भारतीय संस्कृति के रंग में रंगे हुए हैं। अमेरिका के एरिज़ोना, शिकागो, इलिनॉय, पेन्सिलवेनिया, कर्नेल, विसकांसिन, टेक्सास, कोलंबिया आदि विश्वविद्यालयों में हिन्दी भाषा के पाठ्यक्रम सफलता पूर्वक चलाये जा रहें हैं। इनमें से कई विश्वविद्यालयों में हिन्दी में एम.ए. और पीएच.डी करने की भी व्यवस्था है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के २८ विश्वविद्यालय तथा अनेक स्वयंसेवी संस्थाएँ हिन्दी के प्रति पूर्ण समर्पित भाव से कार्य कर रही हैं। संस्कृत का अध्ययन वहाँ १८१५ से आरंभ होगया था, परन्तु उसका क्षेत्र पुरानी भाषा होने के कारण इतना व्यापक एवं विस्तृत नहीं था। सन् १८७५ में अमेरिका में हिन्दी व्याकरण तैयार किया गया जो आज भी अपनी उपयोगिता बनाए हुए है। पिछले कई वर्षों से मैक्सिको तथा अनेक लातिनी अमेरिकी देशों में हिन्दी का विस्तार हुआ है। क्यूबा, वेनेजुएला, कोलम्बिया, पेरु, अर्जेन्टीना, चीली आदि इसके जीवंत उदाहरण हैं।

सोवियत संघ के मास्को स्थित प्राच्य अध्ययन संस्थान में १९२० से ही हिन्दी अध्यापन का कार्य प्रारंभ हो चुका था। धीरे-धीरे यहाँ के कई विश्वविद्यालयों में हिन्दी शिक्षण कार्यक्रम चलने लगे। भारत की स्वतंत्रता के बाद और विशेष रूप से छठे दशक से इसका खूब विस्तार हुआ। हिन्दी शिक्षण के साथ ही रूस में हिन्दी भाषा और साहित्य केंद्रित शोध भी बड़ी मात्रा में हुआ है। सोवियत संघ सहित सभी गणराज्यों में ३४ से भी अधिक संस्थानों एवं विश्वविद्यालयों में हिन्दी के पाठ्यक्रम चलते हैं। सोवियत संघ के अतिरिक्त मंगोलिया, रोमानिया, ऑस्ट्रिया, पोलैण्ड आदि पूर्वी यूरोपीय देशों के छात्र उच्च हिन्दी शिक्षा के लिए लेलिनग्राद अथवा मास्को विश्वविद्यालयों में आते थे।

जापान में १९१० से ही हिन्दी की पढ़ाई की शुरुआत हुई। १९५९ से यहाँ बाकायदा हिन्दी शिक्षण को व्यापक मान्यता मिली। इसी वर्ष टोक्यो और ओसाका विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग खुले। जापान में हिन्दी का स्नातक कोर्स चार वर्ष का और स्नातकोत्तर कोर्स दो वर्ष का चलाया जाता है। जापान में लोग हिन्दी फिल्में और उनके गाने देखना और सुनना पसंद करते हैं। अकेले जापान में आठ विश्वविद्यालय एवं संस्थान हिन्दी की पढ़ाई में जुटे हैं। प्रो. दोई जिन्होंने जापान में हिन्दी शिक्षण आरंभ किया, उन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से एम.ए. और पी.एच.डी. भी किया। उन्होंने *"गोदान"* का मूल हिन्दी से जापानी में अनुवाद किया, जो लाखों की संख्या में बिकी।

हंगरी के बुडापेस्ट विश्वविद्यालय में हिन्दी शिक्षण कार्य सर्वप्रथम शुरु हुआ। बाद में यहाँ के कुछ और विश्वविद्यालयों में भी हिन्दी कार्यक्रम शुरु हुआ। १९८० के बाद हंगरी में हिन्दी शिक्षण कार्यक्रम का विकास हुआ।

पोलैंड में सन् १९५५ से हिन्दी भाषा कार्यक्रम चल रहा है और उसका निरन्तर विस्तार हो रहा है। यहाँ के वार्सा, क्राकूव और पोज़वान विश्वविद्यालय में हिन्दी कार्यक्रम चलते हैं। यह कार्यक्रम भारत विद्या विभाग के अन्तर्गत चलाये जाते हैं।

थाईलैण्ड में हिन्दी जानने वालों की संख्या लाखों में हैं। इनमें से अधिकांश लोग दूसरे विश्व युद्ध के समय वहाँ स्थायी रूप से बस गए थे। बर्मा में भारतीय मूल के लोगों की संख्या लाखों में हैं।

फिजी में हिन्दी को हमेशा प्रतिष्ठा मिली। हिन्दी में अनेक पत्र-पत्रिकाएँ यहाँ से प्रकाशित होती रही हैं। वहाँ की दुकानों में नाम पट अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी में भी लिखे जाते हैं। सड़कों के नाम भी दो भाषाओं में हैं। वहाँ की सरकार ने हिन्दी को मान्यता प्रदान की है।

त्रिनिदाद में अधिकांश लोग भारतवंशीय हैं। भारतीयों के सम्पर्क में आने के कारण वहाँ रह रहे अफ्रीकी मूल के लोगों ने अनेक भारतीय शब्दों को अपनाया। सूरीनाम में देवनागरी के साथ-साथ हिन्दी रोमनलिपि में भी लिखी जा रही है।

नीदरलैण्ड के लायडन और अप्रेखल विश्वविद्यालयों में भी एम.ए. "सरनामी हिन्दी" पढ़ाई जा रही है।

इण्डोनेशिया की भाषा का नाम ही भाषा-इण्डोनेशिया है। इनकी भाषा में संस्कृत और हिन्दी के शब्द भी शामिल हैं।

कोरिया स्थित विदेशी भाषाओं का विश्वविद्यालय 'हाकुंक' हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन का कार्य भी संभालता है। इस विश्वविद्यालय में लगभग १५० से अधिक छात्र हिन्दी सीख रहे हैं। यहाँ स्नातकोत्तर स्तर तक हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था है। साथ ही हिन्दी की अनेक कृतियों का कोरियाई भाषा में अनुवाद का कार्य भी चल रहा है।

चीन में प्रो. ची-श्येन संस्कृत के ज्ञाता हैं, जर्मनी के 'गैरिगन' विश्वविद्यालय से उन्होंने संस्कृत का अध्ययन किया। चीन लौटकर उन्होंने संस्कृत विभाग खोला और *वाल्मिकी रामायण* का चीनी भाषा में पद्यबद्ध अनुवाद किया। प्रो. चितिन हान

द्वारा चीनी में अनुदित पहली हिन्दी पुस्तक मुंशी प्रेमचंद रचित *'निर्मला'* थी। सात वर्षों के अथक परिश्रम से उन्होंने *"रामचरितमानस"* का पद्यबद्ध अनुवाद चीनी भाषा में प्रकाशित किया। अपने कर्मठ जीवन के ३२ वर्षों में प्रो. चितिन हान ने लगभग ६२० छात्रों को हिन्दी से परिचित कराया।

विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर की सत्तर पुस्तकों के अनुवाद चीनी भाषा में प्रकाशित हुए। *चित्रलेखा, मैला आँचल* जैसे अनेक कालजयी, कृतियों के अनुवाद चीनी पाठकों तक पहुँच चुके हैं। पेइचिंग रेडियो प्रतिदिन हिन्दी के अनेक कार्यक्रम प्रस्तुत कर रहा है। कुछ वर्षों से वहाँ *"सचित्र चीन"* का हिन्दी संस्करण प्रकाशित हो रहा है। भारतीय वाङ्मय के प्रति चीन में बहुत आदरभाव है। चीनी भाषा के निर्माण में पाणिनी के व्याकरण का विशेष योगदान है। यहाँ तक की चीन की ऐतिहासिक दीवार की स्वागत शिला पर "ओम नमो भगवते" आज भी दर्शकों को आकृष्ट करता है।

बर्मा में भी भारतवासियों का हिन्दी के प्रति लगाव कम नहीं है। मांडले, चोगला में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की शाखाएँ हैं। अनेक स्थानों पर राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की परीक्षाएँ आयोजित हो रही हैं। रंगून विश्वविद्यालय में विश्व की अनेक प्रमुख भाषाँए पढ़ाई जा रही है। परन्तु यहाँ हिन्दी अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था नहीं है।

श्रीलंका के तीनों विश्वविद्यालयों में उच्च स्तर पर हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था है। पाकिस्तान में पंजाब विश्वविद्यालय के साथ-साथ कराची विश्वविद्यालय में भी हिन्दी पढ़ाई जाती है। हिन्दी-उर्दू में बहुत अन्तर न होने के कारण, अनेक अवरोधों के पश्चात् भी हिन्दी-उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानी वहाँ खूब बोली जा रही है। पाकिस्तान के "लोक सेवा आयोग" की परीक्षाओं में हिन्दी वैकल्पिक विषय है।

स्वीडन के स्टॉकहोम विश्वविद्यालय में भी भारतीय विद्या का एक अलग समृद्ध विभाग है जिसमें संस्कृत, तमिल, बंगला और हिन्दी की शिक्षा साथ-साथ दी जाती है।

युगोस्लाविया के जाग्रेव और बेल्ग्रेड विश्वविद्यालयों में कई वर्षों से हिन्दी अध्यापन का कार्य चल रहा है। हिन्दी साहित्य का प्रचुर मात्रा में अनुवाद भी हुआ है।

चेक गणराज्य का भारतीय साहित्य के प्रति विशेष मोह रहा है। प्राग स्थित चार्ल्स विश्वविद्यालय में गत सौ वर्षों से भी अधिक समय से संस्कृत के अध्ययन की व्यवस्था है।

फ्रांस के सौवन विश्वविद्यालय में पिछले अनेक वर्षों से हिन्दी पढ़ाई जा रही है। *'गोदान', 'मैला आंचल', 'त्यागपत्र'* आदि कृतियों के फ्रांसीसी भाषा में अनुवाद भी छपे हैं।

बेलज़ियम क्षेत्रफल एवं जनसंख्या की दृष्टि से छोटा सा देश है लेकिन पिछले कई वर्षों से वहाँ के वेट, ल्यूवेन और ल्येम विश्वविद्यालयों में हिन्दी के अध्ययन की व्यवस्था है।

इटली का भारतीय साहित्य एवं दर्शन के प्रति विशेष आकर्षण रहा है। वहाँ के नेपल्स और वेनिस विश्वविद्यालयों के हिन्दी विभागों में अनेक इटालियन छात्र हिन्दी के अध्ययन में रत हैं।

डेनमार्क, स्विटज़रलैण्ड, ऑस्ट्रिया, यूरोप के प्रायः सभी देशों में अनेक माध्यमों से हिन्दी पढ़ाई जा रही है।

हिन्दी का रूसी भाषा में जितना अनुवाद प्रकाशित हुआ है, उतना संसार के शायद ही किसी अन्य भाषा में, पर आजकल यह कार्य पूर्णरूपेण स्थगित हो गया है, लेकिन मध्य एशियाई देशों से भारत का व्यापार बढ़ रहा है, उससे आशा व्यक्त किया जा रहा है कि हिन्दी शिक्षण का कार्य भी अब उन देशों में कुछ तीव्र गति से होगा।

कनाडा में भारतीय अप्रवासी की संख्या भी कम नहीं है। वहाँ पंजाब से गए पंजाबी-पंजाबी के साथ-साथ हिन्दी का भी प्रयोग करते हैं। इस समय वहाँ से हिन्दी में दो स्थानीय समाचार पत्र प्रकाशित होते हैं। बैंकूवर, टोरन्टो मैगलिक विंडसर विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग है। टोरन्टो में आधुनिक हिन्दी साहित्य के साथ-साथ मध्यकालीन हिन्दी साहित्य भी वर्षों से पढ़ाया जा रहा है।

ऑस्ट्रेलिया के दो विश्वविद्यालयों में भी हिन्दी की शिक्षा दी जा रही है।

हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए जहाँ स्वयंसेवी संस्थाएँ एवं विश्वविद्यालयों का विशेष योगदान रहा है वहीं दूसरी ओर पत्र-पत्रिकाओं, दूरदर्शन और चलचित्रों का भी महत्त्व कम नहीं है। इन माध्यमों से हिन्दी के प्रचार-प्रसार में काफी सहायता मिली है।

फिजी, मॉरीशस, केन्या, युगाण्डा या मध्य पूर्व यानी मिडिल ईस्ट के देशों में हिन्दी चलचित्रों के प्रति विशेष झुकाव है क्योंकि भारतीय मूल के लोगों के कारण वहाँ हिन्दी चलचित्र खूब देखे जाते हैं।

इण्डोनेशिया, थाईलैण्ड, हांगकाँग, मलेशिया में हिन्दी फिल्मों का अच्छा बाज़ार है। सुप्रसिद्ध रूसी विद्वान डा. बारानिकोव रूसी भाषा में हिन्दी फिल्मों पर समाचार पत्रों को निकाल रहे हैं। सोवियत संघ के विघटन के पश्चात् इसमें कुछ परिवर्तन आया है परन्तु हिन्दी फिल्मों के प्रति लगाव अभी तक बना हुआ है।

अमेरिका के कैलिफोर्निया दूरदर्शन पर हर शनिवार को "सिनेमा-सिनेमा" कार्यक्रम के अन्तर्गत नियमित रूप से हिन्दी फिल्में दिखाई जाती हैं।

इंग्लैण्ड के बी.बी.सी दूरदर्शन पर *महाभारत* इतना लोकप्रिय हुआ कि भारतीय, अन्य देशों के अप्रवासी के साथ-साथ ब्रिटेन के तरुण/वृद्ध भी इससे मुग्ध हुए बिना न रह सके। सूरीनाम के दूरदर्शन पर दो बार इसका प्रदर्शन हुआ। जापानी दर्शकों ने इस धारावाहिक के संवादों को जोड़-जोड़ कर जापानी में *महाभारत* की अलग पुस्तक ही तैयार कर दी जो बहुत लोकप्रिय हुई।[१७]

गुयाना में हिन्दी ग़ीत, भजन, ग़ज़ल, आदि काफी लोकप्रिय है। गुयाना में हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए तथा हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन के लिए पिछले अनेक वर्षों से जो सघन प्रयास चल रहे थे उसमें गुयाना हिन्दी प्रचार सभा, महात्मा गाँधी संस्थान, आर्य प्रतिनिधि सभा एवं अन्य स्वैच्छिक संस्थाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।[१८] चलचित्रों और धारावाहिकों के साथ-साथ हिन्दी के प्रचार-प्रसार में पत्र-पत्रिकाओं ने भी महती भूमिका अदा की है।

१.२.१ विदेशों में पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी का प्रचार और प्रसार

भारत से जब मजदूर वर्ग मॉरीशस, फिजी, सूरीनाम और गुयाना गये तो इनमें से अधिकांश देशों में वहाँ के लोगों ने अपने अन्तर्मन की व्यथा को सम्प्रेषित करने के लिए हस्तलिखित और बाद में मुद्रित पत्रिकाओं का वितरण शुरु किया।

ऐसी पत्रिकाओं में मॉरीशस से प्रकाशित *'दुर्गा हिन्दुस्तान, आर्योदय, जनता,'* फीजी से प्रकाशित *शांति दूत, फीजी वृत्तांत, जय फीजी* आदि के नाम महत्वपूर्ण हैं। मॉरीशस के महात्मा गाँधी संस्थान से *"बसन्त"* नाम की एक महत्त्वपूर्ण पत्रिका भी प्रकाशित हो रही है। इसी प्रकार फीजी से *'उदयाचल'* और *'प्रशांत-समाचार'* के

कुछ अंक निकले हैं। फीजी सरकार स्वतः *"शंख"* नामक एक पत्र प्रकाशित करती थी जो वहाँ काफी लोकप्रिय हुई। मॉरीशस से प्रकाशित *"जनता"* और कई अन्य अनेक पत्रिकाओं का प्रकाशन दुर्भाग्यवश स्थगित हो गया है। नार्वे से प्रकाशित *"शांतिदूत"* हिन्दी संसार की लोकप्रिय पत्रिका है।

लंदन से पहले हिन्दी की दो पत्रिकाओं का प्रकाशन होता था। इन दोनों पत्रिकाओं में मुख्य रूप से भारत में प्रकाशित समाचारों को वहाँ रहने वाले भारतवासियों के लिए प्रकाशित किया जाता था। *"नवीन वीकली"* तथा *"अमरदीप"* नामक इन पत्रिकाओं के प्रकाशन से वहाँ हिन्दी के प्रचार-प्रसार को काफी बल मिला। अब वहाँ *"पुरवाई"* नामक श्रेष्ठ एवं उच्चस्तरीय पत्रिका प्रकाशित हो रही है। अमेरिका से *'विश्व-विवेक'* और *'हिन्दी-जगत'* पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही है। *'हिन्दी जगत'* ने विदेशों से प्रकाशित हिन्दी पत्रिकाओं में अपना विशिष्ट स्थान बना लिया है। इस पत्रिका के प्रधान सम्पादक डॉ. राम चौधरी को सूरीनाम में आयोजित सातवें विश्व हिन्दी सम्मेलन में विश्व हिन्दी सम्मान भी प्रदान किया गया। पत्रिका के प्रबंध सम्पादक डॉ. सुरेश ऋतुपर्ण इस पत्रिका को श्रेष्ठ बनाने के लिए अपना अमूल्य योगदान दे रहे हैं। जापान में भी हिन्दी प्रेमियों ने *"ज्वालामुखी"* नामक साहित्यिक पत्रिका का प्रकाशन शुरु किया था जिसका मुद्रण भारत में ही होता था। चीन सरकार भी *"सचित्र चीन"* नामक पत्रिका निकालती है। कनाडा में भी भारतवासियों ने *"विश्व भारती"* नामक पत्रिका का प्रकाशन किया था। इन सभी पत्रिकाओं के प्रकाशन से हिन्दी के प्रति विदेशों में लोगों की दिलचस्पी बढ़ी है।[११]

१.२.२ विश्व हिन्दी सम्मेलन

जहाँ एक ओर पत्र-पत्रिकाओं, चलचित्रों, स्वयं सेवी संगठनों ने हिन्दी के प्रचार-प्रसार में योगदान दिया वहीं दूसरी ओर विदेशों में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में विश्व हिन्दी सम्मेलनों का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

नागपुर में १० जनवरी, १९७५ में नागपुर विद्यापीठ के विशाल प्रांगण में प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस सम्मेलन का उद्घाटन दो देशों के प्रधानमंत्री की उपस्थिती में हुआ। मॉरीशस के प्रधानमंत्री सर शिवसागर रामगुलाम की अध्यक्षता में इसका उद्घाटन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने किया था। इस सम्मेलन में जर्मनी, गुयाना, अमेरिका, त्रिनिदाद, सूरीनाम, जापान, चीन, इटली, कनाडा,

स्वीडन, नार्वे, कोरिया, हंगरी, फ्रांस, रूस, इंग्लैण्ड, बेल्जियम, तुर्की, अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, फीजी आदि देशों से आये विद्वानों ने बताया कि उनके देशों में हिन्दी के प्रयोग के साथ-साथ साहित्य शोध भी हो रहे हैं तो इससे हिन्दी की ताकत का आभास मिल जात है।[२०]

मॉरीशस के प्रधानमंत्री सर शिवसागर रामगुलाम ने उद्घाटन के समारोह में अध्यक्षीय संबोधन में यह कहा कि "हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा तो है, लेकिन हमारे लिए इस बात का अधिक महत्त्व है कि यह एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है।" नागपुर में संपन्न विश्व हिन्दी सम्मेलन में प्रमुख रूप से तीन प्रस्ताव निर्णति हुए थे। (१) संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को अधिकारिक भाषा की मान्यता प्राप्त हो, इसके लिए यह संस्तुति की गई कि इस उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु एक क्रमबद्ध कार्यक्रम बनाया जाए। (२) एक विश्व हिन्दी विद्यापीठ की स्थापना की जाए। (३) विश्व हिन्दी सम्मेलन को स्थायी स्वरूप प्रदान करने के लिए एक स्थायी हिन्दी संस्था का गठन किया जाए और इसके लिए एक ठोस कार्य योजना बनाई जाए।[२१]

दूसरा विश्व हिन्दी सम्मेलन २८-३० अगस्त १९७६ को मॉरीशस के महात्मां गाँधी संस्थान पेर्टिलुईस में हुआ। इस सम्मेलन में भारतीय प्रतिनिधि मंडल के नेता डॉ. कर्ण सिंह की प्रेरणा से एक 'नभ कवि सम्मेलन' हुआ था, जिसका संचालन डॉ. शिव मंगल सिंह सुमन ने किया था। सम्भवतः यह प्रथम आकाशीय हिन्दी कवि सम्मेलन था। भारतीय प्रतिनिधि मंडल के नेता और तत्कालीन स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन मंत्री डॉ. कर्ण सिंह ने उद्घाटन समारोह के अवसर पर अपने अध्यक्षीय संबोधन में कहा था कि 'मेरा विश्वास है कि इस सम्मेलन से हिन्दी को बहुत लाभ होगा, और हिन्दी भाषा-भाषियों को तथा हिन्दी प्रेमियों को नई प्रेरणा मिलेगी। जैसे अंग्रेजी को लाखों लोग बोलते हैं जिनकी वह मातृभाषा नहीं है, वैसे ही हिन्दी भी एक अंतर्राष्ट्रीय भाषा होने के नाते प्रयुक्त होनी चाहिए।'[२२]

मॉरीशस सम्मेलन में इन विषयों पर प्रमुख रूप से चर्चा हुई- 'हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और स्वरूप', 'जनसंचार के साधन और हिन्दी के प्रचार में स्वैच्छिक संस्थानों की भूमिका' तथा 'विश्व में हिन्दी के पठन-पाठन की समस्या'। मॉरीशस सम्मेलन में नागपुर सम्मेलन के निर्णीत प्रस्तावों का पुनः समर्थन किया गया। साथ ही अन्य सुझाव भी प्रस्तुत किए गए कि एक अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी पत्रिका का प्रकाशन हो तथा मॉरीशस में एक विश्व हिन्दी केंद्र की स्थापना की जाए।

नागपुर और मॉरीशस में हुए विश्व हिन्दी सम्मेलनों के परिणामस्वरूप हिन्दी के विश्वव्यापी स्वरूप को एक नयी शक्ति प्राप्त हुई। भारत सरकार की 'विश्व हिन्दी पुरस्कार-१९७८' की योजना ने इसे संतुष्ट करने में योगदान दिया। २४ जनवरी १९७९ में नई दिल्ली के मावलंकर हॉल के ऐतिहासिक समारोह में हिन्दी के प्रति समर्पित पाँच विदेशी विद्वानों को सम्मानित किया गया जिसमें– चेकोस्लोवाकिया के प्रोफेसर आदोलने स्मेकल, जापान के प्रोफेसर क्यूया दोई, फीजी के पंड़ित कमला प्रसाद मिश्र, मॉरीशस के श्री सोमदत्त बखोरी तथा यू.के. के डॉ. रोनाल्ड स्टुअर्ट मैग्रेगर का सम्मान तत्कालीन विदेश मंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने किया।

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन २८–३० अक्टूबर, १९८३ को दिल्ली के इंद्रप्रस्थ स्टेडियम में हुआ। भारत की राजधानी होने के नाते यह सम्मेलन महत्वपूर्ण था। सम्मेलन के अन्तर्गत विचार गोष्ठियों में जिन विषयों पर प्रमुख रूप से चर्चा हुई, वे थे– 'अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी के प्रसार की संभावनाएँ एवं प्रयास', 'भारत के सांस्कृतिक संबन्ध और हिन्दी तथा मानव मूल्यों की स्थापना में हिन्दी की भूमिका।'

चौथा विश्व हिन्दी सम्मेलन २–४ दिसंबर १९९३ में पुनः मॉरीशस में आयोजित हुआ। इस सम्मेलन में जिन विषयों पर विशेष रूप से विचार गोष्ठियों में चर्चा हुई, वे थे– विश्व में हिन्दी का प्रचार-प्रसार, विश्व में हिन्दी भाषा तथा साहित्य की उपलब्धियाँ एवं संभावनाएँ, आज के सन्दर्भ में हिन्दी तथा सांस्कृतिक अस्मिता तथा विश्वव्यापी हिन्दी की प्रगति के लिए ठोस कार्यक्रम एवं स्थायी सचिवालय की स्थापना।

पाँचवा विश्व हिन्दी सम्मेलन २८ मार्च से १ अप्रैल १९९६ में त्रिनिदाद में हुआ। यह सम्मेलन त्रिनिदाद और भारत सरकार ने मिलकर किया। इस सम्मेलन की एक विशिष्टता यह रही कि यह वेस्टइंडीज के इतिहास से उस महत्त्वपूर्ण घटनाक्रम के अंतर्गत सम्पन्न हुआ जब उस द्वीप में भारतीय खेतिहर मज़दूरों के आगमन की १५०वीं वर्षगाँठ मनाई जा रही थी। इस अवसर पर पूरे वर्ष मनाए जाने वाले समारोह में यह विश्व हिन्दी सम्मेलन एक प्रमुख कार्यक्रम के रूप में रखा गया। इस सम्मेलन में हिन्दी भाषा, साहित्य, संस्कृति के विभिन्न पक्षों पर गोष्ठियाँ हुई। हिन्दी के बारे में वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखा गया। सॉफ्टवेयर पर ध्यानाकर्षण किया गया। इस सम्मेलन में हिन्दी की विश्वव्यापी यात्रा प्रगति को नई शक्ति प्राप्त हुई।

छठे विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन लन्दन में १४-१८ सितम्बर १९९९ में किया गया था। यह सम्मेलन शताब्दी का अंतिम सम्मेलन था। यह सम्मेलन भावी पीढ़ी को समर्पित था। इस सम्मेलन की यह उपलब्धि रही कि हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र की एक भाषा के रूप में स्वीकृति प्रदान करने संबधी प्रस्ताव पारित किया गया। इस सम्मेलन में इस बात पर प्रसन्नता व्यक्त की गई कि भारत सरकार ने उसके एक प्रस्ताव को कार्यान्वित करते हुए भारतीय संसद द्वारा पारित एक विशेष अधिनियम द्वारा महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय की एक केंद्रीय विश्वविद्यालय के रूप में स्थापना की है। सम्मेलन में हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन शोध, प्रचार-प्रसार और हिन्दी सृजन के लिए जो प्रयास विभिन्न देशों में हो रहे हैं, उनके महत्त्व को स्वीकार करते हुए यह सिफ़ारिश की गई कि भारत के बाहर सभी देशों में हिन्दी संबंधी उपर्युक्त सभी कार्यों में तालमेल रखने, उसके बारे में सूचना और प्रकाशित संकलित सामग्री एकत्र करने और इसके विश्व भर में सम्प्रेषण के लिए महात्मा गाँधी हिन्दी विश्वविद्यालय एक अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र के रूप में विकसित और सक्रिय हो। हिन्दी के शिक्षण, पाठ्यक्रमों, पुस्तकों, अध्यापकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था भी विश्वविद्यालय करे। सुदूर शिक्षण को सक्रिय करने के लिए इसके द्वारा आवश्यक कदम उठाए जाएँ।

इस सम्मेलन में मॉरीशस में विश्व हिन्दी सचिवालय की स्थापना पर प्रसन्नता व्यक्त की गई और यह अपेक्षा की गई कि यह सचिवालय शीघ्र ही अपना कार्य आरंभ करेगा। इसमें यह भी विश्वास प्रकट किया गया कि यह सचिवालय अगले विश्व हिन्दी सम्मेलन की तैयारी तथा अन्तर्राष्ट्रीय संपर्क के लिए समुचित एवं आवश्यक कार्यवाही करेगा।

सम्मेलन में यह प्रस्ताव भी पास किया गया कि विश्व में बीस से अधिक हिन्दी भाषा-भाषी देश हैं, जहाँ हिन्दी प्रमुख भाषा के रूप में प्रयोग में लायी जाती है। विश्व में हिन्दी भाषा बोलने वालों की संख्या लगभग साठ करोड़ है। यह सभी देश संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य हैं। अतः हिन्दी भाषा को संयुक्त राष्ट्र संघ में मान्यता दी जाए। इसके लिए उच्च राजनैतिक स्तर पर सक्रिय प्रयास की आवश्यकता है।

सम्मेलन में हिन्दी सूचना-तकनीकी के विकास, उनके मानकीकरण, प्रसारण की आवश्यक सुविधा के लिए एक केंद्रीय एजेन्सी स्थापित करने की सिफ़ारिश की गई; जो कि भारत के बाहर स्थित एजेंसियों से जुडे। इस संबंध में भारत सरकार

महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, सीडॉट आदि को इसकी जिम्मेदारी सुपुर्द करें। सूचना तकनीकी का विकास भारत में भाषा-भेद की समस्या के निवारण के लिए एक ऐसा सॉफ्टवेयर बना सकता है जो एक भाषा से दूसरी भाषा में इतना सरल हो जाएगा कि किसी भी भाषा-भाषी को कठिनाई नहीं होगी और भाषा को सीखने में जो प्रतिरोध होता है वह दूर हो जाएगा।

सम्मेलन में यह भी प्रस्ताव रखा गया कि उन सब देशों में जहाँ प्रवासी भारतीय रहते हैं और उन देशों में जहाँ हिन्दी का पठन-पाठन हो रहा है, नई पीढ़ी में हिन्दी को लोकप्रिय बनाने, उसके प्रयोग से प्रोत्साहित रहने और इसके शिक्षण-प्रशिक्षण को आधुनिक साधनों और प्रविधियों से व्यवस्थित करने के लिए आवश्यक कार्य किए जाँए। विज्ञान और प्रौद्यौगिकी को हिन्दी के माध्यम से सर्वसुलभ बनाने हेतु उचित उपाय किए जाएँ।

सम्मेलन में यह भी अनुरोध किया गया कि वह अपने दूतावासों व उच्चायोगों को यह निर्देश दें कि वे अपने-अपने क्षेत्रों में स्थानीय भारतवंशियों से संपर्क करें कि स्थानीय स्कूलों में एक भाषा के रूप में हिन्दी की व्यवस्था प्रारंभ की जा सके।

इस सम्मेलन में हिन्दी महापरिषद फीजी के निमंत्रण को प्रस्तुति पूर्वक स्वीकार करते हुए सर्वसम्मति से निर्णय किया गया कि सातवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन फीजी में आयोजित किया जाए। सम्मेलन में फीजी और भारत सरकार से यह अनुरोध किया गया था कि कार्यवाही के लिए एक उच्चस्तरीय अंतरिम समिति गठित करे और सम्मेलन को सफल एवं सार्थक बनाने के लिए पूरी सहायता सुनियोजित करें।

लंदन का यह छठाँ विश्व सम्मेलन संयुक्त रूप से ब्रिटेन की हिन्दी समिति तथा गीतांजलि बहुभाषीय साहित्य समुदाय, बर्मिंघम ; भारतीय भाषा संगम, यार्क ; नेहरु केन्द्र तथा भारतीय विद्या भवन, लंदन एवं 'संपद' बर्मिंघम द्वारा आयोजित किया गया था। १८ सितंबर १९९९ को इस सम्मेलन सत्र में हिन्दी के प्रचार-प्रसार और उसकी प्रगति में उल्लेखनीय योगदान करने के लिए बत्तीस विद्वानों का सम्मान किया गया था। छठे विश्व हिन्दी सम्मेलन में कुछ महत्त्वपूर्ण बातों की ओर ध्यान आकर्षित किया गया, वह यह कि- २१वीं सदी में प्रवेश करते ही इस समय की सबसे बड़ी माँग यह होनी चाहिए कि सूचना तकनीकी का लाभ उठाकर हिन्दी को विश्व संप्रेषण में सम्मान दिलाना और इसके लिए केंद्रीय

एवं शाखा स्तर पर आवश्यक प्रबंध करना। साथ ही शिक्षा रचना शोध में विश्वव्यापी कार्यों का समन्वय कराना होगा। इन कार्यों से जुड़े हुए लोगों की सूचना निर्देशिका तैयार करना तथा हिन्दी के क्षेत्रों में कार्य कर रही शैक्षिक, साहित्यिक तथा तकनीकी संस्थाओं का संयोजन करना होगा। इसके अलावा हिन्दी को नई पीढ़ी के लिए आकर्षक बनाने के लिए दृश्य-श्रृष्य माध्यमों को संतुलित करने की व्यवस्था पर ज़ोर देना होगा।

सातवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन जो कि इस सदी यानि २१वीं सदी का पहला हिन्दी सम्मेलन था लैटिन अमेरिकी देश सूरीनाम की राजधानी पारामारिबो में ६-९ जून २००३ में सम्पन्न हुआ। यह सम्मेलन एक ऐसे देश में आयोजित हुआ जहाँ १३० वर्ष पूर्व भारत से गए प्रवासियों ने सहज, स्नेह और श्रद्धा भाव के साथ हिन्दी को अब भी सजीव भाषा के रूप में संजो कर रखा है। इस सम्मेलन का उद्घाटन सूरीनाम के राष्ट्रपति रोनाल्डो बेनेत्शियान ने किया। राष्ट्रपति बेनेत्शियान ने भारतीय संस्कृति संबंन्ध परिषद् की पत्रिका *'गगनाचल'* के विशेषांक का विमोचन किया। हिन्दी विदुषी प्रोफेसर मारिया क्रिस्टो ने *'विश्व हिन्दी स्मारिका'* का विमोचन किया।

चार दिन के सम्मेलन के अंत में आयोजित एक विशेष सत्र में छः प्रस्ताव पारित किए गए, जिनमें हिन्दी भाषा और साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए शिक्षण संस्थाओं के बीच समन्वय स्थापित करने, भारतवंशियों के बीच हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने और दुनिया के हिन्दी विद्वानों की एक निदेशिका बनाने का प्रस्ताव भी शामिल किया गया था। सम्मेलन में पारित प्रस्तावों में कहा गया कि हिन्दी भाषा और संस्कृति वैश्विक विरासत का प्रतिनिधित्व करती है। यह भाषा दुनिया के १०० से भी अधिक देशों में बोली जाती है। हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र की भाषा बनाने पर पिछले छः विश्व हिन्दी सम्मेलनों में चर्चा हुई थी और मॉरीशस सम्मेलन के बाद से इस संबन्ध में लगातार प्रस्ताव पारित किए गए। सम्मेलन में प्रस्ताव के प्रति सरकार से आग्रह किया गया कि वह संयुक्त राष्ट्र में हिन्दी भाषा को शामिल करने के लिए अपने प्रयास तेज करे और इसके लिए अन्य देशों से समर्थन हासिल करे। भारतीय मूल के लोगों के बीच सांस्कृतिक संपर्क मज़बूत बनाने तथा अपने पूर्वजों की मातृभाषा से संबंध बनाए रखने की आवश्यक़ता के मद्देनज़र सम्मेलन में वैश्विक स्तर पर हिन्दी भाषा

के अध्यापन के लिए विदेशों में स्थित विभिन्न विश्वविद्यालयों और संस्थाओं में हिन्दी पीठ स्थापित किए जाने पर भी प्रस्ताव में विशेष बल दिया गया। भारत समेत दुनिया के विभिन्न हिस्सों में बहुत से समर्पित व्यक्तियों तथा संस्थाओं द्वारा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए किए जा रहे कार्यों की सराहना करने के साथ ही सम्मेलन में इन व्यक्तियों और संस्थाओं के बीच बेहतर तालमेल की ज़रूरत को रेखांकित किया गया। प्रस्ताव में सरकार से अपील की गई कि वह विदेशों में अधिक से अधिक विश्वविद्यालयों में हिन्दी पीठ की स्थापना करें।[२३]

लेकिन समय के साथ-साथ ऐसा प्रतीत होने लगा है कि यह आयोजन अपने उद्देश्य से भटककर महज उत्सवधर्मी बन गया है। आज इस बात की आवश्यकता है कि पिछले विश्व हिन्दी सम्मेलनों में लिए गए निर्णयों के क्रियान्वयन की सिर्फ खानापूर्ति न की जाय बल्कि उन्हें पूर्ण रूप से अमली जामा पहनाया जाय। महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय को सजीव, सक्रिय एवं सम्मानजनक विश्व शिक्षा संस्थान बनाया जाय। अन्तर्राष्ट्रीय विश्व हिन्दी सचिवालय का केन्द्र मॉरीशस के अलावा फीजी, सूरीनाम, दक्षिण अफ्रीका, लंदन और दिल्ली में भी खोला जाय। संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को आधिकारिक भाषा बनाने की सक्रिय राजनयिक पहल की जाय, विदेशों में हिन्दी अध्ययन-अध्यापन एवं अनुसंधान पीठ समर्पित किया जाय तथा अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलनों तथा विश्व हिन्दी सम्मेलनों को गंभीर बौद्धिक स्वरूप प्रदान किया जाय। हिन्दी के वैश्विक स्वरूप को सुदृढ़ बनाने के दिशा में सबसे पहला कदम यह उठाना है कि भारत सरकार और यहाँ की जनता अपने प्रिय राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा को सही अर्थों में समाज, शिक्षा संस्थानों तथा सरकारी कार्यालयों के व्यवहार की भाषा बनाए। तभी वैश्विक परिप्रेक्ष्य में हिन्दी का भविष्य पूर्णतः सुखद और सुनिश्चित होगा।

अब तक हम लोगों ने यह देखा कि विश्वस्तर पर हिन्दी अपनी पहचान बना चुकी है। अब आगे यह देखना जरुरी है कि भारत में हिन्दी की स्थिति कैसी है।

१.३ भारत में हिन्दी

भारत एक विशाल देश है। यहाँ अनेक धर्म, रीति-रिवाज़ और भाषाएँ प्रचलित हैं परन्तु इन विविधताओं के बावजूद भी अद्भुत एकता दिखाई देती है। प्राचीनकाल में भाषाई एकता की स्थापना संस्कृत के माध्यम से हुई थी, आज यही कार्य हिन्दी

भाषा के माध्यम से हो रहा है। हिन्दी लगभग १००० वर्षों से संपर्क भाषा के रूप में इस देश में विद्यमान रही है।

सच तो यह है कि भारत का एक-एक कोना बुहभाषा-भाषी है, पर भाषा का सहारा लेकर हम इसमें क्षेत्रीयता का रंग भरते चलते हैं। क्षेत्रीय अस्मिता के प्रतीक के रूप में भाषा के प्रश्न को उभारने का काम राजनीतिज्ञों के लिए सुविधाजन्य है क्योंकि भाषा व्यक्तियों को जोड़ने और तोड़ने की दोनों ही शक्तियों से बंधी हुई है। भारतवर्ष में नवजागरण के साथ-साथ हिन्दी के प्रचार-प्रसार के अवसर बढ़े, भारत के अखिल भारतीय ख्याति के नेताओं ने देश की एकता का स्वप्न देखा और राष्ट्रीय एकता की भावना पैदा करने का प्रयास किया। उन्होंने हिन्दी के तरफ विशेष ध्यान दिया।

भारत जैसे देश के समक्ष भाषा की समस्या विकट थी क्योंकि इसके समाधान के लिए स्वतंत्रता के बाद अधिकांशतः नेताओं ने राजभाषा के रूप यह महसूस किया कि राजभाषा का स्थान अंग्रेजी के बदले किसी भारतीय भाषा को दिया जाय। राजभाषा के प्रश्न पर काफी विवाद हुआ। कुछ नेता हिन्दुस्तानी के पक्षधर थे और हिन्दीतर प्रदेशों के बहुत से प्रतिनिधि हिन्दुस्तानी के विरोधी थे।[२४]

६-७ अगस्त १९४९ को राष्ट्रभाषा व्यवस्था परिषद् का अधिवेशन दिल्ली में हुआ। इस अधिवेशन में हिन्दीतर भाषी नेताओं ने भी हिन्दी का खुलकर समर्थन किया। काफी चर्चा के बाद परिषद् ने सर्वसम्मति से देवनागरी लिपि में लिखी हिन्दी को ही देश की राजभाषा बनाने का प्रस्ताव स्वीकार किया।[२५]

हिन्दी भाषा मुख्यतः उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, दिल्ली, राजस्थान, हरियाणा तथा हिमाचल प्रदेश की कार्यालयी भाषा है।

१.४ संविधान में हिन्दी

हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा (राजभाषा) बनाने की दृष्टि से हमारे संविधान में विशेष उल्लेख किया गया है, जिसका जिक्र यहाँ पर विस्तार से किया गया है। २६ जनवरी १९५० को संविधान के लागू होने के लगभग पाँच वर्ष बाद केंद्रीय कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग को सरकारी मान्यता मिली। ८ दिसंबर १९५५ को यह आदेश दिये गये कि प्रत्येक मंत्रालय स्वयं इस बात का निश्चय करेगा कि उसका कितना काम हिन्दी में हो सकता है, और इसके लिए उसे कितने कर्मचारियों की जारूरत

होगी। वर्ष १९५९ में राजभाषा आयोग बना, जिसके अनुसार भाषा समस्या को समग्र रूप में न देखकर खंडों में देखा गया और उसी तरह समाधानों का सुझाव भी दिया गया। २६ जनवरी १९६५ से चूँकि केन्द्र की राजभाषा हिन्दी बन जाने वाली थी, अतः संसद सदस्य श्री फ्रैंक एंथनी के अनुरोध पर सन् १९६३ में राजभाषा विधेयक पारित किया गया, जिसका आशय था कि हिन्दी के साथ-साथ अंग्रेजी भी सभी राजकीय प्रयोजनों तथा संसदीय कार्यों के लिए प्रयोग में लायी जाएगी। इस अधिनियम में संशोधन कर सरकार ने १९६७ में राजभाषा संशोधन विधेयक पारित किया, जिसका उद्देश्य हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देना था। इसके पश्चात् १९७६ में राजभाषा के प्रगामी कार्यान्वयन के लिए कुछ नियम बनाये गये। इस प्रकार केन्द्र के कार्यालयों में हिन्दी का जो कार्य अब तक स्वेच्छा की भावना पर आधारित था, वह अब बाध्यता से जुड़ गया। इन नियमों-अधिनियमों के अनुपालन के लिए वर्ष १९८१ में केन्द्रीय सचिवालय राजभाषा सेवा का गठन किया गया। इस प्रकार हिन्दी का पद पदोन्नति से भी जोड़ दिया गया।

केन्द्र के कार्यालयों में हिन्दी का कार्य चूँकि बाध्यता एवं पदोन्नति की भावनाओं से जुड़ता गया, इसलिए हिन्दी मौलिक लेखन के स्थान पर अनुवाद की भाषा भी बनने लगी।

वस्तुतः हिन्दी को राजभाषा बनाने संबंधी बहस एक दुःखद स्थिति थी क्योंकि संसार के किसी देश में ऐसा नहीं हुआ कि उसे स्वाधीन होने के बाद भी सोचना पड़ा हो कि उसकी राजभाषा देश की भाषा हो या विदेश की।[२६] डॉ. भीमराव अम्बेडकर भारतीय संविधान के निर्माताओं में प्रमुख थे, जिन्होंने कहा था कि संविधान का कोई भी अनुच्छेद इतना विवादास्पद साबित नहीं हुआ जितना कि राजभाषा हिन्दी से संबंधित अनुच्छेद। अन्य किसी अनुच्छेद का इतना विरोध नहीं हुआ और न ही किसी अनुच्छेद ने इतनी गर्मी पैदा की। संभवतः यही कारण था कि संविधान में राजभाषा संबंधी प्रावधानों में स्थिति पर्याप्त अस्पष्ट रखी गई।[२७]

जहाँ तक भाषा का सवाल है, आजादी के बाद के ये साल गुलामी के सालों से भी ज्यादा बदतर सिद्ध हुए हैं। जब भारत गुलाम था तो स्वभाषा के अभिमान की ज्वाला महर्षि दयानन्द और महात्मा गाँधी जैसे महापुरुषों ने देश के कोने-कोने में धधका रखी थी। ऐसा लगता था कि देश के आजाद होते ही अंग्रेजों के साथ उनकी भाषा-अंग्रेजी भी विदा हो जायेगी, पर ऐसा हुआ नहीं। संविधान की धारा ३४३ में

हिन्दी को राजभाषा तो माना गया किन्तु उसके साथ ही अंग्रेजी को भी महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया। १९५० के संविधान ने कहा कि १५ साल तक यानी १९६५ तक तो सरकार के सारे काम हिन्दी या अंग्रेजी किसी भी भाषा में चल सकते हैं और १९६५ के बाद कौन-कौन से कामों से अंग्रेजी को हटाना है, यह तय करने के लिए १९५५ और १९६० में दो भाषा-आयोग बनाये जायेंगे। उनकी सिफारिशों पर संसद सदस्यों की एक समिति विचार करेगी और इस समिति की रिपोर्ट के आधार पर यदि राष्ट्रपति उचित समझेंगे तो अंग्रेजी के प्रयोग पर रोक लगायेंगे।

साथ ही यह भी जोड़ दिया गया कि यदि संसद उचित समझेगी तो धारा ३४३ (३) के अंतर्गत कुछ विशिष्ट क्षेत्रों में अंग्रेजी को १९६५ के बाद भी बनाये रखने के लिए कानून बना सकती है। इसके अलावा धारा ३४७ में बहुत ही साफ शब्दों का पत्ता काट दिया गया। धारा ३४७ के अनुसार सर्वोच्च न्यायालय, उच्च न्यायालय तथा कानून की प्रामाणिक भाषा केवल अंग्रेजी ही होगी। प्रान्तों के न्यायालयों में सुनवाई और बहस चाहे भारतीय भाषाओं में करने की छूट राष्ट्रपति दे सकता है लेकिन अदालतों के निर्णय, आदेश आदि केवल अंग्रेजी में होंगे। इसी प्रकार प्रान्तीय विधान सभाओं के कानून चाहे प्रान्तीय भाषाओं मे हों लेकिन केवल उनके अंग्रेजी अनुवाद ही प्रामाणिक माने जायेंगे। इतना ही नहीं, इस धारा में फेरबदल करने के लिए संसद को कोई अधिकार नहीं दिया गया। संसद यदि इस प्राविधान में कोई परिवर्तन करना चाहे तो उसे राष्ट्रपति तब तक इस विषय में अपनी सहमति नहीं देंगे जब तक कि वह भाषा-आयोगों और संसदीय समितियों की रिपोर्ट पर विचार न कर लें।

सन् १९५५ में शासकीय आयोग बना, उसने राष्ट्रपति के सामने १९५६ में और संसद के सामने १९५७ में अपनी सिफारिशें पेश कीं। संसद की राजभाषा समिति ने इन सिफारिशों पर विचार करते हुए १९५० के संवैधानिक प्राविधानों को शीर्षासन करा दिया और दो टूक शब्दों में कहा कि १९६५ तक अंग्रेजी को संघ की मुख्य राजभाषा और हिन्दी को उसकी सह राजभाषा के रूप में रखा जाय। और जब १९६५ में हिन्दी मुख्य राजभाषा बने तो अंग्रेजी को जब तक जरुरत हो तब तक कुछ विशेष कार्यों के लिए सह-राजभाषा के रूप में बनाए रखा जाय। अगर दूसरे शब्दों मे कहा जाय तो, भाषा आयोग और भाषा समिति दोनों ने अंग्रेजी के प्रयोग को सीमित करने के बजाय उसे किसी न किसी रूप में बढ़ाने और टिकाये रखने की सलाह दी।

१९५९ में संसद में पं. जवाहरलाल नेहरु ने अहिन्दी-भाषी राज्यों को अंग्रेजी के प्रश्न पर विशेषाधिकार प्रदान कर दिया। उन्होंने आश्वासन दे दिया कि जब तक अहिन्दी-भाषी राज्य चाहेंगे, संघ के कार्यों में अंग्रेजी का रूतबा कायम रहेगा। १९६० में इसी आशय का आदेश राष्ट्रपति ने जारी कर दिया। गृह-मंत्रालय ने एक आदेश में साफ-साफ कहा कि संघ के कार्यों के लिए वर्तमान में अंग्रेजी के प्रयोग पर किसी भी प्रकार की प्रतिबन्ध नहीं लगाया जाय। १९६३ में भारत सरकार ने राजभाषा विधेयक प्रस्तुत किया, जिसका उद्देश्य तत्कालीन गृहमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री के शब्दों में एक 'अनवरत-द्विभाषावाद' को चलाये रखना था।

१९६५ में हिन्दी स्वतः ही भारत की प्रमुख राजभाषा बन गई पर उधर दक्षिण में विरोध जोर पकड़ने लगा, परिणामस्वरूप १९६७ में भारत सरकार ने १९६३ के राजभाषा विधेयक में संशोधन पेश किया, जिसे १९६८ में संसद ने स्वीकार कर लिया। इस संशोधित राजभाषा विधेयक में ऐसा प्राविधान कर दिया गया कि जब तक एक भी अहिन्दी-भाषी राज्य चाहेगा, संघ सरकार का कार्य अंग्रेजी में चलता रहेगा। हिन्दी भाषी राज्य यदि किसी अहिन्दी-भाषी राज्य को पत्र लिखेगा तो उसका अंग्रेजी अनुवाद साथ में भेजना पड़ेगा तथा जब तक कर्मचारी अच्छी हिन्दी न सीख लें तब तक संघ सरकार के विभिन्न विभागों में हिन्दी पत्रों के साथ अंग्रेजी अनुवाद संलग्न करना आवश्यक है यानि अंग्रेजी अनिवार्य रूप में बनी रहेगी। इसका उलटा नहीं होगा अर्थात् यदि कोई विभाग अंग्रेजी में पत्र भेजे या कोई हिन्दी-भाषी राज्य को अंग्रेजी में पत्र भेजे तो उसके साथ उसका हिन्दी अनुवाद भेजना जरूरी नहीं है।

वैसे देखा जाय तो स्वयं संविधान में अंग्रेजी के लिए काफी सम्माननीय स्थान प्रदान किया गया है। लेकिन आज अगर हिन्दी को उसका प्रमुख स्थान वापस दिलाना है तो भारत की जनता और उसके प्रतिनिधियों को चाहिए कि संविधान के भाषा संबंधी भाग को फिर से पूरा लिखने की माँग करें और नये भाषा प्राविधान में अंग्रेजी का कहीं नाम तक भी नहीं आए । सारे देश के प्रशासन को हिन्दी और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के द्वारा जोड़ा जाय। आवश्यक है केन्द्र बहुभाषी बने। अंग्रेजी का संविधान से खात्में का सबसे बड़ा परिणाम यह होगा कि एक नये भारत का निर्माण होगा और हिन्दी के विकास के लिए अनेक रास्ते खुल जायेंगे और जब एक बार रास्ता खुल जाय तो मंजिल पर पुहँचना कठिन नहीं रह जायेगा।

१.४.१ संविधान के राजभाषा संबंधी अनुच्छेद तथा धाराएँ

संसद में प्रयोग की जाने वाली भाषा- अनुच्छेद १२० की धारा १ भाग १७ में किसी बात के होते हुए भी किन्तु अनुच्छेद ३४८ के उपबन्धों के अधीन रहते हुए संसद में कार्य हिन्दी या अंग्रेजी में किया जायेगा।

परन्तु यथास्थिति राज्यसभा का सभापति या लोकसभा का अध्यक्ष अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को जो हिन्दी या अंग्रेजी में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, उसकी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा।

धारा २: जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे तब तक इस संविधान के प्रारंभ के पन्द्रह वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् यह अनुच्छेद ऐसे प्रभावी होगा मानो 'या अंग्रेजी में' शब्दों का उसमें से लोप कर दिया गया है।

संघ की राजभाषा

३४३ (१) संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा।

(२) खंड १. से किसी बात के होते हुए भी इस संविधान के प्रारंभ से पन्द्रह वर्षकी कालावधि के लिए संघ के उन सब राजकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा प्रयोग की जाती रहेंगी, जिनके लिए ऐसे प्रारंभ के ठीक पहले यह प्रयोग की जाती थी। परन्तु राष्ट्रपति उक्त कालावधि में, आदेश द्वारा, संघ के राजकीय प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी भाषा के साथ-साथ हिन्दी भाषा का तथा भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप के साथ-साथ देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा।

(३) इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी संसद उक्त पन्द्रह साल की कालावधि के पश्चात् विधि द्वारा-

(क) अंग्रेजी भाषा का, अथवा

(ख) अंकों के देवनागरी रूप का,

ऐसे प्रयोजनों के लिए प्रयोग उपबंधित कर सकेगी जैसे कि ऐसे विधि में उल्लेखित हो।

राजभाषा के लिए संसद का आयोग और समिति

३४४ (१) राष्ट्रपति इस संविधान के प्रारम्भ में पाँच वर्ष की समाप्ति पर तथा तत्पश्चात् ऐसे प्रारंभ में दश वर्ष की समाप्ति पर आदेश द्वारा एक आयोग गठित करेगा, जो एक सभापति और अष्टम अनुसूची में उल्लिखित विभिन्न भाषाओं[२८] का प्रतिनिधित्व करने वाले अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगा, जैसे कि राष्ट्रपति नियुक्त करे तथा आयोग द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया का आदेश परिभाषित करेगा।[२९]

(२) राष्ट्रपति को–

(क) संघ के राजकीय प्रयोजनों में सब या किसी एक के लिए हिन्दी भाषा के लिए उत्तरोत्तर अधिक प्रयोग के,

(ख) संघ के राजकीय प्रयोजनों में से सब या किसी के लिए अंग्रेजी भाषा के प्रयोग पर निर्बंधनों के,

(ग) अनुच्छेद ३४८ में वर्णित प्रयोजनों में से सब या किसी के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा के,

(घ) संघ के किसी एक या अधिक उल्लिखित प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने वाले अंकों के रूप के,

(ड़) संघ की राजभाषा तथा संघ और किसी राज्य के बीच अथवा एक राज्य और दूसरे के बीच संचार की भाषा तथा उनके प्रयोग के बारे में राष्ट्रपति द्वारा आयोग से पृच्छा किए हुए क़िसी अन्य विषय के बारे में सिफारिश करने का आयोग का कर्त्तव्य होगा।

(३) खण्ड २ के अधीन अपनी सिफ़ारिशों को करने में आयोग भारत की औद्योगिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक उन्नति का तथा लोक सेवाओं के बा़रे में अहिन्दी भाषा–भाषी क्षेत्रों के लोगों के न्यायपूर्ण दावों और हितों का सम्यक ध्यान रखेगा।

(४) तीस सदस्यों की एक समिति गठित की जाएगी, जिनमें से बीस लोकसभा के सदस्य होंगे, जो कि क्रमशः लोकसभा के सदस्यों तथा

राज्यसभा के सदस्यों द्वारा अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।

(५) खण्ड १ के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों की परीक्षा करना तथा उन पर अपनी राय का प्रतिवेदन राष्ट्रपति को प्रस्तुत करना समिति का कर्त्तव्य होगा।

(६) अनुच्छेद ३४३ में किसी बात के होते हुए भी राष्ट्रपति खण्ड ५ में निर्दिष्ट प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् उसे सारे प्रतिवेदन या उसके किसी भाग के अनुसार निदेश निकाल सकेगा।

राज्य की राजभाषा या राजभाषाएँ

३४५ (१) अनुच्छेद ३४६ और ३४७ के उपबन्धों के अधीन रहते हुए राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा उस राज्य के राजकीय प्रयोजनों में से सब या किसी के लिए प्रयोग के अर्थ उस राज्य में प्रयुक्त होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अनेक को या हिन्दी को अंगीकार कर सकेगा।

परन्तु जब तक राज्य का विधान मण्डल विधि द्वारा इसे अन्यथा उपबन्ध न करे तब तक राज्य के भीतर उन राजकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा प्रयोग की जाती रहेगी, जिनके लिए संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले वह प्रयोग की जाती थी।

एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच में अथवा राज्य और संघ के बीच में संचार के लिए राजभाषा

३४६ (१) सघ में राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होने के लिए तत्समय प्राधिकृत भाषा, एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच में तथा किसी राज्य और संघ के बीच में संचार के लिए राजभाषा होगी, परन्तु यदि दो या अधिक राज्य करार करते हैं कि ऐसे राज्योंके बीच में संचार के लिए राजभाषा हिन्दी भाषा होगी, तो ऐसे संचार के लिए वह भाषा प्रयोग की जा सकेगी।

३४७ तद्विषयक माँग की जाने पर यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाये कि किसी राज्य के जन-समुदाय का पर्याप्त अनुपात चाहता है कि उसके

द्वारा बोली जाने वाली कोई भाषा राज्य द्वारा अभिज्ञात की जाए तो वह निदेश दे सकेगा कि ऐसी भाषा को उस राज्य में सर्वत्र अथवा उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजन के लिए जैसा कि वह उल्लिखित करे राजकीय अभिज्ञा दी जाय।

उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में तथा अधिनियमों, विधेयकों आदि में प्रयोग की जाने वाली भाषा

३४८ (१) इस भाग के पूर्ववर्ती उपबन्धों में किसी बात के होते हुए भी जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे, तब तक–

(क) उच्चतम न्यायालय में तथा प्रत्येक उच्च न्यायालय में सब कार्यवाहियाँ

(ख) जो

अ. विधेयक, अथवा उन पर प्रस्तावित किए जाने वाले जो संशोधन संसद के प्रत्येक सदन में पुनः स्थापित किए जाएँ, उन सबके प्राधिकृत पाठ

ब. अधिनियम संसद द्वारा या राज्य के विधान मण्डल द्वारा पारित पाठ किए जाएँ, तथा जो अध्यादेश राष्ट्रपति या राज्यपाल या राज प्रमुख द्वारा प्राख्यापित किए जाएँ उन सबसे प्राधिकृत पाठ तथा

स. आदेश, नियम, विनियम और उपविधि इस संविधान के अधीन अथवा संसद या राज्यों के विधान मण्डल द्वारा निर्मित किसी विधि के अधीन निकाले जाएँ उन सबके प्राधिकृत पाठ, अंग्रेजी भाषा में होंगे।

(२) खण्ड १ के उपखंड क में किसी बात के होते हुए भी किसी राज्य के राज्यपाल या राजप्रमुख राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से हिन्दी भाषा का या उस राज्य में राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग उस राज्य में मुख्य स्थान रखने वाले उच्च न्यायालय में की कार्यवाहियों के लिए प्राधिकृत कर सकेगा, परन्तु इस खण्ड की कोई बात वैसे उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय, आज्ञाप्ति अथवा आदेश को लागू न होगी।

(३) खण्ड १ के उपखंड ख में किसी बात के होते हुए भी, जहाँ किसी राज्य के विधान मण्डल में पुनः स्थापित विधेयकों का उसके द्वारा

पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल या राज्यप्रमुख द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में अथवा उस उपखंड की कंडिका में निर्दिष्ट किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा से अन्य किसी भाषा के प्रयोग को विहित किया है वहाँ उस राज्य के राजकीय सूचनापत्र में उस राज्य के राज्यपाल या राजप्रमुख के प्राधिकार से प्रकाशित अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद उस खंड के अभिप्रायों के लिए उसका अंग्रेजी भाषा में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

भाषा सम्बन्धी कुछ विधियों के अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया

३४९ इस संविधान के प्रारंभ से १५ वर्षों की कलावधि तक अनुच्छेद ३४८ के खंड १ में वर्णित प्रयोजनों में से किसी के लिए प्रयोग का जाने वाली भाषा के लिए उपबंध करने वाला कोई विधेयक या संशोधन संसद के किसी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना न तो पुनः स्थापित और न प्रस्तावित किया जाएगा तथा ऐसे किसी विधेयक के पुनः स्थापित अथवा ऐसे किसी संशोधन के प्रस्तावित किए जाने की मंजूरी अनुच्छेद ३४४ के खंड १ के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों पर तथा उस अनुच्छेद के खंड ४ के अधीन गठित समिति के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् ही राष्ट्रपति देगा।

३५० किसी व्यथा के निवारण के लिए संघ या राज्य के किसी पदाधिकारी या प्राधिकारी को यथास्थिति संघ में प्रयोग होने वाले किसी भाषा में अभिवेदन देने का प्रत्येक व्यक्ति को हक होगा।

हिन्दी भाषा के विकास के लिए निदेश

३५१ हिन्दी भाषा की प्रसार–वृद्धि करना, उसका विकास करना ताकि वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सब तत्त्वों की अभिव्यक्ति की माध्यम हो सके तथा उसकी आत्मीयता में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी और अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भारतीय भाषाओं के रूप, शैली और पदावली, को आत्मसात करते हुए तथा जहाँ आवश्यक या वांछनीय हो वहाँ उसके शब्द–भंडार के लिए मुख्यतः

संस्कृत से तथा गौणतः वैसी उल्लिखित भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करना संघ का कर्त्तव्य होगा।[३०]

भारतीय संविधान के राजभाषा संबंधी उपर्युक्त अनुच्छेदों के अध्ययन, चिन्तन एवं मनन से स्पष्ट हो जाता है कि संविधान के अनुच्छेद ३४३ की धारा (२) ही सारे कुचक्रों की वह कुंजी है जिसने राजभाषा समस्या को त्रिशंकु बना दिया और धारा (३) ऐसी प्रचंड धारा है, जो न तो स्वयं विराम लेती है और न राजभाषा हिन्दी की समस्या तथा उसके आन्दोलन को विराम लेने देती है।[३१]

संविधान के अनुच्छेद ३४३ (२) में किए गए प्रावधान से स्पष्ट है कि आरम्भ में ही हिन्दी के अबाध प्रयोग पर १५ वर्षों के लिए नियंत्रण सा लगा दिया गया तथा अनुच्छेद ३५१ के अनुसार यह आशा की गयी कि पारिभाषिक शब्दावली इस अवधि में तैयार कर ली जाएगी जिसके लिए आवश्यक व्यवस्था करने का दायित्व संघीय सरकार का होगा।

इस परम्परा को आगे बढ़ाने की बजाय हिन्दी की पारिभाषिक शब्दावली को अंग्रेजी के अनुवाद पर आधारित कर दिया गया तथा यह मान लिया गया कि हिन्दी असमृद्ध है। डॉ. राममनोहर लोहिया के कथानुसार असमृद्धता सापेक्ष शब्द है– जर्मन, रूसी अथवा अंग्रेजी की तुलना में असमृद्धता जाहिर है कि किताबों और पारिभाषिक शब्दों की संख्या और व्यापकता से समृद्धता तौली जाय तब तो जितने अर्से में हिन्दी कुछ बढ़ेगी, उतने में अंग्रेजी और कुछ बढ़ चुकी होगी। तब इसका कोई अन्त न होगा। हिन्दी के दुश्मन इस तर्क का अनन्तकाल तक इस्तेमाल करते रहेंगे तथा हिन्दी के दोस्त कोई उत्तर न दे सकेंगे।[३२] जहाँ तक राजभाषा का प्रश्न है ऐसा प्रतीत होता है कि हिन्दी के संबंध में डॉ. लोहिया का उपर्युक्त कथन सदा सर्वदा तक सही रहेगा।

१.४.२ हिन्दी के प्रयोग संबंधी राष्ट्रपति के आदेश

भारतीय संविधान के अनुच्छेद ३४३ (२) में प्रदत्त अधिकार के अधीन राष्ट्रपति ने २७ मई, १९५२ को एक आदेश जारी किया जिसके द्वारा राज्य के राज्यपालों, उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्तियों के अधिपत्रों में संघ के राजकीय प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा के साथ–साथ हिन्दी भाषा तथा भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप के साथ–साथ देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत किया गया।[३३]

राष्ट्रपति ने संविधान के अनुच्छेद ३४३ (२) के द्वारा प्राप्त अधिकार का १९५५ में दूसरी बार प्रयोग किया। जिसके अनुसार संघ के निम्नलिखित सरकारी प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी के साथ हिन्दी के प्रयोग को प्राधिकृत किया गया।[३४]

१. जनता के साथ पत्र-व्यवहार।
२. प्रशासनिक रिपोर्टों, सरकारी पत्रिकाओं तथा संसद के प्रस्तुत की जाने वाली रिपोर्ट।
३. सरकारी संकल्प तथा विधायी अधिनियमिति।
४. जिन राज्य सरकारों ने हिन्दी को सरकारी भाषा के रूप में अपना लिया हो, उनके साथ पत्र-व्यवहार।
५. संधिपत्र और करार।
६. अन्य देशों की सरकारों तथा उनके दूतों और अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ पत्र-व्यवहार।
७. राजनयिक तथा कांसुली अधिकारियों और अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में भारत के प्रतिनिधि को जारी किये जाने वाले कागजात।

विभिन्न मंत्रालयों में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए गृह-मंत्रालय ने ८ दिसम्बर १९५५ को एक विज्ञप्ति जारी करके सभी मंत्रालयों को निम्नलिखित सुझाव दिये :

१. जनता से प्राप्त पत्रों का उत्तर यथा संभव हिन्दी में दिया जाय। पत्र की भाषा सरल होनी चाहिए।
२. प्रशासनिक रिपोर्टों, सरकारी पत्रिकाओं, संसद को प्रस्तुत की जानेवाली रिपोर्टों आदि को यथासंभव अंग्रेजी और हिन्दी दोनों में प्रकाशित किया जाए।
३. सरकारी संकल्पों, विधायी अधिनियमों आदि को यथासंभव अंग्रेजी-हिन्दी में जारी किया जाए, किन्तु यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए कि अंग्रेजी पाठ ही प्रामाणिक माना जाएगा।
४. जिन राज्य सरकारों ने हिन्दी को राजभाषा स्वीकार कर लिया है, उनके साथ पत्र-व्यवहार में हिन्दी का अनुवाद भी भेजा जाए ताकि सांविधानिक कठिनाईयों का सामना न करना पड़े।

१.४.२.१ राजभाषा आयोग, १९५५

भारतीय संविधान के अनुच्छेद ३४४ खंड १. के अनुसार राष्ट्रपति ने ७ जून १९५५ को एक राजभाषा आयोग का गठन मुम्बई के भूतपूर्व मुख्यमंत्री स्वर्गीय बालगंगाधर खेर की अध्यक्षता में किया। इसमें विभिन्न राज्यों के २० प्रतिनिधि रखे गये जिसने जुलाई १९५५ में राष्ट्रपति को प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में अत्यधिक ठोस सुझाव दिये।

१. भारत के संपूर्ण जनतांत्रिक आधार को ध्यान में रखते हुए अखिल भारतीय स्तर पर सामूहिक माध्यम के रूप में अंग्रेजी को स्वीकार करना संभव नहीं तथा भारतीय भाषाओं के माध्यम से ही अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के कार्यक्रम के प्रश्न पर विचार किया जा सकता है। विज्ञान एवं अनुसंधान के क्षेत्रों तथा अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में अंग्रेजी भाषा का ज्ञान आवश्यक है, परन्तु शिक्षा, प्रशासन, सार्वजनिक जीवन एवं दैनिक कार्यकलाप में विदेशी भाषा का व्यवहार उचित्त नहीं है।

२. यद्यपि साहित्यक दृष्टि से भारत की सभी भाषाएँ समृद्ध हैं, फिर भी अधिक लोगों द्वारा बोली तथा समझी जाने के कारण हिन्दी समस्त भारत के लिए एक सुस्पष्ट भाषा–माध्यम है।

३. पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण में स्पष्टता, अर्थ की शुद्धता, सरलता, पाण्डित्यपूर्ण भाषा का त्याग एवं अधिकाधिक देशज और लोकप्रिय शब्दों के प्रयोग पर ध्यान दिया जाना चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली को भारतीय भाषाओं की प्रकृति के अनुसार थोड़े हेरफेर के साथ स्वीकार कर लेना चाहिए। पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण की गति तीव्र होनी चाहिए।

४. १४ वर्ष की उम्र तक प्रत्येक विद्यार्थी को हिन्दी का उचित ज्ञान प्राप्त कराया जाए ताकि प्रत्येक नागरिक सार्वजनिक जीवन की गतिविधियों और सरकार की कार्यवाहियों को समझ सके।

५. सारे देश में माध्यमिक शिक्षा के स्तर पर हिन्दी का शिक्षण अनिवार्य कर दिया जाए। हिन्दी–भाषी क्षेत्र के विद्यार्थियों के लिए दूसरी दक्षिण भारतीय भाषाओं का ज्ञान अनिवार्य किया जाना आयोग को मान्य नहीं है।

६. शिक्षा के माध्यम के रूप में विषय और शिक्षण की सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए सभी विश्वविद्यालय आपस में परामर्श करके निर्णय करें कि भिन्न-

भिन्न अभ्यासक्रमों के लिए किस माध्यम को स्वीकार किया जाए। परन्तु फिर सभी विश्वविद्यालयों को चाहिए कि हिन्दी माध्यम में जो विद्यार्थी परीक्षाओं में बैठना चाहें, उनके लिए वे उचित प्रबन्ध करें।

७. वैज्ञानिकी एवं तकनीकी शिक्षण-संस्थाओं में सभी विद्यार्थी एक भाषिक वर्ग के हों तो उसी भाषा के माध्यम से शिक्षा दी जाए और यदि विभिन्न भाषाओं के हों तो हिन्दी भाषा को ही सामान्य माध्यम के रूप में अपनाया जाए।

८. प्रशासनिक तंत्र से संबंधित सरकारी प्रकाशनों के हिन्दी अनुवाद की भाषा में अधिकाधिक एकरूपता रखी जाए और देखरेख संबंधी सारा कार्य केन्द्रीय सरकार के एक अभिकरण को सौंप दिया जाए।

९. प्रशासनिक कर्मचारियों के लिए हिन्दी का निश्चित अवधि में आवश्यक ज्ञान प्राप्त करने के लिए नियम लागू किये जाएँ और ऐसा न करने वाले को दंडित किया जाए तथा निर्धारित स्तर से अधिक ज्ञान प्राप्त करने पर कर्मचारियों को पुरस्कार आदि देकर प्रोत्साहित किया जाए।

१०. जनता से सीधा सम्पर्क रखने वाले विभागों और संगठनों के आंतरिक कार्य में हिन्दी और जनता से व्यवहार हेतु क्षेत्रीय भाषा काम में लायी जाए। ऐसे विभागों में भर्ती के लिए क्षेत्रीय भाषा के ज्ञान के साथ-साथ हिन्दी की योग्यता का स्तर भी निर्धारित किया जाए और बाद में विभागीय प्रशिक्षण द्वारा हिन्दी की योग्यता बढ़ायी जाये।

११. भारत सरकार के सांविधिक प्रकाशन अधिक से अधिक हिन्दी भाषा में प्रकाशित किए जाएं और हिन्दी की प्रगति के लिए सरकार द्वारा भरसक प्रयत्न किए जाएँ।

१२. राज्य तथा संघ सरकार के अधिकारियों के लिए किसी स्तर का हिन्दी का ज्ञान अनिवार्य किया जाए और उसके लिए उन्हें अधिकाधिक पुरस्कार देकर प्रोत्साहित किया जाए।

१३. संसद एवं विधान मण्डलों की कार्यवाहियों की सफलता की दृष्टि से हिन्दी और क्षेत्रीय भाषाओं दोनों का व्यवहार होना चाहिए और विशिष्ट परिस्थितियों में अंग्रेजी को भी मान्यता दी जानी चाहिए। स्वीकृत सरकारी कानून हिन्दी में ही होने चाहिए, परन्तु जनता की सुविधा के लिए क्षेत्रीय भाषाओं में अनेक

अनुवाद प्रकाशित किये जाने चाहिए और माध्यम पूर्वरूप से बदल जाने पर देश के सम्पूर्ण सांविधिक ग्रन्थ हिन्दी भाषा में समुपलब्ध होने चाहिए।

१४. देश में न्याय देश की ही भाषा में किया जाए, इसके लिए यह आवश्यक है कि उच्चतम न्यायलय और उच्च न्यायालयों की समस्त कार्यवाही तथा अभिलेखों, निर्णयों और आदेशों के आवश्यकतानुसार क्षेत्रीय भाषा में अनुवाद भी साथ में रखे जाएँ। उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को अंग्रेजी के साथ-साथ क्षेत्रीय भाषाओं को काम में लाने की छूट हो होनी चाहिए। विशेष न्यायालयों के निर्णय यदि एक क्षेत्र एक सीमित न हों तो वे निर्णय और आदेश मूल रूप में हिन्दी में ही लिखे जाने चाहिए।

१५. प्रतियोगिता-परीक्षाओं का माध्यम सुसंगत होना चाहिए। अखिल भारतीय एवं केन्द्रीय सेवाओं के हेतु कर्मचारियों के लिए हिन्दी की योग्यता रखना आवश्यक किया जाए। अतः परीक्षाओं में हिन्दी का अनिवार्य प्रश्न-पत्र रखा जाए, परन्तु अहिन्दी-भाषी विद्यार्थियों की सुविधाओं की दृष्टि से उसका स्तर अति साधारण रहे हिन्दी-भाषी विद्यार्थियों से इतर भाषाओं से संबंधित विषयों पर वैकल्पिक प्रश्न पूछे जाने के लिए एक प्रश्नपत्र रखा जाए, जिससे समानता बनी रहे। अंग्रेजी माध्यम के साथ-साथ वैकल्पिक रूप से हिन्दी को भी माध्यम के रूप में अपनाया जाए और शीघ्रातिशीघ्र ऐसा वातावरण बनाया जाए कि अंग्रेजी इन प्रतियोगिता-परीक्षाओं का माध्यम न रहे। साथ ही राज्यों के लोक सेवा आयोगों को भी चाहिए कि वे इन परीक्षाओं में हिन्दी-भाषी उम्मीदवारों की भी प्रोत्साहन दें।

१६. हिन्दी के विकास एवं प्रचार की दृष्टि से सरकार को ठोस कदम उठाने चाहिए। सरकार स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं के कार्यों में सामंजस्य स्थापित करने के लिए भी आवश्यक कदम उठाए तथा उन्हें आर्थिक सहायता प्रदान करे।

१७. भारत सरकार की सब भाषाओं के लिए यदि एक लिपि रखने का प्रश्न हो तो इसके लिए देवनागरी लिपि ही सर्वथा उपयुक्त होगी। रोमन लिपि को स्वीकार करने से कोई लाभ नहीं होगा। देवनागरी लिपि के सुधार के लिए बी सरकार को आवश्यक कदम उठाने चाहिए।

१८. हिन्दी एवं क्षेत्रीय भाषाओं की शब्दावली तथा अभिव्यक्ति के मानकीकरण के लिए सरकार को चाहिए कि वह भारतीय भाषाओं के समाचार-पत्रों इस दृष्टि

से सुविधाएँ प्रदान करे और इसके लिए हिन्दी तथा क्षेत्रीय भाषाओं में समाचार देनेवाली संस्थाओं के निर्माण करने का प्रयत्न करे।

१९. राजभाषा हिन्दी के सफल उन्नयन एवं विकास तथा उसके उचित अधीक्षण का उत्तरदयित्व विशेष रूप से केंद्रीय सरकार की एक प्रशासकीय इकाई पर डालना चाहिए। संघ भाषा हिन्दी तथा क्षेत्रीय भाषाओं के विकास के लिए 'भारतीय भाषाओं की राष्ट्रीय अकादमी' की यदि स्थापना की जाए तो अति हितकर होगा।

२०. भारत के भाषागत एवं सांस्कृतिक ढाँचे में गहरी समानता लाने तथा भारत की विभिन्न भाषाओं की दूरी को कम करने के लिए बहुभाषिकता के सिद्धान्त को प्रोत्साहित किया जाए तथा इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए माध्यमिक एवं विश्वविद्यालयी शिक्षा पद्धति में समुचित व्यवस्था की जाए।

इसी राजभाषा आयोग के प्रतिवेदन पर डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी ने वह टिप्पणी दी जिसे अंग्रेजी के सम्मुख हिन्दी को हीन सिद्ध किया गया है। देवेन्द्रनाथ शर्मा ने इस टिप्पणी को विरोधाभासों का पिटारा कहा है।[३५] लेकिन इस सुझाव को स्वीकार नहीं किया गया और इसकी रिपोर्ट पर विचार करने के लिए एक संसदीय राजभाषा समिति का गठन किया गया जिसमें लोकसभा के २० और राज्यसभा के १० सदस्य रखे गये सिफारिशों को अनदेखा कर दिया जिसकी डॉ. लोहिया ने कटु आलोचना की, कि "अंग्रेजी की धीमे-धीमें हटाओ नीति', जिसे हिन्द सरकार ने अपनाया है अंग्रेजी को सदैव कायम रखने वाली नीति से भी ज्यादा भयंकर सिद्ध हो रही है।[३६]

१.४.२.२ संसदीय राजभाषा समिति

समिति के प्रमुख सुझाव इस प्रकार थे-

१. सरकारी पदों और नौकरियों के लिए इस समय जो अंग्रेजी की शिक्षा का स्तर निर्धारित है, संक्रमण की अवस्थाओं में हिन्दी ज्ञान का स्तर कुछ कम भी हो तो चल सकता है।

२. निर्धारित समय में कर्मचारियों द्वारा निर्धारित हिन्दी का ज्ञान प्राप्त न करने पर उनको दंडित किया जाना असंगत होगा।

३. संघ सरकार के प्रकाशन में जहाँ भारतीय पारिभाषिक शब्दावली के विकास की

आवश्यकता न हो तथा विदेशों से संबंध बनाए रखने के लिए अनिश्चितकाल तक अंग्रेजी का प्रयोग नहीं होना चाहिए।

४. ४५ वर्ष से ऊपर की आयु वाले सरकारी कर्मचारियों को हिन्दी के प्रशिक्षण से छूट दी जानी चाहिए।

५. संघ सरकार द्वारा ऐसी योजना बनाई जाए, जिससे हिन्दी का राजभाषा के रूप में अधिकाधिक प्रयोग एवं विकास किया जा सके।

६. सरकार एवं मंत्रालयों के प्रकाशनों में रोमन अंकों के साथ-साथ देवनागरी अंकों को प्रयुक्त करने के बारे में संघ सरकार की मूलभूत समान नीति होनी चाहिए।

७. संसद तथा राज्यों को विधान मण्डलों में पारित होने वाले विधेयकों की भाषा तथा जब तक अंग्रेजी का स्थान हिन्दी न ले ले, तब तक संसद में विधि निर्माण का कार्य अंग्रेजी में होता रहे। कानूनों के हिन्दी प्राधिकृत अनुवाद दिए जाएँ तथा संभव हो तो विभिन्न राज्यों की राजभाषाओं में भी उनके अनुवाद की व्यवस्था की जाए।

८. राज्यों की विधान सभाएँ, अपने राज्यों की राजभाषाओं में विधि निर्माण कार्य कर सकती है, परन्तु संविधान के ३४८ अनुच्छेद के अनुसार कानूनों का प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी में प्रकाशित करना आवश्यकत है। यदि कानून का मूलपाठ अन्य भाषा में है तो साथ में हिन्दी अनुवाद भी प्रस्तुत किया जा सकता है।

९. राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से उच्च न्यायालयों में राज्य की राजभाषा अथवा हिन्दी का प्रयोग किया जा सकता है, परन्तु उनके द्वारा किए जाने वाले निर्णयों, अभिलेखों और आदेसों को अंग्रेजी में ही होना चाहिए तथा दूसरी भाषाओं में दिए जाने वाले निर्णयों, डिक्रियों एवं आदेशों का अंग्रेजी अनुवाद साथ में रहना चाहिए।

१०. हिन्दी तथा क्षेत्रीय भाषाओं का ज्ञान न्यायाधीशों के लिए उपयुक्त हो सकता है, परन्तु उनेक लिए भाषा संबंधी परीक्षाएँ निर्धारित करना उचित नहीं है।

११. सांविधानिक ग्रन्थों के अनुवाद तथा कानूनी पारिभाषिक शब्दावली आदि के निर्माण की उचित योजना बनाने तथा सम्पूर्ण कार्य की व्यवस्था करने के लिए

भारत के विभिन्न भाषा-भाषी विधि-विशारदों के स्थायी आयोग की उच्चस्तरीय समिति का निर्माण किया जाना चाहिए।

१२. अखिल भारतीय तथा उच्च स्तरीय केन्द्रीय सेवाओं की परीक्षाओं के माध्यम के रूप में अंग्रेजी को चलने दिया जाए तथा कुछ समय बाद हिन्दी को वैकल्पिक माध्यम के रूप में स्वीकार किया जाए। तदनन्तर हिन्दी और अंग्रेजी दोनों को वैकल्पिक माध्यम के रूप में चलने दिया जाए। इन परीक्षाओं में दो भाषा प्रश्नपत्र (एक हिन्दी का और दूसरा हिन्दी के अतिरिक्त अन्य आधुनिक भारतीय भाषा का परीक्षार्थी की इच्छा पर) अनिवार्य रूप से रहे। इसके अतिरिक्त अंग्रेजी के प्रशासन की भाषा रहने तक अंग्रेजी का एक प्रश्नपत्र भी अनिवार्य होना चाहिए। क्षेत्रीय भाषाओं को माध्यम के रूप में स्वीकृत करने के पक्ष में भी विचार किया जाना चाहिए।

१३. सन् १९६५ तक भारत सरकार के राजकाज की प्रधान भाषा अंग्रेजी रहे और इस अवधि में हिन्दी गौण राजभाषा रहे। सन् १९६५ के बाद हिन्दी प्रधान राजभाषा रहे तथा अंग्रेजी को सह-राजभाषा का स्थान दिया जाए। संसद अपने अधिनियम द्वारा अंग्रेजी के प्रयोग के लिए जो सीमा एवं क्षेत्र निर्धारित करेगी तब तक आवश्यकतानुसार उसका प्रयोग जारी रहे।

१.४.२.३ संघीय राजभाषा के संबन्ध में राष्ट्रपति का आदेश, १९६०

राष्ट्रपति ने संसदीय राजभाषा समिति की रिपोर्ट पर भारतीय संविधान के अनुच्छेद ३४४ खंड ६. द्वारा प्रदत्त अधिकार का प्रयोग करते हुए २७ अप्रैल, १९६० को एक आदेश जारी करके निम्नलिखित निर्देश दिए :

१. अखिल भारतीय सेवाओं और उच्चतर केन्द्रीय सेवाओं में भर्ती के लिए परीक्षा का माध्यम अभी अंग्रेजी बनी रहे और कुछ समय बाद हिन्दी वैकल्पिक माध्यम के रूप में अपना ली जाए। बाद में किसी प्रकार की नियत कोटा-प्रणाली अपनाए बिना परीक्षा के माध्यम के रूप में विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग शुरू करने की व्यवहार्यता की जाए।

२. प्रशिक्षण संस्थाओं में प्रवेश के लिए अंग्रेजी और हिन्दी दोनों ही परीक्षा की माध्यम रहें।

३. निर्धारित सिद्धान्तों के अनुसार हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली के निर्माण एवं समन्वय का प्रयत्न किया जाए तथा इसके लिए शिक्षा मंत्रालय आवश्यक व्यवस्था करते हुए एक आयोग का निर्माण करे।

४. सभी प्रशासनिक साहित्य का अनुवाद किया जाए तथा उसमें एकरूपता हो। असांविधिक अनुवाद शिक्षा मंत्रालय द्वारा किया जाए और सांविधिक अनुवाद विधि मंत्रालय करे।

५. शिक्षा मंत्रालय हिन्दी प्रचार की व्यवस्था करे और इस कार्य में लगी गैर सरकारी संस्थाओं की भी सहायता करे।

६. केन्द्रीय सरकारी विभागों के स्थानीय कार्यालय अपने आंतरिक कार्यों के लिए हिन्दी का प्रयोग करें और जनता से व्यवहार में प्रादेशिक भाषा का प्रयोग किया जाए। कर्मचारियों की भर्ती तथा विकेन्द्रीकरण आदि में इस आवश्यकता को ध्यान में रखा जाए।

७. संसदीय अधिनियम और विधेयक अंग्रेजी में बनते रहें, किन्तु उनका प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद उपलब्ध कराया जाए। यह विधि मंत्रालय का उत्तरदायित्व होगा।

८. उच्चतम न्यायालय की भाषा अन्ततः हिनंदी होनी चाहिए. उच्च न्यायालय के निर्णयों, आज्ञाप्तियों और आदेशों के लिए हिन्दी और राज्यों की राजभाषाओं का प्रयोग विकल्पतः किया जा सकेगा। इस संबध में विधि मंत्रालय को आवश्यक कारवाई करनी चाहिए।

९. तृतीय श्रेणी से नीचे के कर्मचारियों, औद्योगिक संस्थानों के कर्मचारियों और कार्यप्रभारित कर्मचारियों को छोड़कर उन सभी केन्द्रीय सरकारी कर्मचारियों के लिए हिन्दी का सेवाकालीन प्रशिक्षण अनिवार्य बना दिया जाए जिनकी आयु १ जनवरी १९६१ को ४५ वर्ष से कम हो। गृह मंत्रालय टंककों और आशुलिपिकों को हिन्दी टंकण तथा आशुलेखन में प्रशिक्षण देने के लिए भी प्रबन्ध करे।

१०. एक मानक विधि शब्दकोष बनाने, हिन्दी में कानून बनाने और कानूनी शब्दावली के निर्माण के लिए विभिन्न राष्ट्रीय भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले कानून के विशेषज्ञों का एक स्थायी आयोग स्थापित किया जाए।

१.४.२.४ राजभाषा अधिनियम, १९६३

संविधान के अनुच्छेद ३४३ खंड १. में यह व्यवस्था दी गई है कि भारतीय संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी तथा खंड २. में यह व्यस्था है कि संविधान लागू होने के पन्द्रह वर्ष की अवधि तक राजकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा। स्पष्ट है कि भारतीय संविधान के लागू होने के पन्द्रह वर्ष बाद यानि २६ जनवरी १९६५ से सभी राजकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी का प्रयोग प्रारम्भ होना चाहिए था। किंतु इस व्यवस्था को लागू ने होने देने तथा १९६५ के बाद भी संघ के सभी सरकारी प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी के प्रयोग को बनाये रखने के उद्देश्य से 'राजभाषा अधिनियम, १९६३' बनाया गया। इस अधिनियम को संविधान के अनुच्छेद ३४३ खंड ३. के अधीन कहा जा सकता है।

'राजभाषा अधिनियम, १९६३' से संबंधित विधेयक १३ अप्रैल १९६३ को लोकसभा तथा ३ मई १९६३ को राज्यसभा में प्रस्तुत किया गया और क्रमशः २५ अप्रैल व ७ मई को पारित हुआ। तत्पश्चात् राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त कर वह 'राजभाषा अधिनियम, १९६३' के रूप में लागू हुआ।

भारत गणराज्य के चौदहवें वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो–

१. संक्षिप्त नाम और प्रारम्भ

१. यह अधिनियम राजभाषा अधिनियम, १९६३ कहा जा सकेगा।

२. धारा ३ जनवरी १९६५ के २६वें दिन् को प्रावृत्त होगी और इस अधिनियम के शेष उपबंध उस तारीख को प्रवृत्त होंगे जिसे केन्द्रीय सरकार, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे और इस अधिनियम के विभिन्न उपबंधों के लिए विभिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी।

२. परिभाषाएँ

(क) 'नियत दिन' से धारा ३ के सम्बन्ध में जनवरी, १९६५ का २६वाँ दिन अभिप्रेत है और इस अधिनियम के किसी अन्य उपबन्ध के सम्बन्ध में वह दिन अभिप्रेत है जिस दिन को वह उपबन्ध प्रवृत्त होता है। सम्बन्ध में वह दिन अभिप्रेत है जिस दिन का वह उपबन्ध प्रवृत्त होता है।

(ख) 'हिन्दी' से वह हिन्दी अभिप्रेत है जिसकी लिपि देवनागरी है।

३. संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए और संसद में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा का बना रहना

१. संविधान के प्रारम्भ से पन्द्रह वर्ष की कालावधि की समाप्ति हो जाने पर भी, हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा, नियत दिन से ही,

(क) संघ के उन सब राजकीय प्रयोजनों के लिए, जिनके लिए वह उस दिन से ठीक पहले प्रयोग में लाई जाती थी; तथा

(ख) संसद में कार्य के सव्यवहार के लिए प्रयोग में लाई जाती रह सकेगी

परन्तु संघ और किसी ऐसे राज्य के बीच, जसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, पत्रादि के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा प्रयोग में लाई जाएगी।

परन्तु यह और है कि जहाँ किसी ऐसे राज्य के, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है और किसी अन्य राज्य के, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, बीच पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी को प्रयोग में लाया जाता है, वहाँ हिन्दी में ऐसे पत्रादि के साथ-साथ उसका अनुवाद अंग्रेजी भाषा में भेजा जाएगा :

परन्तु यह और भी कि इस उपधारा की किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी ऐसे राज्य को, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है या किसी अन्य राज्य के साथ, उसकी सहमति से, पत्रादि के प्रयोजन के लिए हिन्दी को प्रयोग में लाने से निवारित करती है और ऐसे किसी मामले में उस राज्य के साथ पत्रादि के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग बाध्यकर न होगा।

२. उपधारा १. में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, जहाँ पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी या अंग्रेजी भाषा–

(क) केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के और दूसरे मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के बीच :

(ख) केन्द्रीय सरकार के एक मन्त्रालय या विभाग या कार्यालय के और केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी या उसके किसी कार्यालय के बीच :

(ग) केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी या उसके किसी कार्यालय के और किसी अन्य ऐसे निगम या कम्पनी या कार्यालय के बीच; प्रयोग में लाई जाती है, वहाँ उस तारीख तक, जब तक पूर्वोक्त संबंधित मंत्रालय, विभाग, कार्यालय या निगम या कम्पनी का कर्मचारी, हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेता, ऐसे पत्रादि का अनुवाद, यथास्थिति, अंग्रेजी भाषा या हिन्दी में भी दिया जाएगा।

३. उपधारा १. में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, हिन्दी और अंग्रेजी भाषा दोनों ही–

(क) संकल्पों, साधरण आदेशों, नियमों, अधिसूचनाओं, प्रशासनिक या अन्य प्रतिवेदनों या प्रेस विज्ञाप्तियों के लिए, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा या उसके किसी मंत्रालय या विभाग या कार्यालय द्वारा या केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी द्वारा या ऐसे निगम या कम्पनी के कार्यालय द्वारा निकाले जाते हैं या किए जाते हैं।

(ख) संसद के किसी सदन या सदनों के समक्ष रखे गए प्रशासनिक तथा अन्य प्रतिवेदनों और राजकीय कागज–पत्रों के लिए,

(ग) केन्द्रीय सरकार या उसके किसी मंत्रालय, विभाग या कार्यालय द्वारा या उसकी ओर से या केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कम्पनी द्वारा या ऐसे निगम या कम्पनी के किसी कार्यालय द्वारा निष्पादित संविदाओं और करारों के लिए तथा निकाली गई अनुज्ञप्तियों, अनुज्ञापत्रों, सूचनाओं और निविदा–प्ररूपों के लिए, प्रयोग में लाई जाएगी।

४. उपधारा १. या उपधारा २. या उपधारा ३. के उपबन्धों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना यह है कि केन्द्रीय सरकार धारा ८ के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा उस भाषा या उप–भाषाओं का उपबंध कर सकेगी जिसे या जिन्हें संघ के राजकीय प्रयोजन के लिए, जिसके अन्तर्गत किसी मंत्रालय, विभाग अनुभाग, या कार्यालय का कार्यकरण है,

प्रयोग में लाया जाना है और ऐसे नियम बनाने में राजकीय कार्य के शीघ्रता और दक्षता के साथ निपटारे का तथा जन-साधारण के हितों का सम्यक् ध्यान रखा जाएगा और इस प्रकार बनाए गए नियम विशिष्टतया यह सुनिश्चित करेंगे कि जो व्यक्ति संघ के कार्यकलाप के संबंध में सेवा कर रहे हैं और जो या तो हिन्दी में या अंग्रेजी भाषा में प्रवीण हैं, वे प्रभावी रूप से अपना काम कर सकें और यह भी केवल इस आधार पर कि वे दोनों ही भाषाओं में प्रवीण नहीं हैं, उनका कोई अहित नहीं होता है।

५. उपधारा १. के खण्ड क. के उपबंध और उपधारा २. ३. और उपधारा ४. के उपबंध तब तक प्रवृत्त बने रहेंगे जब तक उनमें वर्गित प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग समाप्त कर देने के लिए ऐसे भी राज्यों के विधान-मण्डलों द्वारा, जिन्होंने ने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, सकंल्प पारित नहीं कर दिए जाते और जब तक पूर्वोक्त संकल्पों पर विचार कर लेने के पश्चात् ऐसी समाप्ति के लिए संसद के हर एक सदन द्वारा संकल्प पारित नहीं कर दिया जाता।

१.४.३ राजभाषा के सम्बन्ध में समिति

१. जिस तारीख को धारा ३ प्रवृत्त होती है उससे दस वर्ष की समाप्ति के पश्चात् राजभाषा के संबंध में एक समिति, इस विषय का संकल्प संसद के किसी भी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी से प्रस्तावित और दोनों सदनों द्वारा पारित किए जाने पर, गठित की जाएगी।

२. इस समिति में तीस सदस्य होंगे जिनमें से २० लोकसभा के सदस्य होंगे तथा दश राज्यसभा के सदस्य होंगे, जो क्रमशः लोकसभा तथा राज्यसभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।

३. इस समिति का कर्त्तव्य होगा कि वह संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी के प्रयोग में की गयी प्रगति का पुनर्विलोकन करे और उस पर सिफारिशें करते हुए राष्ट्रपति को प्रतिवेदन करे और राष्ट्रपति उस

प्रतिवेदन को संसद के हर एक सदन के समक्ष रखावाएगा और सभी राज्य सरकारों को भिजवाएगा।

४. राष्ट्रपति उपधारा ३. में निर्दिष्ट प्रतिवेदन पर और उसे राज्य ने यदि कोई मत अभिव्यक्त किए हों तो उन पर विचार करने के पश्चात् उस समस्त प्रतिवेदन के या उसके किसी भाग के अनुसार निर्देश निकाल सकेगा।

परन्तु इस प्रकार निकाले गए निर्देश धारा ३ के उपबंधों से असंगत नहीं होंगे।

१.४.४ केन्द्रीय अधिनियमों आदि का प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद

१. नियत दिन को और उनके पश्चात् शासकीय राजपत्र में राष्ट्रपति के प्राधिकार से प्रकाशित–

(क) किसी केन्द्रीय अधिनियम का या राष्ट्रपति द्वारा प्रख्यापित किसी अध्यादेश का, अथवा

(ख) संविधान के अधीन या किसी केन्द्रीय अधिनियम के अधीन निकाले गए किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि का, हिन्दी में अनुवाद उसका हिन्दी में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

२. नियत दिन से ही उन सब विधायकों के, जो संसद के किसी भी सदन में पुनः स्थापित किए जाने हों और उन सब संशोधनों के जो उनके संबंध में संसद के किसी भी सदन में प्रस्तावित किए जाने हों, अंग्रेजी भाषा के प्राधिकृत पाठ के साथ–साथ उनका हिन्दी में अनुवाद भी होगा जो ऐसी रीति से प्राधिकृत किया जाएगा, जो इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित की जाए।

१.४.५ कतिपय दशाओं में राज्य अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद

जहाँ किसी राज्य के विधानमण्डल ने उस राज्य के विधानमण्डल द्वारा पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में प्रयोग के लिए हिन्दी से भिन्न कोई भाषा विहित की है वहाँ संविधान के अनुच्छेद ३४८ के खण्ड ३. द्वारा अपेक्षित अंग्रेजी भाषा में उसके अनुवाद के अतिरिक्त, उसका हिन्दी

में अनुवाद उस राज्य के शासकीय राज्यपत्र में उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से, नियत दिन को या उसके पश्चात् प्रकाशित किया जा सकेगा और ऐसी दशा में ऐसे किसी अधिनियम या अध्यादेश का हिन्दी में अनुवाद हिन्दी भाषा में उसका प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

१.४.६ उच्च न्यायलयों के निर्णयों आदि में हिन्दी या अन्य राजभाषा का वैकल्पिक प्रयोग

नियत दिन से ही या तत्पश्चात् किसी भी दिन से किसी राज्य का राज्यपाल राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से, अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी या उस राज्य की राजभाषा का प्रयोग, उस राज्य के उच्च न्यायालय द्वारा पारित या दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश (अंग्रेजी भाषा से भिन्न) ऐसी किसी भाषा में पारित किया या दिया जाता है वहाँ उसके साथ-साथ उच्च न्यायालय के प्राधिकार से निकाला गया अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद भी होगा।

१.४.७ नियम बनाने की शक्ति

१. केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा बना सकेगी।

२. इस धारा के अधीन बनाया गया हर नियम, बनाये जाने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र, संसद के हर एक सदन के समक्ष, उस समय जब वह सत्र में हो, कुल मिलाकर तीस दिन की कालावधि के लिए, जो एक सत्र में या दो क्रमवर्ती सत्रों में समाविष्ट हो सकेगी, रखा जाएगा और यदि उस सत्र को जिसमें वह ऐसे रखा गया हो, या ठीक पश्चात्वर्ती सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई उपान्तर करने के लिए सहमत हो जाएँ या दोनों सदन सहमत हो जाएँ कि वह नियम ऐसे उपान्तरित रूप में प्रभावशाली होगा या उसका कोई भी प्रभाव न होगा, किन्तु इस प्रकार कि ऐसा कोई उपान्तर या बातिलकरण उस नियम के अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होगा।

१.४.८ कतिपय उपबंधों का जम्मू-कश्मीर पर लागू न होना

धारा ६ और ७ के उपबंध जम्मू कश्मीर पर लागू न होंगे।

संसद द्वारा पारित संकल्प (या राजभाषा संकल्प १९६८)

गृह मंत्रालय के १८ जनवरी, १९६८ के आदेश द्वारा संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित निम्नलिखित सरकारी सकंल्प आम जानकारी के लिए प्रकाशित किया गया:-

१. जबकि संविधान के अनुच्छेद ३४३ के अनुसार संघ की राजभाषा हिन्दी रहेगी और उसके अनुच्छेद ३५१ के अनुसार हिन्दी भाषा की प्रसार वृद्धि करना और उसका विकास करना ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके, संघ का कर्त्तव्य है; यह सभा संकल्प करती है कि हिन्दी के प्रसार एवं विकास की गति बढ़ाने हेतु तथा संघ के विभिन्न राजकीय प्रयोजनों के लिए उत्तरोत्तर इसके प्रयोग हेतु भारत सरकार द्वारा एक अधिक गहन एवं व्यापक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा और किए जाने वाले उपायों एवं की जाने वाली प्रगति की विस्तृत वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट संसद की दोनों सभाओं के पटल पर रखी जाएगी और सब राज्य सरकारों को भेजी जाएगी।

२. जबकि संविधान की आठवीं अनुसूची में हिन्दी के अतिरिक्त भारत की मुख्य भाषाओं का उल्लेख किया गया है और देश की शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि इन भाषाओं के पूर्ण विकास हेतु सामूहिक उपाय किए जाने चाहिए; यह सभा संकल्प करती है कि हिन्दी के साथ-साथ इन सब भाषाओं के समन्वित विकास हेतु भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों के सहयोग से एक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा ताकि वे शीघ्र समृद्ध हों और आधुनिक ज्ञान के संचार का प्रभावी माध्यम बनें।

३. जबकि एकता की भावना के संवर्धन तथा देश के विभिन्न भागों में जनता में संचार की सुविधा हेतु यह आवश्यक है कि भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों के परामर्श से तैयार किये गए त्रि-भाषा सूत्र को सभी राज्यों में पूर्णतः कार्यान्वित करने के लिए प्रभावी किया जाना चाहिए;

यह सभा संकल्प करती है कि हिन्दी-भाषी क्षेत्रों में, हिन्दी तथा अंग्रेजी के अतिरिक्त एक आधुनिक भारतीय भाषा के, दक्षिण-भारत की भाषाओं में से किसी एक को तरजीह देते हुए और अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों में प्रादेशिक भाषाओं एवं अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी के अध्ययन के लिए उस सूत्र के अनुसार प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

४. और जबकि यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि संघ की लोक सेवाओं के विषय में देश के विभिन्न भागों के लोगों के न्यायोचित दावों और हितों का पूर्ण परित्राण किया जाय;

यह सभा संकल्प करती है कि-

(क) उन विशेष सेवाओं अथवा पदों को छोड़कर, जिनके लिए ऐसी किसी सो अथाव पद के कर्त्तव्यों के संतोषजनक निष्पादन हेतु केवल अंग्रेजी अथवा केवल हिन्दी अथवा दोनों जैसी कि स्थिति हो, का उच्च स्तर का ज्ञान आवश्यक समझा, जाए, संघ सेवाओं अथवा पदों के लिए भर्ती करने हेतु उम्मीदवारों के चयन के समय हिन्दी अथवा अंग्रेजी में से किसी एक का ज्ञान अनिवार्यतः अपेक्षित होगा, और

(ख) कि परीक्षाओं की भावी योजना, प्रक्रिया संबंधी पहलुओं एवं समय के विषय में संघ लोक सेवा आयोग के विचार जानने के पश्चात् अखिल भारतीय एवं उच्चतर केनद्रीय सेवाओं संबंधी परीक्षाओं के लिए संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित सभी भाषाओं तथा अंग्रेजी को वैकल्पिक माध्यम के रूप में रखने की अनुमति होगी।

१.४.९ राजभाषा नियम

राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिये प्रयोग) नियम १९७६

राजभाषा अधिनियम, १९६३ की धारा ३ की उपधारा ४ के साथ पठित धारा ८ द्वारा प्रदत्त शाक्तियों का प्रयोग करते हुए केन्द्रीय सरकार निम्नलिखित नियम बनाती है। इन नियमों का विस्तार, तमिलनाडु राज्य के अतिरिक्त सम्पूर्ण भारत पर है।

परिभाषाएँ

इन नियमों में, जब तक कि सन्दर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो–

(क) "अधिनियम" से राजभाषा अधिनियम, १९६३ (१९६३ का १९) अभिप्रेत है।

(ख) "केन्द्रीय सरकार के कार्यालय" के अन्तर्गत निम्नलिखित भी हैं अर्थात्–

(I) केन्द्रीय सरकार का कोई मंत्रालय, विभाग या कार्यालय,

(II) केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किसी आयोग, समिति या अधिकरण का कोई कार्यालय और

(III) केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में या नियत्रंण के अधीन किसी निगम या कम्पनी का कोई कार्यालय,

(ग) "कर्मचारी" से केन्द्रीय सरकार के कार्यालय में नियोजित कोई व्यक्ति अभिप्रेत है।

(घ) "अधिसूचित कार्यालय" से नियम १० के उपनियम ४. के अधीन अधिसूचित कार्यालय अभिप्रेत है।

(ङ) "हिन्दी में प्रवीणता" से नियम ९ में वर्णित प्रवीणता अभिप्रेत है।

(च) क्षेत्र "क" से बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश तथा दिल्ली संघ राज्यक्षेत्र अभिप्रेत हैं।

(झ) हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान से नियम १० में वर्णित कार्यसाधक ज्ञान अभिप्रेत है।

१.४.१० राज्यों आदि और केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों से भिन्न कार्यालयों के साथ पत्रादि

१. केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र "क" में किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र को या ऐसे राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि, असाधरण दशाओं को छोड़कर हिन्दी में होंगे और यदि उनमें से

किसी को कोई पत्रादि अंग्रेजी में भेजे जाते हैं तो उनके साथ उनका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाएगा।

२. केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से–

(क) क्षेत्र "ख" में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि मामूली तौर पर हिन्दी में होंगे और यदि इनमें से किसी को पत्रादि अंग्रेजी में भेजे जाते हैं तो उनके साथ उनका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाएगा :

(ख) क्षेत्र "ख" के किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में किसी व्यक्ति को पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में भेजे जा सकते हैं।

३. केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र "ग" में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि अंग्रेजी में होंगे।

४. उपनियम १. और २. में किसी बात के होते हुए भी, क्षेत्र "ग" में केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र "क" या "ख" में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार के कार्यालय ने हों) या व्यक्ति को पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं।

१.४.११ केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि

(क) केन्द्रीय सरकार के किसी एक मंत्रालय या विभाग और किसी दूसरे मंत्रालय या विभाग के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं,

(ख) केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग और क्षेत्र "क" में स्थित संलग्न या अधीनस्थ कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी में होंगे और ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या, हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे संबंधित आनुषंगिक (आकस्मिक, अनिश्चित) बातों को ध्यान में रखते हुए, समय-समय पर अवधारित (निश्चित) करे।

(ग) क्षेत्र "क" में स्थित केन्द्रीय सरकार को ऐसे कार्यालयों के बीच, जो खंड क. या खंड ख. में विनिर्दिष्ट कार्यालय से भिन्न हैं, पत्रादि हिन्दी में होंगे,

(घ) क्षेत्र "क" में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों और क्षेत्र "ख" या क्षेत्र "ग" में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं,

(ङ) क्षेत्र "ख" या क्षेत्र "ग" में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं :

परन्तु जहाँ ऐसे पत्रादि–

(I) क्षेत्र "क" या क्षेत्र "ख" के किसी कार्यालय को संबोधित हैं, वहाँ, यदि आवश्यक हो तो, उनका दूसरी भाषा में अनुवाद पत्रादि प्राप्त करने के स्थान पर किया जाएगा,

(II) क्षेत्र "ग" में किसी कार्यालय को संबोधित हैं, वहाँ उनका दूसरी भाषा में अनुवाद उनके साथ भेजा जाएगा :

परन्तु यह और कि यदि कोई पत्रादि किसी अधिसूचित कार्यालय को सम्बोधित हैं तो दूसरी भाषा में ऐसा अनुवाद उपलब्ध कराने की अपेक्षा नहीं की जाएगी।

हिन्दी में प्राप्त पत्रादि के उत्तर

नियम ३ और ४ में किसी बात के होते हुए भी, हिन्दी में पत्रादि के उत्तर केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से हिदी में दिए जाएँगे।

हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग

अधिनियम की धारा ३ की उपधारा ३. में निर्दिष्ट सभी दस्तावेजों के लिए हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग किया जाएगा और ऐसे दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्तियों का यह उत्तरदायित्व होगा कि वे यह सुनिश्चित कर लें कि ऐसे दस्तावेज हिन्दी और अंग्रेजी दोनों ही में तैयार किये जाते हैं, निष्पादित किये जाते हैं और जारी किए जाते हैं।

आवेदन, अभ्यावेदन आदि

१. कोई कर्मचारी आवेदन, अपील या अभ्यावेदन हिन्दी या अंग्रेजी में कर सकता है।

२. जब उपनियम १. में निर्दिष्ट कोई आवेदन, अपील या अभ्यावेदन हिन्दी में किया गया हो या उस पर हिन्दी में हस्ताक्षर किए गए हों तब उसका उत्तर हिन्दी में दिया जाएगा।

३. यदि कोई कर्मचारी या चाहता है कि सेवा संबंधी विषयों (जिनके अन्तर्गत अनुशासनिक कारवाईयाँ भी है) से संबंधित कोई आदेश या सूचना, जिसका कर्मचारी पर तामील किया जाना अपेक्षित है, यथास्थिति, हिन्दी या अंग्रेजी में होनी चाहिए तो वह उसे असम्यक् विलम्ब के बिना उसी भाषा में दी जाएगी।

१.४.१२ केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में टिप्पणी का लिखा जाना

१. कोई कर्मचारी किसी फाइल पर टिप्पण या मसौदा (रूपरेखा या प्रारूप) हिन्दी या अंग्रेजी में लिख सकता है और उससे यह अपेक्षा नहीं की जाएगी कि वह उसका अनुवाद दूसरी भाषा में प्रस्तुत करे।

२. केन्द्रीय सरकार का कोई भी कर्मचारी जो हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखता है, हिन्दी में किसी दस्तावेज के अंग्रेजी अनुवाद की माँग तभी कर सकता है, जब वह दस्तावेज विधिक या तकनीकी प्रकृति का हो, अन्यथा नहीं।

३. यदि यह प्रश्न उठता है कि कोई विशिष्ट दस्तावेज विधिक या तकनीकि प्रकृति का है या नहीं तो विभाग या कार्यालय का प्रधान उसका विनिश्चय करेगा।

४. उपनियम १. में किसी बात के होते हुए भी, केन्द्रीय सरकार, आदेश द्वारा ऐसे अधिसूचित कार्यालयों को विनिर्दिष्ट कर सकती है जहाँ ऐसे कर्मचारियों द्वारा जिन्हें हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है, टिप्पण, प्रारुपण और ऐसे अन्य शासकीय प्रयोजनों के लिए, जो आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएँ, केवल हिन्दी का प्रयोग किया जाएगा।

हिन्दी में प्रवीणता

यदि किसी कर्मचारी ने–

(क) मैट्रिक परीक्षा या उसकी समतुल्य या उससे उच्चतर कोई परीक्षा हिन्दी के माध्यम से उत्तीर्ण कर ली है, या

(ख) स्नातक परीक्षा में अथवा स्नातक परीक्षा की समतुल्य या उससे उससे उच्चतर किसी अन्य परीक्षा में हिन्दी को एक वैकल्पिक विषय के रूप में लिया था, या

(ग) यदि वह इन नियमों से उपबाद्ध प्ररुप में यह घोषणा करता है कि उसे हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है, तो उसके बारे में यह समझा जाएगा कि उसने हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त कर ली है।

हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान

१. (क) यदि किसी कर्मचारी ने–

(I) मैट्रिक परीक्षा या उसकी समतुल्य या उससे उच्चतर परीक्षा हिन्दी विषय के साथ उत्तीण कर ली है, या

(II) केन्द्रीय सरकार की हिन्दी प्रशिक्षण योजना के अन्तर्गत आयोजित प्राज्ञ परीक्षा या, जब उस सरकार द्वारा किसी विशिष्ट प्रवर्ग के पदों के संबंध में उस योजना के अन्तर्गत कोई निम्नतर परीक्षा विनिर्दिष्ट है, तब वह परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है, या

(III) केन्द्रीय सरकार द्वारा उस निमित्त विनिर्दिष्ट कोई अन्य परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है, या

(ख) यदि वह इन नियमों के उपाबद्ध प्ररूप में यह घोषणा करता है कि उसने ऐसा ज्ञान प्राप्त कर लिया है, तो उसके बारे में यह समझा जाएगा कि उसने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

२. यदि केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय में कार्य करने वाले कर्मचारियों में से ८० प्रतिशत ने हिन्दी काऐसा ज्ञान प्राप्त कर लिया है, तो उस कार्यालय के कर्मचारियों के बारे में सामान्यता यह समझा जाएगा कि उन्होंने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लियाहै।

३. केन्द्रीय सरकार या केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट कोई अधिकारी यह अवधारित कर सकता है कि केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय के कर्मचारियों ने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है या नहीं।

४. केन्द्रीय सरकार के जिन कार्यालयों के कर्मचारियों ने हिन्दी का कार्यसाधक

ज्ञान प्राप्त कर लिया है, उन कार्यालयों के नाम, राजपत्र में अधिसूचित किए जाएँगे :

परन्तु यदि केन्द्रीय सरकार की राय है कि किसी अधिसूचित कार्यालय में काम करने वाले और हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले कर्मचारियों का प्रतिशित किसी तारीख से, उपनियम २ में विनिर्दिष्ट प्रतिशत से कम हो गया है, तो वह, राजपत्र अधिसूचना द्वारा घोषित कर सकती है कि उक्त कार्यालय उस तारीख से अधिसूचित कार्यालय नहीं रह जाएगा।

१.४.१३ मैन्युअल, संहिताएँ और प्रक्रिया संबंधी अन्य साहित्य, लेखनसामग्री आदि

१. केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से संबंधित सभी मैन्युअल, संहिताएँ और प्रक्रिया संबंधी अन्य साहित्य हिन्दी और अंग्रेजी में द्विभाषीय रूप में यथा स्थिति, मुद्रित या साइक्लोस्टाइल किया जाएगा और प्रकाशित किया जाएगा।

२. केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय में प्रयोग किए जाने वाले रजिस्टरों के प्ररुप और शीर्षक हिन्दी और अंग्रेजी में होंगे।

३. केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय में प्रयोग के लिए सभी नामपट्ट, सूचना-पट्ट, पत्रशीर्ष और लिफाफों पर उत्तीर्ण लेख तथा लेखन सामग्री की अन्य मदें हिन्दी और अंग्रेजी में लिखी जाएँगी, मुद्रित या उत्कीर्ण होंगी। परन्तु यदि केन्द्रीय सरकार ऐसा करना आवश्यक समझती है तो वह साधरण या विशेष आदेश द्वारा केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय को इस नियम के सभी या किन्हीं उपबन्धों से छूट दे सकती है।

अनुपालन का उत्तरदायित्व

किन्हीं उपबन्धों से छूट दे सकती है।

१. केन्द्रीय सरकार के प्रत्येक कार्यालय के प्रशासनिक प्रधान का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह-

   (I) यह सुनिश्चित करे कि अधिनियम और इन नियमों के उपबन्धों का समुचित रूप से अनुपालन हो रहा है, और

   (II) इस प्रयोजन के लिए उपयुक्त और प्रभावकारी जाँच के लिए उपाय करे।

२. केन्द्रीय सरकार अधिनियम और इन नियमों के उपबंधों के सम्यक् अनुपालन के लिए अपने कर्मचारियों और कार्यालयों को समय-समय पर आवश्यक निदेश जारी कर सकती है।[३७]

अब तक हमने *भारत में हिन्दी* विषयांतर्गत संविधान में जो नियम उल्लेखित है उस पर प्रकाश डाला। इसके बाद *दक्षिण भारत में हिन्दी* की क्या स्थिति है उसके बारे में चर्चा करेंगे।

१.५ दक्षिण भारत में हिन्दी

अनादि काल से भारत के स्त्री-पुरुष धार्मिक दृष्टि से अपने को एक देश के निवासी मानने का गौरव अनुभव करते आये हैं। भारत के उत्तर और दक्षिण तथा पूर्व और पश्चिम प्रदेशों के अनपढ़ और असभ्य देहाती स्त्री-पुरुषों के दैनिक जीवन में भी राम, लक्ष्मण, सीता, कृष्ण, अर्जुन, द्रौपदी, यशोदा आदि अनेकों पौराणिक पात्रों की कथाओं का आश्चर्यजनक प्रभाव बहुत अधिक रूढ़मूल बना हुआ नजर आता है। इससे यह स्पष्ट है कि प्राचीन काल से आज तक भारत एक प्रकार से अखण्ड बना हुआ है, यद्यपि इस देश में विविध भाषाएँ और संस्कृतियाँ विद्यमान हैं और प्रादेशिक सीमाएँ समय-समय पर विचित्र रूप से पारस्परिक संघर्षों और प्रशासनिक संघर्षों और प्रशासनिक परिवर्तनों के कारण बदलती आयी हैं। दक्षिण भारत के केरल प्रदेश में पैदा हुए संसार के दार्शनिकों और पण्डितों के सम्राट जगद्गुरु आदि शंकराचार्य भगवान के रूप में पूजे जाते हैं। उन्होंने अपने अनुपम पांडित्य और अभूतपूर्व तपस्या के फलस्वरूप अपने समय के भारत के समस्त स्त्री-पुरुषों को भावात्मक एकता के साथ धार्मिक श्रद्धा की पवित्र अनुभूति प्रदान की। उन्होंने अपने समय के सन्तों और सन्यासियों और पण्डितों के सत्संग और संवाद के लिए उपयुक्त एकमात्र भाषा संस्कृत मानकर उसी माध्यम से घूम फिरकर अद्वैत सिद्धान्त का प्रचार किया और भारत की एकता एवं अखण्डता की रक्षा करने के लिए चारों दिशाओं में मठों की स्थापना की थी। इसी प्रकार तमिलनाडु के स्वामी श्री रामानुजाचार्य, कर्नाटक के स्वामी श्री माध्वाचार्य आदि अनेकों वैष्णव आचार्यों ने भी भारत भर में भ्रमण कर के धार्मिक एकता और भक्ति के आदान-प्रदान की सुगमता की पुष्टि संस्कृत भाषा के द्वारा करायी थी। इन दक्षिण भारतीय साधुओं और सन्तों के अलावा कई उत्तर भारतीय जैन और बौद्ध भिक्षुओं ने भी स्वयं दक्षिण भारत आकर समय-समय पर

धर्म-प्रचार और उपदेश प्रदान का महान कार्य जनता में किया था। उनका प्रभाव कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, केरल और तमिलनाडु के साधारण लोगों के जीवन और भाषा पर भी पड़ा। इस प्रकार संस्कृत के साथ ही दक्षिण भारत के लोग पाली एवं उत्तर भारतीयों के विविध बोलियों के साथ ही हिन्दी या हिन्दुस्तानी से अच्छी तरह परिचित होने लगे थे। उनके लिए हिन्दी भाषा अब अजनबी नहीं रही।[३८]

उत्तर भारत के अनेक साधु-सन्त, सन्यासी तथा तीर्थ यात्री समय-समय पर दक्षिण के रामेश्वरम् और कन्याकुमारी के बीच में स्थित गोकर्ण, उडुपी, तिरुपति, तंजावूर, मदुरै, तिरुवनन्तपुरम, शुचीन्द्रम आदि विविध तीर्थों और देवमंदिरों के दर्शन के लिए आया करते थे। उन तीर्थ यात्रियों के ठहरने के लिए दक्षिण के विविध राज्यों के शासक, राजा-महाराजाओं ने उन देवालयों और तीर्थों के पास धर्मशालाएँ और सरायें स्थापित की थीं। उत्तर भारतीय तीर्थ यात्रियों के लिए स्थापित धर्मशालाएँ तमिलनाडु, कर्नाटक और आन्ध्र में भी है। उत्तर भारत के जो तीर्थ यात्री और साधु सन्यासी समय-समय पर दक्षिण की उन धर्मशालाओं में आकर ठहरा करते थे उनके जरूरत की वस्तुओं की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए महाराजाओं की सरकारों की तरफ से मुफ्त में दी जाती थीं। उन मुसाफिरों और साधु-सन्तों से संपर्क स्थापित करने उन्हें खाने-पीने की आवश्यक वस्तुएँ दिलाने के लिए उन सरकारों की तरफ से 'द्विभाषी' नामक कर्मचारियों की नियुक्तियाँ हुआ करती थीं। उन 'द्विभाषी' लोगों को अपने यहाँ पहुँचने वाले उत्तर भारतीय मेहमानों से एक प्रकार की बोलचाल की हिन्दी या हिन्दुस्तानी या उर्दू में बातचीत करना अनिवार्य था। इसलिए वे हिन्दी भाषा का अध्ययन अपनी नौकरी की प्रेरणा से अवश्य किया करते थे। इससे दक्षिण की चारों भाषाओं की प्रादेशिक लिपियों में लिखी हिन्दी भाषा पढ़ने और पढ़ाने का ज्ञान उन कर्मचारियों की परम्परा से प्राप्त होता है। ऐसे द्विभाषियों की सहायता से कुछ अन्य साधारण लोग भी सत्संग और मनोरंजन के लिए थोड़ी सी हिन्दी या हिन्दुस्तानी अवश्य पढ़ लिया करते थे। दक्षिण के प्रमुख मंदिरों के पुजारी भी उत्तर भारतीयों से संपर्क के लिए थोड़ी-बहुत हिन्दी का प्रयोग कर लिया करते थे।

दक्षिण भारत के आन्ध्र, तमिलनाडु, कर्नाटक और केरल इन चारों प्रदेशों के प्राचीन प्रशासक अधिकारी लोग भी समय-समय पर हिन्दी या दक्खिनी हिन्दी का प्रयोग करते थे। आन्ध्र के हैदराबाद के निज़ाम और मैसूर के सुल्तान दोनों मुसलमान

थे और वे अपने यहाँ हिन्दी या उर्दू भाषा को प्रमुखता से प्रयोग किया करते थे। तमिलनाडु के तंजावूर के मराठा शासकों ने भी थोड़ी बहुत हिन्दी भाषा की प्रगति करने की तरफ उत्साह दिखाया। कर्नाटक के सुल्तान हैदरअली और टीपू ने भी उर्दू का समर्थन किया था और अपने राज्य में भरसक प्रशासन कार्य में उसका उपयोग भी किया। उनके बाद के मैसूर के महाराजाओं ने भी हिन्दी और उर्दू भाषा का यथासंभव इस्तेमाल किया। केरल के तिरुवितान्कूर और कोच्चिन के महाराजाओं ने भी अपने दरबारों में हिन्दी विद्वानों का समुचित स्वागत सत्कार किया था और स्वयं हिन्दी भाषा पढ़ने की भी कोशिश की थी। इससे प्रमाणित होता है कि दोनों राज्यों के कई पुराने राजा लोग हिन्दी का थोड़ा-बहुत ज्ञान अवश्य रखते थे। सन् १८१३ अप्रैल महीने में १८ तारीख को तिरुवितान्कूर राजवंश में एक ऐसे महाराजा का जन्म हुआ जिन्होंने अपनी अल्पायु की अवधि में हिन्दी भाषा में कविता भी की थी। उनका नाम गर्भ श्रीमान स्वातितिरुनाल श्रीरामवर्मा था। वे संस्कृत, तमिल, हिन्दी, अंग्रेजी, मलयालम्, तेलुगु आदि विविध भाषाएँ जानते थे और प्रायः उन सभी भाषाओं में कई अच्छे-अच्छे कीर्तन गीत और पद भी उन्होंने रचे। उन्होंने कुल चालीस के करीब पदों और गीतों की रचना हिन्दी में की है। इसी तरह मलयालम् साहित्य के पुराने प्रसिद्ध हास्य कवि कुंचन नंपियार की कविता में भी उत्तर भारत से आने वाले गोस्वामियों की बोली हिन्दी का सुन्दर एवं सरस अनुकरण कहीं-कहीं उपलब्ध होता है। इन बातों से यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि आधुनिक हिन्दी प्रचार आन्दोलन के आरंभ होने से पहले ही दक्षिण भारत के लोग हिन्दी से परिचित हो चुके थे।[३९]

दक्षिण भारत के प्रायः सभी स्वतन्त्र राज्यों और छोटी-छोटी रियासतों की अपनी-अपनी फौज अलग-अलग रहा करती थी। उस फौज में स्थानीय लोगों के अलावा उत्तर भारत के राजपूत, पंजाबी और मराठे तथा अन्य भाषा-भाषी देशों के जवानों की भी भर्ती हुआ करती थी। उन गैर भाषा-भाषी, उत्तर भारतीयों के साथ ही कभी-कभी उनके अधीन यहाँ के स्थानीय जवानों को पलटन में मिल-जुलकर कई प्रकार के काम करने पड़ते थे। इसलिए फौज के सरदार, सूबेदार आदि संचालकों की तरफ से सिपाहियों को हिन्दुस्तानी भाषा का काम चलाऊ ज्ञान-हासिल कराने की थोड़ी-बहुत व्यवस्था की जाती थी। अतः उन दिनों सैनिकों के बीच में बोलचाल की भाषा के रूप में हिन्दी या उर्दू का प्रचार था। मुगल बादशाह औरंगजेब के जमाने से

लेकर दक्षिणी रियासतों की फौज के ओहदेदारों को हिन्दुस्तानी या उर्दू की थोड़ी सी जानकारी रखना निहायत जरूरी माना जाता था। शासकों के आक्रमणों के कारण पड़ोसी देशों में उर्दू जानने वालों की संख्या में समय-समय पर बढ़ोत्तरी हुआ करती थी। इसका प्रमाण तत्कालीन चारों प्रादेशिक भाषाओं में प्रचलित कतिपय तत्सम और तद्भव शब्दों से मिला है। मैसूर के सुल्तान टीपू ने जब कोच्चिन पर चढ़ाई की तब वहाँ के तत्कालीन राजा को उनके साथ समझौता करना पड़ा। उस समझौते के अनुसार राजा को अपने खानदान के लोगों को उर्दू सिखाने के काम पर एक उर्दू मुंशी को नियुक्त करने की शर्त भी माननी पड़ी।

हिन्दुस्तानी भाषा को सिखाने के लिए तब से लेकर बराबर एक न एक उर्दू जानने वाले मुसलमान उस्ताद को अपने महल में मुंशी के पद पर नियुक्त करने की प्रथा कोच्चिन राज्य में जारी थी। पर सन् १९३१ के बाद इस प्रथा को बन्द करना पड़ा क्योंकि सारे देश में महात्मा गाँधी के द्वारा चलाये गए हिन्दी प्रचार का आन्दोलन ज़ोर पकड़ने लगा था, जिसके परिणामस्वरूप उर्दू मुंशी की जगह कोच्चिन के महाराजा ने अपने परिवार के लोगों को देवनागरी लिपि में हिन्दी पढ़ाने के लिए सुयोग्य हिन्दी विद्वान अध्यापक की नियुक्तिं करना पर्याप्त घोषित किया। इस प्रकार एक उर्दू मुंशी की जगह एक हिन्दी अध्यापक राज परिवार के लोगों को हिन्दी पढ़ाने लगे। इससे ज्ञात होता है कि हिन्दी का उपयोग फौज में और राज परिवारों में महात्मा गांधी द्वारा चलाए गये आंदोलन से भी पहले था।[४०]

प्राचीन काल से ही अधिक से अधिक संख्या में अरब, फारस, उत्तर भारत के व्यापारियों ने दक्षिण भारत के व्यापारियों के बीच आकर अपना व्यापार शुरु किया। आन्ध्र के विशाखापट्टणम्, मछलीपट्टणम्, तमिलनाडु के मद्रास, पाण्डिचेरी, नागपट्टणम्, रामेश्वरम्, केरल के तिरुवनन्तपुरम्, कोल्लम्, कोच्चिन, कर्नाटक के मंगलूर, कारवार आदि विविध बंदरगाहों में उत्तर भारत में सैकड़ों गुजराती मारवाड़ी, फारसी, पंजाबी, बिहारी व्यापारी लोग कई सालों से आकर यहाँ अपना व्यापार जमाये हुये हैं। वे लोग यहाँ के लोगों से व्यापार करने के लिए उनसे संपर्क साधने के लिए हिन्दुस्तानी भाषा में बातचीत करते हैं। उन व्यापारियों से व्यापार करने के कारण ही यहाँ के लोगों को भी टूटी-फूटी हिन्दी या हिन्दुस्तानी भाषा का प्रयोग करना ज़रूरी हो गया है। इसलिए दक्षिण भारत के व्यापारियों के बीच हिन्दी का आदान-प्रदान होना सहज और स्वाभाविक है।[४१]

इन सब के अलावा दक्षिण भारत के चारों प्रमुख भाषाओं के कुछ प्राचीन विद्वानों ने हिन्दी, पाली, राजस्थानी आदि भाषाओं के प्राचीन पौराणिक, धार्मिक ग्रन्थों का अपनी-अपनी भाषाओं में अनुवाद करने का महत्वपूर्ण कार्य भी किया है। भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में इन साहित्यकारों ने हिन्दी को स्वीकार कर लिया था और यही कारण था कि उन्होंने हिन्दी के प्राचीन ग्रन्थों का दक्षिणी भाषा में अनुवाद भी किया। इससे सहज ही यह बात उजागर हो जाती है कि उन विद्वानों ने हिन्दी के अध्ययन पर विचार करना शुरु कर दिया था तभी तो उन्होंने धीरे-धीरे अनुवाद के क्षेत्र में सफलता हासिल की।[४२] उपर्युक्त बातों से स्पष्ट हो जाता है कि भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति के आधुनिक युग के नवीनतम हिन्दी प्रचार आन्दोलन शुरु होने के कई साल पहले ही दक्षिण भारत में हिन्दी, उर्दू अथवा हिन्दुस्तानी भाषा का थोड़ा-बहुत ज्ञान वहाँ के लोगों को अवश्य था, वे पूर्णतया इस भाषा से अनभिज्ञ नहीं थे साथ ही प्रचार कार्य का काम धार्मिक, राजनैतिक, प्रशासनिक, सैनिक, व्यापारिक एवं साहित्यिक कारणों से अवश्य हुआ करता था।

लेकिन इन सबके बावजूद हिन्दी भाषा को जन-जन तक पहुँचाने उसे राष्ट्र में एक राजभाषा, राष्ट्रभाषा, जनभाषा एवं सम्पर्क भाषा का स्थान दिलाने का श्रेय महात्मा गाँधी जी को ही जाता है। दक्षिण अफ्रीका से लौटने के बाद जब से गाँधी जी ने भारत के राजनैतिक जीवन में कदम रखा तब से हिन्दी प्रचार का एक नया ही कार्यक्रम राष्ट्रीय दृष्टि से शुरु हो गया। उन्होंने सन् १९१६ में लखनऊ के तथा १९१७ में कलकत्ता के कांग्रेस अधिवेशनों में दक्षिण भारत में राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार करने की आवश्यकता पर जोर दिया। इसका व्यापक प्रभाव पूरे भारतवर्ष पर पड़ा और हिन्दी प्रचार कार्यक्रम को भी स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए संघर्षपूर्ण कार्यक्रमों में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाने लगा। गांधीजी का मानना था कि जब तक दक्षिण के चारों राज्यों के भाषा-भाषी लोग राष्ट्रभाषा हिन्दी का ज्ञान हासिल नहीं करेंगे तब तक सारे भारतवर्ष की एकता और सांस्कृतिक समानता की समस्याएँ हल नहीं की जा सकेंगी।

सन् १९१० में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना हुई। इसके द्वारा उत्तर भारत में हिन्दी के अध्ययन को लोकप्रिय बनाने का काम शुरु किया गया। हिन्दी आन्दोलन को मजबूत बनाने के लिए सम्मेलन का आयोजन प्रत्येक वर्ष उत्तर के प्रमुख नगरों में बड़े उत्साह के साथ मनाया जाने लगा।

सन् १९१८ के मार्च महीने में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का ८वाँ वार्षिक अधिवेशन इंदौर में हुआ। इस अधिवेशन के अध्यक्ष का कार्यभार महात्मा गाँधी जी ने संभाला और इसी के फलस्वरूप हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में दक्षिण भारत में स्थापित करने के लिए प्रचार कार्य की शुरुआत हुई। गांधीजी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में हिन्दी को एक नया दृष्टिकोण प्रदान किया। अब तक के हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशनों का प्रमुख उद्देश्य उत्तर भारत की जनता में हिन्दी भाषा के प्रति प्रेम को बढ़ावा देना ही था लेकिन हिन्दी अखिल भारतीय अंतर प्रान्तीय व्यवहार की भाषा भी बन सकती है इसकी कल्पना शायद ही कोई कर पाया हो। पर यह नयी दृष्टि गाँधीजी ने इस अधिवेशन के जरिये दी और राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का प्रचार करने का अनुरोध भी किया।

गाँधीजी ने अपने भाषण में कहा कि गुजराती, मराठी, बंगाली भाषा–भाषियों के लिए तो हिन्दी सीखना आसान है, लेकिन सबसे कष्टदायक मामला द्रविड़ भाषा–भाषियों के लिए है। वहाँ तो इस ओर सार्थक प्रयत्न नहीं हुआ है। गाँधीजी का कहना था कि वहाँ के लोगों को हिन्दी सीखाने के लिए शिक्षकों को तैयार करना चाहिए। आवश्यक पुस्तकें तैयार करनी चाहिए और यह कार्य सम्मेलनों के द्वारा किया जाना चाहिए। गाँधीजी के अनुरोध पर सम्मेलन में एक प्रस्ताव स्वीकृत हुआ जिसके परिणामस्वरूप दक्षिण भारत में हिन्दी के प्रचार कार्य की योजना का श्री गणेश किया गया।[४३]

सम्मेलन के इस निर्णय को कार्यान्वित करने के लिए गाँधीजी ने दक्षिण के कुछ नेताओं से दक्षिण में हिन्दी का प्रचार करने का अनुरोध किया। उस समय सन् १९१८–२० में महाराष्ट्र, मद्रास आदि प्रान्तों में "सर्वेंट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी" नामक संस्था सक्रिय थी। पूना में गोखले जी इसके प्रमुख थे। मद्रास में थियोसॉफिकल सोसाइटी की प्रधान श्रीमती एनी बेसेंट थीं। सी.पी. रामस्वामी अय्यर आदि कई युवक उसके सदस्य थे। गाँधीजी के अनुरोध पर ये लोग हिन्दी सीखने के लिए उत्साहित हुए और तब सी.पी. रामस्वामी अय्यर ने गाँधीजी से लिखित प्रार्थना की कि हम सभी हिन्दी सीखना पढ़ना चाहिते हैं, अतः आप किसी उचित व्यक्ति को हिन्दी सिखाने के लिए भेजिए। लोगों का यह उत्साह देखकर गाँधीजी ने शीघ्र ही अपने पुत्र देवदास गाँधी को हिन्दी अध्यापन हेतु मद्रास भेजा उस समय देवदास जी की उम्र महज १८ वर्ष ही थी। १९१८ मई महीने के प्रथम सप्ताह में मद्रास के गोखले हॉल में सर्वप्रथम हिन्दी वर्ग की शुरुआत हुई। इस वर्ग का उद्घाटन

होमरूल लीग के कार्यालय में डा. एनी बेसेंट ने किया। सर सी.पी. रामस्वामी अय्यर इसके अध्यक्ष थे। ये लोग शीघ्र ही काँग्रेस के देश सेवा आन्दोलन में भाग लेने लगे। इन लोगों ने देश के लिए एक सामान्य भाषा की आवश्यकता पर जोर दिया और हिन्दी का सन्देश स्वीकार कर उसके प्रचार में उत्साह दिखाया तो शिक्षित समाज के मन में हिन्दी के प्रति सम्मान बढ़ा।[४४]

देवदास गाँधी के अथक प्रयास, लगन से जनता हिन्दी की ओर आकृष्ट हुई। शहर के गण्य-मान्य सज्जन हिन्दी सीखने लगे। उनमें सर्वश्री न्यायाधीश सदाशिव अय्यर, के. भाष्यम अय्यंगर, टी.आर. वेंकटराम शास्त्री, एन. सुन्दर अय्यर, श्री रंगरत्नम् आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। धीरे-धीरे मद्रास शहर में हिन्दी प्रचार कार्य बढ़ने लगा और सन् १९१८ के अगस्त महीने में उन लोगों की सहायता के लिए हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से इस दिशा में बेहतर कार्य करने के उद्देश्य से सत्यदेव परिव्राजक जी को भेजा। देवदास जी लोगों को हिन्दी पढ़ाने के लिए उत्तर भारत से मँगवायी गई कुछ बालोपयोगी पुस्तकों की सहायता लेते थे परन्तु इसमें दक्षिण की जनता के लिये कोई उपयुक्त पुस्तक नहीं थी। अतः श्री सत्यदेव जी ने *"हिन्दी की पहली पुस्तक"* नाम से एक किताब लिखी। यह सुन्दर और आदर्शपूर्ण पुस्तक थी जिससे लाखों लोगों को हिन्दी सीखने में सहायता मिली।

दक्षिण भारत में धीरे-धीरे हिन्दी प्रचार का क्षेत्र विस्तृत होता गया। साथ ही हिन्दी प्रचारकों की माँग भी बढ़ती गयी। इसकी पूर्ति के लिए हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने एक आयोजन बनायी जिसके अनुसार यह निश्चय हुआ कि दक्षिण के कुछ उत्साही युवकों को उत्तर भारत भेजकर प्रचारक बनने के लिए हिन्दी की पर्याप्त शिक्षा दी जाय और शिक्षा पूरी करने पर उन्हें दक्षिण के विभिन्न केन्द्रों में हिन्दी प्रचार करने भेजा जाय।[४५]

गाँधीजी ने यह कार्य श्री हरिहर शर्मा जी को सौंपा। वे दक्षिण भारत की हिन्दी-प्रचार सभा के प्रथम महामंत्री थे और गाँधीजी क़े आश्रम के प्रमुक सदस्य थे और उनकी कार्यनिष्ठा सें गाँधीजी काफी प्रभावित भी थे, अतः गाँधीजी ने हरिहर शर्मा जी से कहा कि वे कुछ उत्साही युवकों के साथ उत्तर भारत जायें। गाँधीजी का आदेश पाकर हरिहर शर्मा कुछ उत्साही युवकों के साथ प्रयाग पहुँचे और एक वर्ष तक हिन्दी साहित्य सम्मेलन में अध्ययन करने के बाद अगस्त १९१९ में मद्रास वापस लौट आये। इसके बाद स्वामी सत्यदेव जी वापस चले गये और श्री हरिहर

शर्मा एवं श्री देवदास गाँधीजी हिन्दी प्रचार कार्य का पूरा काम संभालने लगे। हिन्दी-प्रचार कार्यालय के कार्यों के अतिरिक्त हिन्दी वर्ग चलाना भी उनका दैनिक कार्यक्रम था। पं. कां. मा. शिवराम शर्मा और सीतारामांजनेयुलु आंध्र में प्रचार करने क्रमशः राजमेंहद्री और मछलीपट्टणम भेजे गये।

सन् १९१९ के अन्त में उत्तर भारत से श्री प्रतापनारायण वाजपेई, श्री क्षेमानन्द राहत तथा श्री हृषीकेश शर्मा क्रमशः त्रिची, मद्रास और मछलीपट्टणम् में हिन्दी प्रचार करने के लिए गये। इनके बाद उत्तर प्रदेश से श्री रघुवरदयालु मिश्र, रामभरोसे श्रीवास्तव, बिहार से श्री अवधनन्दन तथा श्री देवदूत विद्यार्थी मद्रास आकर प्रचार कार्य करने लगे। इसी बीच दक्षिण के छात्रों का हिन्दी के उच्छ अध्ययन के लिए उत्तर जाना नियमित कार्यक्रम हो गया। आन्ध्र प्रान्त से शिक्षार्थियों के दो दल उत्तर भारत गये और साल भर अध्ययन करने के बाद वापस लौटकर आन्ध्र के विभिन्न प्रान्तों में प्रचार कार्य करने लगे। इस प्रकार धीरे-धीरे दक्षिण में हिन्दी प्रचारकों की संख्या बढ़ने लगी।[६]

सन् १९१८ से सन् १९२७ तक दक्षिण में हिन्दी प्रचार कार्य हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की ओर से उसकी शाखा के कार्यालय के रूप में होता रहा। श्री हरिहर शर्मा इस शाखा के मंत्री थे। यद्यपि सुविधा की दृष्टि से यह कार्य साहित्य सम्मेलन के शाखा-कार्यालय के रूप में होता रहा तथापि शुरु में ही दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की नींव पड़ गयी थी। सन् १९२३ दिसम्बर में अखिल भारतीय काँग्रेस के अधिवेशन के साथ-साथ हिन्दी साहित्य सम्मेलन का विशेष अधिवेशन काकिनाडा में श्री जमनालाल बजाज की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। अधिवेशन के बाद जमनालाल बजाज जी ने दक्षिण भारत का भ्रमण कर हिन्दी प्रचार की ओर दक्षिण की जनता को आकृष्ट किया।

इन्हीं दिनों काँग्रेस की ओर से स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए कई आन्दोलन चले। इस कारण भी हिन्दी सीखने वालों की संख्या शीघ्रता से बढ़ने लगी। कार्य की अधिकता के कारण प्रचार कार्य को ठीक से संभालने में हिन्दी साहित्य सम्मेलन को थोड़ी मुश्किल होने लगी। आर्थिक सहायता भी समय पर न मिलने के कारण प्रचार कार्य में थोड़ी मुश्किल होने लगी, तब गाँधीजी ने इस दिशा में एक ऐतिहासिक कदम उठाया। वे दक्षिण के हिन्दी प्रचार कार्य को स्वावलंबी बनाना चाहते थे। उन दिनों सन् १९२७ में स्वास्थ्य लाभ के लिए गाँधीजी बैंगलोर में रह रहे थे। जुलाई में

बैंगलोर में अखिल कर्नाटक हिन्दी प्रचार सम्मेलन गाँधीजी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इसी अवसर पर दक्षिण के हिन्दी प्रचार कार्य को सम्मेलन से अलग कर एक स्वतंत्र संस्था को सौंपने का निर्णय किया गया। इस नवसंगठित संस्था का नाम "दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा" रखा गया। इसकी रजिस्ट्री भी हुई। यह प्रस्ताव जमनालाल बजाज ने सम्मेलन के दौरान रखा था। सभा की प्रथम बैठक बैंगलोर में ही हुई और महात्मा गाँधी इसके आजीवन अध्यक्ष चुने गये।

गाँधीजी का आदेश था कि दक्षिण के प्रचार कार्य के लिए उत्तर भारत से अब आर्थिक सहायता न ली जाय। इस कठोर स्थिति में भी दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के कार्यकर्त्ता जरा भी विचलित नहीं हुए। वे अपने पैरों पर स्वयं ही खड़े होने की कोशिश बराबर करते रहे और उनको आशातीत सफलता भी मिली।[४७]

हिन्दी पढ़ने वालों के उपयोग के लिए व्याकरण, स्वबोधिनियाँ आदि पुस्तकों की आवश्यकता हुई। हरिहर शर्मा और शिवराम शर्मा ने मिलकर हिन्दी-अंग्रेजी और हिन्दी-तमिल स्वबोधिनी लिखी। बाद में इसके तेलुगु, मलयालम् और कन्नड़ संस्करण भी तैयार किये गये। हृषीकेश शर्मा ने इसका तेलुगु संस्करण तथा एम.के. दामोदरन उण्णि ने मलयालम् संस्करण तैयार किया। कुछ वर्षों के बाद मोटूरि सत्यनारायण एवं पं. अवधनन्दन ने नये ढंग की हिन्दी-अंग्रेजी स्वबोधिनी लिखी। इसका मलयालम् संस्करण ए. चन्द्रहासन और पी.के. केशवन नायर ने मिलकर तैयार किया। सर्वप्रथम हिन्दी-तमिल स्वबोधिनी प्रयाग के हिन्दी साहित्य सम्मेलन से प्रकाशित हुई। इसे महात्मा गाँधीजी ने पसंद किया और इसकी भूमिका लिखी। इन पुस्तकों की सहायता से लाखों लोग हिन्दी में प्रवेश पा सके।[४८]

जैसे-जैसे हिन्दी का प्रचार कार्य बढ़ने लगा वैसे-वैसे अधिक संख्या में हिन्दी प्रचारकों की आवश्यकता बढ़ी। मद्रास की दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के कार्यकर्त्ताओं ने अनुभव किया कि अब दक्षिण में ही युवकों को हिन्दी प्रचार के लिए तैयार करना चाहिए। इसके लिए सभा ने सन् १९२२ में ईरोड में 'हिन्दी प्रचारक विद्यालय' खोला। श्री अवधनन्दन और श्री देवदूत जी यहाँ अध्यापन का कार्य करते थे। ईरोड के विद्यालय की एक विशेषता यह थी कि उसका उद्घाटन पं. मोतीलाल नेहरु के हाथों हुआ। दूसरी विशेषता यह थी कि ई.वे. रामस्वामी नायक्कर ने ही इस विद्यालय के लिए अपना मकान दिया था और उनके भाई श्री ई.वे. कृष्ण स्वामी नायक्कर की मदद बराबर विद्यालय को मिलती रही।

सन् १९२४ में सभा ने मद्रास में हिन्दी प्रचारक विद्यालय खोला जिसमें दक्षिण के चारों प्रान्तों के युवकों ने शिक्षा पायी और प्रचार कार्य करने लगे। यह केंद्रीय विद्यालय तब से मद्रास में बराबर चल रहा है। कुछ वर्षों तक यह विद्यालय केवल महिलाओं के लिए चलाया गया। पुरुषों के लिये तिरुच्ची, विजयवाड़ा, मदुरै, अखंकाडु, कालिकट आदि स्थानों पर हिन्दी प्रचारक विद्यालय चलते रहे।

देश के कई प्रमुख नेताओं ने सभा के कार्यों का निरीक्षण किया, जिससे प्रचार कार्य को बल मिला। सन् १९२५ में बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन जी ने दक्षिण भारत के कई हिन्दी केंद्रों का निरीक्षण किया। इस दौरान वे कामकोटि पीठाधीश जगद्गुरु श्री शंकराचार्य जी से भी मिले और हिन्दी प्रचार कार्य की गतिविधियों और उससे संबंधित अन्य जानकारी भी उनको दी। सन् १९२२ में आंध्र प्रदेश के बढ़ते हुए कार्य को संभालने नेल्लूर में एक शाखा कार्यालय खुला और सन् १९२४ में तमिलनाडु शाखा कार्यालय तिरुच्ची में खुला।

आन्ध्र शाखा के मंत्री क्रमशः श्री रामभरोसे और श्री मो. सत्यनारायण थे। तमिल शाखा के मंत्री श्री अवधनन्दन थे। आगे चलकर किन्हीं कारणवश इन दोनों शाखाओं को बन्द करना पड़ा। (सन् १९२६ में जब दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के नाम से कार्य शुरु हुआ, सभा का प्रधान कार्यालय मद्रास में ही रखा गया)

हिन्दी सीखने वालों की संख्या जब बढ़ने लगी तो उनकी पढ़ाई को क्रम-बद्ध बनाकर उनको प्रोत्साहित करने के लिए हिन्दी परिक्षाएँ चलाने की योजना शुरु की गयी। इस योजना के अंतर्गत प्रारंभिक स्तर की तीन परीक्षायें चलने लगीं।[४९] सन् १९३३ में हरिजन यात्रा के सिलसिले में गाँधीजी विजयवाड़ा गये। वहाँ नागेश्वरराव पंतुलु के नेतृत्व में कार्य कर रहे कुछ कार्यकर्त्ता गाँधीजी से मिले और उनसे प्रार्थना की कि आंध्र प्रान्त का सारा प्रचार कार्य एक स्वतंत्र संस्था की ओर से चलाने की अनुमति दें। गाँधीजी ने उनसे कहा कि इस योजना के तहत विचार किया जा रहा है, शीघ्र ही इस दिशा में सार्थक कदम उठाये जा सकते हैं।

दूसरे ही वर्ष गाँधीजी ने अपने मित्र गुजरात विद्यापीठ के कुलपति काका साहब कालेलकर को दक्षिण भारत के हिन्दी कार्य का निरीक्षण कर उसमें आवश्यक सुधार करने के उद्देश्य से वहाँ भेजा। काका साहब ने करीब ३ महीने तक दक्षिण भारत के चारों प्रान्तों का भ्रमण किया, सैकड़ों हिन्दी प्राचरकों एवं हिन्दी प्रेमियों से मिले, उनकी कठिनाईयों के बारे में जानकारी हासिल की।

भ्रमण के अपने अनुभवों के आधार पर काका साहेब ने सभा के संविधान में कई परिवर्तन सुझाये और चारों प्रान्तों सभा से संबद्ध प्रान्तीय सभाओं की स्थापना की सिफ़ारिश की।

काका साहेब के सुझावों के आधार पर सन् १९३५ में प्रान्तीय का नया संविधान भी बना और १९३६ में प्रान्तीय सभाओं की स्थापना हुई। प्रान्तीय सभाओं के लिये कुछ सामान्य नियम भी बने और अलग चन्दा लेकर हरेक प्रान्त में नये सदस्य बनाये गये और उनमें से प्रत्येक प्रान्त के लिये अलग-अलग कार्यकारिणी समितियाँ भी संगठित हुई।

उन दिनों सभा में आजीवन कार्यकर्त्ताओं की एक श्रेणी थी। उन कार्यकर्ताओं को निम्नलिखित प्रतिज्ञायें करनी पड़ती थीः ।

१. मेरा दृढ़ विश्वास है कि देश के लिए राष्ट्रभाषा का प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

२. मैंने अपना पूरा समय राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार में व्यतीत करने का निश्चय किया है।

३. मेरे तथा मेरे कुटुंब के निर्वाह के लिए सभा जो प्रबंध करेगी, उससे मैं संतुष्ट रहूँगा। मैं अपने समय और शक्ति को अपने कुटुंब के लिए धनोपार्जन करने में न बिताकर सभा के उद्देश्य की पूर्ति में पूर्ण रूप से योग दूँगा।

४. मैं सादा सभा के उद्देश्यों को ही अपने सामने रखूँगा और उसकी वृद्धि और उन्नति के लिए पूर्ण उत्साह के साथ चेष्टा करूँगा।

५. मैं किसी जाति-पाति, पंथ, धर्म आदि का भेदभाव न रखकर समान भाव से हिन्दी सिखाने के लिए सर्वदा तैयार रहूँगा।

६. सभा के नियम तथा उसकी शाखाओं के लिए मैं बाध्य रहूँगा। मैं सभा कार्यालय की सामयिक सूचना के अनुसार कार्य किया करूँगा।

७. मैं अपने व्यक्तिगत जीवन को सादा और पवित्र रखूँगा।

गाँधीजी ने सभा के लिये यह लक्ष्य वाक्य भी दिया था :

''Hindi, not in the place of the mother tongue, but in addition to it.''[50]

गाँधीजी काँग्रेस के कार्यकर्त्ताओं की ही कोटि में हिन्दी प्रचारकों को भी रखते थे। कई हिन्दी प्रचारक पहले से काँग्रेस सेवक थे। गाँधीजी अनुशासन प्रिय थे।

हरिजन सेवक में १९३७ में गाँधीजी का जो लेख निकला वह हिन्दी प्रचारकों को लिए गाँधीजी का निंधारित मानक था।

"जिन संस्थाओं के साथ मेरा निकट का संबंध रहता है उन्हें जनसमुदाय से-पुरुषों और स्त्रियों से काम लेना पड़ता है। ये संस्थाएँ सैकड़ों स्वयं-सेवकों की मदद से अपना काम चलाती है। उनके पास एक नैतिक बल के सिवा दूसरे किसी प्रकार की सत्ता नहीं रहती। स्वयं सेवकों पर जनता विश्वास रखती है, क्योंकि वह मान लेती है कि उनका चरित्र शुद्ध होगा। यह बात दक्षिण भारत के हिन्दी शिक्षकों पर बहुत जोर से लागू होती है। यहाँ दक्षिण भारत में पर्दे का रिवाज़ नहीं है। वहाँ लड़कों की अपेक्षा लड़कियाँ हिन्दी में ज्यादा दिलचस्पी लेती है। शिक्षकों को अपने धंधे के कारण ही अपने शिष्यों एव ं शिष्याओं पर नैतिक अधिकार होता है।"

गाँधीजी की वाणी में एक जादू सा प्रभाव होता था जो लोगों के दिलों तक असर करता था। हिन्दी प्रचारकों को बार-बार उनके कर्त्तव्यों की याद दिलाई जाती थी। ये कर्त्तव्य थे- राष्ट्रीय भावना, चरित्र बल, सेवापारायणता, विनयशीलता, समयपालन शिक्षा, संगठन, विषयज्ञान एवं त्यागनिष्ठा।[५१]

तिरुवल्लिकेणी में कार्यालय के स्थान और सुविधा पर्याप्त न होने के कारण सन् १९३४ में कार्यालय मात्र का स्थान-परिवर्तन नगर के जॉर्ज टाउन आर्मीनियन स्ट्रीट हिन्दुस्तान बिल्डिंगस में किया गया। प्रेस तिरुवल्लिकेणी में ही रखा गया।

अब सभा के सभी कार्यकलापों को एक ही जगह रखने की आवश्यकता महसूस हुई। गाँधीजी से सलाह लेकर इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु सभा के लिए निजी भवन व जमीन पाने का निर्णय किया गया।

उन दिनों शहर की नयी बस्ती त्यागरायनगर में करीब ५ एकड़ की जमीन नगर-निगम से लागत दाम में प्राप्त की गई और १९३६ के आरंभ में गाँधीजी से आशीर्वाद प्राप्त कर सभा के प्रधान कार्यालय, प्रेस तथा मुख्य कार्यकर्त्ताओं के लिए चार निवास बनाये गये। ९ फरवरी १९३६ को मद्रास नगर के मेयर जनाब अब्दुल हमीद खाँ के हाथों शिलान्यास हुआ। उसके बाद प्रधान भवन का उद्घाटन पंडित जवाहर लाल नेहरू के हाथों ७ अक्टूबर १९३६ को संपन्न हुआ। सन् १९३७ में मार्च महिने में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का वार्षिक अधिवेशन मद्रास में सभा के अहाते में बड़ी धूम-धाम से मनाया गया। जमनालाल जी इसके अध्यक्ष थे। गाँधीजी, पुरुषोत्तमदास टंडन, काका कालेलकर, श्री राजगोपालाचार्य तथा उत्तर एवं दक्षिण के कई हिन्दी

लेखकों एवं सार्वजनिक नेताओं ने सम्मेलन में भाग लिया। इस अवसर पर सभा का पदवीदान समारंभ भी हुआ। इस सम्मेलन के फलस्वरूप हिन्दी प्रचार आंदोलन में विशेष स्फूर्ति आयी।

काका कालेलकर के सुझावों के अनुसार बनी सभा की नयी नियमावली के अनुसार सभा का प्रशासनिक कार्य व्यवस्थापक समिति और कार्यकारिणी समिति के जिम्मे था। परीक्षा, साहित्य, शिक्षण आदि को शिक्षा परिषद के अंतर्गत किया गया। शिक्षा परिषद के सदस्य प्रचारकों में से चुने जाते थे। सभा के प्रधानमंत्री परिषद के अध्यक्ष होते थे। परिषद की तीन उपसमितियाँ– परीक्षा, साहित्य व शिक्षा संबन्धी कार्यों में परिषद को सलाह परामर्श देती थी।[५२] हिन्दी परीक्षाएँ जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि हिन्दी सीखने वालों की बढ़ती संख्या को देखकर उनकी हिन्दी के प्रति ललक देखकर उनकी पढ़ाई को क्रमबद्ध बनाकर हिन्दी के प्रचार–प्रसार की दिशा में हिन्दी परीक्षायें चलाने की योजना शुरु की गयी। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के अधिकारियों के तथा मद्रास शाखा के संचालक एवं परीक्षा मंत्री के हस्ताक्षर के साथ सन् १९२२ से हिन्दी की विविध परीक्षाएँ चलाकर प्रमाण–पत्र देने का क्रम सभा ने प्रारंभ किया। उन दिनों की परीक्षाएँ प्राथमिक, प्रवेशिका और राष्ट्रभाषा नामक तीन क्रम–बद्ध स्तर के अनुकूल चलायी जाती थी। राष्ट्रभाषा के बाद तुलसी रामायण नामक एक विशेष परीक्षा भी कुछ समय तक प्रचलित रही, जिसमें रामचरितमानस पर प्रश्न पूछे जाते थे। सन् १९२६ में जब सभा का नाम हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रचार कार्यालय से बदलकर दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा हुआ, तबसे उपर्युक्त प्रांरभिक परीक्षाओं के नाम प्राथमिक, मध्यमा और राष्ट्रभाषा पड़ा। तबसे प्रमाण–पत्रों पर सभा के परीक्षा मंत्री और प्रधानमंत्री के हस्ताक्षर दिये जाने लगे।[५३]

१.५.१ हिन्दी प्रचार सप्ताह का आयोजन

हिन्दी आन्दोलन को मजबूत बनाने और हिन्दी का सन्देश घर–घर पहुँचाने के उद्देश्य से सन् १९३४ में सभा से हिन्दी प्रचार सप्ताह मनाने का आयोजन शुरु किया गया। यह सप्ताह ३० सितंबर से शुरु कर ६ अक्टूबर तक हर वर्ष सभी हिन्दी केन्द्रों में मनाया जात था। पूरे साल भर में यही एक अवसर ऐसा होता था जब सभी हिन्दी प्रचारक और हिन्दी प्रेमी अपने पढ़ाने का मामूली कार्य छोड़कर नये लोगों से मिलने,

उन्हें अपना उद्देश्य समझाने अपने कार्य में उनकी मदद प्राप्त करने, सभायें करने और इस तरह आगामी साल के लिए नये विद्यार्थी, नये क्षेत्र और नया उत्साह प्राप्त करने में अपनी पूरी शक्ति लगाते थे।

१.५.१.१ हिन्दी प्रचारक सम्मेलन

धीरे-धीरे हिन्दी दक्षिण भारत में अपनी स्थिति को मजबूत करने की ओर अग्रसर थी और समय-समय पर इस दिशा में कुछ न कुछ नयी योजनाओं पर विचार-विमर्श कर उसे लागू किया जाता रहा है ताकि हिन्दी पूरे भारत वर्ष में एक राष्ट्रभाषा, राजभाषा, जनभाषा, संपर्क भाषा आदि के रूप में अपनी एक विशिष्ट पहचान बना सके।

दक्षिण भारत में हिन्दी को लोकप्रिय बनाने के उद्देश्य से समय-समय पर सम्मेलनों का आयोजन किया जाता रहा है। दक्षिण के चारों प्रान्तों के प्रचारक एक-दूसरे से परस्पर परिचित हों और अपने-अपने प्रान्तों में हो रहे कार्यों के बारे में अपने विचार एक दूसरे के साथ बाँट सकें इस उद्देश्य से दक्षिण भारत के हिन्दी प्रचारकों के सम्मेलन समय-समय पर मद्रास में आयोजित होते रहे हैं। इस तरह का सर्वप्रथम सम्मेलन सन् १९२३ में मद्रास के सौंदर्य महल में भाई पुरुषोत्तमकेशव कोतवाल की अध्यक्षता में हुआ। इस सम्मेलन में करीब २५ प्रचारकों ने भाग लिया और इस अवसर पर महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव भी पेश किये।

दूसरा सम्मेलन सन् १९३१ में २० व २९ दिसम्बर को हुआ। स्थानीय हिन्दुस्तान बैंक के मैनेजिंग डाइरेक्टर श्री विद्यासागर पाण्ड्या इसके अध्यक्ष थे। इसमें ४० प्रचारकों ने भाग लिया और कार्य को बढ़ाने के बारे में कई प्रस्ताव स्वीकृत हुए।

तीसरा सम्मेलन बड़े पैमाने पर ३१ दिसंबर १९३२ को प्रथम हिन्दी प्रचारक देवदास गाँधीजी द्वारा शुरू हुआ प्रचार कार्य दिनोंदिन अपनी प्रगति कर रहा था यह जानकर देवदास गाँधी बड़े प्रसन्न हुए। इसके बाद हर वर्ष मद्रास में सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन बराबर होते रहे। इन सम्मेलनों के अवसर पर कवि सम्मेलन, हिन्दी नाटक प्रदर्शन, प्रचार साधन व हिन्दी पुस्तकों की प्रदर्शिनियाँ आदि कार्यक्रम भी चलते थे।

१.५.१.२ प्रमाणित प्रचारक योजना

सन् १९४० में सभा ने दक्षिण में कार्य करने वाले प्रचारकों को एक संगठन के अंतर्गत लाने, सभा के साथ उनके संबंध को जोड़ने तथा उनको अपने कार्य में विशेष सुविधाएँ देने की दृष्टि से उनको प्रमाणित करने का एक क्रम चालू किया गया। इस तरह प्रमाणित किये हुए प्रचारक 'प्रमाणित प्रचारक' कहलाये गये। उनको दो श्रेणियों में विभाजित किया गया। सभी की प्रवीण परीक्षा में उत्तीर्ण प्रचारक प्रथम श्रेणी में और सिर्फ विशारद में उत्तीर्ण दूसरी श्रेणी में। प्रथम श्रेणी के प्रचारकों को सभा की उच्च परीक्षाओं के लिए पढ़ाने का अधिकार है। दूसरी श्रेणी के प्रचारकों को सिर्फ राष्ट्रभाषा तक की परीक्षा के लिए पढ़ाने का अधिकार है। प्रमाणित प्रचारकों को सभा अनुदान देने की भी योजना रखती है। उन्हें सभी की शिक्षा परिषद का प्रतिनिधित्व, उप-समिति व व्यवस्थापक समिति में प्रतिनिधित्व दिया जाता है। आज सभा के प्रमाणित प्रचारकों की संख्या करीब १०,००० तर पहुँच चुकी है।

१.५.१.३ सभा की नवीन शाखा

सभा के बढ़ते हुए कार्य को देखकर एक नयी शाखा खोलने का निर्णय लिया गया और सन् १९६६ में हैदराबाद में केन्द्र सभा की एक शाखा खोली गयी, जिसका नाम 'हैदराबाद हिन्दी प्रचार संघ' रखा गया उस वक्त 'हैदराबाद' निजाम के शासन से स्वतंत्र होकर भारत का ही एक राज्य बना था और उसके मुख्यमंत्री श्री बी. रामकृष्ण राव ने भी वहाँ हिन्दी प्रचार कार्य को बढ़ाने में काफी सहयोग प्रदान किया।

भाषावार प्रान्तों के संगठन होने पर हैदराबाद हिन्दी प्रचार संघ और आन्ध्र राष्ट्र हिन्दी प्रचार संघ, विजयवाड़ा इन दोनों को मिलाकर "दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, आंध्र" के नाम से हैदराबाद में सारे आन्ध्र के कार्य का संचालन होने लगा।

१.५.१.४ मण्डल योजना

सन् १९५१ में जब भारत के संविधान में हिन्दी राजभाषा घोषित हुई, तब से हिन्दी की लोकप्रियता में दिनोंदिन वृद्धि होती गई। सभा को भी अपने संगठन को अधिक सुगठित करने की आवश्यकता महसूस हुई। इस कारण सन् १९५३ में मार्च

से सभा के सारे कार्य-क्षेत्र को १५ मंडलों में विभाजित किया गया। हर मंडल के अधीन तीन या चार जिले नियुक्त किए गए जिनकी कुल आबादी ५० से ७० लाख तक की थी।

इन मंडलों के संगठन का भार सभा के अनुभवी कार्यकर्त्ताओं को सौंपा गया। अपने कार्य क्षेत्रों का निरीक्षण कर हिन्दी प्रचारकों और स्कूलों के हिन्दी अध्यापकों से मिलना, जनता से संपर्क को बढ़ावा देना, उन्हें अपने कार्यों का परिचय देना, उन्हें सभा का सदस्य बनाना, प्रचारकों का आपसी परिचय बढ़ाना, शिविर, संगोष्ठी, सम्मेलन आदि चलाना, उनमें प्रादेशिक भाषाओं के विद्वानों को बुलाना, मुख्य केन्द्रों में विशारद विद्यालय एवं प्रवीण विद्यालय स्थापित करना आदि कार्य इन संगठनों के द्वारा होने लगे।

मंडल योजना के द्वारा जब कार्य बढ़ने लगा, तब सभा ने तीन संयुक्त सचिवों की नियुक्ति की, एक संयुक्त मंत्री केन्द्र सभा में प्रधानमंत्री की सहायता करने दूसरे संयुक्त मंत्री आन्ध्र तथा कर्नाटक के कार्य का निरीक्षण करने हैदराबाद में और तीसरे संयुक्त मंत्री तमिल व केरल के कार्य का निरीक्षण करने तिरुच्ची में नियुक्त हुए। इनके द्वारा जन संपर्क के कार्य में विशेष उन्नति हुई। प्रचारकों के शिविर हर जिले में चलाये गये।

भारत सरकार की पंचवर्षीय योजनाओं में हिन्दी प्रचार कार्य को बढ़ाने के लिए संस्थाओं को आर्थिक सहायता पहुँचाने का प्रावधान किया गया। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा ने इससे लाभ उठाकर कई योजनाएँ बनायी। छोटे केन्द्रों में सभा की ओर से प्रचारक नियुक्त करना, जिला केन्द्रों में विशारद व प्रवीण विद्यालय चलाना, स्कूलों में हिन्दी पढ़ाने वालों को पुरस्कार देना, हिन्दी पुस्तकलायों को पुस्तकें भेंट करना आदि इन योजनाओं के अन्तर्गत थे। इन पर होने वाले खर्च का ६० प्रतिशत शिक्षा मंत्रालय से अनुदान के रूप में सभा को मिलने लगा। इसके अलावा केन्द्र सरकार से सभा द्वारा संचालित प्रचारक विद्यालयों को तथा पुस्तकालयों को भी अनुदान मिलने लगा।

राष्ट्रीय महत्व की संस्था

सन् १९६४ में संसद ने एक विधेयक के द्वारा सभा के कार्य की महत्ता को पहचान कर उसे "राष्ट्रीय महत्त्व की संस्था" (An Institution of National

Importance) घोषित किया। उस विधेयक द्वारा सभा के अन्तर्गत हिन्दी की उच्च शिक्षा प्राप्त लोगों को तथा हिन्दी अध्यापक प्रशिक्षण प्राप्त करने वालों को उपाधियाँ देने का अधिकार प्रदान किया गया।

इससे उत्साहित होकर सभा ने मद्रास में स्नातकोत्तर व अनुसंधान विभाग की स्थापना की। इस विभाग का उद्घाटन भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री तथा सभा के अध्यक्ष श्री लालबहादुर शास्त्री ने किया था। सभा के अध्यक्ष इस विभाग के कुलाधिपति, सभा की कार्यकारिणी समिति के सभापति इसके कुलपति और सभा के प्रधान सचिव इसके कुलसचिव घोषित हुए। विश्वविद्यालयों के एम.ए. उपाधि के समकक्ष 'राष्ट्रभाषा पारंगत' तथा पीएच.डी. के समकक्ष 'साहित्याचार्य' नामक दो नयी उपाधियाँ भी स्थापित की गयीं और उनकी क्रमबद्ध पढ़ायी के लिए सभा के अहाते में एक कॉलेज खोला गया। इस विद्यालय में शिक्षा पाने वालों को केन्द्र सरकार छात्रवृत्तियाँ देती है और इसके खर्चे के लिए अनुदान भी मिलता है। सन् १९७९ में इस नये विभाग की एक शाखा आन्ध्र सरकार की सहायता से हैदराबाद में भी खुली है।

१.५.१.५ अखिल भारतीय हिन्दी परिषद्

दक्षिण भारत में हिन्दी की उच्च शिक्षा प्राप्त कर हिन्दी प्रचारक बनने वाले कार्यकर्त्ताओं के लाभ के लिए सभा के तत्त्वाधान में आगरे में अखिल भारतीय हिन्दी परिषद के नाम से एक संस्था सन् १९५२ में स्थापित हुई। हिन्दी भाषा-भाषी केन्द्र के हिन्दी साहित्यकों के संपर्क में आकर अपना हिन्दी ज्ञान बढ़ाने तथा वहाँ के वातावरण में एक वर्ष रहकर अनुभव प्राप्त करने में दक्षिण के कार्यकर्त्ताओं को सुविधा दिलाना इस संस्था का उद्देश्य था। सभा के प्रधानमंत्री श्री सत्यनारायण इसके मानसेवी अध्यक्ष थे। श्री अवधनन्दन, श्री देवदूत विद्यार्थी, श्री एम. सुब्रहाण्यम आदि ने इस कार्य में महत्वपूर्ण सेवा की।

सभा के कर्नाटक शाखा के मंत्री श्री रामकृष्ण नावडा परिषद् के मंत्री नियुक्त हुए। इस संस्था में अध्ययन करने वाले छात्रों को उद्योगपति सेठ जयदयाल डालमियाजी से छात्रवृत्तियाँ मिलती थीं। एक-दो वर्ष के बाद भारत के अन्य कार्यकर्त्ताओं को भी इस संस्था में प्रवेश दिया गया।

इस संस्था की सेवाओं को और भी विस्तार देने हेतु भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने इसे अपने अधीन ले लिया। तब से यह संस्था 'केन्द्रीय हिन्दी संस्थान'

के नाम से महत्वपूर्ण कार्य कर रही है। दक्षिण के कई अनुभवी हिन्दी प्राध्यापक इस संस्थान की सेवा में लगे हैं। सभा के भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री मोटूरि सत्यनारायण करीब दस वर्ष तक इसके अध्यक्ष रहे।

देश के संविधान में जब हिन्दी को राजभाषा घोषित किया गया, तो देशभर में हिन्दी के प्रचार कार्य का निरीक्षण कर उसकी तरक्की के लिए आवश्यक सुझाव देने के उद्देश्य से राष्ट्रपति ने एक राष्ट्रभाषा आयोग नियुक्त किया।

सभा के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री मोटूरि सत्यनारायण जी को संविधान परिषद् का सदस्य तथा बाद में राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत संसद सदस्य बनने का गौरव भी प्राप्त हुआ।

इस प्रकार दक्षिण भारत में हिन्दी की जो नींव गाँधीजी ने रखी वो धीरे-धीरे अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के मार्ग पर अग्रसर हो रही थी। यूँ तो हिन्दी के प्रचार का कार्य दक्षिण के चारों प्रान्तों के बड़े-बड़े शहरों से शुरु हुआ था पर धीरे-धीरे यह प्रचार कार्य दक्षिण के चारों राज्यों के छोटे-से-छोटे गाँवों में हर घर में अपनी साख बनाने लगा था। गाँधीजी की मेहनत रंग लाने लगी थी। आज के परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो उत्तर भारत की अपेक्षा दक्षिण भारत में हिन्दी के प्रति लोगों का रवैया अच्छा जान पड़ता है।[५४]

दक्षिण भारत में हिन्दी के अन्तर्गत अब तक हमने सामान्य तौर पर पूरे दक्षिण भारत में हिन्दी के प्रचार-प्रसार की एक तस्वीर पेश की। अब हम दक्षिण भारत में कर्नाटक को छोड़कर (जिसका विशेष अध्ययन इस ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित है) तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश एवं केरल में हिन्दी की स्थिति का संक्षेप में अध्ययन करेंगे।

१.५.२ तमिलनाडु में हिन्दी

यह सर्वविदित है कि दक्षिण भारत में हिन्दी की नींव महात्मा गाँधी के द्वारा रखी गयी। उनके अथक प्रयासों से समूचे दक्षिण भारत में हिन्दी सीखने का लोगों में उत्साह बढ़ने लगा। सर्वप्रथम गाँधीजी ने मद्रास में 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' नामक एक संस्था सन् १९१८ में स्थापित की। आंध्रप्रदेश, कर्नाटक और केरल में हिन्दी प्रचार का काम जितना आसान था उतना तमिलनाडु में नहीं था। इसके दो-तीन मुख्य कारण हैं तमिल को छोड़कर बाकी तीनों भाषाओं में "क, च, ट, त, प" के चार तरह के उच्चारणों के लिए चार भिन्न-भिन्न अक्षर मौजूद हैं, सिर्फ तमिल में

इन चारों में एक ही अक्षर है। उक्त तीनों भाषाओं में संस्कृत के तत्सम् और तद्भव शब्द अधिक संख्या में पाये जाते हैं। उनकी तुलना में तमिल में कम शब्द ही पाये जाते हैं। इसके अलावा संस्कृत शब्दों के प्रयोग से तमिल भाषा की गौरव की कमी महसूस करते हुए जहाँ तक हो सके संस्कृत शब्दों से रहित शुद्ध तमिल में बोलने और लिखने पर कई तमिल के पंड़ित जोर डालते आ रहे थे। उनका विश्वास था कि हिन्दी सीखने से कई हिन्दी शब्द भी तमिल में आ जायेंगे और बोलचाल की भाषा में वे शब्द प्रचलित हो जायेंगे, इससे भाषा का रूप बिगड़ जायेगा। इस प्रकार तमिलनाडु हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए प्रारंभ से ही अधिक अनुकूल क्षेत्र नहीं रहा है। फिर भी यहाँ राष्ट्रीयता के कारण हिन्दी का प्रचार और प्रसार धीरे-धीरे होने लगा।

ऐसे प्रतिकूल वातावरण में भी तमिलनाडु में हिन्दी के प्रचार का कार्य करने में उत्तर भारत से जो प्रचारक यहाँ आये थे उनमें सर्वप्रथम श्री प्रतापनारायण वाजपेयी का नाम अविस्मरणीय है। वे बिहार प्रान्त के पटना के निवासी थे। गाँधीजी का आशीर्वाद प्राप्त कर दक्षिण में हिन्दी का प्रचार करने सन् १९१९ के अन्त में तंजावूर जिले के तिरुवूवैयारु नामक शहर में उन्होनें हिन्दी वर्ग की शुरुआत की। तमिल भाषा का ज्ञान न होने से अंग्रेज़ी के माध्यम से लोगों को वे हिन्दी पढ़ाते थे। सुबह और शाम के समय हिन्दी वर्ग चलाते थे, जिनमें वकील, डॉक्टर और पढे-लिखे नौजवान हिन्दी सीखते थे।

द्वितीय प्रचारक के रूप में रघुवर दयालु मिश्र सन् १९२० में तमिलनाडु में आये। वे तंजावूर में हिन्दी प्रचार का कार्य करने लगे। तंजावूर में तीन साल काम करने के बाद वे कल्लिडैकुरिच्ची तिलक विद्यालय में प्रधानाचार्य का काम संभालने चले गये। सन् १९२४ में मिश्र जी को मदुरै जाना पड़ा। आदर्श प्रचारक तथा हिन्दी भाषा के पारदर्शी होने के कारण इनके अधीन सैकड़ों सज्जन हिन्दी पढ़ने लगे।

सन् १९२४ में तमिलनाडु के भिन्न-भिन्न केन्द्रों में होने वाले हिन्दी प्रचार को बढ़ावा देने तथा नये-नये केन्द्रों में हिन्दी प्रचार कार्य आरंभ करने के लिए तिरुचिरापल्ली में एक प्रान्तीय शाखा कार्यालय खोला गया। उस शाखा के संचालक का कार्य संभालने बिहार के अवधनन्दन आये। वे हिन्दी के प्रकाण्ड पण्डित, बड़े परिश्रमी एवं मिलनसार व्यक्ति थे। उन्होंमे अपनी पढ़ाई का त्याग कर राष्ट्रीय सेवा में कूद पड़े। उसी समय उनको यह जामकारी मिली की गाँधी जी ने दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार का कार्य आरंभ किया। इस कारण वे सीधे प्रयाग पहुँच कर परुषोत्तमदास

टंडन जी से मिले जो उस समय सम्मेलन के मंत्री थे। टंडन जी ने बड़ी प्रसन्नता के साथ पण्डित हरिहर शर्मा के नाम पर एक पत्र देकर उनको मद्रास भेजा। वे २० जून १९२० को मद्रास में काम पर लग गये। चार साल तक लगन से काम करने के उपरांत तिरुचिरापल्ली में शाखा कार्यालय को संभालने गये।

तमिलनाडु के भिन्न-भिन्न शहरों में हिन्दी प्रचार का काम करने सफल प्रचारकों को तैयार करने के लिए ईरोड में मई १९२२ में पहला प्रचारक विद्यालय खोला गया।

सेलम के निवासियों को हिन्दी के प्रथम प्रचारक श्री देवदास गाँधी से हिन्दी सीखने का अवसर कुछ महीनों तक प्राप्त हुआ। आरंभ काल में दो-तीन साल तक श्री व्यास, श्री अवध बिहारी लाल, श्री वेंटकरमणन आदि कर्मठ प्रचारकों ने प्रचार का काम किया। बाद में श्री टी. कृष्णस्वामी सात साल तक बड़ी लगन के साथ लोगों को हिन्दी पढ़ाते रहे। सन् १९३० में टी.एस. रामकृष्णन् सभा के प्रचारक के रूपमें काम करने सेलम भेजे गये। उनके आगमन के बाद ही सेलम में हिन्दी प्रचार का काम बढ़ने लगा।

तिरुनेलवेली में हिन्दी का प्रचार करने श्री नागेश्वर मिश्र सन् १९३१ में गये। वह इसके पहले तीन साल तक मदुरै में हिन्दी प्रचार का कार्य कर रहे थे।

सन् १९३२ में मदुरै के हिन्दी प्रेमियों के अथक प्रयास से स्थानीय राष्ट्रप्रेमी सोमसुंदर भारती के कर कमलों द्वारा मदुरै हिन्दी प्रचार सभा का उद्घाटन किया गया। सन् १९३२ में ही के.वी. रामनाथ के अथक परिश्रमों के फलस्वरूप कोयंबटूर में एक हिन्दी सभा की स्थापना हुई।

कोयंबटूर की तरह उदकमंडलम् में भी हिन्दी प्रचार आन्दोलन के प्रारंभ काल से लेकर प्रचार कार्य तीव्र गति से चलता आ रहा है।

हिन्दी प्रचार सभाओं के अलावा तमिलनाडु में नगरपालिकाओं एवं तमिलनाडु सरकार ने अपने स्कूल एवं कॉलेजों में हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था की। सन् १९२९ में सेलम नगरपालिका में अपने कॉलेज एवं हाईस्कूल में हिन्दी पढ़ाने के उद्देश्य से एक प्रस्ताव पास किया, जिसके फलस्वरूप वहाँ हिन्दी की पढ़ाई शुरु हुई। तमिलनाडु में स्वतंत्र पार्टी की जब सरकार बनी तब हाईस्कूल के पाठ्यक्रम "सी" ग्रुप में हिन्दी को स्थान दिया गया। कुछ सालों बाद मद्रास के प्रसिद्ध नेता श्री एस. सत्यमूर्ति के प्रयास से हिन्दी को "ए" ग्रुप में स्थान प्राप्त हुआ।

सन् १९२८–२९ में मदुरै कॉलेज, सौराष्ट्रा हाईस्कूल और सेतुपति हाईस्कूल में हिन्दी पढ़ाने का प्रबन्ध किया गया। सन् १९३२ में तमिलनाडु के कई स्कूलों में हिन्दी पढ़ाने का प्रबन्ध किया गया। सन् १९३४ में मद्रास विश्वविद्यालय ने बी.ए. के पाठ्यक्रम में हिन्दी को भी स्थान दिया। तमिलनाडु राज्य में इस समय लगभग सोलह विश्वविद्यालय हैं, इनमें करीब दस विश्वविद्यालयों से संबंधित महाविद्यालयों में बी.ए., बी.एस.सी., बी. कॉम आदि स्नातक कक्षाओं में द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी पढ़ने की व्यवस्था है। इससे यह स्पष्ट है कि तमिलनाडु में भी हिन्दी पढ़ने–लिखने का सौहार्द्र पूर्ण वातावरण दिनो–दिन विकसित होता नज़र आ रहा है। अगर तमिलनाडु में हिन्दी की संभावनाओं पर विचार करें तो निःसंकोच रूप से कहा जा सकता है कि यहाँ हिन्दी का भविष्य उज्जवल है।

१.५.३ आन्ध्र में हिन्दी

अपनी दक्षिण अफ्रीका यात्रा से लौटने के बाद जब गाँधीजी ने भारत के विभिन्न राज्यों का भ्रमण किया तब उन्होंने यह महसूस किया कि पूरे देश में एक–दूसरे से विचार–विनिमय एवं सम्पर्क स्थापित करने के लिए अगर कोई भाषा माध्यम बन सकती है तो वह सिर्फ हिन्दी ही है। इस प्रकार गाँधीजी की प्रेरणा से दक्षिण भारत में हिन्दी का प्रचार कार्य शुरु हुआ। गाँधीजी का मानना था कि इस तरह के प्रयत्न से भारतीय आत्मा की एकता को उजागर कर, संपूर्ण राष्ट्र को भारतीयता के सूत्र में बाँधा जा सकता है।

इस बात को ध्यान में रखकर सन् १९१८ में मद्रास में, 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' की स्थापना की गयी। धीरे–धीरे लोगों ने हिन्दी सीखकर दक्षिण में हिन्दी प्रचार का कार्य आरंभ किया। उन्हीं दिनों भारत को स्वतंत्र कराने में स्वतंत्रता आन्दोलन में कई लोगों ने भाग लिया और इसी आन्दोलन का एक अभिन्न अंग बन गया था हिन्दी सीखना और सिखाना और इसी से उत्साहित होकर आंध्र के लोगों ने भी हिन्दी सीख कर अन्य लोगों को सिखाना शुरु किया। हर एक हिन्दी प्रचारक भारतीय एकता और राष्ट्रीयता का संदेश वाहक माना जाता था और हिन्दी के प्रचार–प्रसार में आन्ध्र प्रदेश के राजनीतिक नेताओं ने भी भरपूर समर्थन प्रदान किया।

हिन्दी प्रचार के कार्य को प्रोत्साहित करने के लिए दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा का शाखा कार्यालय सन् १९२० में आन्ध्र में खोला गया। सन् १९२१–२२ में

राजमहेंद्रवरम में हिन्दी प्रचारक विद्यालय खोला गया। इस विद्यालय में हिन्दी की शिक्षा प्राप्त करने वालों में सर्वश्री उन्नव राजगोपाल कृष्णय्या, एस.वी. शिवराम शर्मा, भट्टारम वेंकट सुब्बय्या, उन्नव वेंकटप्पय्या, जंध्याल राममूर्ति आदि प्रमुख थे।

स्व. डॉ. कटुमंचि रामलिंगा रेड्डी ने आन्ध्र विश्वविद्यालय में बी.कॉम तथा बी.कॉम ऑनर्स की परीक्षाओं के लिए हिन्दी को अनिवार्य विषय बनाया। भारतीय विश्वविद्यालयों के इतिहास में यह अविस्मरणीय घटना है।

हैदराबाद रियासत में हिन्दी प्रचार के कार्य के लिए सन् १९३५ में राष्ट्र भाषा प्रचार समिति, वर्धा के तत्त्वाधान में 'हैदराबाद राज्य हिन्दी प्रचार सभा' की स्थापना हुई। निजाम के शासनकाल के दौरान इस संस्था के साथ आर्य समाज ने भी हिन्दी प्रचार के कार्य में सराहनीय योगदान किया। हिन्दी प्रचार कार्य की प्रगति को देखते हुए सन् १९५२ में 'आंध्र राष्ट्र हिन्दी प्रचार संघ', विजयवाड़ा ने हैदराबाद में एक शाखा खोली। तब से यह शाखा कार्यालय ही हिन्दी प्रचार कार्य का प्रधान कार्यालय बन गया।

हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद प्रथमा से लेकर विद्वान एवं वाचस्पति तक की परीक्षाएँ चलाती है। यह सभा इन परीक्षाओं को चलाने के अलावा साहित्यिक मौलिक एवं अनुदित ग्रन्थों का भी प्रकाशन करती आ रही है साथ ही व्याख्यान-मालाओं का आयोजन कर यह संस्था हिन्दी साहित्य के प्रचार-प्रसार के कार्य में लगी हुई है। स्नातकोत्तर संस्थान के द्वारा हिन्दी एम.ए.,एम. फिल और पीएच.डी की उपाधियाँ भी प्रदान कर रही है।

पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से भी ये दोनों संस्थाएँ क्रमशः *विवरण पत्रिका* (मासिक), *अजंता* (वार्षिकी) और *पूर्णकुंभ* तथा *स्रवंति* (मासिक) पत्रिकाओं का प्रकाशन कर हिन्दी के प्रचार-प्रसार में सहयोग प्रदान कर रही हैं। हिन्दी शिक्षक और हिन्दी प्रचारकों को प्रशिक्षित कर ये संस्थाएँ हिन्दी के अध्यापकों को सफलतापूर्वक प्रशिक्षित कर रही है। समय-समय पर साहित्यकारों का सम्मान कर, संगोष्ठियों का आयोजन करके हिन्दी को बढ़ावा देने का कार्य किया जा रहा है।

सुप्रसिद्ध जैन आचार्य आनंद ऋषि के नाम पर प्रतिवर्ष अहिन्दी भाषी हिन्दी लेखकों को पुरस्कृत कर आनंद ऋषि साहित्य निधि दक्षिण भारत में हिन्दी लेखन कार्य को प्रोत्साहित कर रही है।

आन्ध्र प्रदेश में उस्मानिया विश्वविद्यालय (हैदराबाद) में सर्वप्रथम (१९४९) हिन्दी विभाग की स्थापना की गई थी। उसके पश्चात् आंध्र विश्वविद्यालय (वाल्टेर), श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय (तिरुपति) में हिन्दी विभागों की स्थापना की गई थी। सन् १९९९ में तत्कालीन उपकुलपति श्रीमती प्रो. विद्यावती के सत्प्रयासों से काकतीय विश्वविद्यालय (वारंगल) में भी स्नातकोत्तर कक्षाओं को प्रारंभ किया गया।

इनके अतिरिक्त हैदराबाद में स्थित केंद्रीय विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग सफलतापूर्वक काम कर रहा है।

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान (आगरा) की हैदराबाद शाखा हिन्दी के प्रशिक्षण के क्षेत्र में सराहनीय कार्य कर रही है। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय (दिल्ली) का आँचलिक कार्यालय आंध्र प्रदेश में हिन्दी के प्रसार और प्रचार की योजनाओं को समुचित रूप से प्रोत्साहित कर रहा है।

आन्ध्र के हिन्दी लेखक संघ द्वारा गीत चाँदनी, सीता-युद्धवीर स्मारक शोध संस्थान, साहित्य सुमन, कादंबिनी, दक्षिणांचलीय साहित्य समिति आदि सहित्यिक संस्थाओं द्वारा हिन्दी भाषा और साहित्य के प्रति अभिरुचि और जागृति पैदा करने का सफल प्रयास किया जा रहा है।

हिन्दी भाषा की वर्तमान गतिविधियों को देखकर यह संतोष व्यक्त किया जा सकता है कि आंध्र में हिन्दी भाषा और साहित्य का भविष्य आशाजनक है। हिन्दी भाषा के सराहनीय प्रचार के कारण आन्ध्र प्रदेश में हिन्दी साहित्य रचना करने वालों की संख्या भी दिनो-दिन बढ़ती जा रही है। अनुवाद करने वाले, तुलनात्मक अध्ययन करने वाले और मौलिक रूप से साहित्यिक विधाओं में सक्षम रचनाएँ करने वाले लोगों की संख्या आंध्र में लगातार बढ़ती जा रही है, जिसे देखकर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि आंध्र प्रदेश में हिन्दी की भविष्य उज्जवल है।

१.५.४ केरल में हिन्दी

हर आंदोलन की पहली शर्त होती है जनमानस को जागृत करना। ऊँचे लक्ष्यों की प्राप्ति तभी हो सकती है जब जनता कर्मोन्मुखी हो। राष्ट्रीय आन्दोलन का नेतृत्व करते समय गाँधीजी हमेशा उपुर्यक्त बात को ध्यान में रखते थे। अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में उन्होंने हमेशा राष्ट्र की एकता की बात कही। धार्मिक मैत्री के साथ-साथ गाँधीजी ने भाषाई मैत्री की अनिवार्यता पर बल दिया। जैसा कि पहले भी कहा जा

चुका है कि राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान दक्षिण में हिन्दी को पहुँचाने का कार्यक्रम शुरु हुआ था। पंडित गिरिधर शर्मा ने दक्षिण में हिन्दी को बढ़ावा देने की बात सर्वप्रथम प्रकट की थी।

पहले भी इस बात का जिक्र किया जा चुका है कि दक्षिण में हिन्दी का प्रचार-प्रसार करने का विचार सर्वप्रथम १९१८ में इन्दौर में आयोजित अखिल भारतीय हिन्दी सम्मेलन के आठवें अधिवेशन में गाँधीजी ने सबके समक्ष प्रस्तुत किया था। यह अधिवेशन ही हिन्दी की विकास यात्रा में एक मील का पत्थर साबित हुआ। इस बात की विस्तृत जानकारी *'गाँधीजी इन्दौर में'* शीर्षक किताब में मिलती है। हिन्दी की सर्वभारतीयता का संकेत उनके इस अध्यक्षीय भाषण में देखने को मिलता है। अपने भाषण में उन्होंने कहा– 'साहित्य का प्रदेश, भाषा की भूमि जानने पर ही निश्चित हो सकता है। यदि हिन्दी भाषा की भूमि सिर्फ उत्तर प्रान्त होगी तो साहित्य का क्षेत्र संकुचित रहेगा। हिन्दी भाषा राष्ट्रीय भाषा होगी तो साहित्य का विस्तार राष्ट्रीय होगा। जैसा भावक वैसी भाषा। भाषा सागर में स्नान करने के लिए पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण से पुनीत महात्मा आवेंगे तो सागर का महत्त्व स्नान करने वालों के अनुरुप होना चाहिए। इसलिए साहित्य की दृष्टि से हिन्दी का स्थान विचारणीय है।'

गाँधीजी की इच्छा को सर्वोपरि मानकर दक्षिण के चारों प्रान्तों में हिन्दी का प्रचार-प्रसार तेजी से शुरु हुआ। जिसके परिणामस्वरूप चारों प्रान्तों में 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना हुई। उन दिनों हिन्दी प्रचार का काम आसान नहीं था। हिन्दी प्रचार को सम्राज्यवादी ताकतों ने राष्ट्रद्रोह का काम समझा। फिर भी हिन्दी कार्यकर्त्ताओं के उत्साह में इस बात से कोई कमी न आयी। कई कार्यकर्त्ताओं ने कारावास के दौरान हिन्दी सीखी।

दक्षिण के अन्य राज्यों की तरह ही केरल में भी हिन्दी प्रचार-प्रसार का कार्य जोर-शोर से शुरु हुआ। केरल में सर्वप्रथम हिन्दी प्रचार का कार्य शुरु करने का श्रेय दामोदरन उण्णि जी को जाता है। केरल में हिन्दी के विशेष सन्दर्भ में यह बता देना उचित होगा कि स्वाति-तिरुनाल के कीर्तन और कुंचन नंपियार की कुछ काव्य पंक्तियों के आधार पर कुछ विद्वान यह कहते हैं कि अठारहवीं शताब्दी में ही हिन्दी केरल में आयी थी।

यह हो सकता है कि केरलवासियों को हिन्दी से परिचय प्राप्त होने, उसे जानने समझने का मौका तीर्थयात्रियों के आवागमन से मिला होगा, लेकिन एक

आन्दोलन के रूप में हिन्दी का आविर्भाव केरल में राष्ट्रीय आन्दोलन के अवसर पर ही प्रारंभ हुआ था। केरल के आरंभिक कार्यकर्त्ताओं ने मद्रास जाकर हिन्दी सीखी। तत्पश्चात् केरल के गाँवों और शहरों में हिन्दी विद्यालय शुरु किये गये थे। कहीं-कहीं निशा पाठशाला के रूप में हिन्दी केन्द्र हिन्दी प्रचार-प्रसार का कार्य चला रहे थे। लोगों को निःशुल्क हिन्दी पढ़ाना एक राष्ट्रीय कर्त्तव्य बन गया था। केरल में भी प्रचार सभा की ओर से परीक्षाएँ संचालित होती थीं। इन परीक्षाओं में उत्तीर्ण लोगों को गाँधीजी के हस्ताक्षर के साथ एक प्रमाण पत्र देने का प्रबन्ध भी किया गया था। हर उम्र के लोग हिन्दी सीखने में विशेष रुचि दिखाते थे। केरल के आर्य समाजी चेतना ने भी हिन्दी वातावरण को स्फूर्ति प्रदान की। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि केरल के प्रथम हिन्दी प्रचारक दामोदरन उण्णि जी थे, उन्होंने ज्वालापुर के आर्य समाजी महाविद्यालय में हिन्दी का अध्ययन किया। पहले वह उत्तर भारत में हिन्दी का प्रचार-प्रसार करते थे लेकिन बाद १९२२ में दक्षिण भारत में उन्होंने केरल में हिन्दी प्रचार-प्रसार का कार्य संभाला। केरल में उनका प्रथम कार्यक्षेत्र मञ्ञप्रा गाँव था, आगे चलकर एट्टुमानूर, बैकम, कोट्टयम, मावलिक्करा, हरिप्पाट आदि केरल में इन विभिन्न स्थानों में हिन्दी प्रचार का कार्य शुरु किया। केरल में उनकी शिष्य परंपरा में पंडित नारायण देव, पी.के. केशवन नायर, एन वेंकटेश्वरन्, पी.जी. वासुदेव, डॉ. भास्करन नायर प्रमुख हैं। इन सभी ने उण्णि से प्रेरणा ग्रहण कर हिन्दी प्रचार को और भी गति प्रदान की है।

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की बढ़ती गतिविधियों को देखते हुए चारों प्रांतों में अलग-अलग शाखाएँ खोली गयीं। इसी के परिणाम स्वरूप १९३२ में केरल में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की शाखा का गठन किया गया, जिसका मुख्य केन्द्र एरनाकुलम था। विधिवत रूप से केरल राज्य का गठन १९५६ में हुआ था। उसके पहले आज का केरल राज्य तीन भागों में बँटा हुआ था- कोच्चिन, त्रावणकोर और मलबार। मलबार, मद्रास प्रांत का भाग था। त्रावणकोर और कोच्चिन रियासत के अंतर्गत थे। मलबार में राजनीतिक सक्रियता अधिक थी, लेकिन हिन्दी के प्रति तीनों क्षेत्रों में विशेष अनुराग एवं उत्साह था। इन तीनों ही जगहों पर हिन्दी पाठशालाएँ खोली गयीं। धीरे-धीरे हिन्दी प्रचारकों की संख्या बढ़ने लगी। मलबार में कालिकट, तलश्शेरी, प्ययन्नूर, ओट्टपालम और पालक्कार प्रमुख हिन्दी प्रचार केन्द्र थे। पी. राघवन, पी. नारायणन, सी.आर. नाणप्पा, नारायण वारियार, पी.के. केशवन

नायर, केशवन नवींशन, अप्पु, सी.जी. गोपाल कृष्णन, पद्मनाभ आर्या आदि के नेतृत्व में मलबार में हिन्दी प्रचार-प्रसार को गति मिली। केरल के अन्य भाग के हिन्दी प्रचारक कार्यकर्त्ताओं में के.आर. शंकरानंद, अभयदेव, नारायण देव, चन्द्रहासन, के.वी. नायर, पी.के. नारायण नायर, वासुदेवन पिल्ले आदि के नाम प्रमुख हैं।

हिन्दी के प्रचार-प्रसार में कई मलयालम् लेखकों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। महाकवि जी. शंकर कुरुप्प, एन.वी. कृष्णवारियार वेण्णिक्कुलम गोपालक्कुरुप्प और अभयदेव इन तीनों का नाम हिन्दी के प्रचार-प्रसार में विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कृष्णवारियार एवं अभयदेव ने हिन्दी एवं मलयालम् कृतियों के अनुवाद से भाषाओं के रिश्ते को गहन बनाया। कृष्णवारियार के अनुसार उस समय का 'विशारद' परीक्षा का पाठ्यक्रम विशिष्ट था। हिन्दीतर भाषाओं की किताबों के अनुवाद हिन्दी पाठ्यक्रम में शामिल थे। प्रेमचन्द्र, टैगोर, गाँधीजी और नेहरु के रचनाएँ पढ़कर राष्ट्रीय दृष्टिकोण विशाल बन गया था। मैथिलीशरण गुप्त और सुभद्राकुमारी चौहान की कविताएँ राष्ट्र प्रेम से ओत-प्रोत थीं। केवल प्रचार सभाओं के पाठ्यक्रम में हिन्दी शामिल थी, दूसरे स्कूलों में हिन्दी पढ़ने की सुविधाएँ नहीं दी गयी थीं।

स्वतंत्रता के बाद सी. राजगोपालाचारी मद्रास के प्रधानमंत्री बन गये। तब मलबार के स्कूलों में हिन्दी को विकल्प के विषय के रूप में पाठ्यक्रम में स्थान मिला। हिन्दी अनिवार्य विषय न होने की स्थिति में भी कई छात्र हिन्दी पढ़ने के लिए उत्सुक थे लेकिन उनको पढ़ाने के लिए अध्यापकों की संख्या कम थी। बाद में केरल एक अलग राज्य के रूप में अस्तित्व में आया, तब से वहाँ के मंत्रिमण्डल में स्कूलों के पाठ्यक्रमों में हिन्दी को अनिवार्य विषय के रूप में स्थान दिया गया। इसमें ई.एम.एस. नम्बुदिरीपाद की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही। आज केरल में हिन्दी पाँचवीं कक्षा से लेकर दसवीं कक्षा तक अनिवार्य विषय है।

आज केरल के महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में हिन्दी की पढ़ाई के लिए सुविधाएँ उपलब्ध है। सरकारी और गैर सरकारी महाविद्यालयों में हिन्दी पढ़ने की सुविधा है। हिन्दी के पाठ्यक्रमों में हिन्दी प्रदेश के लेखकों की प्रतिष्ठित कृतियाँ निर्धारित की गयी हैं। कालिकट, केरल, कोच्चिन और श्रीशंकर विश्वविद्यालय के केन्द्रों में हिन्दी के स्नातकोत्तर अध्ययन और अनुसंधान के लिए भी सुविधाएँ प्राप्त हैं। प्रयोजनात्मक हिन्दी, राजभाषा, अनुवाद, पत्रकारिता और तुलनात्मक साहित्य भी केरल के विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम के विषय हैं।

केरल के स्वैच्छिक संस्थाओं के प्रयास से केरल में हिन्दी का प्रवेश हुआ। आज भी स्वैच्छिक एवं स्वयंसेवी संगठन केरल में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में लगे हैं। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा तथा केरल हिन्दी प्रचार सभा अपनी ओर से परीक्षाएँ आयोजित करती हैं। इन परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने वाले छात्रों को सभा के उच्च पाठ्यक्रमों के अनुरूप हिन्दी प्रशिक्षण मिलता है। सभा की परीक्षाओं को सरकारी मान्यता प्राप्त है।

केरल में शैक्षिक और साहित्य के क्षेत्र में कुछ संस्थाएँ कार्यरत हैं-(१) केरल हिन्दी मण्डल (एरनाकुलम), केरल हिन्दी परिषद् (कालिकट), (३) हिन्दी विद्यापीठ (तिरुवनंतपुरम्), (४) केरल हिन्दी साहित्य अकादमी (तिरुवनंतपुरम्) आदि। मलयालम् साहित्य की श्रेष्ठ कृतियों का परिचय हिन्दी भाषियों को देने के लिए इन संस्थाओं ने प्रयास किया है। केरल के हिन्दी साहित्य के बृहत इतिहास का प्रकाशन हिन्दी साहित्य अकादमी ने किया है। केरल हिन्दी परिषद् ने मलयालम् की लघु कथाओं का अनुवाद किया है, जिसका नाम *'वर्तमान जंनगाथा'* है। हिन्दी विद्यापीठ ने हिन्दी भाषियों को मलायालम् सिखाने की एक योजना बनायी है। 'मातृभूमि' नामक एक अख़बारी संस्था ने *'युगप्रभात'* नामक एक पाक्षिक पत्रिका का प्रकाशन किया था। *'संग्रंथन'* हिन्दी विद्यापीठ की साहित्यिक पत्रिका है। *'केरल ज्योत'* केरल हिन्दी प्रचार सभा की पत्रिका है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की केरल शाखा *'केरल भारती'* का प्रकाशन करती है । इसके अलावा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अन्य पत्र-पत्रिकाओं का भी विशेष योगदान है।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि केरल में हिन्दी का भविष्य उज्जवल है, लेकिन इसके आशातीत सफलता के लिए यह ज़रुरी है कि हिन्दी प्रदेश के प्रख्यात लेखकों को केरल आने का अवसर तथा केरल के हिन्दी लेखक, अध्यापक एवं अनुवादकों को हिन्दी प्रदेश जाने तथा अपने विषय के बारे में जानकारी प्राप्त करने का भरपूर अवसर प्राप्त होना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ

१. राजमणि शर्मा : *हिन्दी भाषा ; इतिहास और स्वरूप* । पृ. १६५

२. Philip H. : *Some aspects of Indian education; past and present*. p.10

३. वही. पृ. ५७

४. भारत सरकार : *राजभाषा आयोग का प्रतिवेदन,* १९५६, पृ. १८
५. राजबली पाण्डेय : *हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहास,* पृ. १९६
६. वही. पृ. १९९
७. *आभिरादिगिर : काव्येष्वपभ्रंशाइति स्मृता* : राजबली पाण्डेय : *हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहास,* पृ. ३१३ पर उद्दृत.
८. उदाहरण के लिए नीचे लिखी पहेली देखें–
   बीसों का सिर काट लिया, ना मारा न खून किया
९. K.A. Hamid : *What is Hindi?* p. 20
१०. राजमणि शर्मा : *हिन्दी भाषा : इतिहास और स्वरूप* पृ. १७०
११. सुधाकर द्विवेदी : *हिन्दी : अस्तित्व की तलाश,* पृ. १८
१२. वही. पृ. १९.
१३. राजमणि शर्मा : *हिन्दी भाषा : इतिहास और स्वरूप,* पृ. १७१
१४. जोगेन्द्र सिंह : *हिन्दी के गतिमान क्षितिज,* पृ. १९३
१५. वही. पृ. १९३–१९४
१६. वही. पृ. १९४
१७. वही. पृ. १९४–१९८
१८. नारायण कुमार : गुयाना में भारतीय संस्कृति और हिन्दी, मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद्, *स्वर्ण जयन्ती समारोह विशेषांक* १९९५, पृ. १४७
१९. नारायण कुमार : हिन्दी का वैश्विक स्वरूप, *हिन्दी भाषा कुंभ स्मारिका,* बेंगलूर : मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् एवं अखिल कर्नाटक हिन्दी साहित्य अकादमी २००४, पृ. १२०–१२१
२०. राजेन्द्र पठोरिया : विश्व हिन्दी सम्मेलन तब से अब तक, ए.एम. रामचंद्र (संपा) *ज्ञान सरिता, हीरक जयंती स्मारिका* । मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद्, २००३, पृ. १४७
२१. वही. पृ. १४७–१४८
२२. वही. पृ. १४८
२३. वही. पृ. १४८–१५२
२४. जोगेन्द्र सिंह : *हिन्दी के गतिमान क्षितिज.* पृ. ११
२५. वही. पृ. १७
२६. शिवसागर मिश्र : *हिन्दी हम सबका.* पृ. ९८
२७. वही. पृ. १०१
२८. भारतीय संविधान की अष्टम अनुसूची में उल्लिखित भाषाएँ– असमिया, उड़िया, उर्दू, कन्नड़, कश्मीरी, गुजराती, तमिल, तेलुगु, पंजाबी, बंगला, मराठी, मलयालम, संस्कृत, हिन्दी, नेपाली, कोंकणी, सिन्धी, मणिपुरी ।

२९. *भारत का संविधान.* पृ. २००–२०५
३०. वही.
३१. उदयनारायण दूबे : *राजभाषा के संदर्भ में हिन्दी आन्दोलन का इतिहास.* पृ. २०२–२०३
३२. राममनोहर लोहिया : *भाषा,* भूमिका, पृ. ९–१०
३३. उदयनारायण दुवे : *राजभाषा के संदर्भ में हिन्दी आन्दोलन का इतिहास.* पृ. २०३
३४. वही.
३५. शर्मा : *राष्ट्रभाषा हिन्दी : समस्याएँ और समाधान,* पृ. १६३
३६. राममनोहर लोहिया : *भाषा,* पृ. २३
३७. बलराम सिंह सिरोही : *संघीय राजभाषा के संदर्भ में पारिभाषिक वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण की समस्याएँ,* पृ. ३४–५६
३८. एन. वेंकटेश्वरन : "हिन्दी प्रचार–आन्दोलन की पृष्ठभूमि" *दक्षिण में हिन्दी प्रचार आन्दोलन का इतिहास.* पृ. १–३
३९. वही. पृ. ४–६
४०. वही. पृ. ६–८
४१. वही. पृ. ८–९
४२. वही. पृ. ९
४३. एस. महालिंगम : "दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास" *दक्षिण में हिन्दी प्रचार आन्दोलन का इतिहास,* पृ. २१
४४. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर : *केरल में हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास.* पृ. ४९–५०
४५. एस. महालिंगम : *दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा,* मद्रास, पृ. २३
४६. वही. पृ. २३–२४
४७. वही. पृ. २६
४८. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर : *केरल में हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास,* पृ. ५२
४९. एस. महालिंगम : *दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा,* मद्रास। पृ. २७–२९
५०. वही. पृ. ३०–३२
५१. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर, पृ. ५५
५२. एस. माहलिंगम, पृ. ३३
५३. वही. पृ. ३४
५४. वही. पृ. ३९–५२



अध्याय २

गाँधीजी और हिन्दी

इस ग्रन्थ का विषय "कर्नाटक में हिन्दी का प्रयोग और प्रसार" होते हुए भी यहाँ पर इस अध्याय में 'गाँधीजी और हिन्दी' के बारे में अध्ययन किया गया है। इसका कारण स्पष्ट है कि गाँधीजी ने हिन्दी के प्रचार और प्रसार में जो योगदान किया उतना शायद ही इस देश के किसी और व्यक्ति ने किया हो। जहाँ कहीं भी हिन्दी का प्रयोग-प्रसार का अध्ययन किया जा रहा हो वहाँ गाँधीजी का ज़िक्र किये बिना अध्ययन पूरा नहीं हो सकता, इसलिए मूल विषय पर आने से पहले गाँधीजी का हिन्दी के प्रति जो आदर-सम्मान था उसको देखते हुए यहाँ पर विस्तार से चर्चा करना अति आवश्यक समझा गया।

इसके बाद के अध्यायों में पूर्ण रूप से 'कर्नाटक में हिन्दी का प्रयोग और प्रसार' संबंधित विषय पर चर्चा की गयी है।

हिन्दी के साथ-साथ समस्त भारतीय भाषाओं का समग्र एवं समुचित रूप से विकास हो सके इसके लिए गाँधीजी बराबर प्रयत्न करते रहते थे। उनका कहना था कि अंग्रेजी के कारण ही भारतीयों की दासता स्थायी बनी हुई है। उनका ये भी कहना था कि- "अंग्रेज़ों ने नहीं बल्कि अंग्रेजी जानने वाले भारतीयों ने भारत को गुलाम बनाया है।"[१] गाँधीजी का ये भी कहना था कि हिन्दी की जगह अंग्रेजी को बढ़ावा देकर उसे पढ़ाने का अर्थ ही है भारतीयों को गुलाम बनाना।

गाँधीजी का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त था कि हिन्दी शिक्षा, प्रशासन और न्यायालयों में अंग्रेजी का स्थान ले ले। राष्ट्रभाषा के संबंध में अपने विचारों को प्रकट करते हुए उन्होंने कहा कि किसी भी भाषा में राष्ट्रभाषा बनने के लिए निम्नलिखित गुणों का होना आवश्यक है:-

(१) उसे सरकारी कर्मचारी आसानी से सीख सकें।

(२) वह समस्त भारत में धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक संपर्क के माध्यम के रूप में प्रयोग के लिए सक्षम हो।

(३) वह अधिकांश भारतीयों द्वारा बोली जाती हो।

(४) सारे देश को उसे सीखने में आसानी हो।

(५) ऐसी भाषा को चुनते समय अस्थायी या क्षणिक परिस्थितियों को महत्त्व नहीं दिया जाय।

और सभी भारतीय भाषाओं में हिन्दी ही केवल ऐसी भाषा है जो उपर्युक्त सभी गुणों से युक्त है।[2]

दिसम्बर १९१७ में कलकत्ता में आयोजित अखिल भारतीय समाज-सेवा सम्मेलन के अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने हिन्दी को राष्ट्रभाषा का पद देने और भारतीय भाषाओं को अपनाने की बात कही। उन्होंने कहा कि- "अगर हम देसी भाषाओं को फिर से अपना लें और हिन्दी को उसके उपयुक्त स्थान राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करा दें तो देश की इससे बड़ी सेवा कोई हो ही नहीं सकती।[3]

स्वयं गुजराती भाषी होने के बावजूद गाँधीजी ने राष्ट्रभाषा तथा अखिल भारतीय भाषा के रूप में हिन्दी को प्रतिपादित किया। गाँधीजी यह जानते थे कि जब तक दक्षिण भारत के लोग हिन्दी को दिल से स्वीकार नहीं करेंगे तब तक उसका भारत की राष्ट्रभाषा बनना असंभव है। इसी बात को ध्यान में रखकर उन्होंने दक्षिण भारत में एक हिन्दी शिक्षण संस्थान की स्थापना के लिए कारवाई शुरू की और उनके अथक प्रयत्नों द्वारा सन् १९१८ में मद्रास में 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' की स्थापना हुई। इस सभा का मुख्य उद्देश्य न केवल दक्षिण के लोगों को हिन्दी सिखाना था बल्कि हिन्दी को लेकर उनके मन में जो ग़लतफ़हमी थी उसे भी दूर करना था।

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के १९४६ में रजत-जयंती समारोह पर गाँधीजी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि- "मैं यहीं और इसी समय यह वचन चाहता हूँ कि आप सभी लोग हिन्दुस्तानी पढ़ेंगे। हिन्दुस्तानी पढ़ना आप लोगों का धर्म है क्योंकि यही दक्षिण को उत्तर से जोड़ेगी।[4] उनका ये भी कहना था कि हिन्दी सीखना कठिन नहीं है, रोज तीन घंटे पढ़कर छः महीने में हिन्दी सीखी जा सकती है।

दक्षिण के अलावा अन्य अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में भी हिन्दी के प्रचार के लिए गाँधीजी ने 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा' की स्थापना की। गाँधीजी हिन्दी को स्वतंत्रता प्राप्ति का एक साधन मानते थे। गाँधीजी ने इस कार्य के लिए अनेक कार्यकर्ता एवं प्रचारक पैदा किए जो आज भी हिन्दी प्रचार के काम में निःस्वार्थ एवं समर्पित भाव से लगे हुए हैं।[५]

जहाँ एक ओर दक्षिण तथा अन्य अहिन्दी भाषी प्रदेशों में गाँधीजी हिन्दी की पहचान बनाने में उसे स्थापित करने में जुटे हुए थे वहीं दूसरी ओर हिन्दी भाषी प्रदेश विशेषकर उत्तर भारत में हिन्दी की स्थिति को लेकर वे विशेष रूप से चिंतित थे। बीसवीं सदी के शुरु में ही उत्तर भारत में हिन्दी–उर्दू के बीच विवाद उत्पन्न हो गया था। हिन्दी के पक्षधर जहाँ इसकी जड़ों को मजबूत बनाना चाहते थे तो वहीं दूसरी ओर उर्दू के पक्षधर हिन्दी के प्रभावी होने से अपनी संस्कृति के लिए खतरा महसूस करने लगे। हिन्दी के हिमायती फ़ारसी शब्दों का बहिष्कार कर हिन्दी की शब्दावली के लिए मुख्यतया संस्कृत से शब्द ग्रहण कर हिन्दी की विशिष्टता और पृथक अस्तित्व को अक्षुण्ण बनाये रखना चाहते थे और उर्दू के हिमायतियों को लगने लगा था कि हिन्दी आन्दोलन के कारण न केवल उसकी संस्कृति को खतरा था बल्कि अदालतों की भाषा स्वीकृत होने से उर्दू को जो आर्थिक लाभ होने लगे थे वे खटाई में पड़ सकते थे। अतः उर्दू का अस्तित्व बचाने उसकी अहमियत को बरकरार रखने के लिए तथा हिन्दी से उसका भेद करने के लिए उर्दू में अधिक से अधिक फ़ारसी शब्दों को भरा जाने लगा।[६] (ध्यान रहे कि सन् १९०० में हिन्दी उत्तर–पश्चिम और अवध प्रान्त में अदालत की भाषा स्वीकृत हो चुकी थी।)

हिन्दी–उर्दू के बीच विवाद की स्थिति को देखते हुए गाँधीजी ने हिन्दी के उस स्वरूप से लोगों को परिचित कराया जो हिन्दू–मस्लिम संप्रदाय के बीच भेद की बढ़ती खाई को मिटा सकता था। 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' जैसे सशक्त संगठन के माध्यम से उन्होंने अपनी संकल्पना की हिन्दी को लोकप्रिय बनाने का काम किया, जिसे भारत के करोड़ों लोग समझ सकते थे।[७]

गाँधीजी जहाँ हिन्दी का प्रसार एवं प्रयोग पूरे भारत वर्ष में देखना चाहते थे वहीं दूसरी ओर वे जल्द से जल्द अंग्रेजी को देश से बाहर का रास्ता भी दिखाना चाहते थे। स्कूली शिक्षा में अंग्रेजी का बढ़ता प्रभाव देखकर उनका कहना था कि– “अगर मेरे हाथों में तानाशाही सत्ता हो तो मैं आज से ही विदेशी माध्यम के जरिये

हमारे लड़के और लड़कियों की शिक्षा बन्द कर दूँ और शिक्षकों और प्रोफेसरों से यह माध्यम बदलवा दूँ या उन्हें बरखास्त कर दूँ। मैं पाठ्यपुस्तकों की तैयारी का इंतज़ार नहीं करूँगा। वे तो माध्यम के परिवर्तन के पीछे-पीछे चली आयेंगी। यह एक ऐसी बुराई है, जिसका तुरन्त इलाज होना चाहिए"।[८]

अंग्रेजी पर प्रहार करते हुए उन्होंने कहा कि-"विदेशी भाषा के माध्यम ने जिसके जरिये कि भारत में उच्च शिक्षा दी जाती है हमारे राष्ट्र को हद से ज़्यादा बौद्धिक और नैतिक आघात पहुँचाया है। जिन विषयों को सीखने में मुझे चार साल लग गये अगर अंग्रेजी के बजाय गुजराती में मैंने पढ़ा होता तो उतना मैंने एक ही साल में आसानी से सीख लिया होता। इस अंग्रेज़ी माध्यम ने मेरे और मेरे कुटुम्ब के बीच, जो कि अंग्रेजी स्कूलों में नहीं पढ़े थे, एक अगम्य खाई खड़ी कर दी है।"[९] विदेशी भाषा अंग्रेजी के विषय में गाँधीजी का यह भी कहना था कि- "मैं अपने देश के बच्चों के लिए यह जरूरी नहीं समझता कि वे अपनी बुद्धि के विकास के लिए विदेशी भाषा का बोझ अपने सिर पर ढोएँ और उगती हुई शक्ति का ह्रास करें"। साथ ही उनका ये भी मानना था कि- "विदेशी भाषा का विद्यार्थी होना बुरा नहीं है, पर अपनी भाषा सर्वोपरि है।"[१०] हिन्दी भाषी प्रदेश जिनकी मातृभाषा हिन्दी है वहाँ पर हिन्दी की उन्नति एवं प्रगति देख गाँधीजी का कहना था कि- "मुझे खेद तो यह है कि जिन प्रान्तों की मातृभाषा हिन्दी है वहाँ भी उस भाषा की उन्नति करने का उत्साह दिखाई नहीं देता है। मेरा नम्र लेकिन दृढ़ अभिप्राय है कि जब तक हिन्दी भाषा को राष्ट्रीय और अपनी-अपनी भाषाओं को उनके योग्य स्थान नहीं देते तब तक स्वराज्य की सब बातें निरर्थक हैं।"[११]

भाषा को माँ समान मानते हुए तथा हिन्दी को उससे जोड़ते हुए उनका कहना था कि- "भाषा माता के समान है। माता पर हमारा जो प्रेम होना चाहिए वह हम लोगों में नहीं है। यदि हिन्दी भाषा राष्ट्रीय भाषा होगी तो साहित्य का विस्तार ही राष्ट्रीय होगा।"[१२] देश की उन्नति के लिए वे राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना आवश्यक मानते थे। उनका ये भी कहना था कि कोई भी देश सच्चे अर्थों में तब तक स्वतंत्र नहीं हो सकता जब तक वह अपनी भाषा में नहीं बोलता। गाँधीजी का मानना था कि हिन्दी ही हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा हो सकती है, कोई दूसरी भाषा नहीं।

अपने राजनीतिक जीवन के शुरुआत से ही गाँधीजी ने भाषा की समस्या पर सोचना आरंभ कर दिया था। सत्य, अहिंसा, स्वराज्य, सर्वोदय किसी भी अन्य

विषय पर उनके विचार आज उतने उपयोगी नहीं हैं जितने की भाषा-समस्या पर। अंग्रेजी, भारतीय भाषाओं, राष्ट्रभाषा हिन्दी और हिन्दी-उर्दू की समस्या पर उन्होंने जितनी बातें कहीं है, वे बहुत ही मूल्यवान हैं। किसी राजनीतिक नेता ने इन समस्याओं पर इतनी गहराई से नहीं सोचा, किसी पार्टी और उसके नेताओं ने भाषा-समस्या के सैद्धान्तिक समाधान को अपनी नित्यप्रति की कार्यवाही में इस तरह अमली जामा नहीं पहनाया, जैसे गाँधीजी ने।

आजादी की लड़ाई हो या असहयोग आन्दोलन अथवा हरिजन उद्धार, राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने अपने राजनीतिक जीवन के आरंभ से लेकर भारत के स्वाधीन होने तथा अपने जीवन की अन्तिम घड़ी तक अंग्रेजी का विरोध किया तथा अंग्रेजी भाषा के ऊपर निर्भर रहने की आदत को राष्ट्र के लिए घातक तथा अंग्रेजी की हिमायत को राष्ट्रीय चरित्र के लिए अहितकर बताया। उनका यह दृढ़ मत था कि भारत में राष्ट्रभाषा की समस्या देश की राजनीतिक आजादी के साथ-साथ धार्मिक और सांस्कृतिक आजादी के साथ जुड़ी हुई है जिसका हल राष्ट्रीय चेतना के स्तर पर ही किया जा सकता है। गाँधीजी यह अच्छी तरह समझते थे कि जो लोग देश के सर्वतोमुखी विकास के लिए साम्राज्य विरोधी संघर्ष के सन्दर्भ से हटाकर भाषा-समस्या का हल निकालना चाहते हैं वे वस्तुतः इस समस्या का सही हल निकालने के बजाय इसे उलझाये रखना चाहते हैं।

२.१. गाँधीजी की भाषा नीति

गाँधीजी की भाषा-नीति का पहला सूत्र है- **भाषा समस्या का समाधान** जनता के हित में हो। नेता अंग्रेजी में भाषण दें, जनता समझे नहीं। ऐसे नेता न तो देश में कोई बड़ा परिवर्तन कर सकते थे, न उनकी राजनीति जनता की राजनीति बन सकती थी। जो नेता अंग्रेजी में ही बोलने की ज़िद करते थे और हिन्दी सीखने से इन्कार करते थे, उनके लिए गाँधीजी ने सन् १९२७ में लिखा था, "वास्तव में ये अंग्रेजी में बोलने वाले नेता हैं जो आम जनता में हमरा काम जल्दी आगे बढ़ने नहीं देते। वे हिन्दी सीखने से इंकार करते हैं जबकि हिन्दी द्रविड़ प्रदेश में भी तीन महीने के अंदर सीखी जा सकती है, अगर सीखने वाले इसके लिए तीन घंटे हर रोज दें।"[१३]

गाँधीजी ने नेताओं का अंग्रेजी बोलना छुड़ाया। उनके संघर्ष के फलस्वरूप कम-से-कम अब अपने प्रदेशों में वे जनता के सामने अंग्रेजी में भाषण नहीं करते।

लेकिन उनका राजनीतिक-सांस्कृतिक कार्य अब भी बहुत कुछ अंग्रेजी में होता है। देश की सम्पर्क भाषा क्या होनी चाहिए इस सम्बन्ध में सन् १९३१ में गाँधीजी ने लिखा था, "यदि स्वाराज्य अंग्रेजी-पढ़े भारतवासियों का है और केवल उनके लिए है, तो सम्पर्क भाषा अवश्य अंग्रेजी होगी। यदि वह करोड़ों भूखे लोगों, करोड़ों निरक्षर लोगों, निरक्षर स्त्रियों, सताये हुए अछूतों के लिए है तो सम्पर्क भाषा केवल हिन्दी ही हो सकती है।"[१४]

उनका कहना था कि यदि जनतन्त्र जनता का है और जनता के लिए है तो उसमें अंग्रेजी के लिए जगह नहीं होनी चाहिए। अंग्रेजी को अपनाने वाले वे लोग हैं जो भाषा-समस्या पर जनता के हितों को ध्यान में रखकर विचार नहीं करते। उन्होंने लिका था, "कुछ लोग जो अपने दिमाग से जनता की बात एकदम निकाल देते हैं, वे यही नहीं कहते कि अंग्रेजी भी सम्पर्क भाषा हो सकती है, वे कहते हैं कि अंग्रेजी ही एकमात्र सम्पर्क भाषा हो सकती है।"[१५]

गाँधीजी मार्क्सवादी-लेनिनवादी नहीं थे लेकिन लेनिन की भाषा-सम्बन्धी नीति का सारतत्व उन्होंने ग्रहण कर लिया था। हिन्दी का सम्पर्क भाषा के रूप में प्रयोग तथा सारी राजनीतिक कार्यवाही में हिन्दी भाषा के साथ-साथ प्रान्तीय भाषाओं को महत्व देते हुए उन्होंने भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा अंग्रेजी के व्यवहार की आलोचना करते हुए सन् १९३७ में लिखा था, "उनके लेख अंग्रेजी न जाननेवालों के लिए गुप्त ख़जाना (सील्ड बुक) हैं। लेकिन रूस का हाल देखिए। वहाँ क्रान्ति से पहले ही तमाम पाठ्य-पुस्तकें (वैज्ञानिक पुस्तकों समेत) रूसी में छपती थीं। दरअसल इसी बात ने लेनिन की क्रान्ति के लिए मार्ग प्रशस्त किया। हम आम जनता से सच्चा सम्पर्क तब तक कायम नहीं कर सकते, जब तक काँग्रेस यह फैसला नहीं करती कि उसका सारा विचार-विमर्श हिन्दी में होगा और उसके प्रान्तीय संगठनों का काम प्रान्तीय भाषाओं में होगा।"[१६]

विभिन्न देशों के बीच विदेशी भाषा के अपनी सम्पर्क भाषा बनाकर कोई भी देश जन-क्रान्ति नहीं कर सकता। क्रान्ति का अर्थ मुट्ठी भर आदमियों द्वारा खूनख़राबी करना नहीं होता। क्रान्ति का अर्थ है, समाज व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन लाना। इस तरह के परिवर्तन आम जनता के सहयोग के बिना कभी नहीं लाये जा सकते। जो देश पराधीन हैं, वे आम जनता के संघर्ष के बिना स्वाधीन नहीं हो सकते; और जो देश स्वाधीन हैं, वे आम जनता की दृढ़ एकता और समर्थ राजनीतिक कार्यवाही के बिना अपनी स्वाधीनता की रक्षा नहीं कर सकते।

कुछ लोग समझते हैं कि सम्पर्क भाषा तो मंत्रियों, नेताओं और बड़े अफसरों के लिए ही जरुरी है। आम जनता अपनी प्रादेशिक भाषाएँ बोलती ही है तो उसे सम्पर्क भाषा से क्या लेना देना है?

इन सबसे भिन्न गाँधीजी का मत था कि सम्पर्क नेताओं में ही नहीं विभिन्न प्रदेशों की आम जनता में होना चाहिए। उन्होंने लिखा था, "आप और हम चाहते हैं कि करोड़ों आदमी अन्तर्प्रान्तीय सम्पर्क कायम करें। स्पष्ट है कि अंग्रेजी के द्वारा, कई पीढ़ीयाँ गुज़र जाने पर भी,वे परस्पर सम्पर्क स्थापित न कर सकेंगे।[१७]" यदि हमारे देश के जनवादी, समाजवादी, मार्क्सवादी–लेनिनवादी राजनीतिज्ञ गाँधीजी की इस बात को मानें कि करोड़ों जनता को आपस में राष्ट्रीय स्तर पर सम्पर्क कायम करना है, तो वे सबसे आगे बढ़कर हिन्दी प्रचार के काम में हिस्सा बटाएँ, वे अंग्रेजी का सहारा लेकर हिन्दी की नुक्ताचीनी न करें।

देशव्यापी सम्पर्क जनता का, स्वराज्य करोड़ों अशिक्षित और निर्धन लोगों के लिए, नेता और जनता के बीच सबसे बड़ी दीवार अंग्रेजी– गाँधीजी की भाषानीति का यह पहला सूत्र है। गाँधीजी के लिए भाषा–समस्या कोई शुद्ध भाषा–विज्ञान की समस्या नहीं थी। उन्होंने राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन के सन्दर्भ में ही उस पर विचार किया था। अंग्रेजों ने भारतीय जनता को गुलाम बनाने के साथ उनकी भाषाओं का दमन किया, उन पर अंग्रेजी लादी। अंग्रेजी का चलन राजनीतिक–सांस्कृतिक पराधीनता का अंग था; उसे सम्पर्क भाषा के पद से हटाना राजनीतिक–सांस्कृतिक स्वाधीनता के लिए आवश्यक था। अंग्रेजी की जगह हिन्दी एवं भारतीय भाषाओं का व्यवहार राष्ट्रीय आत्मसम्मान की रक्षा का प्रश्न था।

उनकी भाषा–नीति की दूसरा सूत्र है– राष्ट्रीय आत्मसम्मान की रक्षा के लिए अंग्रेजी का प्रभुत्व खत्म करो।

१९०९ में गाँधीजी ने लिखा था, "क्या वे लोग जो अपनी मातृभाषा का अपमान करते हैं, कभी देश का भला कर सकते हैं? मैं इसकी कल्पना नहीं कर सकता कि गुजरात के लोग अपनी मातृभाषा छोड़कर अन्य कोई भाषा अपना लें। ऐसा हो तो यह कहने में ज़रा भी अतिशयोक्ति न होगी कि जो लोग अपनी भाषा छोड देते हैं, वे देशद्रोही हैं और जनता के प्रति विश्वासघात करते हैं।"[१८]

(उनका मातृभाषा के प्रति इतना सम्मान देखकर यह कहना गलत न होगा कि जितना आदर वे अपनी मातृभाषा का करते थे उतना ही अन्य भाषाओं एवं राष्ट्रभाषा का।)

गाँधीजी ने गुजराती-भाषी शिक्षितजनों में मातृभाषा का प्रेम जगाया, अंग्रेजी बोलने पर उनकी आलोचना भी की। गुजरात के नवीन साहित्यिक अभ्युत्थान में उनका योगदान अनुपम है। दिसम्बर १९१५ में संग्रामपुर, सूरत के जैन विद्यार्थियों ने गाँधीजी को अपने पुस्तकालय का उद्घाटन करने के लिए बुलाया। गाँधीजी के भाषण देने की बात सुनकर वहाँ बड़ा जन-समुदाय एकत्र हो गया। एक विद्यार्थी ने अंग्रेजी में भाषण दिया। दूसरा खड़ा हुआ उसने अंग्रेजी में निबंध पढ़ा। गाँधीजी ने इन अंग्रेजी बोलने वालों की ओर लक्ष्य करके कहा, यदि अंग्रेजी जानने वाले मुट्ठीभर लोगों को हम देश मान लें तो कहना होगा कि देश शब्द का अर्थ नहीं समझा। उन्होंने उन लोगों को फटकारा जो कहते थे कि वे मातृभाषा में अपने विचार अच्छी तरह नहीं प्रकट कर सकते। उन्होंने कहा, जो युवक यह कहते हैं कि हम अपने विचार मातृभाषा द्वारा नहीं प्रकट कर सकते, उनसे मैं यही निवेदन करूँगा कि आप मातृभाषा के लिए भार-रूप हैं। मातृभाषा की अपूर्णता दूर करने के बदले उसका अनादर करना-उससे हाथ ही धो बैठना-किसी सच्चे सपूत को शोभादायक नहीं।

यह फैशन अभी तक बना हुआ है कि जिनके पास कहने को कुछ नहीं है वे भी करुण कंठ से क्षमा-याचना करते हुए जनता से कहते हैं, हम हिन्दी में अपने विचार 'फ्लुएंटली' प्रकट नहीं कर सकते। मातृभाषा की अपूर्णता दूर करना इनके वश की बात नहीं; वे अंग्रेजी के भारवाही बनकर मातृभाषा और मातृभूमि के लिए केवल भार-रूप हैं।

गाँधीजी गुजराती के अलावा, समस्त भारतीय भाषाओं के सम्मान के लिए लड़े। उनके इस संघर्ष का आदर करने वालों में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी भी थे। उन्होंने गाँधीजी का उपर्युक्त भाषण मार्च १९१६ की *'सरस्वती'* में छापा था। गुजरात के श्री मणीभाई व्यास ने इस भाषण का हिन्दी में अनुवाद किया था।

दिसंबर १९१६ में गाँधीजी ने देवनागरी लिपि और हिन्दी भाषा के प्रचार पर लखनऊ में भाषण दिया। उन्होंने यह भाषण हिन्दी में दिया अपने हिन्दी सीखने और हिन्दी के लिए अपमानित होने के बारे में उन्होंने ये मर्मस्पर्शी शब्द कहे थे-

जिन प्रान्तों में हिन्दी का प्रचार कम है वहाँ हिन्दी पढ़ने वालों की बड़ी कमी है। मैं स्वयं हिन्दी सीखना चाहता था, पर अहमदाबाद में कोई हिन्दी-ज्ञाता शिक्षक न मिला। मिला एक गुजराती-भाषा-भाषी, जिसने पन्द्रह-बीस वर्ष काशी में रहकर

टूटी-फूटी हिन्दी सीखी थी। उसी से मैंने हिन्दी सीखी। सम्मेलन यदि अन्य भाषा प्रान्तों में भी आदमी भेजे तो बहुत से लोग हिन्दी सीख जाएँ।"

हिन्दी की दरिद्रता के गीत गाते अंग्रेजी-प्रेमी भारतवासी थकते नहीं हैं। यह कहना कठिन है कि इनकी संख्या पहले ज्यादा थी या अब है। गाँधीजी ने इन लोगों को लक्ष्य करके कहा था, लोग कहते हैं कि हिन्दी में कुछ नहीं है- हिन्दी साहित्य खोखला है- अतएव अंग्रेजी के बिना काम नहीं चल सकता। कभी-कभी तो अंग्रेजी न जानने के कारण लोगों को बेकार ही बहुत कष्ट उठाना पड़ता है। यह मैं भी मानता हूँ। यहाँ तक कि मुझ-जैसे लोगों को, हिन्दी का व्यवहार करने के कारण- हिन्दी बोलने के कारण- रेलवे इत्यादि में धक्के भी खाने पड़ते हैं। अंग्रेजी से हिन्दी कितनी ही पीछे क्यों न हो, हमें उसका गौरव बढ़ाना ही पडेगा।

गाँधीजी ने अंग्रेजों के सामने, उच्चतम अंग्रेज पदाधिकारियों के सामने, महाप्रतापी ब्रिटिश साम्राज्य के प्रतिनिधि वाइसराय के सामने हिन्दी एवं भारतीय भाषाओं के गौरव की रक्षा की। उसी भाषण में उन्होंने कहा था- सरकारी कौंसिलों में अंग्रेजी की पूछ है- उसी का विशेष आदर है। लोग कहते हैं कि वाइसराय इत्यादि अंग्रेजी के अतिरिक्त और कोई भाषा नहीं समझते। अतएव अंग्रेजी का ही उपयोग करना आवश्यक है। पर मैं कहता हूँ कि यदि मैं बोलना जानता हूँ और मेरे कथन में कोई बात ऐसी है जिससे वाइसराय लाभ उठा सकें तो अवश्य मेरी बातें, हिन्दी में होने पर भी, सुनेंगे। आपको जरा दृढ़ता और मनोयोग से काम लेना चाहिए। आत्मावलम्ब किए बिना कोई काम सिद्ध नहीं होता।[११]

अब अंग्रेज वाइसराय नहीं हैं। लेकिन मनोवृत्ति वही है। अंग्रेजी बोलने में लोग गौरव का अनुभव करते हैं। इससे राष्ट्रीय आत्म-सम्मान की भावना क्षीण होती है। गाँधीजी ने केवल दूसरों को वाइसराय के सामने हिन्दी बोलने का उपदेश न दिया था; उन्होंने साहस से अपने उपदेश के अनुसार आचरण भी किया था। १९३१ में संयुक्त भारत के चेम्बर ऑफ कॉमर्स का अधिवेशन कराची में हुआ। उसमें विभिन्न प्रांतों के सेठ और व्यापारी मौजूद थे साथ में अंग्रेज भी थे, किन्तु गाँधीजी ने अपना भाषण हिन्दी में दिया। इस भाषण में उन्होंने बताया कि सन् १९१८ में वाइसराय के सामने वह हिन्दी में बोले थे। सन् १९१८ अंग्रेज वाइसराय! अंग्रेज और अंग्रेजियत का आतंक! उस वातावरण में वाइसराय के सामने हिन्दी बोलने खड़े हुए कर्मवीर गाँधी।

कराची वाले भाषण में उन्होंने कहा था, "मेरे अंग्रेज मित्र मुझे क्षमा करेंगे कि जो कुछ मुझे कहना है, वह मैं राष्ट्रभाषा में कहूँगा। इस अवसर पर मुझे उस सभा की याद आती है जो यहीं १९१८ में बुलाई गई थी। बहुत बहस-मुबाहसे के बाद मैं इस सभा में आने को तैयार हुआ तो मैंने उनसे प्रार्थना की कि मुझे हिन्दी या हिन्दुस्तानी में बोलने की अनुमति दी जाय। मैं जानता हूँ कि इसके लिए प्रार्थना करना जरुरी नहीं था, फिर भी सभ्यता का तकाज़ा था; वरना वाइसराय को बुरा लगता। उन्होंने तुरंत मुझे अनुमति दे दी और तब से इस मामले में मेरी हिम्मत और खुल गई है। और फिर आज मैं उसी जगह अपने उस अमल को दोहराने जा रहा हूँ। और इस चेम्बर के सदस्यों से मैं विनय करूँगा कि आपका यह कर्त्तव्य है कि अपना सारा काम राष्ट्रभाषा में करें इस संगठन में आपको अपनी जनता से ही वास्ता पड़ता है। देश का वातावरण भी इस समय ऐसा है कि उसका प्रभाव आप पर जरूर पडेगा।"[२०]

आज किसी अखिल भारतीय संगठन में लोगों से कहा जाय कि अपना काम राष्ट्रभाषा में कीजिए तो बहुत से देशभक्त कह उठते हैं– हम पर हिन्दी लादी जा रही है। उन पर अंग्रेजी पहले से ही लदी हुई है, यह वे भूल जाते हैं। ५ जुलाई १९२८ के *'यंग इंडिया'* में गाँधीजी ने अंग्रेजी के प्रभुत्व से होने वाली देश की हानि के बारे में लिखा था– हजारों नवयुवक अपना कीमती समय इस विदेशी भाषा को सीखने में नष्ट करते हैं जबकि उनके दैनिक जीवन में उसकी कोई उपयोगिता नहीं है, अंग्रेजी सीखने में समय लगाते हुए वे मातृभाषा की उपेक्षा करते हैं, वे इस अंधविश्वास के शिकार होते हैं कि ऊँचे दर्जे के विचार अंग्रेजी ही में प्रकट किए जा सकते हैं, अंग्रेजी के लादे जाने से राष्ट्र की शक्ति सूख गई है, विद्यार्थियों की आयु क्षीण हो गई है, आम जनता से वे दूर जा पड़े हैं, शिक्षा पाना बड़े खर्चे का काम हो गया है। यदि यही सिलसिला जारी रहा तो बहुत सम्भव है कि राष्ट्र की आत्मा का नाश हो जाय।

और सब तरह की हानि तो होती ही है, खर्च ज्यादा होता है, उम्र कम होती है, मातृभाषा की उपेक्षां होती है, गाँधीजी का मानना था कि अंग्रेजी का प्रभुत्व राष्ट्र की आत्मा का नाश कर देगा। वे ऐसा इसलिए सोचते थे कि वह स्वाधीनता-आन्दोलन के सन्दर्भ में भाषा-समस्या पर विचार करते थे। उनके लिए प्रश्न यह नहीं था कि अंग्रेजी विश्व भाषा है और हिन्दी दरिद्र है; प्रश्न यह था कि विदेशी भाषा के व्यवहार से राष्ट्रीय चरित्र पर असर क्या पड़ता है। इसलिए वह तुरन्त अंग्रेजी को विदा करने

के पक्ष में थे। लेकिन जिसे गाँधीजी राष्ट्र की आत्मा कहते थे, उसे अंग्रेजी प्रेमी नेता मानसिक संकीर्णता कहते हैं।

गाँधीजी अंग्रेजी पढ़ने के विरुद्ध नहीं थे। वह उसे वाणिज्य और कूटनीति की भाषा मानते थे। किन्तु वह यह न सहन कर सकते थे कि वह किसी भारतीय भाषा का हक मारें। वह बहुत अच्छी तरह जानते थे कि अंग्रेजी का विश्व-महत्व ब्रिटिश साम्राज्य के कारण है। उन्होंने १९१८ में घोषित किया था, "हमे ऐसी हालत पैदा कर देनी चाहिए कि हमारे राजनीतिक या सामाजिक सम्मेलनों में, काँग्रेस तथा प्रान्तीय सभाओं आदि में अंग्रेजी का एक शब्द भी न सुना जाय। अंग्रेजी का व्यवहार हमें पूरी तरह बन्द कर देना चाहिए। अंग्रेजी ने विश्व भाषा की जगह पा ली है लेकिन यह इसलिए कि अंग्रेज सारी दुनिया में फैल गए हैं और हर जगह अपने पैर उन्होंने जमा लिए हैं। जब उनकी यह स्थिति नहीं रहेगी, तब अंग्रेजी का प्रसार भी संकुचित हो जाएगा।"[२१] उनका कहने का यह अर्थ था कि हर सम्मेलनों, सभाओं तथा अन्य कार्यक्रमों में अधिक से अधिक हिन्दी का प्रयोग हो।

साम्राज्यवाद के पतन के साथ ही अंग्रेजी के प्रसार का दायरा कम हो गया है। अन्य भाषाएँ विश्व-स्तर पर अंग्रेजी से स्पर्धा करती हैं। बोलने वालों की संख्या की दृष्टि से संसार की तीसरी भाषा हिन्दी भी विश्व भाषा के रूप में अंग्रेजी का महत्व कम कर सकती है यदि अंग्रेजी प्रेमी भारतवासी अपने देश को अंग्रेजी की गुलामी से आज़ाद कर दें। भारतीय पूँजीवाद की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह आरंभ से ही अंग्रेजी बोलता रहा है। आखिर देश की एकता को कायम रखना ही था : यहाँ संस्कृत राष्ट्रभाषा नहीं बन सकती थी। प्रादेशिक भाषाएँ बोलियाँ थीं नहीं कि वे किसी एक राष्ट्रभाषा के नीचे दब जातीं। द्रविड़ और संस्कृत भाषा-परिवारों का भेद अलग! अंग्रेजी के सिवा भारतीय पूँजीवाद कौन सी भाषा बोलता? इसलिए जिन लोगों ने लॉर्ड मैकाले के लिए रास्ता साफ़ किया, जिन्होंने मैकाले की भाषा नीति का समर्थन किया, वे सब प्रगतिशील थे! जिन्होने अंग्रेजी का विरोध किया, वे सब दकियानूसी और प्रतिक्रियावादी थे!

संस्कृत और द्रविड़ परिवारों में ऐसी भयानक शत्रुता है तो मलयालम्, तेलुगु आदि भाषाओं में संस्कृत के इतने शब्द कैसे पहुँच गए? द्रविड़ देश के शंकराचार्य ने संस्कृत में अपने विचार क्यों प्रकट किए? क्या उस समय तक कोई द्रविड़ भाषा उत्पन्न ही न हुई थी? वह तमिल कहाँ थी जो प्राचीनता में समकक्ष कही जाती है?

वास्तव में यहाँ तमिल भी थी, अनेक द्रविड़ और गैर-द्रविड़ भाषाएँ भी थीं। फिर भी शिक्षितजन संस्कृत का व्यवहार करते थे क्योंकि सामन्ती व्यवस्था के बावजूद, डी.सी. होम सम्प्रदाय की अपेक्षा, उनमें राष्ट्रीयता का बोध ज्यादा था।

जनता के दृष्टिकोण से न सोचने पर आज के गुमराह प्रगतिशील विचारक को पूँजीवाद और समाजवाद दोनों के विकास के लिए अंग्रेजी आवश्यक दिखाई देती है।

श्री मोहनकुमार मंगलम ने *'भारत का भाषा-संकट'* नामक पुस्तक में लिखा है, "हम यह याद किये बिना नहीं रह सकते कि महान राजा राममोहन राय उस दिन का स्वप्न देखते थे, जब भारत की भाषाएँ रंगमंच से हट जाएँगी और अंग्रेजी यहाँ की करोड़ों जनता की सामान्य भाषा हो जाएगी।"[२२]

लॉर्ड मैकाले और इन महान समाज-सुधारकों का सम्बन्ध इस प्रकार है, "इस तरह इन प्रारंभिक समाज-सुधारकों ने भी अंग्रेजी को उठाने और भारतीय भाषाओं का विकास रोकने में लॉर्ड मैकाले के प्रयत्न में मदद दी।"[२३] होम और मोहनकुमार मंगलम दोनों का मत है कि भारत में संस्कृत के बाद कोई भी सम्पर्क भाषा न थी। इसलिए अंग्रेजी सम्पर्क भाषा के रूप में स्वाधीनता प्राप्ति के पहले भी ज़रूरी थी और आज भी ज़रूरी है। भारतीय इतिहास के ये विशेषज्ञ भूल जाते हैं कि अंग्रेजों का राज कायम होने से पहले यहाँ सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी का प्रचार और प्रसार सर्वत्र था। इसलिए अंग्रेजों ने अपने अफसरों के लिए हिन्दुस्तानी का ज्ञान अनिवार्य कर दिया था।

राजा राममोहन राय ने अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाने के लिए मेमोरैंडम पेश किया, होम सम्प्रदाय को यह तो दिखाई दिया लेकिन जिस भाषा को कश्मीर से कन्याकुमारी तक भारत की करोड़ों जनता अपनी सम्पर्क भाषा बना रही थी, वह उन्हें आँखें गड़ाकर देखने पर भी नहीं दिखाई देती।

गाँधीजी न तो मैकाले और न ही राजा राममोहन राय की नीतियों के समर्थक थे। गाँधीजी ने सन् १९२० में लिखा था, "हम अपने विचार से अपने राष्ट्रीय जीवन में प्रादेशिक भाषाओं को उनका उचित स्थान दे रहे हैं। भाग्य राजा राममोहन राय की इस भविष्यवाणी का साथ नहीं दे रहा है कि भारत एक दिन अंग्रेजी भाषी देश हो जाएगा। लेकिन उस महान समाज सुधारक का भूत अब भी लोगों पर सवार है। कुछ प्रसिद्ध आदमी बहुत जल्दी यह फैसला दे देते हैं कि राष्ट्र की सम्पर्क भाषा अंग्रेजी होगी।"[२४]

गाँधीजी का वास्ता मैकाले-भक्तों से पड़ा होगा। क्योंकि ये लोग सीधे मैकाले का नाम न लेकर राजा राममोहन राय की दुहाई देते रहे होंगे। इसलिए राजा राममोहन राय का नाम अक्सर इनके लेखों में आता है। राजा राममोहन राय द्वारा अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम मानना तथा उसका अधिक से अधिक प्रयोग करने पर गाँधीजी ने उन्हें लक्ष्य करते हुए सन् १९२१ में इस बात पर दुःख प्रकट किया था कि अंग्रेजी ने भारतीय भाषाओं की जगह ले ली है। उन्होंने कहा था कि राजा राममोहन राय और भी बड़े समाज सुधारक होते यदि उन्हें अंग्रेजी में सोचने और उसी में अपने विचार प्रकट करने की अस्वाभाविक क्रिया न करनी पड़ती।[२५]

गाँधीजी ने स्वतंत्रता मिलने के साल भर पहले कुछ नेताओं की दिमागी गुलामी उनके अंग्रेजी समर्थक विचारों को गलत ठहराते हुए कहा था कि इस तरह की मानसिकता उन्हें अंग्रेजी को राजभाषा बनाने को मजबूर करती है। सोवियत संघ की मिसाल देते हुए उन्होंने लिखा था कि, "रूस ने अपनी सारी वैज्ञानिक प्रगति अंग्रेजी के बिना ही की है। यह हमारी दिमागी गुलामी है जो हम यह कहते हैं कि अंग्रेजी के बिना काम नहीं चल सकता। मैं इस पराजयवादी मत को कभी स्वीकार नहीं कर सकता।"[२६]

गाँधीजी ने अपने राजनीतिक जीवन के आरम्भ से लेकर भारत के स्वाधीन होने के बाद तक, अपने जीवन की आखिरी घड़ियों तक अंग्रेजी का विरोध किया, अंग्रेजी के ऊपर निर्भर रहने की आदत को राष्ट्र के लिए हानिकर बताया, अंग्रेजी की हिमायत को राष्ट्रीय चरित्र के लिए घातक बताया। उनका मानना था कि जो लोग अंग्रेजी कायम रखकर भाषा समस्या का समाधान खोजते रहते हैं उनमें राष्ट्रीय चेतना के आधार पर ही हल हो सकती है। जो लोग भाषा-समस्या को साम्राज्य विरोधी संघर्ष के सन्दर्भ से अलग हटाकर हल करना चाहते हैं वे समस्या को बराबर उलझाते जायेंगे. उसे सुलझाना उनके लिए सम्भव न होगा। गाँधीजी भाषा नीति का यह दूसरा सूत्र था।

गाँधीजी की भाषानीति का तीसरा सूत्र है – भारतीय जनता का अमली राष्ट्रभाषा हिन्दी है।

अंग्रेजी जानने वालों को भी कभी न कभी आपस में परस्पर सम्पर्क के लिए एक ऐसी भाषा की जरूरत होती है जिससे वह लोगों से व्यवहार कर सकें। महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब के लोग आपस में हिन्दी को सम्पर्क भाषा के रूप में इस्तेमाल करते

हैं लेकिन दक्षिण भारत में लोग सामान्यतया व्यवहार के लिए किस भाषा का इस्तेमाल करते हैं इस सवाल के उत्तर में गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका के अपने एक अनुभव का उल्लेख करते हुए बताया कि 'वहाँ तमिल और तेलुगु बोलने वाले लोग परस्पर सम्पर्क के लिए हिन्दी को काम में लाते हैं। जो कार्य वे दक्षिण अफ्रीका में करते थे, वे दक्षिण भारत में भी अवश्य करते रहते होंगे। वास्तव में तमिल, तेलुगु, भाषियों को उत्तर भारत से सम्पर्क कायम करने के लिए ही हिन्दी की जरूरत नहीं होती, उन्हें आपस में सम्पर्क-भाषा के लिए भी जरूरत हिन्दी की होती है।

दक्षिण भारत में अपने अनुभव का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा था कि "यह कहना सही नहीं है कि मद्रास में अंग्रेजी के बिना काम नहीं चलता। मैंने अपने सारे कामों के लिए वहाँ सफलतापूर्वक हिन्दी का व्यवहार किया है। मैंने रेल में मद्रासी मुसाफिरों को दूसरों से हिन्दी में बातें करते सुना है।"[२७]

उत्तर-दक्षिण में सम्पर्क के लिए एक नई भाषा के निर्माण की जरूरत नहीं है बल्कि जो भाषा जनता के बीच पहले से ही प्रचलित है उसे केवल सरकारी स्तर पर सम्पर्क भाषा के रूप में स्वीकार करना है। बंगाल की भाषा हिन्दी के बहुत करीब है और कलकत्ता की लगभग आधी आबादी हिन्दुस्तानी है। यहाँ ज्यादातर लोग मेहनत मजूरी करके अपनी जीविका चलाते हैं और इनके मालिकों को इनसे हिन्दी भाषा में ही व्यवहार करना पड़ता है। इसी सम्बन्ध में गाँधीजी ने लिखा था कि "उत्तर भारत का जो भैया बम्बई के सेठ के यहाँ दरबानगिरि करता है, वह गुजराती नहीं बोलता, उसका मालिक सेठ ही मजबूर होकर उससे टूटी-फूटी हिन्दी में बातचीत करता है।"[२८] यही स्थिति बंगाल की भी है, वहाँ भी अधिकतर हिन्दुस्तानी दरबान का काम करते हैं और उनके मालिक भी उनसे हिन्दी में ही बात करने की कोशिश करते हैं।

कुछ पंडित लोग एवं अन्य लेखकों ने समय-समय पर संस्कृत-भरी हिन्दी का निर्माण किया लेकिन साधारण लोगों का हिन्दुस्तानी के विषय में एक ही रुख रहा; इनमें पश्चिमी पंजाब से लेकर पूर्वी बंगाल तक के सभी हिन्दू-मुसलमान शामिल थे। वे अब भी साधारण जीवन में अपने से भिन्न भाषा वालों से बातचीत करना चाहते हैं तो प्रचलित हिन्दुस्तानी का ही व्यवहार करते हैं।"

पश्चिमी पंजाब से पूर्वी बंगाल तक, कश्मीर से कन्याकुमारी तक जन सम्पर्क की भाषा बोलचाल की हिन्दी है। बोलचाल की हिन्दी बंगाल में भी समझी जाती है

और जनता के व्यवहार में आती है, फिर भी बंगाल में हिन्दी का तीव्र विरोध है, सभी लोगों में नहीं लेकिन मध्यवर्ग और पढ़े-लिखे लोगों में हैं।

गाँधीजी ने सन् १९२१ में *'यंग इंडिया'* में लिखा था कि बंगाल के लोग अपने पूर्वाग्रह के कारण भारत की कोई भाषा सीखना नहीं चाहते।

किसी समय असम, उड़ीसा, बिहार आदि प्रदेश संयुक्त बंगाल के अन्तर्गत थे। इसी प्रकार केरल और आंध्र तमिलनाडु के साथ जुड़े हुए थे। इन बडे प्रांतों में तमिल और बंगाली बुद्धिजीवी अंग्रेजी के कारण सरकारी नौकरियाँ पाते थे। जब मद्रास प्रेसीडेन्सी टूट गई; तो सिर्फ तमिलनाडु रह गया उसी प्रकार उड़ीसा, असम और बिहार के अलग हो जाने से रह गया विभाजित बंगाल, तमिलनाडु में भाषावार प्रान्त बनाने का आन्दोलन नहीं चला। यह आंदोलन उन्होंने चलाया जो तमिल पूँजीपतियों या तमिल बुद्धिजीवियों के संग से परेशान हो चुके थे। बंगाल के कटे-छटे होने के कारण वहाँ आन्दोलन का सवाल ही नहीं था। इन दो प्रदेशों में हिन्दी विरोध सबसे ज्यादा है। तमिलनाडु में इस विरोध ने हिंसात्मक रूप ले लिया।

यह विरोध मध्यवर्ग के कुछ लोगों और पूँजीपतियों तक ही सीमित रहा। इन लोगों ने जनता में भय फैलाया कि उनकी भाषा को समाप्त करने का काम किया जा रहा है इस प्रकार वे जनता को भड़काते रहे। लेकिन तमिलनाडु में तमिल राजभाषा हो या फिर शिक्षा का माध्यम हो ऐसी परिस्थितियाँ नहीं है। लोग अपने बच्चों को सरकारी नौकरी मिलने के उद्देश्य से अंग्रेजी के माध्यम से शिक्षा दिलाना पसन्द करते हैं। श्री मोहनकुमार मंगलम के अनुसार मद्रास सरकार के श्रम विभाग का कार्य अंग्रेजी में होता है, श्रमिक संघों और कारखानों के इन्स्पेक्टरों के बीच पत्र-व्यवहार अंग्रेजी में होता है। राज्य सेक्रेटेरियट का सारा काम केवल अंग्रेजी में होता है, छोटे-छोटे व्यापारों में भी अंग्रेजी चलती है, इसमें अतिशयोक्ति नहीं है कि मद्रास में तमिल का एक शब्द सीखे बिना भी आदमी वर्षों तक रह सकता है, नौकरी के मामले में थोड़ी परेशानी ज़रूर होगी।

हिन्दी विरोध का कारण मातृभाषा प्रेम नहीं है, अंग्रेजी प्रेम है। बंगाल में जिस प्रकार सुनीति कुमार चटर्जी और बंकिमचन्द्र चटर्जी ने हिन्दी के प्रचार-प्रसार में योगदान दिया उसी प्रकार तमिलनाडु में अनेक विद्वान और नेता ने भी हिन्दी के प्रचार-प्रसार में योगदान दिया। सर टी. विजयराघवाचारी ने सन् १९२८ में हिन्दी को भारतीय शिक्षा-व्यवस्था में अनिवार्य बना देने पर जोर दिया था। श्री

राजगोपालाचारी ने दस साल बाद उसी सुझाव पर अमल किया था। दिसम्बर १९१६ में लखनऊ की एक सभा में गाँधीजी के निर्देश से हिन्दी और देवनागरी को लेकर जो प्रस्ताव पास हुआ, उसके समर्थकों में श्री रामास्वामी अय्यर और श्री रंगास्वामी आयंगर थे।[२९]

भारत की राष्ट्रभाषा देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी होगी– यह प्रस्ताव संविधान सभा में श्री गोपालस्वामी आयंगर ने पेश किया था।

तमिलनाडु के हिन्दी प्रचारकों ने राष्ट्रीय एकता और हिन्दी प्रचार के लिए जो काम किया उसकी जितनी भी प्रशंसा की जाय वो कम है। हिन्दी प्रचार के लिए परिस्थितियाँ हमेशा उनके अनुकूल रही हों ऐसा नहीं था। दिसम्बर १९१६ में काँग्रेस का इक्तीसवाँ अधिवेशन लखनऊ में हुआ। भारतीय कुलियों का विदेश भेजना बन्द करने के विषय में गाँधीजी ने एक प्रस्ताव काँग्रेस में प्रस्तुत किया। "उनकी हार्दिक इच्छा थी कि वे हिन्दी में अपना भाषण प्रस्तुत करें और उन्होंने अपना भाषण हिन्दी में जैसे ही शुरु किया वैसे ही मद्रासी प्रतिनिधियों की तरफ से आवाज़ आई– 'English, Please' अंग्रेजी में बोलिए। उत्तर में गाँधीजी बोले– 'आपकी आज्ञा मुझे स्वीकार है, पर एक शर्त है– अगले साल की काँग्रेस तक आपको यह Lingua Franca (अर्थात् राष्ट्रभाषा हिन्दी) अवश्य सीख लेना चाहिए। देखिए, इसमें गलती या लापरवाही न हो।' उनके भाषण को सुनकर द्विवेदीजी का कहना था कि मानो कोई "देवदूत–ईश्वर का कोई प्रतिनिध– आकर हमें ईश्वरीय आज्ञा सुना रहा है।"[३०] द्विवेदीजी के उपर्युक्त कथन से यह पता चलता है कि गाँधीजी ने हिन्दी और राष्ट्रीय एकता के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान भी दिया और समय-समय पर इसके लिए सार्थक प्रयत्न भी किया।

गाँधीजी चाहते थे कि सालभर के अन्दर लोग हिन्दी सीख लें और काँग्रेस के अधिवेशनों में हिन्दी बोलें। भारत को स्वतंत्र हुए कई वर्ष गुज़र जाने के बावजूद भी हिन्दी के उत्थान के लिए कोई भी जल्दबाज़ी नहीं दिखाई जा रही हैं। कुछ लोगों का कहना है कि हिन्दी के मामले में हमें जल्दी नहीं करनी चाहिए। जब भारत स्वतंत्र नहीं हुआ था और हिन्दी का प्रचार कार्य जब जोर-शोर से चल रहा था उसी समय कुछ लोगों द्वारा यह आवाजें आने लगीं कि उनकी भाषाओं का दमन किया जा रहा है। उस समय हिन्दी का प्रचार कार्य गाँधीजी की देखरेख में चल रहा था। केन्द्र में सरकार काँग्रेस की नहीं थी और मद्रास में राजाजी का मंत्रिमण्डल भी कायम नहीं

हुआ था। फिर भी यह आवाज उठने लगी कि हिन्दी प्रचारक दक्षिण की भाषाओं का नाश कर देना चाहते हैं।

गाँधीजी ने सन् १९३५ में इन्दौर साहित्य सम्मेलन के सभापति पद से भाषण देते हुए कहा था, "अपनी यात्रा (दक्षिण-यात्रा) के दौरान काका साहब (काका कालेलकर) ने देखा कि कुछ लोग समझते हैं कि हम उनकी प्रादेशिक भाषाओं का नाश कर देना चाहते हैं और सारे देश में एक ही भाषा चलाना चाहते हैं। कहीं-कहीं हमारा उद्देश्य न समजकर लोगों ने हमारे हिन्दी-प्रचारक कार्य का विरोध किया है।"[३१]

ध्यान देने की बात है कि जिन लोगों द्वारा यह बातें कही जाती थी कि हिन्दी से अहिन्दी भाषाओं को खतरा है वही लोग अंग्रेजी को अपनी मातृभाषा के लिए खतरा नहीं मानते थे, उन्हें अंग्रेजी लादी हुई भाषा नहीं लगती थी।

देश की भाषा सम्बन्धी स्थिति तब भी यही थी और आज भी यही है कि सरकारी नौकरियों के उम्मीदवारों के लिए राजभाषा अंग्रेजी होगी और आम जनता की सम्पर्क भाषा हिन्दी। लेकिन गाँधीजी का मत यह था कि भारत की अमली राष्ट्रभाषा हिन्दी है; और सरकारी तौर पर उसी को राजभाषा बनाना चाहिए।

गाँधीजी की भाषा-नीति का चौथा सूत्र है- काँग्रेस की अपनी राजनीतिक कार्यवाही की भाषा हिन्दी होनी चाहिए। सन् १९१८ में उन्होंने कहा कि "हमारी राष्ट्रीय संस्थाओं में हिन्दी का ही व्यवहार होना चाहिए। काँग्रेस के नेता और कार्यकर्ता इस दिशा में बहुत कुछ कर सकते हैं और उन्हें करना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि यह सम्मेलन (हिन्दी साहित्य सम्मेलन) काँग्रेस के दूसरे अधिवेशन के समय उसके सामने इस आशय का प्रस्ताव रखे।"[३२]

सन् १९२१ में बंगाल और दक्षिण भारत के लोगों को संबोधित करते हुए गाँधीजी ने कहा- "मैं आशा करता हूँ कि बंगाली और द्रविड़ लोग दूसरी काँग्रेस में (यानि काँग्रेस के अगले अधिवेशन) काम लायक हिन्दी सीखकर आयेंगे। हमारी यह महान सभा जनता की शिक्षक तब तक नहीं बन सकती जब तक वह ऐसी भाषा में न बोले, जिसे ज्यादा-से ज्यादा जनता समझती हो।"[३३]

सन् १९२५ में, काँग्रेस का नया विधान, धारा ३३ के अंतर्गत गाँधीजी ने कहा- "जहाँ तक सम्भव होगा काँग्रेस की कार्यवाही हिन्दुस्तानी में होगी। यदि कोई

हिन्दुस्तानी न बोल सके या ज़रूरत पड़े तो अंग्रेजी तथा प्रान्तीय भाषा का व्यवहार भी किया जा सकेगा।" १९२८ में गाँधीजी ने श्री विजयराघवाचारी के इस कथन का उल्लेख किया कि "हम लोग उत्सुकता से उस दिन की राह देख रहे हैं जब हम हिन्दुस्तानी पहले होंगे, मद्रासी या बंगाली बाद में। वह दिन जल्दी आएगा यदि मद्रासी जो इस मामले में सबसे ज्यादा गाफिल हैं, बड़ी तादाद में हिन्दी सीखने लगेंगे।" बाद में गाँधीजी ने *'यंग इंडिया'* में लिखा, "दक्षिण के लोगों को हिन्दी प्रचार सभा के कारण हिन्दी सीखने के लिए हर तरह की सुविधा है। यदि भारत के लिए हमारे हृदय में वैसे ही सच्चा प्यार है जैसे अपने प्रान्तों के लिए है तो हम अवश्य ही जल्दी सीख लेंगे और हमें यह अपमानजनक दृश्य न देखना पड़ेगा कि अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी की कार्यवाही– पूरी–की–पूरी नहीं तो अधिकांश–अंग्रेजी में हो रही है।"[३४]

१९३१ में अपने एक भाषण के दौरान गाँधीजी ने कहा– "दक्षिण के लोग वादा कर चुके हैं कि अगले साल की काँग्रेस के लिए वे ऐसे प्रतिनिधि भेजेंगे जो हिन्दी में बोलेंगे और हिन्दी समझेंगे। हम अस्वाभाविक परिस्थितियों में न रह रहे होते तो दक्षिण के लोगों को हिन्दी सीखना बोझ न मालूम होता, व्यर्थ की बात तो और भी नहीं।"[३५]

१९३७ में मद्रास में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मंच से उन्होंने यह प्रस्ताव पेश किया कि सम्मेलन काँग्रेस से हिन्दी का व्यवहार करने की प्रार्थना करता है। उन्होंने प्रस्ताव पर बोलते हुए कहा, "हम राष्ट्रभाषा हिन्दी के समर्थन में प्रस्ताव पास करते रहें और काँग्रेस पुरानी लीग पर चलती रहे तो हमारे काम की रफ्तार बहुत धीमी होगी। इस प्रस्ताव में काँग्रेस से अपील की गई है कि वह अन्तर्प्रान्तीय भाषा के रूप में अंग्रेजी का बहिष्कार करे। इसके अनुसार अंग्रेजी को न तो प्रान्तीय भाषा, न हिन्दी की जगह देनी चाहिए।"[३६]

अपने जीवन के अंतिम क्षणों में हिन्दी के प्रति अपने और अपने सहयोगियों के प्रयत्नों का उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखा कि, "१९२५ में काँग्रेस ने अपने कानपुर अधिवेशन के प्रसिद्ध प्रस्ताव में इस अखिल भारतीय भाषा को हिन्दुस्तानी कहा, तब से सिर्फ कहने भर के लिए हिन्दुस्तानी राष्ट्रभाषा हो गई है। कहने भर को इसलिए कि काँग्रेसियों ने भी उस प्रस्ताव पर उस तरह अमल नहीं किया जैसे उन्हें करना चाहिए था। १९२० में यह कोशिश शुरु हुई कि आम जनता की राजनीतिक

शिक्षा के लिए भारतीय भाषाओं का महत्त्व पहचाना जाय, साथ ही एक अखिल भारतीय सामान्य भाषा का महत्व पहचाना जाय, जिसे राजनीति में प्रबुद्ध भारत आसानी से बोल सके और जिसे विभिन्न प्रान्तों के सदस्य काँग्रेस के अखिल भारतीय अधिवेशनों में समझा सकें। मुझे यह कहते हुए दुःख हो रहा है कि बहुत से काँग्रेसी जनों ने उस प्रस्ताव पर अमल नहीं किया और इसलिए यह दृश्य उपस्थित होता है जो मेरी समझ में शर्मनाक है कि काँग्रेसजन अंग्रेजी बोलने की ज़िद करते हैं और दूसरों को भी अपनी खातिर अंग्रेजी बोलने पर मजबूर करते हैं। अंग्रेजी का जादू अभी खत्म नहीं हुआ है। उस जादू के असर से हम देश को अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने से रोकते हैं। जनता के लिए हमारा प्रेम सतही है यदि हम हिन्दुस्तानी सीखने के लिए उतने महीने भी नहीं देना चाहते जितने साल हम अंग्रेजी सीखने में लगाते हैं।"[३७]

जब भारत स्वतंत्र हुआ तब गाँधीजी ने चेतावनी देते हुए कहा कि, "सरकार और सेक्रेटेरियट सावधान न रहे तो संभव है कि अंग्रेजी हिन्दुस्तानी की जगह ले ले। इससे भारत की करोड़ों जनता का नुकसान होगा जो अंग्रेजी समझ न पाएगी।"[३८] उन्होंने प्रान्तीय भाषाओं को पुनर्जीवित करने की सलाह दी, साथ ही यह सुझाव रखा कि प्रान्तीय सरकारें ऐसे कर्मचारी रखे जों प्रान्तीय भाषा के साथ अन्तर्प्रान्तीय भाषा हिन्दुस्तानी भी जानते हों। जो लोग चाहते हैं कि स्वतंत्र भारत से अंग्रेजी का प्रभुत्व खत्म हो जाए उन लोगों को चाहिए कि वे राजनीतिक दलों के केन्द्रीय दफ्तरों से अंग्रेजी को निकाल बाहर करें, अखिल भारतीय अधिवेशनों में अंग्रेजी का व्यवहार बन्द कराएँ, अखिल भारतीय प्रचार कार्य अंग्रेजी के माध्यम से बन्द कराएँ। पार्टियों के अन्दर से अंग्रेजी की जड़ों को काटना पडेगा। लोकसभा में अपने प्रतिनिधियों को हिन्दी और भारतीय भाषाओं में बोलने और अंग्रेजी छोड़ने पर मजबूर करना होगा।

गाँधीजी की भाषानीति का पांचवा सूत्र है– **भारत का विकास और राष्ट्रीय एकता की रक्षा प्रादेशिक भाषाओं को दबाकर नहीं, उनके पूर्ण विकास से ही संभव है।**

गाँधीजी ने अपने राजनीतिक जीवन के आरंभ से ही अंग्रेजी का विरोध किया और प्रान्तीय भाषाओं की हिमायत की। प्रान्तीय भाषा और राष्ट्रभाषा का संबंध समझते हुए उन्होंने लिखा था– "हिन्दुस्तान में आजकल हिन्दू, मुसलमान, पारसी, सभी 'अपने देश' की बात करने लगे हैं। इस समय में इस बात पर राजनीतिक दृष्टि से विचार नहीं कर रहा हूँ। भाषा की दृष्टि से यह जरूरी है कि इसके पहले कि हम

अपने देश को अपना कहें, हमारे दिलों में अपनी भाषाओं के लिए प्रेम और आदर पैदा होना चाहिए। ऐसा मालूम होता है कि सारे भारत में लोग अपनी भाषाओं की ओर ध्यान देने लगे हैं यह प्रसन्नता की बात है।"[३९]

साथ ही इस लेख में उन्होंने गुजरातियों को अंग्रेजी बोलने पर फटकारा, लेकिन साथ ही उन्होंने प्रसन्नता भी व्यक्त की और कहा कि लोग मराठी, गुजराती, बँगला, उर्दू आदि की प्रगति के लिए संस्थाएँ बना रहे हैं। साथ ही साथ मातृभाषा की अवज्ञा करने वालों की निन्दा भी की।

सन् १९२७ में जब हिन्दी प्रचार आंदोलन शक्तिशाली होने लगा था तब उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि, "हिन्दी या हिन्दुस्तानी का उद्देश्य यह नहीं है कि वह प्रान्तीय भाषाओं की जगह ले ले। वह अतिरिक्त भाषा होगी और अन्तर्प्रान्तीय सम्पर्क के काम आएगी।"[४०]

१९३५ में जब काका कालेलकर ने गाँधीजी को बताया कि लोग यह कहते हैं कि हिन्दी प्रचार का उद्देस्य प्रान्तीय भाषाओं का दमन है, तब गाँधीजी ने साहित्य सम्मेलन के मंच से घोषित किया, "मेरा कहना बराबर यही रहा है कि प्रान्तीय भाषाओं का जरा भी अहित हम नहीं करना चाहते, उनका दमन या नाश करना तो दूर की बात है।"[४१]

गाँधीजी स्वयं गुजराती भाषा के प्रबल समर्थक एवं लेखक थे, अतः वे प्रान्तीय भाषाओं और हिन्दी का संबंध अच्छी तरह से समझते थे। उनकी प्रेरणा से ही गुजराती बुद्धिजीवियों ने अंग्रेजी के मोह का त्याग किया और तन-मन से मातृभाषा की सेवा की।

मातृभाषा और हिन्दी के सम्बन्ध को और बेहतर ढंग से समझते हुए उन्होंने सन् १९३६ में बैंगलोर में कहा था, "लोगों ने एक हौवा खड़ा कर दिया है जिसे मैं आप लोगों के दिमाग से निकाल देना चाहता हूँ। क्या हिन्दी की शिक्षा कन्नड़ को हटाकर दी जाएगी? क्या यह संभावना है कि वह कन्नड़ की जगह ले ले? इसके विपरीत मेरा कहना है कि हम जितना ही हिन्दी प्रचार करेंगे, उतना ही अपनी मातृभाषाओं के अध्ययन को और सशक्त बनाएंगे, इन भाषाओं की शक्ति और सामर्थ्य को और भी बढ़ा सकेंगे। मैं विभिन्न प्रान्तों में अपने अनुभव के आधार पर यह कहता हूँ।"[४२]

गाँधीजी जानते थे कि प्रादेशिक भाषाओं का मुख्य विरोध अंग्रेजी से है न कि हिन्दी से। उन्होंने मद्रास में कहा था, "अगर अंग्रेजी ने जनता की भाषाओं की जगह न ली होती तो आज वे अत्यन्त समृद्ध अवस्था में होती।"[४३]

भारत एक ऐसा राष्ट्र है जहाँ अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं, यह ब्रिटेन और फ्रांस की तरह एक भाषा वाला राष्ट्र नहीं हैं। इसलिए गाँधीजी इस पक्ष में थे कि भाषाओं के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन हो जिससे प्रदेशों का राजकाज वहाँ की भाषा में हो सके। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद गाँधीजी ने लिखा, "प्रान्तीय भाषाओं को अपना पूर्ण विकास करना है तो भाषा के आधार पर प्रान्तों का पुनर्गठन आवशयक है। हिन्दुस्तानी राष्ट्रभाषा होगी लेकिन वह प्रान्तीय भाषाओं की जगह नहीं लेगी। वह प्रान्तों में शिक्षा का माध्यम नहीं होगी– और अंग्रेजी शिक्षा का माध्यम हो इसका तो प्रश्न ही नहीं उठता। हिन्दुस्तानी का उद्देश्य यह होना चाहिए कि वह लोगों को ये एहसास कराये कि वे भारत के अभिन्न अंग है। बाहर के लोग हमें गुजराती, बंगाली, मराठी या तमिल कहकर नहीं जानते हैं उनके लिए हम सब हिन्दुस्तानी हैं। इसलिए हमें विघटनकारी प्रवृत्तियों को रोकना होगा दृढ़ता से। इस बात को ध्यान में रखकर भाषावर प्रान्त बनाने से शिक्षा और व्यापार को प्रोत्साहन मिलेगा।"[४४]

केन्द्रीय सरकार ने भाषावार प्रान्त बनाने का प्रबल विरोध किया। गांधीवाद–विरोधी दिल्ली का सरकारी काँग्रेस नेतृत्व भाषावार प्रान्त–निर्माण का विरोध करके हिन्दी का अहित और अंग्रेजी का हित कर रहा था।

गाँधीजी ने अन्तर्प्रान्तीय सम्पर्क स्थापित करने के लिए अंग्रेजी की जगह प्रान्तीय भाषाओं के प्रयोग को मान्यता दी। १९४२ में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में गाँधीजी ने हिन्दी में भाषण करते हुए कहा था– "यहाँ मंच पर एक के बाद दूसरा वक्ता आया और मैं अधीरता से राह देखता रहा कि कोई हिन्दी या उर्दू या हिन्दूस्तानी में, या संस्कृत में ही भाषण करे, यह न सही तो मराठी में या और किसी भारतीय भाषा में बोलें। लेकिन मुझे यह सौभाग्य प्राप्त न हुआ क्यों? इसलिए कि हम गुलाम हैं और उन्हीं की भाषा को छातीसे चिपकाए हुए हैं जिन्होंने हमें गुलाम बना रखा है।"

एक बार गाँधीजी ने आंध्र प्रदेश के विद्यार्थियों से कहा था कि अगर वे राष्ट्रभाषा के माध्यम से शिक्षा पाना नहीं चाहते तो वे तेलुगु में शिक्षा पाने की माँग करें। इस बात को अगर आज की परिस्थिति में लागू करें तो लोगों से यही अनुरोध है कि यदि

वे हिन्दी नहीं बोल सकते तो अपनी मातृभाषा का ही व्यवहार करें। या फिर अनुवाद की व्यवस्था करके उन लोगों की कठिनाई दूर की जा सकती है जो हिन्दी का व्यवहार नहीं कर सकते या जान-बुझकर नहीं करना चाहते।

अपनी बात को प्रभावी ढंग से कहने के लिए उन्होंने संयुक्त राष्ट्रसंघ का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहा कि हमें ये विचार करना चाहिए कि संयुक्त राष्ट्रसंघ का काम कैसे चलता है। यह एक विश्व-संस्था है। उसके सेक्रेटेरियट में न जाने कितनी भाषाओं में बोलने वालों की बातों का हिसाब-किताब रखना पड़ता है। सेक्रेटेरियट में दुनिया की सभी भाषाओं में कारवाई नहीं दर्ज की जाती; न संयुक्त राष्ट्रसंघ ने अंग्रेजी को विश्व-भाषा मानकर केवल उसी में दफ्तर चलाने का नियम बनाया है। उसने अंग्रेजी, फ्रांसीसी, रूसी, चीनी और स्पेनी को बराबर अधिकार देकर उन्हें अपने काम-काज की भाषा बनाया है। हर भाषण का अनुवाद इन भाषाओं में एक साथ किया जाता है।

आगे वे कहते हैं कि यदि विश्व-संस्था का दफ्तर एक से अधिक भाषाओं में चल सकता है तो क्या हम लोकसभा में एक से अधिक भाषाओं में बोलने और पाँच स्वीकृत भाषाओं में भाषण के अनुवाद की व्यस्था नहीं कर सकते? इसी तरह केन्द्रीय सरकारी दफ्तरों का काम एक से अधिक भाषाओं में हो सकता है।

गाँधीजी ने लिखा था, "दक्षिण अफ्रीका जैसे देश में अंग्रेजी और डच भाषाओं की टक्कर थी। अन्त में यह फैसला हुआ कि दोनों भाषाओं को बराबरी का दर्जा देना चाहिए।"[४५]

गाँधीजी ने कहा कि जो लोग समझते हैं कि अंग्रेजी हटाने की माँग दूसरी भाषाओं पर जबरदस्ती हिन्दी लादने की माँग है, उनके विचार और चिन्तन के लिए मेरा उपर्युक्त प्रस्ताव है। इसमें न तो केन्द्रीय सेवाओं के लिए सभी से एक भाषा सीखने का आग्रह है, न भारत की सभी भाषाओं को केन्द्रीय भाषा बना देने की माँग है। यह एक मध्यमार्गी प्रस्ताव है और अमल में लाया जा सकता है, बशर्ते कि पहले काँग्रेस, कम्युनिस्ट पार्टी तथा अन्य दल अपने केन्द्रीय दफ्तरों से अंग्रेजी निकाल दें।

गाँधीजी की भाषा-निति का अंतिम सूत्र है- हिन्दी-उर्दू बुनियादी तौर से एक ही भाषा हैं और आगे चलकर उनका एक ही सम्मिलिक साहित्यिक रूप होगा।

हिन्दी-उर्दू की बुनियादी एकता के बारे में उन्होंने लिखा था, "हिन्दी और उर्दू या हिन्दुस्तानी में कोई भी फर्क नहीं है। दोनों का व्याकरण एक है। फर्क केवल लिपि का है। विचार कीजिए तो मालूम होगा कि हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी- इन तीनों शब्दों से एक ही भाषा का बोध होता है। इनके शब्दकोश देखें तो पता चलेगा कि अधिकांश शब्द एक-से हैं।"[४६]

गाँधीजी ने जो कुछ लिखा था, वह बोलचाल की भाषा की दृष्टि से सही था। हिन्दी-उर्दू मूलतः एक ही भाषा है और आम जनता उनके व्यवहार में कोई भेद नहीं करती।

गाँधीजी ने यह भी स्पष्ट कर दिया था कि उर्दू भाषा और लिपि केवल मुसलमानों की सम्पत्ति नहीं है। "ऐसे काफी हिन्दू और अन्य धर्म के लोग भी हैं जिनकी मातृभाषा उर्दू है और जो केवल उर्दू लिपि जानते हैं।"[४७]

इससे नतीजा यह निकलता है कि उर्दू धार्मिक अल्पसंख्यकों की भाषा न होकर सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों की भाषा है। वह स्वतंत्र भाषा नहीं, इसलिए उसकी तब तक रक्षा करनी चाहिए जब तक एक ही बोलचाल की भाषा के दोनों शिष्ट रूप घुल-मिलकर एक न हो जाएँ। देश में हिन्दू-मुस्लिम समस्या अंग्रेजों के लिए एक हथियार था जिसे वे राष्ट्रीय आन्दोलन को तोड़ने के लिए इस्तेमाल करते थे। उर्दू का संबंध मुसलमानों के विशेषाधिकार से जुड़ गया। उर्दू की रक्षा का प्रश्न- विशेष रूप से उसकी रक्षा का प्रश्न- धार्मिक अल्पसंख्यकों की रक्षा का प्रश्न बन गया। गाँधीजी ने हिन्दी-हिन्दुस्तानी का नारा देकर हिन्दुओं और मुसलमानों को मिलाने का भागीरथ प्रयत्न किया, किन्तु भाषा केवल एक बहाना थी; अलगाव के कारण दूसरे थे। बंगाल में उर्दू लिपि की रक्षा का प्रश्न नहीं था फिर भी उसका विभाजन हुआ। सिन्धी भाषा के लिए फारसी लिपि का ही संशोधित रूप काम में आता था, फिर भी सिन्ध पाकिस्तान में गया। जिनकी भाषा उर्दू थी वे यहीं रहे। उर्दू के दमन का नारा लगाकर मुस्लिम जनता को भड़काया गया : साम्राज्यवादियों और उनके साम्प्रदायिक सहायकों ने भाषा-समस्या से लाभ उठाकर राष्ट्रीय आंदोलन को कमज़ोर किया।

साम्राज्यवाद के खिलाफ आम जनता को संगठित करके इस परिस्थिति को बदलने की कोशिश की जाय यही इस समस्या से निपटने का एक तरीका था। उत्तर-भारत में किसान सभाओं और मजदूर-संघों में एक ही भाषा का व्यवहार किया जाय, इन जन-संगठनों में फारसी, संस्कृत शब्दों के व्यवहार पर रोक न

लगाकर एक ही लिपि देवनागरी के व्यवहार पर जोर दिया जाय। वे लेखक जो मार्क्सवाद से प्रभावित थे, हिन्दी-उर्दू साहित्य का प्रकाशन एक ही लिपि देवनागरी में करके दोनों के बीच का फासला कम करने में मदद कर सकते थे।

गाँधीजी भारत की तमाम भाषाओं के लिए एक लिपि के व्यवहार पर जोर देते थे। लेकिन साथ ही व्यावहारिक बात यह थी कि हिन्दी-उर्दू की लिपियों को बराबरी का दर्जा न देकर एक को प्रधान और प्रादेशिक व्यवहार के लिए स्वीकार किया जाय और दूसरी को अल्पसंख्यकों के लिए आवश्यक मानकर संरक्षण प्रदान किया जाय।

हिन्दू और मुस्लिम सम्प्रदायवादियों से भिन्न गाँधीजी हिन्दी-उर्दू की बुनियादि एकता में विश्वास करते थे और ये समझते थे कि जब साम्प्रदायिक तनाव कम हो जाएगा, तब दोनों शैलियाँ घुल-मिलकर एक हो जाएँगी। उन्होंने सन् १९२७ में लिखा था, "जब तक हिन्दू-मुस्लिम तनाव बना हुआ है, तब तक वह कभी फारसी-अरबी शब्दों से लदी हुई फारसी लिपि में लिखी जाने वाली उर्दू का रूपले लेता है, कभी संस्कृत शब्दों से लदी हुई देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी का रूप ले लेता है। जब ये दोनों रूप मिलेंगे तब एक ही भाषा के ये दो रूप घुल-मिलकर एक हो जाएँगे और इस भाषा में संस्कृत, फारसी अरबी या अन्य भाषाओं के उतने ही शब्द होंगे जितने उसके पूर्ण विकास और पूर्ण व्यंजना शक्ति के लिए दरकार होंगे।"[२८]

हिन्दी-उर्दू एक दिन आपस में एक होकर रहेंगी गाँधीजी का यह दृढ़ विश्वास था और गाँधीजी का यह विश्वास सही साबित हुआ जब बंगाल के विभाजन और पंजाब के बँटवारे के बाद भी न तो बंगला भाषा के दो रूप हुए और ना ही दो पंजाबी भाषाओं का रूप विकसित हुआ। किसी भी भाषा के विकास का नियम साम्राज्यवादी योजनाओं से ज्यादा शक्तिशाली होता है। उर्दू पाकिस्तान की ही नहीं हिन्दुस्तान की भाषा है और उसे संरक्षण प्रदान कर हिन्दी-उर्दू का भेद मिटाना जरूरी है और इस दिशा में हमारा प्रयत्न आवश्यक है।

गाँधीजी के भाषा संबंधी ये सभी सूत्र महत्वपूर्ण हैं जिन्हें आज की परिस्थितियों में विवेकपूर्ण लागू कर न केवल हिन्दी बल्कि हर भाषा की समस्या के समाधान का रास्ता निकाला जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ

१. Selig S. Harrison : *India; the most dangerous decades.* p.56.

२. M.K. Gandhi : 'You will wrought by the English medium'. *In :* R.K. Prabhu (*comp*), *Gandhi; India of my dreams.* pp. 37-38
३. वही, पृ. ८
४. Selig S. Harrison : *India; the most dangerous decades.* p. 279.
५. जोगेन्द्र सिंह : *हिन्दी के गतिमान क्षितिज।*
६. सुधाकर द्विवेदी : *हिन्दी : अस्तित्व की तलाश,* पृ. २३-२४
७. वही, पृ. २४
८. अवधेशमोहन गुप्त एवं सुशीला श्रावन्ती (संपा) : *राजभाषा का चरखा,* पृ. १२७
९. वही, पृ. १२७
१०. वही, पृ. १२८
११. वही, पृ. १२७
१२. वही, पृ. १२८
१३. M.K. Gandhi : *Thoughts on national language.* p. 23.
१४. वही, पृ. ३१
१५. वही, पृ. ३०
१६. वही, पृ. ५३
१७. वही, पृ. ४८
१८. वही, पृ. १८९
१९. रामविलास शर्मा : *भारत की भाषा समस्या,* पृ. ३१८-३१९
२०. M.K. Gandhi : *Thoughts on national language.* p. 24.
२१. वही, पृ. ९
२२. मोहन कुमार मंगलम् : *भारत का भाषा-संकट,* पृ. ४
२३. वही, पृ. ५
२४. M.K. Gandhi : *Thoughts on national language.* p. 17.
२५. वही, पृ. २०१
२६. वही.
२७. वही, पृ. ६
२८. वही.
२९. *'सरस्वती',* फरवरी १९१७
३०. वही.

३१. M.K. Gandhi : *Thoughts on national language*. p. 35.
३२. वही, पृ. १२
३३. वही, पृ. १९
३४. वही, पृ. २९
३५. वही, पृ. ३०
३६. वही, पृ. ५२
३७. वही, पृ. ९२
३८. वही, पृ. १६८
३९. वही, पृ. १८८
४०. वही, पृ. २६
४१. वही, पृ. ३८
४२. वही, पृ. ५०
४३. वही, पृ. ५२
४४. वही, पृ. २०२
४५. वही, पृ. २४
४६. वही, पृ. ५०
४७. वही, पृ. १७५
४८. वही, पृ. २६.२७



अध्याय ३

कर्नाटक का भाषिक भूगोल और इतिहास

किसी भी क्षेत्र का इतिहास एवं संस्कृति के बारे में अध्ययन करने से पहले यह बहुत आवश्यक है कि उस क्षेत्र का भौगोलिक अध्ययन करना, क्योंकि भौतिक लक्षण किसी भी क्षेत्र का इतिहास निर्माण करने में मुख्य भूमिका निभाता है। कर्नाटक भी इससे अछूता नहीं है। कर्नाटक के इतिहास और संस्कृति को बिना उसके भौतिकता को जाने समझना संभव नहीं है, इसलिए हम यहाँ भौतिक लक्षणों को परखते हुए कर्नाटक के इतिहास और संस्कृति को जानने का प्रयास करेंगे।

३.१ कर्नाटक का भौगोलिक इतिहास

आमतौर पर कर्नाटक को दक्षिण भारत में कन्नड़ बोलने वाले क्षेत्र के रूप में जाना जाता है। इसका क्षेत्रफल १, ९१, ७९१ वर्ग किलोमीटर है।[१] यहाँ की जनसंख्या ५, २७, ३३, ९५८ हैं (२००१ की जनगणना) कर्नाटक उत्तर में महाराष्ट्र, पूर्व में आंध्रप्रदेश, दक्षिण में तमिलनाडु एवं केरल तथा पश्चिम में अरब सागर से घिरा है।

अब यह देखना है कि प्राचीन काल में कर्नाटक का विस्तार कहाँ से कहाँ तक था। इसको जानने में प्राचीन काव्य एवं अन्य प्रमाण सहायक सिद्ध होते हैं। नृपतुंग ने अपने *'कविराजमार्ग'* में लिखा है कि कर्नाटक प्रदेश कावेरी से गोदावरी तक फैला हुआ था। उक्त ग्रंथ से यह भी पता चलता है कि इन नदियों के बीच रहने वाले लोगों की भाषा कन्नड़ थी और उनका प्रधान व्यवसाय कृषि था। नंजुण्डकवि (१६वीं सदी) ने भी कर्नाटक का लगभग यही विस्तार बतलाया है। इस बात की पुष्टि में अनेकों शिलालेख एवं ताम्रपत्र उपलब्ध हैं। अतः यह निःसंदेह माना जा सकता है कि कर्नाटक ने कावेरी से लेकर गोदावरी तक के विशाल भू-भाग को

आवृत्त कर लिया था, लेकिन आज यह कर्नाटक का भू-भाग बँटकर विभिन्न राज्यों में मिल गया है।[२]

कर्नाटक का लगभग २००० वर्षों से भी ज्यादा का लिखित इतिहास है। नंद वंश, मौर्य वंश एवं सातवाहन वंशों के कर्नाटक पर राज्य करने के बावजूद कर्नाटक में अपने ही कुछ वंशजों ने राज्य किया। जैसे-बनवासी के कदंब एवं गंग वंश ने चौथी सदी के मध्य से राज्य किया। विश्व प्रसिद्ध गोमटेश्वर की स्थापना श्रवणबेलगोल में गंग वंश के मंत्री चाउण्डराय ने किया। बदामी के चालुक्य वंशजों ने ५००-७५३ ई. तक राज्य किया। ७५३-९७३ ई. तक मलखेड़ के राष्ट्रकूट वंशजों ने कर्नाटक पर राज किया इसी समय कन्नड़ साहित्य का विकास हुआ। ९७३-११८९ ई. तक कल्याण के चालुक्य वंशजों ने तथा हळेबीडु के होयसळ वंशजों ने बहुत सारे मंदिर बनवाये। साहित्य और विविध कलाओं को प्रोत्साहित किया।

१३३६-१६४६ ई. के बीच विजयनगर साम्राज्य के शासकों ने अपनी महान परंपराओं का पोषण किया तथा कलाओं, धर्म एवं संस्कृत, कन्नड़, तेलुगु, तमिल साहित्य को प्रोत्साहित किया। इसी समय विदेश व्यावार भी फलने-फूलने लगा। बहमनी के सुल्तान एवं बीजापुर के आदिलशाही ने उर्दू एवं फ़ारसी साहित्य को प्रोत्साहित किया। पुर्तगालियों के आगमन से तम्बाकू, मक्का, मिर्च, मूँगफली, आलू जैसे फसल की खेती होने लगी। पेशवा और टीपू सूल्तान के परास्त होने के बाद कर्नाटक ब्रिटिश शासन के अधीन आ गया। ईसाई मिशनरियों ने अंग्रेजी शिक्षा तथा मुद्रण कार्य १९वीं सदी में प्रसार किया। इसी दौरान कर्नाटक में परिवहन संचार और उद्योग के क्षेत्र में क्रांति आयी। स्वतंत्रता आंदोलन के बाद कर्नाटक के एकीकरण के आंदोलन ने जोर पकड़ा। स्वतंत्रता के बाद १९५६ में एक नये एकीकृत मैसूर राज्य का गठन किया गया और १९७३ में इसका नाम बदलकर कर्नाटक कर दिया गया।[३]

प्राचीन काल से ही कर्नाटक के साथ विदेशी व्यापारियों का संबंध स्थापित हो चुका था। गोवा, मंगलूर, मल्पे आदि उस समय के प्रमुख व्यापारिक बंदरगाह थे। मिस्र, यूनान और अरब के व्यापारी कर्नाटक से अधिक संपर्क रखने वाले व्यापारी थे।

कर्नाटक की पर्वतमालाएँ अपूर्व प्राकृतिक सौंदर्य से सुशोभित हैं और आर्थिक संपत्ति से समृद्ध भी हैं। ये पर्वतमालाएँ आगे चलकर पश्चिमी पर्वतमालाओं से जुड़ जाती हैं। इन प्रदेशों में बहुत सी अमूल्य वस्तु एवं धातु पाये जाते हैं। कर्नाटक का

पर्वतीय प्रदेश का जीवन अनेक विशेषताओं से संपन्न है। यह वीर पुरुषों तथा वीरांगनाओं की जन्मभूमि है।

कर्नाटक में कावेरी, कृष्णा, तुंगभद्रा, हेमावती, कपिला आदि छोटी-बड़ी नदियाँ बहती हैं। प्राचीन काल में गोदावरी भी इस राज्य के अन्तर्गत थी। इन्हीं नदियों के कारण कर्नाटक के खेत हरे-भरे रहे हैं। गोदावरी, तुंगभद्रा, कावेरी नदियों के तट पर बने पैठन, विजयनगर, श्रीरंगपट्टनम् और तलकाडु जैसे नगरों के कारण कर्नाटक की शोभा बढ़ गयी है। इस प्रकार प्रकृति ने कर्नाटक को रमणीयता प्रदान करने के साथ-साथ अमूल्य आर्थिक निधि भी प्रदान की है। यहाँ के वन-चंदन और सागवान जैसे मूल्यवान वृक्षों से सम्पन्न हैं।[४]

३.२ कर्नाटक शब्द की उत्पत्ति एवं उसकी महत्ता

किसी भी नाम का बड़ा महत्त्व होता है चाहे वह व्यक्ति हो या प्रदेश। किसी प्रदेश का नाम उस प्रदेश की कोई न कोई विशेषता का परिचायक होता है। उस नाम से ही वहाँ की संस्कृति का थोड़ा सा परिचय मिल जाता है। नाम कभी जाति का परिचायक होता है तो कभी उसे भूभाग की विशेषता का। 'कर्नाटक' शब्द में कई अर्थों की व्यंजना है। इस शब्द की उत्पत्ति कैसे हुई और इसका प्राचीन रूप क्या है इस संबद्ध में विद्वानों में मतभेद है, फिर भी भिन्न-भिन्न मतों के अध्ययन से इस नाम का महत्त्व अवश्य विदित होता है।

आमतौर पर विद्वानों का यही मत है कि 'करनाडु' अथवा 'कन्नड' ही इस प्रदेश, जाति और भाषा के लिए प्रयुक्त किया गया पहला नाम है। इसका संस्कृत रूपांतर 'कर्णाट' या 'कर्णाटक' कहा जा सकता है, लेकिन 'करनाडु' से भी पहले उपलब्ध प्राचीन रूप 'कर्नाटक'। इसके लिए पर्याप्त कारण भी दे सकते हैं। संस्कृत साहित्य कन्नड़ साहित्य से भी प्राचीन है। कन्नड़ के नाम कन्नड़ साहित्य में प्रयुक्त होने से पहले संस्कृत साहित्य और शिलालेखों में संस्कृत में रूपांतरित होकर आते थे।

अब तक प्राप्त प्राचीन कन्नड़ रचनाओं में *'कविराजमार्ग'* प्रथम ग्रंथ माना जाता है। इसके रचनाकार नृपतुंग ने इसमें 'कर्नाटक' शब्द का प्रयोग न करके 'कन्नड़' शब्द का प्रयोग किया है। कन्नड़ जनपद ने पहली बार किसी एक नाम विशेष से अपने आप को पुकारा। यह प्रमाण सिद्ध बात है कि आर्यों के आगमन और संस्कृत भाषा के प्रचार के पूर्व ही कन्नड़ जनपद अस्तित्व में था।

नृपतुंग के अतिरिक्त आण्डय्य आदि अनेक कवियों ने कन्नड़ शब्द का प्रयोग देशवाचक के रूप में किया है। तमिल बृहत् कोश में भी हम कन्नड़ शब्द को देशवाचक अर्थ के रूप में देख सकते हैं। अतः यह स्पष्ट है कि कन्नड़ शब्द अत्यंत प्राचीन रूप है। इसके प्रयोग देश और जातिवाचक के रूप में होता था। तदनंतर इसका प्रयोग केवल भाषा के लिए होने लगा। अब हम 'कन्नड़' शब्द की उत्पत्ति के संबंध में विद्वानों के मतों पर प्रकाश डालेंगे।

जैन पण्डित केशवर्णी (१३५९ ई.) का कहना है कि 'कर्नाटक' शब्द भेदनार्थक 'कर्ण' धातु से उत्पन्न हुआ है। यह भाषा देव भाषा संस्कृत से भिन्न व्यवहृत होने के कारण भेदनार्थ में 'कर्ण' ही 'कर्नाटक' बन गया है।

'कन्नड़' के रूप विचार में अथवा इसके देसी रूप 'करनाडु' के संबंध में भी एक मत नहीं है। ऐसा कहा जाता है कि 'करु' + 'नाडु'– इन दो शब्दों से कन्नड़ शब्द बन गया है। कुछ लोगों के अनुसार 'करु' का अर्थ है काला और 'नाडु' का अर्थ है प्रदेश। अतः क़ाली मिट्टी वाला प्रदेश कन्नड़ है। इस बात को सही मानने में यह आपत्ति है कि यहाँ की भूमि सिर्फ काली नहीं है लाल भी है। इसलिए 'करनाडु' का अर्थ काली मिट्टी वाला प्रदेश मानना उतना उचित नहीं होगा।

एक विद्वान के अनुसार 'कन्नड़' का रूपांतर इस प्रकार है– कन्नाडु–कन्नडु–कन्नड़। उन्होंने इस शब्द का विग्रह इस ढंग से किया है– कम्मित्तु + नाडु = कन्नाडु। इसका अर्थ है सुगंध से भरा देश। चंदन के वनों तथा पद्माकरों से भरे भरपूर रहने के कारण यह नाम इसको दिया गया है। इस मत के समर्थन में यह कहा जा सकता है कि जिस तरह तमिल और तेलुगु के लोग अपनी भाषाओं के शब्दों की उत्पत्ति माधुर्यवाची शब्दों से मानते हैं उसी तरह कर्नाटक की जनता भी अपनी भाषा व प्रदेश का नाम सुगुणवाची शब्दों से उत्पन्न माने तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। इस मत को भी स्वीकारने में आपत्तियाँ हैं, क्योंकि पूरे कन्नड़ प्रदेश को सुगंध युक्त नहीं कहा जा सकता मगर पुराने मैसूर के लिए यह संज्ञा दी जा सकती है।

ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित कन्नड़ के कविवर द.रा. बेन्द्रे जी के अनुसार 'कन्नड़' यही मूल शब्द है। उन्होंने अपने इस मत की पुष्टि में कन्नड़ के प्राचीन ग्रन्थों में किये गये 'कन्नड़' शब्द के प्रयोग को उद्धृत किया है। उनके अनुसार 'कन्नड़' यह शब्द 'कन्' मूल धातु के साथ 'अळ्' प्रत्यय जोड़ने से बना है। इसका रूपांतर इस प्रकार है– कन + अळ = कन्नळ > कन्नड् > कन्नड। 'कन्' का अर्थ है– दिखायी

पड़े या गोचर हो। पूरे पद का अर्थ है 'भाव गोचर करने वाला'। भाषा भाव को व्यक्त करने वाला दर्पण है। अतः हमारे पूर्वजों ने उक्त नाम दिया है। इस प्रकार 'कन्नड़' शब्द की उत्पत्ति के संबद्ध में काफी वाद-विवाद है पर हम यह कह सकते हैं कि 'कन्नड़' शब्द ही मूल में रहा हो और बाद में 'कर्नाटक' यह नाम प्रचलित हुआ होगा।[५]

३.३ कन्नड़ का भाषिक भूगोल

अब तक हम लोगों ने कर्नाटक का ऐतिहासिक विकास, भौगोलिक लक्षण, कर्नाटक शब्द की उत्पत्ति एवं उसकी महत्ता के बारे में जाना। अब इसके आगे कन्नड़ के भाषिक भूगोल के बारे में जानना अत्यन्त आवश्यक है। कर्नाटक के विभिन्न जगहों पर बोली जाने वाली कन्नड़ पर अन्य भाषाओं का जो प्रभाव पड़ा उन सब का अध्ययन यहाँ किया गया है।

(१) बीदर कन्नड़

बीदर जिले में प्रचलित कन्नड़ भाषा को बीदर कन्नड़ के नाम से जाना जाता है। बीदर कर्नाटक राज्य के उत्तर भाग में स्थित है, इसके पश्चिमोत्तर में महाराष्ट्र, पूर्वोत्तर में आंध्रप्रदेश, उसके दक्षिण भाग में गुलबर्गा जिला स्थित है। बीदर जिला बहुत समय तक मुसलमानों के अधीन रहा। उस समय उर्दू वहाँ की प्रशासनिक भाषा थी। इसके परिणामस्वरूप बीदर कन्नड़ पर उर्दू का प्रभाव अधिक रहा। बीदर कन्नड़ पर उर्दू का प्रभाव होते हुए भी इसके पश्चिमोत्तर भाग में कन्नड़ पर मराठी भाषा का प्रभाव, पूर्वोत्तर भाग के कन्नड़ पर तेलुगु भाषा का प्रभाव भी विशेष रूप से दिखाई पड़ता है।

बीदर कन्नड़ में मराठी भाषा से आये हुए संख्यावाचक शब्द ज्यादा प्रचलित है। उदा.-चाळीस, पंचविस, पन्नास, दीढ (देड), अडीच (ढाई) इत्यादि।

(२) गुलबर्गा कन्नड़

गुलबर्गा जिले में प्रचलित कन्नड़ को ही गुलबर्गा कन्नड़ बोलते हैं। गुलबर्गा जिले के पश्चिमोत्तर में महाराष्ट्र, उत्तर भाग में बीदर, पूर्वोत्तर में आंध्रप्रदेश तथा इसके दक्षिण भाग में बीजापुर और धारवाड़ जिला है। गुलबर्गा पर बहुत समय तक हैदराबाद के निज़ामों ने शासन किया जिसके कारण यहाँ के कन्नड़ पर उर्दू का प्रभाव प्रबल है। इस जिले में उर्दू बोलने वालों की संख्या ज्यादा है, जिसके वजह से यहाँ

के ज्यादातर लोग दो भाषाओं का प्रयोग करते हैं कन्नड़ एवं उर्दू। उदा.– छलो (चलो) जल्दी। यह गुणवाचक शब्द प्रचलित है। कुछ संख्यावाचक शब्द भी संख्या में गुलबर्गा में ज्यादा प्रचलित हैं। उदा.– पाणे (३/४), दीढ़ (१½), आदा (१/२) इत्यादि। इस प्रकार गुलबर्गा कन्नड़ ने उर्दू और मराठी से प्रभावित होते हुए भी अपना वैशिष्ट्य बनाए रखा है।

(३) बीजापुर कन्नड़

यहाँ प्रचलित कन्नड़ को बीजापुर कन्नड़ कहते हैं। बीजापुर के दक्षिण भाग में धारवाड़ जिला, पूर्वोत्तर में गुलबर्गा और रायचूर जिला, पश्चिमोत्तर में बेलगाम और महाराष्ट्र राज्य स्थित है। धारवाड़ और बेलगाम के जैसे बीजापुर जिला भी पहले मुम्बई प्रांत में रहा, इस कारण बीजापुर कन्नड़ पर मराठी भाषा का प्रभाव अधिक है। बीजापुर जिला महाराष्ट्र से नज़दीक होने के कारण मराठी शब्द बीजापुर कन्नड़ में अधिक प्रचलित है। कन्नड़ शब्दों के साथ मराठी शब्दों को मिलाकर प्रयोग करना यहाँ के कन्नड़ में शुरु से ही प्रचलित है। उदा.– खानावळि (रेस्टोरेंट), दवाखाने (अस्पताल) सेंगा (मूँगफली) इत्यादि। कृष्णा नदी बीजापुर को दो भागों में विभक्त करती है। कृष्णा नदी के उत्तर में बीजापुर, इंडी, सिंदगी, मुद्देबिहाळ आदि तहसील हैं और कृष्णा नदी के दक्षिण भाग में जमखंडी, मुधोळ और बागलकोट तहसील हैं। बीजापुर के उत्तर भाग का कन्नड़, गुलबर्गा कन्नड़ के नज़दीक है तथा इसके दक्षिण भाग का कन्नड़ धारवाड तथा बेलगाम कन्नड़ के नजदीक है । बीजापुर जिले के कन्नड़ में दो प्रकार के भाषा रूप दिखाई पड़ते हैं इसका मुख्य कारण कृष्णा नदी है। कृष्णा नदी के उत्तर में मराठी भाषा का प्रभाव अधिक है।

मराठी भाषा से अपनाये गये संख्यावाचक शब्द इस प्रकार हैं– उदा.– दहा (दस), बारा (बारह) पंचवीस (पच्चीस), पन्नास (पच्चास) चाळीस (चालीस) आदि।

(४) रायचूर कन्नड़

रायचूर में बोली जाने वाली भाषी को रायचूर कन्नड़ कहते हैं। रायचूर के उत्तर में गुलबर्गा जिला, दक्षिण में बेल्लारी जिला, पश्चिम में धारवाड़ जिला और पूर्व में आंध्रप्रदेश स्थित है। यह जिला आंध्रप्रदेश के नज़दीक होने के कारण यहाँ के कन्नड़ पर तेलुगु भाषा का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है लेकिन साथ ही उर्दू का भी प्रभाव देखने को मिलता है।

(५) धारवाड़ कन्नड़

यहाँ की बोली को धारवाड़ कन्नड़ के नाम से जाना जाता है। धारवाड़ जिले के उत्तर में बीजापुर जिला, दक्षिण में शिमोगा जिला, पूर्व में बेल्लारी जिला, पश्चिमोत्तर भाग में बेलगाम जिला स्थित है। धारवाड़ जिला भी पहले बीजापुर जिला और बेलगाम जिला के जैसे मुम्बई प्रांत में था। धारवाड़ जिले का कन्नड़ बीजापुर और बेलगाम जिले के कन्नड़ से मिलता जुलता है, तथापि धारवाड़ जिले के कन्नड़ पर मराठी का प्रभाव है। उदा.– रगड (ज्यादा), लगून (जल्दी) सवा, दीड़ आदि।

(६) बेलगाम कन्नड़

बेलगाम जिले में बोली जाने वाली कन्नड़ को बेलगांम कन्नड़ के नाम से जाना जाता है। बेलगाम जिले के पश्चिमोत्तर भाग में महाराष्ट्र राज्य, पूर्वोत्तर में बीजापुर जिला, पूर्व में धारवाड़ जिला, दक्षिण में उत्तर कन्नड़ (कारवार) जिला और गोवा स्थित है। बेलगाम जिला महाराष्ट्र से नज़दीक होने के कारण यहाँ के कन्नड़ पर मराठी का प्रभाव अधिक है। इस जिले में कुछ लोग मराठी और कुछ लोग कोंकणी भाषा भी बोलते हैं। बेलगाम जिले में रहने वाले जैन और वीरशैव लोग जिस कन्नड़ का प्रयोग करते हैं उनमें मराठी शब्दों का इस्तेमाल ज्यादा होता है।

(७) बल्लारी कन्नड़

बल्लारी जिले में बोली जाने वाली कन्नड़ को बल्लारी कन्नड़ कहते हैं। बल्लारी जिले के पश्चिम भाग में धारवाड़ जिला पूर्व में आंध्रप्रदेश, उत्तर में रायचूर जिला, दक्षिण में चित्रदुर्ग जिला है। आंध्रप्रदेश से नज़दीक होने के कारण बल्लारी के कन्नड़ पर तेलुगु भाषा का प्रभाव अधिक है।

(८) दक्षिण कन्नड़ (मंगलूर) का कन्नड़

दक्षिण कन्नड़ जिले में प्रचलित कन्नड़ भाषा को दक्षिण कन्नड़ का कन्नड़ या मंगलूर कन्नड़ कहा जाता है। दक्षिण कन्नड़ जिले के उत्तर में शिमोग्गा और उत्तर कन्नड़ (कारवार) जिला पूर्व में चिक्कमंगलूर और हासन जिला, दक्षिण में कोडगु (कूर्ग) और केरल राज्य और पश्चिम में अरब सागर स्थित है। दक्षिण कन्नड़ जिले के कन्नड़ में तुळु, कोंकणी और मलयालम् भाषा का प्रभाव विशेष रूप से दिखाई पड़ता है, इस कारण दक्षिण कन्नड़ का कन्नड़ उत्तर कन्नड़ के कन्नड़ से भिन्न है।

(९) उत्तर कन्नड़ (कारवार) का कन्नड़

उत्तर कन्नड़ जिले में बोली जाने वाली भाषा को उत्तर कन्नड़ का कन्नड़ या कारवार कन्नड़ कहा जाता है। उत्तर कन्नड़ जिले के उत्तर में बेलगाम, पूर्व में धारवाड़, दक्षिण में शिमोग्गा और दक्षिण कन्नड़ जिला, पश्चिम में अरब सागर और गोवा स्थित है। इस प्रदेश में करावळी कन्नड़, मलेनाडु और बयलुशीमेय कन्नड़ जैसे कन्नड़ भाषा के तीन प्रकार प्रचलित हैं। मंगलूर से कारवार तक के समुद्रतटीय प्रदेश में तुळु, कोंकणी भाषा का प्रभाव है बाकी प्रदेश के कन्नड़ पर कोंकणी, उर्दू, मराठी का प्रभाव है।

(१०) तुमकूर कन्नड़

तुमकूर जिले में बोली जाने वाली कन्नड़ को ही तुमकूर कन्नड़ कहते हैं। तुमकूर जिले के पूर्व में बेंगलूर और कोलार जिला, दक्षिण-पश्चिम में मंड्या और हासन, उत्तर में चित्रदुर्ग और आंध्रप्रदेश राज्य स्थित है। तुमकूर जिले के पावगड़ तहसील आंध्र प्रदेश से नज़दीक होने के कारण वहाँ के कन्नड़ पर तेलुगु भाषा का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है।

(११) बेंगलूर कन्नड़

बेंगलूर ग्रामांतर जिले में बोली जाने वाली कन्नड़ को बेंगलूर कन्नड़ कहते हैं। बेंगलूर नगर में भिन्न-भिन्न जाति, भिन्न-भिन्न वृत्ति, भिन्न-भिन्न समाज संस्कृति और भिन्न-भिन्न भाषा बोलने वाले लोग हैं। बेंगलूर नगर का कन्नड़ शुद्ध कन्नड़ के समान है लेकिन बेंगलूर ग्रामीण जिले के कन्नड़ में विविधता देखने को मिलती है। बेंगलूर जिले के पूर्व में आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु राज्य और कोलार जिला, उत्तर में कोलार और तुमकूर जिला, पश्चिम में तुमकूर और मंड्या जिला, दक्षिण में मंड्या और मैसूर जिला स्थित है। इस जिले के कुछ हिस्से में तेलुगु और तमिल भाषा का प्रभाव भी दिखाई पड़ता है।

(१२) कोलार कन्नड़

कोलार में बोली जाने वाली भाषा कोलार कन्नड़ है। कोलार जिले के पूर्वोत्तर में आंध्रप्रदेश, दक्षिण-पूर्व में तमिलनाडु राज्य, पश्चिम में बेंगलूर और तुमकूर जिला है। कोलार जिले का पूर्वोत्तर भाग आंध्र से नज़दीक होने के कारण यहाँ के कन्नड़ पर तेलुगु भाषा का प्रभाव दिखाई पड़ता है। कोलार जिले में कुछ लोग तेलुगु भाषा भी बोलते हैं।

(१३) हासन कन्नड़

हासन जिले में बोली जाने वाली कन्नड़ को हासन कन्नड़ कहा जाता है। हासन जिले के कन्नड़ में चिक्कमगलूर, पश्चिम में दक्षिण कन्नड़ जिला, दक्षिण में कोडगु, मैसूर और मंड्या जिला स्थित है। हासन कन्नड़ मैसूर कन्नड़ के समान है फिर भी इसके पश्चिम भाग के कन्नड़ पर दक्षिण कन्नड़ का प्रभाव, पूर्व भाग पर मंड्या और मैसूर कन्नड़ का प्रभाव, उत्तर भाग में चिक्कमगलूर कन्नड़ का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है।

(१४) मंड्या कन्नड़

मंड्या जिले में प्रचलित कन्नड़ मंड्या कन्नड़ है। मंड्या जिले के उत्तर में बैंगलूर और तुमकूर, दक्षिण में मैसूर जिला, पश्चिम में मैसूर और हासन जिला, पूर्व में बेंगलूर और मैसूर जिला स्थित है। मंड्या कन्नड़ हासन, बेंगलूर कन्नड़ जैसे मैसूर कन्नड़ के समान है। फिर भी इसने अपने वैशिष्ट्य को बनाये रखा है।

(१५) मैसूर कन्नड़

मैसूर में बोली जाने वाली कन्नड़ भाषा को मैसूर कन्नड़ कहते हैं। मैसूर जिले के दक्षिण और पूर्व भाग में तमिलनाडु राज्य, पश्चिम में कोडगु जिला, उत्तर में मंड्या और हासन जिला स्थित है। मैसूर जिले के पूर्व और दक्षिण भाग में तमिलनाडु राज्य होने के कारण इस भाग के कन्नड़ पर तमिल भाषा का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है। इस भाग के कन्नड़ में तमिल शब्दों का अधिकाधिक प्रयोग है।

मंड्या, बेंगलूर, कोलार, तुमकूर, शिमोग्गा, चित्रदुर्ग, हासन, चिक्कमंगलूर के कन्नड़ को पहले मैसूर कन्नड़ के नाम से जाना जाता था इसी प्रकार बीदर, बीजापुर गुलबर्गा, धारवाड़, बेलगाम, रायचूर और बल्लारी जिले के कन्नड़ को धारवाड़ कन्नड़ कहा जाता था। उत्तर कन्नड़ और दक्षिण कन्नड़ के जिले को मंगलूर कन्नड़ कहा जाता था। लेकिन भिन्न-भिन्न जिले में दिखाई पड़ने वाली कन्नड़ भाषा का रूप अब अपने-आप में विशिष्ट होता गया अर्थात् प्रचलित तीन कन्नड़ भाषा का रूप अब अलग-अलग हो गया।[६]

अन्य भाषाओं द्वारा प्रभावित कन्नड़

१. उर्दू कन्नड

कर्नाटक के गुलबर्गा, बीदर, रायचूर, बीजापुर आदि जिलों के कन्नड़ पर उर्दू भाषा का प्रभाव अधिक है। यह प्रदेश पहले हैदराबाद के निज़ाम के अधीन था। इन

भागों में उस समय उर्दू उनकी प्रशासनिक भाषा थी। इस कारण इस जिले के कन्नड़ में उर्दू शब्द कन्नड़ के रूप में प्रचलित है। कन्नड़ के प्रत्ययों को उर्दू शब्दों के साथ मिलाकर उपयोग करना काफी प्रचलित है। कन्नड़ शब्दों के साथ उर्दू शब्दों को मिलाकर उपयोग करने से वहाँ के कन्नड़ में उर्दू भाषा का उच्चारण, शब्दकोश, व्याकरण, विचार आदि स्पष्ट दिखायी पड़ते हैं। उदाहरण के लिए– फायदे, दुकान, नज़र, गरम, एक, मुश्किल, दीड़ इत्यादि शब्द कन्नड़ में प्रयुक्त होते हैं। इस तरह उर्दू प्रभावित कन्नड़ अपना ही एक रूप बनाकर प्रचलन में है। इसको हम उत्तर कर्नाटक के विभिन्न भागों में देख सकते हैं।

२. मराठी कन्नड़

कर्नाटक के उत्तर भाग बेलगाम, बिजापुर, बीदर, गुलबर्गा आदि जिलों के कन्नड़ पर मराठी भाषा का प्रभाव भी स्पष्ट दिखायी देता है। इन प्रदेशों में खरे, खानावळी, दवाखानी, रगड़, पाणी, दीड़, शम्बर, सेंगा, बैल, जाँच, त्रास जैसे मराठी शब्द कन्नड़ के रूप में प्रचलित है। यहाँ के कन्नड़ का सभी संबंध सूचक शब्द संख्यावाचक सामान्यतः मराठी शब्द बनकर प्रचलन में है।[७]

अभी तक हम लोगों ने यह देखा कि कर्नाटक में कन्नड़ भाषा के अलावा उर्दू, मराठी जैसी बोलियाँ बोली जाती है इससे यह स्पष्ट है कि हिन्दी भाषा निश्चित तौर पर कर्नाटक में कन्नड़ के लोगों द्वारा आसानी से बोली एवं समझी जाती है।

इस अध्याय में आगे दक्खिनी हिन्दी के बारे में प्रकाश डालना उचित होगा क्योंकि दक्खिनी हिन्दी उत्तर भारत के बजाय दक्षिण भारत में फली–फूली।

३.४ दक्खिनी हिन्दी

दक्खिनी हिन्दी, हिन्दी साहित्य के इतिहास की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। आज हिन्दी की कई उपभाषाएँ हैं और बोलियाँ हैं परन्तु दक्खिनी हिन्दी या खड़ी बोली पर आधारित हिन्दी ही आधुनिक हिन्दी का मानक रूप है। आज हिन्दी के सभी जन-संचार का माध्यम भी दक्खिनी हिन्दी या खड़ी बोली ही है।

दक्खिनी हिन्दी या खड़ी बोली दिल्ली के आस–पास के समीपवर्ती क्षेत्रों में बोली जाती है। जिस रूप में यह भाषा उन दिनों विद्यमान थी वह कहीं बाहर से नहीं आयी थी अपितु मूलरूप में यह पहले से ही विद्यमान थी। ऐतिहासिक कारणों से दक्खिनी का विकास उत्तर भारत में न होकर दक्षिण भारत के राज्यों में हुआ था।

१४वीं सदी से लेकर १८वीं सदी तक इसका विकास दक्षिण के बहमनी, कुतुबशाही और आदिलशाही आदि राज्यों के सुलतानों के संरक्षण में हुआ।

दक्खिनी हिन्दी मूलतः दिल्ली एवं हरियाणा के आस-पास बोली जाने वाली खड़ी बोली थी। इस पर ब्रज, अवधी, पंजाबी के साथ-साथ मराठी, सिंधी, गुजराती और दक्षिण की भाषाओं कन्नड़, तमिल, तेलुगु एवं मलयालम् का भी प्रभाव पड़ा और अरबी, फारसी, तुर्की, पुर्तगाली आदि विदेशी भाषाओं के शब्द भी प्रचुर मात्रा में ग्रहण किये गये। दक्खिनी हिन्दी को एक प्रकार से संसार की सबसे मिश्रित भाषा कहा जाता है।

आज हम हिन्दी के जिस परिनिष्ठित रूप से परिचित हैं उसके विकास में उत्तर भारत के साथ-साथ दक्षिण भारत का भी विशेष योगदान है। खड़ी बोली हिन्दी का जो रूप आज हमारे सामने है मूलतः वह अपने विकास की अवस्था में दक्खिनी हिन्दी के रूप में विद्यमान थी। इससे पहले की दक्खिनी के विकास उसके क्षेत्र की चर्चा की जाय यह जान लेना आवश्यक है कि वास्तव में हम जिस दक्खिनी शब्द का प्रयोग करते हैं उसका वास्तविक अर्थ क्या है?

३.४.१ दक्खिनी का अर्थ एवं दक्खिनी नाम पड़ने का कारण

दक्खिनी हिन्दी का शाब्दिक अर्थ दक्खिन अर्थात् 'दक्षिण की हिन्दी' होता है लेकिन सिर्फ इतना अर्थ ही अपने -आप में व्यापक नहीं है । वास्तव में दक्खिनी हिन्दी दक्षिणी हिन्दी नहीं है। दक्खिन या दकन शब्द का अपना एक ऐतिहासिक महत्त्व है। प्राचीनकाल में दक्षिण की जगह दक्षिणापथ शब्द का प्रयोग देखने को मिलता है। विन्ध्याटवी से दक्षिण की ओर जाने वाले मार्ग के लिए इस शब्द का प्रयोग किया जाता था। गुप्तकाल में नर्मदा से कन्याकुमारी तक की भूमि "दक्षिणापथ' मानी जाती थी।

'दकन' वास्तव में एक विशेष क्षेत्र रहा है। उत्तर के लोग नर्मदा के पार के इलाके को 'दक्खिन' कहते आए हैं। इसके अन्तर्गत महाराष्ट्र, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक राज्यों के क्षेत्र आते हैं। दक्खिन नाम के इस भूभाग में प्रचलित होने के कारण ही खड़ी बोली को 'दक्खिनी' नाम दिया गया। और यहाँ बोली जाने वाली हिन्दी को दक्खिनी हिन्दी कहा जाने लगा, आगे चलकर दक्खिनी का प्रचार-प्रसार महाराष्ट्र, आंध्र और कर्नाटक तक ही सीमित न रहा अपितु केरल एवं तमिलनाडु में भी इसका व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ।

३.४.२ दक्खिनी के उद्भव और विकास की परिस्थितियाँ

आज हिन्दी का जो परिनिष्ठित और परिष्कृत रूप साहित्य में प्रयुक्त हो रहा है, वह किसी एक नगर, एक जनपद अथवा दो-चार जिलों में विकसित नहीं हुआ। उसके विकास में सदियों से समस्त देश का योगदान रहा है साथ ही भारत की विभिन्न भाषाओं का योगदान रहा है। प्रकाण्ड विद्वानों से लेकर सामान्य जनता ने इस भाषा के शब्द भण्डार को समृद्ध किया है। जहाँ तक शब्दावली का संबंध है वह पूर्णतया संस्कृत की ऋणी है। अभिव्यक्ति के क्षेत्र में अंग्रेजी भाषा व साहित्य का योगदान महत्वपूर्ण है। देश की हिन्दीतर भाषाएँ भी अनेक क्षेत्रों में अपने चिन्तन का सार हिन्दी को प्रदान करती रही हैं, किन्तु इन नाना दिशाओं से पोषण ग्रहण करते हुए भी हिन्दी के परिनिष्ठित रूप की परम्परा अविच्छिन्न रही है।

कुछ विद्वानों का मत है कि दक्खिनी भाषा की उत्पत्ति मुसलमानों के प्रभाव के कारण हुई है, लेकिन इसकी विकास की परिस्थितियों का अवलोकन करने पर प्रतीत होता है कि इसकी उत्पत्ति और विकास में मुसलमानों का बहुत बड़ा सहयोग रहा किन्तु इस बात को भी नकारा नहीं जा सकता है कि इसके विकास में भारत की विभिन्न भाषाओं का भी विशेष योगदान रहा है। अभी तक के अध्ययन से यह पता चला है कि चौदहवीं शताब्दी के अन्त और पन्द्रहवीं शताब्दी के आरम्भ से दक्खिनी साहित्य का लिपिबद्ध रूप प्राप्त होता है। इस साहित्य में सूफ़ी भावधारा की प्रधानता है। उत्तर भारत के शेख फरीद शकरगंज और अमीर खुसरो खड़ी बोली हिन्दी के प्रथम कवियों में माने जाते हैं। इन्होंने फारसी के अतिरिक्त हिन्दी में बहुत सी कविताएँ लिखी थीं किन्तु उस समय उनका महत्व कुछ भी न था, इसलिए कुछ कविताएँ नष्ट हो गईं। इन्होंने कुछ हिन्दी ग्रन्थों की रचनाएँ भी की थीं- *'हालात-ए-कन्हैया'* और *'नज़रान-ए-हिन्दी'*।[८] किन्तु ये ग्रन्थ आज उपलब्ध नहीं हैं। इनका एक कोश *'खालिक़बारी'* हिन्दी में प्रकाशित अवश्य मिलता है जिसमें इन्होंने अरबी, फारसी, तुर्की, और हिन्दी के समानार्थी शब्दों का संकलन किया है। इसके अतिरिक्त भी इनकी कविताओं के कुछ संकलन मिलते हैं जिनको नागरी प्रचारिणी सभा, काशी एवं हिन्दुस्तानी अकादमी, इलाहाबाद ने प्रकाशित किया है, इनकी भाषा बोलचाल की भाषा है, जिसमें खड़ी बोली के साथ ब्रजभाषा का भी पुट है। इनके पूर्ववर्ती मसऊद हैं जिन्होने हिन्दी में कविताएँ लिखी थीं। मुहम्मद ऑफ़ी ने अपने तज़किरे (१२२८ ई.) में लिखा है कि मसऊद ने हिन्दी के *'दो दीवान'* (काव्य-संग्रह) की

रचना की थी। इनका काल बारहवीं शताब्दी का माना जाता है किन्तु इनकी कोई रचना आज उपलब्ध नहीं है।

प्रसिद्ध सूफी शेख फरीद शकरगंज (११७३-१२६५ ई.) ने हिन्दी में कविताएँ की हैं उनके कुछ नमूने इस प्रकार हैं–

तन धोने से दिल जो होता पोक, पेश रु असफ़िया के होते गोक ।
रीश सबलत से ग़र बड़े होते, बोकड़वाँ से न कोई बड़े होते ।
खाक़ लाने से ग़र कोई खुदा पाये, गाय बेलाँ भी वासलाँ हो जायें ।
गोशगिरी में ग़र ख़ुदा मिलता, गौश जो यां न कोई वासिल था ।
इश्क का रुमूज़ न्यारा है, जुज़ पीर के न कोईचारा है ।[९]

शेख फरीद की एक अन्य कविता, जिसका शीर्षक *'सगन ज़िक्र जली'* है की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार से हैं:–

जली याद की करना रह घड़ी,
यक तिल हजूर सों हलता नहीं ।
उठ बैठ में याद सो शाद रहना,
गवाहदार को छोड़ के चलना नहीं ।
पाक़ रख तूं दिल को गैरसती,
आज साईं फरीदा का आवता है ।[१०]

प्रसिद्ध सूफी सन्त शेख शरफुद्दीन बू अली कलन्दर (मृत्यु-१३२३ ई.) अमीर खुसरो के समकालीन थे। इनका यह दोहा प्रसिद्ध है:–

सजन सकारे जायँगे और नैन मरैगे रोय ।
बिधना ऐसो रैन कर भोर कभी न होय ।।[११]

इससे स्पष्ट हो जाता है कि खड़ी बोली में काव्य निर्माण का कार्य बारहवीं शताब्दी में प्रारम्भ हो गया था किन्तु सदियों तक यह प्रवृत्ति शिथिल रही। इसके पश्चात् अवधी और ब्रजभाषा में विपुल साहित्य की रचना हुई। इस काल के प्रमुख कवि और साहित्यकार कबीर, नानक, तुलसी, जायसी और सूरदास हैं। कबीर की भाषा अवधी के निकट है। इनका आविर्भाव काल लगभग पन्द्रहवीं शताब्दी का मध्य है। पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रसिद्ध वल्लभाचार्य के ब्रजमण्डल में आकर बसने के कारण अधिकतर रचनाएँ ब्रजभाषा में आरम्भ हुईं। यद्यपि *'शिवसिंह सरोज'* में

पुष्पदन्त नामक एक कवि का उल्लेख है जिन्हें भाषा का जनक कहा गया है और जिनका समय ७१३ ई. बताया गया है, परन्तु न तो इन कवि की कोई रचना मिलती है और न यह अनुमान हो सकता है कि उस समय हिन्दी भाषा प्राकृत अथवा अपभ्रंश से पृथक हो चुकी थी, क्योंकि बारहवीं शताब्दी में यह भाषा अपरिपक्व अवस्था में थी। मुसलमानों के भारत प्रवेश के समय से ही अरबी, फारसी और तुर्की शब्दों का प्रचार बहुतायात में होने लगा था कि भाषा के लक्षण में 'पारसी' भी रखी गयी।[१२]

डॉ. बाबूराम सक्सेना का कथन है– "हिन्दी के कुछ मान्य विद्वानों ने कभी पुष्पदन्त आदि अपभ्रंश के कवियों को और कभी 'बौद्ध गान आ दोहा' आदि के रचयिताओं को हिन्दी के आदि कवियों का पद दिया है यह भ्रम है। इन ग्रन्थकारों की भाषा और हिन्दी में बड़ा अन्तर है। सच्चाई यह है कि हिन्दी खड़ी बोली के जो प्राचीन ग्रन्थ इस समय मिलते हैं, वे विदेशियों की कृतियाँ हैं जब उन्होंने इसे अपनाया उस समय भारतीय परम्परा के ऊँचे दर्जे का साहित्य संस्कृत में रचा जा रहा था, पर काव्य, नाटक, कथा और कहानी आदि प्राकृतों और अपभ्रंशों में लिखे जा रहे थे। विदेशियों की विद्याओं की भाषा यहाँ की संस्कृत के मुकाबिले की फारसी थी और विदेशी परम्परा वाले बढ़िया मार्के की चीजें फारसी में लिखते थे। आरम्भ काल की रचनाएँ अधिकतर फारसी ग्रन्थों के अनुवाद हैं।"[१३] आगे डॉ. सक्सेना का कहना है कि– "खड़ी बोली साहित्य की यह विदेशी परम्परा ईसा की चौदहवीं–पन्द्रहवीं शताब्दी में गुजरात, महाराष्ट्र, विजयनगर आदि दक्खिनी प्रदेशों में मुसलमानी फौजों और सन्तों एवं देरवेशों के साथ गईं और जैसे–जैसे ये लोग वहाँ बसते गये वैसे–वैसे वहाँ इसमें घर कर लिया।"[१४]

३.४.३ दक्खिनी के विकास की अवस्थाएँ

३.४.३.१ राजनीतिक अवस्था

दक्खिनी भाषा और साहित्य के विकास क्रम को समझने के लिए हमें उस समय की राजनीतिक अवस्था को देखना और समझना आवश्यक हो जाता है क्योंकि किसी भी देश के साहित्य भाषा आदि के विकास, उत्पत्ति के लिए मुख्यतः तीन अवस्थाएँ उत्तरदायी होती हैं :– (१) राजनीतिक, (२) सामाजिक, (३) धार्मिक। मुसलमानों के आक्रमण से पहले दक्षिण भारत में राष्ट्रकूट वंश, चालुक्य राय एवं यादव वंश के राज्य थे। इन वंशों के सम्बन्ध में इतिहासकारों का मत है कि

ये उत्तर भारत से दक्षिण में आये। चालुक्य राजपूत जाति के थे। कहा जाता है कि इन वंश के लोगों ने छठी शताब्दी में दक्षिण में प्रवेश किया।[३५] प्रसिद्ध इतिहासकार स्टुअर्ट एल्फिन्स्टन भी इसी मत के अनुयायी हैं और इनका कथन है कि चालुक्य वंश राजपूत था जिसने कल्याण पर राज्य किया (A Rajput family of Chalukya tribe reigned at calia'n west of Bidar, on the borders of Carnatac and Maharashtra. They are traced with certainty, by inscriptions from the end of the tenth to the end of twelfth century.)[३६] यही कारण है कि शूरसेन प्रदेश की प्राकृत शौरसेनी एक प्रकार से समूचे उत्तर भारत में साहित्यिक और सांस्कृतिक भाषा बनी और उसका प्रभाव दक्षिण पर भी पड़ा। धार्मिक दृष्टि से भी उत्तर-दक्षिण में आदान-प्रदान हुआ। बौद्धों और जैनों का प्रभाव भी दक्षिण पर पड़ा।

अलाउद्दीन खिलजी ने २६ फरवरी १२९५ ई. में देवगिरि पर आक्रमण करने के लिए कड़ा से प्रस्थान किया और १२९७ ई. में गुजरात और मालवा को दिल्ली राज्य में मिला लिया। रायकरण रामचन्द्र की शरण में जा पहुँचा और अपनी पुत्री देवल देवी का विवाह रामचन्द्र यादव के पुत्र शंकर देव से कर दिया। मुसलमान वाहिनी देवगिरि पर आक्रमण का अवसर खोज रही थी। अलाउद्दीन की सेना के सेनापति मलिक काफूर ने रायकरण और देवल देवी को रामचन्द्र यादव से माँगा, किन्तु मानधनी रामचन्द्र यादव ने उसे ठुकरा दिया। इस समाचार को पाते ही मलिक काफूर ने देवगिरि पर आक्रमण कर दिया और उसे १३०७ ई. में अपने अधिकार में ले लिया। इतना ही नहीं मलिक काफूर और अलक खाँ ने १३०४ में महाराष्ट्र, १३०७ ई. में आन्ध्र और १३०८ ई. में कर्नाटक को जीतकर दिल्ली राज्य की श्री वृद्धि की। सन् १३०९ में मलिक ने वारंगल को जीता और फिर दिल्ली लौट आया। मलिक काफूर दो-तीन वर्ष के बाद पुनः दिल्ली से दक्षिण की ओर रवाना हुआ और उसने द्वार समुद्र तथा मदुरा को १३१२ ई. में जीतकर दिल्ली शासन का विस्तार किया।

जब अलाउद्दीन की सेना उत्तर से दक्षिण की ओर आयी तो उसके साथ बहुत से असैनिक भी दक्षिण में आये और उन्होंने दक्षिण को ही अपना निवास स्थान बना लिया। इसके साथ ही दक्षिण में उत्तर से आने वालों का द्वार खुल गया। उत्तर भारत के निवासी दक्षिण में आकर बसने लगे तो उनके साथ उनकी भाषा भी आयी। इस काल में विशेष रूप से मुसलमान सूफी साधक ही दक्षिण आये और धर्म के प्रचार के लिए यहाँ बस गये। धर्म के प्रचार के साथ-साथ उनकी भाषा का भी प्रचार हुआ।

इतिहास से यह स्पष्ट होता है कि अलाउद्दीन के सैनिकों ने तो केवल दक्षिण को जीतकर अपने राज्य में मिलाया था और वे अपना सूबेदार अथवा उच्चाधिकारी नियुक्त करके वापस चले गये थे, किन्तु मुहम्मद तुगलक ने समूचे भारत को एक शासन सूत्र में मज़बूती से बाँधने के लिए अथक प्रयास किया। मुहम्मद तुग़लक ने दिल्ली को राज्य संचालन में उपयुक्त न समझकर १३२७ ई. में दौलताबाद को राजधानी बनाने का निश्चय किया। फलतः दिल्ली के सभी निवासियों को आदेश दिया कि वे सब दिल्ली से दौलताबाद को प्रस्थान करें। इस प्रस्थान में लाखों लोग दिल्ली से दौलताबाद आये, जिसमें सैनिक, सामन्त, श्रमिक व्यापारी, कलाकार तथा साहित्यकार सभी थे। कुछ समय पश्चात् मुहम्मद तुग़लक को अपना निर्णय परिवर्तित करना पड़ा और पुनः दिल्ली को राजधानी बनाया गया। जब मुहम्मद तुग़लक ने दिल्ली वापस आने का आदेश दिया तो वहाँ से अनेक कलाकार एवं साहित्यकार वापस नहीं गये और दौलताबाद को ही अपना निवास स्थान बनाया। उनमें से अनेक परिवार दिल्ली के मूल निवासी थे और कुछ परिवार ऐसे भी थे जो अन्य हिन्दी भाषी क्षेत्रों से आये थे। वे अपनी भाषा का प्रयोग घरों और बाज़ारों में करते थे। यही नहीं उनमें से अनेक व्युत्पन्न लोगों ने अपनी भाषा (हिन्दी) में रचनाएँ भी कीं। तुग़लक शासन के शिथिल हो जाने से दक्षिण स्वतन्त्र हो गया और हसन गंगोही बहनी ने १३४७ ई. में गुलबर्गा में अपना स्वतंत्र राज्य स्थापित किया। इससे गुलबर्गा में मुस्लिम संस्कृति के एक नये केन्द्र की स्थापना हुई। इस समय बहमनियों के पास दामोल, चोल, राजपुर, और गोवा के बन्दरगाह थे। जिनके द्वारा ईरान, अरब, अफ्रीका और मलाया से उनका सीधा सम्पर्क था। इन लोगों की भाषा अरबी, फारसी अथवा तुर्की थी। अतः गुलबर्गा को मुस्लिम संस्कृति तथा अरबी-फारसी के अध्ययन का केन्द्र बनाने का आरम्भ हुआ। मुहम्मद बहमनी द्वितीय (१३७८-१३९७ ई.) ने बाहरी लोगों को प्रोत्साहित किया, किन्तु उसके उत्तराधिकारी फीरोज़ बहमनी (१३९७-१४२२) ने दक्खिनी मुसलमानों, उत्तर भारत से आये हुये हिन्दुओं और स्थानीय लोगों को प्रोत्साहित किया और उनकी संस्कृति में अधिक रुचि ली। बहमनी राज्य की स्थापना १३४७ ई. में हुई थी किन्तु १४८० ई. के पश्चात् इस राज्य की नींव कमज़ोर पड़ गयी तथा १४८४ ई. में फतहउल्लाह इमादशाह ने बरार में इमादशाही राज्य की नींव डाली, किन्तु यह राज्य अधिक समय तक न टिक सका और १५७४ ई. में अहमदनगर में विलीन हो गया। युसुफ आदिलशाह ने सन् १४८० ई. में आदिलशाही शासन की स्थापना की। मुग़ल शासक औरंगजेब ने आदिलशाही शासक सिकन्दर को हराकर

आदिलशाही शासन का अन्त कर दिया। उन्हीं दिनों सुलतान कुली कुत्बशाह ने १५१८ ई. में गोलकुण्डा में कुत्बशाही राज्य की स्थापना की, किन्तु औरंगजेब के आक्रमण से अबुल हसन तानाशाह (१६७३-८७ ई.) परास्त हो गया और गोलकुण्डा भी मुगल साम्राज्य का एक भाग बन गया। बीजापुर को विजय कर औरंगजेब दक्षिण की राजनीति में उलझ गया इससे समूचे भारत की राजनीति का सन्तुलन बिगड़ गया। परिणामस्वरूप मराठा शक्ति का उदय हुआ।

आलमगीर औरंगजेब ने अपनी ८० वर्ष की आयु में ब्रह्मपुरी नामक स्थान को अन्तिम निवास स्थान चुना और उसका नाम बदलकर इस्लामपुरी रखा। आलमगीर २१ मई १६९५ ई. से १८ अक्टूबर १६९९ ई. तक यहीं से समस्त राज्य का संचालन करता रहा। उसके साथ उत्तर भारत से आये सहस्रों सैनिक, व्यापारी प्रबन्धक और श्रमिक औरंगाबाद और इस्लामपुरी में रहते थे। औरंगजेब के इस अभियान से 'दक्खिनी' का खूब विकास हुआ। कामता प्रसाद गुरु का यह कथन उचित ही है– इस देश में जहाँ-जहाँ मुगल बादशाहों के अधिकारी गये, वहाँ-वहाँ वे अपने साथ इस भाषा को भी ले गये।"[१७]

इस विवरण से स्पष्ट होता है कि दक्षिण में बराबर युद्ध होता रहा। मराठा मुगल साम्राज्य पर बराबर आक्रमण करते रहे। यहाँ तक कि इन्होंने मुगलों को बहुत परेशान कर दिया। औरंगजेब के दक्षिण से जाने के पश्चात् जब आसफजाह दक्खिन का सूबेदार बनकर आया, तब फ्रांसीसियों और अंग्रेज़ों में संघर्ष छिड़ गया। इसके पश्चात् दक्षिण में अनेक शक्तियाँ सामने आयीं, जिनमें हैदर अली, टीपू सुल्तान और पेशवा का महत्वपूर्ण स्थान है।

दक्षिण भारत आज राजनीतिक दृष्टि से विभक्त हो गया है तथा भाषावार प्रान्तों की रचना के कारण दक्षिण समाप्त प्राय हो गया। उपर्युक्त इतिहास का दक्खिनी भाषा के विकास से घनिष्ठ सम्बन्ध है। इन राजवंशों ने दक्खिनी के विकास में निरन्तर योगदान दिया।

३.४.३.२ धार्मिक अवस्था

उत्तर एवं दक्षिण भारत में पाँचवीं शताब्दी से लेकर ग्यारहवीं शताब्दी तक धार्मिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुये। द्रविड़ शाकाहारी थे और सूर्य एवं वृक्ष आदि की पूजा करते थे, किन्तु बौद्ध, जैन, शैव और हिन्दू धर्म से प्रभावित होकर

धीरे-धीरे इन्होंने मांस-मदिरा का सेवन आरम्भ कर दिया। बौद्ध धर्म बहुत पहले ही केवल मैसूर, महाराष्ट्र और आन्ध्र में ही नहीं अपितु सुदूर दक्षिण में भी आदर प्राप्त कर चुका था। पल्लव राजधानी कांचीवरम् में अनेक बौद्ध विहारों की स्थापना हुई जिससे इस धर्म की और अधिक उन्नति हुई। ह्वेनस्वांग जब ६४० ई. में कांचीवरम् पहुँचा तो उसने वहाँ दस हज़ार भिक्षुओं को देखा। ह्वेनस्वांग के गुरु धर्मपाल का जन्म स्थान कांचीवरम् ही था। बौद्धों के समान जैनों का प्रचार भी बहुत रहा है किन्तु पारस्परिक संघर्ष के कारण बौद्ध धर्म का पतन हो गया। जैन मतावलम्बी अभी भी विद्यमान है। राष्ट्रकूट के राजा कट्टर जैन धर्म के मानने वाले थे। इन राष्ट्रकूटों के कारण प्राकृत का अध्ययन दक्षिण में भी होने लगा था। साथ ही संस्कृत को भी सम्मान प्रदान किया गया और इसमें भी साहित्य की उन्नति हुई।

बौद्ध धर्म के पतन के बाद दक्षिण में एक नई विचारधारा-भक्ति का आविर्भाव हुआ। इसके दो रूप हैं, एक- शैव भक्ति सम्प्रदाय और दूसरा- वैष्णव भक्ति सम्प्रदाय। शैव भक्ति सम्प्रदाय को सभी भक्तों ने स्वीकार किया। अतः दक्षिण में बहुतसे शिव मन्दिरों की स्थापना हुई तथा शंकराचार्य के मत का प्रचार दक्षिण तक सीमित न रहकर पूरे भारत में फैल गया। इसका प्रमाण यह है कि शंकराचार्य का जन्म दक्षिण (केरल) में हुआ था किन्तु मृत्यु उत्तर भारत के अन्तिम छोर हिमालय पर हुआ। इसी काल का दूसरा भक्ति सम्प्रदाय है वैष्णव भक्ति सम्प्रदाय। विष्णु भगवान के अनेक अवतारों पर विश्वास करने वाले इस सम्प्रदाय के लोग थे। इस सम्प्रदाय के प्रमुख स्वामी रामानुजाचार्य, निम्बार्काचार्य और मध्वाचार्य हैं। सिद्ध और नाथ सम्प्रदाय की विचारधारा का प्रभाव भी दक्षिण पर पड़ा। मराठी के प्रसिद्ध सन्त ज्ञानेश्वर एवं उनके अग्रज निवृत्तिनाथ 'नाथ विचारधारा' से प्रभावित थे और उनका सीधा सम्बन्ध गोरखनाथ परम्परा से था। इसी काल में उत्तर भारत की पूर्वी एवं पश्चिमी भाषाएँ विकसित हो रही थीं। इन्हीं दिनों जो सन्त यहाँ आये उनके साथ ये बोलियाँ भी यहाँ पहुँची और ये परम्परा बराबर चलती रही।

३.४.३.३ सामाजिक अवस्था

दक्षिण भारत के अधिकांश मूल निवासी द्रविड़ हैं। जिस प्रकार उत्तर भारत का समाज कई वर्गों में विभाजित था उसी प्रकार दक्षिण में भी द्रविड़ जाति व्यवसाय के अनुरूप कई वर्गों में विभक्त थी। जैसे- कृष्णक, ग्वाल, सामुद्रिक (मछुए अथवा नाविक), शिकारी और अन्य वर्ग। उत्तर भारत में आर्यों द्वारा जो समाज स्थापित

किया गया था उसमें और कोई विषमता न थी, किन्तु धीरे-धीरे उसमें जातिगत भेद आ गया। द्रविड़ों में जन्म से जाति का कोई सम्बन्ध न था और न ही जाति प्रथा की विषमता थी। द्रविड़ जातियों में स्त्रियों को स्वतन्त्रता अधिक थी। यहाँ पर पर्दा प्रथा का चलन न था। स्त्रियों को सामाजिक कार्यों में भाग लेने की स्वतन्त्रता थी। इस समाज की एक विशेषता यह थी कि यहाँ पर प्रेम विवाह का प्रचलन था और बहु विवाह की प्रथा थी। स्त्रियों में शिक्षा का प्रचलन था और ये विदुषी होती थीं। द्रविड़ समाज में अतिथि सत्कार की भावना थी और ये बहुत परिश्रमी थे। सन्तान में साहस और अन्य गुणों का विकास करना अपना मुख्य कर्त्तव्य समझते थे। द्रविड़ों का मुख्य आहार चावल और मांस था। मद्यपान का चलन इनमें अधिक था, किन्तु बौद्धों एवं जैनों से सम्पर्क के कारण यह बहुत कम हो गया।

आर्थिक दृष्टि से द्रविड़ उन्नत थे क्योंकि वे प्रायः व्यापारी थे। इन्होंने छठी शताब्दी ईसा से ही बेबीलोनिया में व्यापारिक उपनिवेश स्थापित कर लिये थे और भारतीय चावल, गर्म मसाला और पीपल यूनान भेजते थे। यह भी कहा जाता है कि प्रथम शताब्दी ईसा के आरम्भ में ही रोम भारतीय सूती कपड़े व गर्म मसाले, हीरे-जवाहरात का व्यापारिक केन्द्र बन गया था। भारतीय मखमल मिश्र तथा अन्य देशों को भेजा जाता था। चीन से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित हो चुका था। यह व्यापार द्रविड़ राज्यों के बन्दरगाहों से होता था। द्रविड़ क्षेत्र इस व्यापारिक सम्बन्ध के कारण धन-धान्य से पूर्ण था।

बुनाई कला के द्रविड़ समाज अत्यधिक उन्नतिशील था। कहा जाता है कि ये बत्तीस प्रकार के सूती कपड़े बुनना जानते थे। कला का प्रदर्शन लकड़ी पर किया करते थे। ये कलाकार तथा भवन निर्माता थे। बाद में ये लोग काष्ठ कला के अतिरिक्त पत्थर पर भी चित्रकारी करने लगे जो आज भी दर्शनीय है। गायन विद्या और नृत्य कला में इन्होंने विशेष उन्नाते की थी।

दक्षिण भारत की भाषाओं में तमिल भाषा का सर्वोच्च स्थान था। इसके साहित्य को प्रोत्साहन बौद्ध, जैन, वैष्णव और शैव विद्वानों ने दिया जिससे अनेकानेक लेखकों तथा कवियों का आविर्भाव हुआ। आगे चलकर कन्नड़ और तेलुगु भाषाओं में भी साहित्य की रचना होने लगी। दक्षिण भाषाओं में मलयालम् भाषा का ज़न्म सबसे बाद में हुआ किन्तु आज इसका साहित्य अत्यन्त समृद्ध है।

दक्षिण भारत में राष्ट्रकूटों के जैन धर्म के प्रचार के कारण यहाँ के समाज में कुछ अन्तर आने लगा तथा जैनों और बौद्धों का संघर्ष छिड़ गया। इतना ही नहीं बल्कि शैव मत और ब्राह्मण मत में भी संघर्ष आरम्भ हुआ, किन्तु ब्राह्मणों के अधिक प्रभाव के कारण जाति भेद भी अधिक उभर कर सामने आया, जिससे समाज में विघटन उत्पन्न हो गया। इस विषय में सामाजिक स्थिति ने ही मुसलमानों को दक्षिण में प्रवेश के लिए उकसाया और मुसलमानों को अपने धर्म के प्रचार के लिए सुविधाएं प्रदान कीं। जीवन सांत्वना के लिए सूफ़ी सन्तों के उपदेश और मधुर वाणी से मुग्ध होकर उस ओर द्रविड़ आकृष्ट हुए और उन्होंने इस्लाम धर्म को स्वीकार कर लिया। उन दिनों धर्म प्रचार का माध्यम दक्खिनी ही थी।

३.५ दक्खिनी के प्रचलित विभिन्न नाम

सूफ़ी साधक शाह मीराँ जी शम्सुल उश्शाक ने अपनी काव्य भाषा को 'हिन्दी' कहा है:-

है अरबी बोल केरे। और फारसी बहुतेरे।
ये हिन्दी बोलूँ सब। उस अतरों के सबब।।[१८]

प्रसिद्ध साहित्यकार मुल्ला वजही ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ '*सबरस*' में अपनी भाषा को 'हिन्दी' कहकर पुकारा है:-

हिन्दुस्तान में, हिन्दी ज़बान सुँ इस लताफ़त-
इस छन्दा सूँ नज़म होर नस्त्र मिलाकर यूं नइं बोल्या।[१९]

बीजापुर के काज़ी महमूद 'बहरी' ने अपने ग्रन्थ '*मन-लगन*' में अपनी भाषा को हिन्दी की संज्ञा दी:-

हिन्दी तो ज़बान च है हमारी।
कहने न लगी हमन कूँभारी।।[२०]

हिन्दी में इस्लाम धर्मशास्त्र लिखने वाले प्रसिद्ध सूफ़ी साधक शेख फ़रीदुद्दीन शकरगंज ने दक्खिनी हिन्दी को 'हिन्दवी' कहा और इनके परम शिष्य शेख निज़ामुद्दीन औलिया ने अपने विचारों को जनता तक जिस भाषा के माध्यम से पहुँचाया उसे उन्होंने 'ज़बान-ए-हिन्दी' कहा। छठी शताब्दी में फारस के बादशाह नौशेखाँ के एक दरबारी कवि ने '*पंचतंत्र*' का अनुवाद किया और उसने उस संस्कृत भाषा को भी 'ज़बान-ए-हिन्दी' कह कर पुकारा। निज़ामुद्दीन औलिया के प्रिय शिष्य

अमीर ख़ुसरो की मातृभाषा हिन्दवी थी और इन्होंने भारत की लगभग सभी भाषाओं के लिए 'हिन्दी', 'हिन्दुई' और 'हिन्दवी' शब्द का प्रयोग किया है। शेख अशरफ ने अपने काव्य "नौसर हार" में अपनी काव्य भाषा को *'हिन्दवी'* की संज्ञा से अभिहित किया है:-

बाजा केता हिन्दवी में, किस्स-ए-मकतल शाह हुसे ।।
नज़्म लिखी सब मौजू जान, यों मैं हिन्दवी कर आसान ।।
यक यक बोल मौजू जान, तक़रीत हिन्दवी सब बसान ।।[२१]

मुगल सम्राट ज़हीरुद्दीन मुहम्मद बाबर ने *'बाबर नामा'* में उत्तर भारत की भाषाओं के लिए 'हिन्दुस्तानी' शब्द का प्रयोग किया है।

शाह बुरहानुद्दीन जानम ने एक स्थल पर अपनी भाषा को *'गुजरी'* कहा है:-

सब यूँ ज़बान गुजरी नाम,
ई किताब कल्मतुल हक़ायक ।[२२]

१५०२ ई. में बुरहसनद्दीन कुरेशी बीदरी ने अपनी मनतवी 'योगबल' में इसे सर्वप्रथम 'दाक्खिनी' कहा:-

'सो इस शाह के दौर में बीदर मुकाम
यों शायर किया नज़्म दकनी तमाम'

'ये सब बोलूं हिन्दी बोल
पन तू अनर्भा सेती खोल
ऐब न रखे हिन्दी बोल
मानी तो चख देख ढुडौल'

कवि मुल्ला वजही ने अपनी कृति *'कुतुब मुश्तरी'* में अपनी भाषा को 'दक्खिनी' कहा है:-

दखन में जूं दखनी मीठी बात का ।
अदा तै किया कोई स धात का ।।[२३]

दक्खिनी के प्रसिद्ध कवि नुसरती ने भी अपने काव्य 'गुलशन-ए-इश्क' में अपनी भाषा को 'दक्खिनी' बताया है:-

सफाई की सूरत की है आरसी ।
दखनी का किया-शेर हूँ फारसी ।।[२४]

इस प्रकार हम देखते हैं कि दक्खिनी हिन्दी को कुछ कवियों ने हिन्दी, हिन्दुई, हिन्दवी, हिन्दुस्तानी, गुज़री, दक्खिनी आदि कहकर अभिहित किया है।

३.६ दक्खिनी में रचनाएँ

डॉ. धीरेन्द्र वर्मा का दक्खिनी हिन्दी के संबन्ध में कहना है कि– 'हिन्दी भाषा का विकास और उसमें साहित्य रचना का कार्य केवल उत्तर भारत में ही नहीं हुआ है। दक्षिण भारत के मुसलमानी रियासतों, उनके शासकों, उनके दरबार के तथा अन्य साहित्यिकों का भी इसमें महत्वपूर्ण हाथ है। मुसलमान सैनिकों, फ़कीरों और राज्य संस्थापकों के द्वारा साहित्यिक हिन्दी दक्षिण भारत में पहुँची थी और पंद्रहवीं शताब्दी तक उसमें उच्चकोटि का साहित्य निर्मित होने लगा था।'

आगे चलकर डॉ. वर्मा ने दक्खिनी को खड़ी बोली का रूप स्वीकारते हुए कहा कि– 'दक्षिण भारत में विकसित हिन्दुवी अथवा दकनी उर्दू साहित्य का प्रारंभ १३२६ ई. में मोहम्मद तुगलक के दक्षिण आक्रमण के बाद हुआ। हिन्दी के प्रारंभिक कवि मुसलमान सूफ़ी फ़कीर थे, जिन्होंने अपने धार्मिक विचारों के प्रचार की दृष्टि से रचनाएँ लिखी थीं। यह साहित्य अभी देवनागरी लिपि में प्रकाशित नहीं हुआ है तथापि इसकी भाषा पुरानी खड़ी बोली है।[२५]

दक्खिनी साहित्य का अधिकांश भाग मुसलमान सूफ़ी फ़कीरों और साहित्यकारों द्वारा निर्मित हुआ है। प्रसिद्ध भाषाविद् एवं विद्वान डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी के अनुसार– 'केवल लिपि को छोड़कर दक्खिनी का सारा साहित्य बिल्कुल हिन्दी परम्परा का उसी प्रकार अनुकारी है जैसे उत्तर भारत में आरंभिक अवधी भाषा में रचित मलिक मुहम्मद जायसी का '*पद्मावत*'।'[२६]

दक्खिनी की उत्पत्ति एवं विकास में जितना योगदान मुसलमानों का रहा उसके साथ ही साथ भारत की विभिन्न भाषाओं का भी रहा। चौदहवीं शताब्दी के अन्त और पन्द्रहवीं शताब्दी के आरम्भ से दक्खिनी साहित्य का लिपिबद्ध रूप प्राप्त होता है। इस साहित्य में सूफ़ी भावधारा की प्रधानता है।

दक्खिनी के पहले ग्रन्थकार ख़्वाजा बन्दानवाज़ गेसूदराज मुहम्मद हुसेनी हैं। इन्होंने अधिकतर फ़ारसी भाषा में रचनाएँ की हैं पर *'तीन रिसाले'*, *'मीराजुल आशक़ीन'*, *'हिदायत नामा'* और *'रिसाला सेहवारा'* दक्खिनी भाषा में हैं।

बीजापुर के आदिलशाही राज्य और गोलकुंडा के कुतुबशाही राज्य में दक्खिनी में साहित्य की अधिक से अधिक रचनाएँ हुईं। इनमें क्रमशः सुल्तान इब्राहिम आदिलशाह और मुहम्मद कुली कुतुबशाह दोनों ही दक्खिनी के अच्छे कवि माने जाते हैं।

इसके अतिरिक्त आदिलशाही राज्य में शाह मीरांजी, बुरहानुद्दीन जानम, मुक़ीमी, सनअती, नुसरती आदि उच्चकोटि के साहित्यकार हुए, वहीं कुतुबशाही राज्य के वज़ही, ग़वासी, इब्न निशाती, गुलाम अली, सेवक आदि दक्खिनी के प्रसिद्ध कवियों में गिने जाते हैं। आदिलशाह सल्तनत की समाप्ति के बाद बीदर में बरीदशाही राज्य की स्थापना हुई और इस काल में भी थोड़ी बहुत दक्खिनी रचनाएँ हुईं।

सन् १६८५-८६ में आदिलशाही और कुतुबशाही राज्य के पतन के बाद मुगलों का राज्य दक्षिण में स्थापित हुआ। यह औरंगजेब का शासनकाल था। इस काल के प्रमुख दक्खिनी कवि थे वलि औरंगाबादी, ज़ईफ़ी, बहरी, वजदी, वली वेलूरी और इशरती।

३.७ दक्खिनी के प्रमुख कवि एवं उनकी रचनाएँ

बहमनी राज्य का संस्थापक हसन खाँ बमहनी था। यह विद्या प्रेमी था। बहमनी शासन काल के अंतिम दिनों में दक्षिण भारत में पाँच नये राज्यों की स्थापना हुई। ये राज्य थे-बीजापुर में आदिलशाही, बीदर में बरीदशाही, अहमदनगर में निज़ामशाही, गोलकुण्डा में कुतुबशाही और बरार में अमादशाही। हिजरी सन् ८९५ (१४९० ई.) में युसुफ आदलशाह ने आदिलशाही वंश की स्थापना की और उसने बीजापुर को अपनी राजधानी बनाया। बहमनी वंश के शासकों को कला, विद्या, साहित्य संगीत से विशेष प्रेम था। इसी वंश का एक शासक इब्राहीम आदिलशाह (द्वितीय) एक अच्छा सुल्तान होने के साथ-साथ उच्चकोटि का कवि भी था। 'इब्राहीम' नाम से आदिलशाह (द्वितीय) ने काव्य रचना की। इसकी प्रसिद्ध रचना *'नौ रस'* है जिसका रचना काल हिजरी सन् १०२६ है। इब्राहिम आदिलशाह (द्वितीय) ने विद्या, कला, साहित्य आदि क्षेत्रों में विशेष कार्य किये और इनके शासनकाल में दक्खिनी साहित्य ने विशेष उन्नति की। आदिलशाही युग को दक्खिनी साहित्य का स्वर्ण युग माना जा सकता है क्योंकि इस वंश में न केवल शासकों ने बल्कि साहित्यकारों ने भी साहित्य की कई विधाओं पर अपनी लेखनी के रंग भरे और दक्खिनी साहित्य की सामग्री को समृद्ध बनाया।

आदिलशाही वंश की समाप्ति के बाद बहमनी शासन के अंतर्गत बीदर में बरीदशाही राज्य की स्थापना सन् १४८७ ई. में अमीर कासिम बरीद के द्वारा हुई। इस काल में भी दक्खिनी में थोड़ी बहुत रचनाएँ हुईं। इस काल का प्रमुख कवि 'कुरेशी' था जिसने *'भोगफल'* नामक साहित्य की रचना हिजरी सन् १०२२ में की। इसके बाद १४९० ई. में अहमदनगर में मलिक अहमद बहरी ने निज़ामशाही वंश की स्थापना की। इस वंश के प्रमुख दक्खिनी कवि शेख मुहम्मद अशरफ 'अशरफ', आफताबी और हसन शौक़ी हैं। शेख मुहम्मद अशरफ ने *'नौसर हार'* नामक साहित्य की रचना की जो बेहद प्रसिद्ध हुआ। इस वंश के एक और कवि हसन शौक़ी ने भी दक्खिनी में रचनाएँ कीं। इनकी रचनाओं के नाम हैं *'मेजबानी नामा'* और *'फतहनामा निज़ाम शाह'*। इस वंश में भी उच्चकोटि के कवि, साहित्यकार हुए और दक्खिनी साहित्य ने उन्नति प्राप्त की।

सुल्तान कुली कुत्बशाह ने कुतुबशाही वंश की स्थापना सन् १५१८ ई. में की उन्होंने गोलकुण्डा को अपनी राजधानी बनाया। इस वंश के चतुर्थ शासक इब्राहीम कुली कुत्बशाह का पुत्र मुहम्मद कुली कुत्बशाह एक अच्छा शासक होने के साथ ही साथ दक्खिनी, फारसी और तेलुगु भाषा का अच्छा ज्ञाता एवं विद्वान था। वह उच्चकोटि का कवि भी था। *'कुल्लियात-ए-कुली कुतुबशाह'* उसकी दक्खिनी कविताओं का संकलन है। इसके अतिरिक्त और भी अच्छे-अच्छे साहित्यकार इस वंश में हुए हैं।

३.७.१ आदिलशाही वंश के प्रमुख कवि

(१) आदिलशाही वंश के प्रमुख कवियों में बीजापुर के शाह मीराँ जी 'शमसुलउश्शाक' क़ा नाम विशेष उल्लेखनीय है। दक्खिनी के प्रथम कवि हज़रत ख़्वाजा बन्दा नवाज़ गेसूदराज़ की शिष्य परंपरा में इनका महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनकी प्रसिद्ध दक्खिनी रचनाएँ हैं- *सबरस, गुलबास, जलतरंग, खुशनामा, शहादतुल हक़ीक़त* आदि।

(२) शाह मीराँ जी 'शमशुलउश्शाक' के पुत्र बुरहानुद्दीन जानम अपने पिता की तरह ही प्रसिद्ध कवि एवं साहित्यकार थे। इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं- *इरशाद नामा, कुफ्र नामा, क़लमतुल हक़ायक* आदि।

(३) इसी वंश के एक और मुहम्मद मुक़ीमी जिसका काव्य नाम मुकीमी था ने प्रसिद्ध दक्खिनी साहित्य की रचना हिजरी सन् १०५० में की जिसका नाम था *'चन्दरबदनं व महयार'*।

(४) सुल्तान मुहम्मद आदिलशाह का दरबारी कवि सनअती था। इसका मूल नाम मुहम्मद इब्राहीम खाँ था। इसने 'सनअती' नाम से काव्य रचनाएँ की है। इनकी दो दक्खिनी रचनाएँ प्राप्त हैं वे हैं– *'किस्स-ए-बेनज़ीर'* और *'गुलदस्ता'*।

(५) नुसरती बीजापुर के प्रसिद्ध कवियों में से एक है। इसका मूल नाम मुहम्मद नुसरत है और काव्य नाम 'नुसरती' है। नुसरती की प्रथम दक्खिनी रचना का नाम *'गुलशन-ए-इश्क'* है जो उसने हिजरी सन् १०८६ में लिखी इसकी एक और प्रसिद्ध कृति का नाम *'अलीनामा'* है।

३.७.२ कुतुबशाही वंश के प्रमुख कवि

(१) कुतुबशाही वंश के प्रमुख कवियों में मुल्ला वजही का नाम आदर से लिया जाता है। इनका काव्य नाम वजही वजा एवं वजही था और मूल नाम असदुल्लाह था। इनकी दक्खिनी की प्रसिद्ध दो रचनाएँ *'कुतुब मुश्तरी'* और *'सबरस'* है।

(२) इसी वंश का एक और कवि मुल्लागवासी था जो कि अपने समय में सबसे सफल कवियों में माना जाता था। इसकी प्रसिद्ध दक्खिनी रचनाएँ है– *'मैना सतपन्ती,' 'तूतीनामा', 'सैफुल मुलुक व बदीउज्जमाल'*

३.७.३ मुगलकाल के प्रमुख कवि

बहमनी शासनकाल के पाँचों राज्यों, आदिलशाही, बरीदशाही, निज़ामशाही, कुतुबशाही और अमादशाही के पतन के बाद दक्षिण भारत में मुगलों का शासनकाल स्थापित हुआ। यूँ तो आठवीं शताब्दी से ही दक्षिण भारत में मुसलमानों का आगमन हो चुका था किन्तु १२९५ ई. में अलाउद्दीन खिलजी द्वारा दक्षिण के देवगिरी पर आक्रमण के साथ ही दक्षिण में मुसलमानों का प्रवेश निरंतर बना रहा। इस काल के शासकों ने भी दक्खिनी साहित्य को विशेष रूप से बढ़ावा दिया। इस काल के कुछ शासक स्वयं साहित्य, कला, विद्या, संगीत के प्रेमी थे और उन्होंने स्वयं अच्छे कवि एवं साहित्यकारों को अपने दरबार में आश्रय प्रदान कर उनका यथोचित सत्कार किया।

(१) इसकाल का प्रमुख कवि वली दक्खिनी है। इसका मूल नाम वली मुहम्मद था। इसने अधिकतर दक्खिनी में रचनाएँ की। दक्खिनी भाषा से इसे विशेष प्रेम था जिसे इसने इस प्रकार प्रकट किया है–

चाँद के नमन मने तू खूबी के गगन मने ।
मशअल के नमन तू है इक अंजुमन मने ।।
गुलज़ार है बहार सो बेशक़ दकन मने ।
जो थे तमाशबी दकन के चमन मने ।।

इनका प्रसिद्ध काव्य संग्रह *'दीवान'* है।

(२) मुगलकाल का ही एक और प्रसिद्ध कवि काज़ी सैयद महमूद 'बहरी' है। इसका काव्य नाम 'बहरी' है। इसकी प्रमुख दक्खिनी रचनाएँ हैं- *'मन-लगन'*, *'बंगाब नामा'* और एक *'ग़ज़ल संग्रह'* है। *मन-लगन* का रचना काल हिजरी सन् ११९२ (१७०५ ई.) है।

(३) इसके अतिरिक्त ज़ईफ़ी नामक कवि भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसका वास्तविक नाम शेख दाऊद था। इसकी प्रमुख दक्खिनी रचनाएँ हैं- *'हिदायत नामा'*, *'इश्क-ए-सादिक़'*, *'नसीहत-ए-बदन'*, *'किस्सा कफन चोर'* आदि।

(४) वली वेल्लूरी जिसका वास्तविक नाम मीरवली फय्याज़ है, इसने 'वली' नाम से काव्य रचना की। इसकी प्रमुख रचनाएँ हैं- *रोज़ तुश्शेहदा*, *'रोज़तुल अनवारे*, *'रोज़तुल अकबा'*, *'दुआअे फातिमा'* और *'मसनवीस्तन व पदम'*।

(५) औरंगजेब के शासनकाल के प्रमुख कवि में सैयद मुहम्मद खाँ जिसका काव्य नाम 'इशरती' था, बेहद सम्मानित साहित्यकार एवं कवि था। इनकी प्रमुख दक्खिनी रचनाएँ- *'चित्त लगन'* और *'दीपक पतंग'* वजदी भी अपने समय का महान् साहित्यकार एवं कवि था। प्रसिद्ध विद्वान सैयद शमसुल्लाह कादरी के अनुसार इसका मूल नाम हिदायतुल्लाह खाँ था। पर डॉ. जोर, श्रीराम शर्मा, श्री हाशमी इसका मूल नाम 'वजीहिउद्दीन' बताते हैं। इसकी प्रमुख रचनाएँ हैं- *'मख्जन-ए-इश्क'*, *'पंछी बाछा'*, और *'मसनवी तुहफा आशिकाँ '*।

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य प्रसिद्ध कवियों ने भी दक्खिनी में रचनाएँ कर इसके साहित्य भंडार में अपार वृद्धि की। मुगलों के शासनकाल में दक्खिनी साहित्य खूब फला-फूला।

३.८ दक्खिनी और मुसलमानों का सम्बन्ध

दक्षिण भारत से अरबों का सम्बन्ध बहुत पुराना है। अरबों के साथ ही भारतीय व्यापारी पश्चिम देशों से व्यापार करते थे। पाँचवी शताब्दी में फारस का भारत से

व्यापार चरम सीमा ताक पहुँचा हुआ था। इनमें अधिकतर अरब नाविक ही काम करते थे। अतः अरब और भारतीयों का सम्बन्ध आपस में अच्छा था। यह स्वाभाविक बात है कि जब एक देश के लोग दूसरे देश के लोगों के साथ व्यापार करेंगे तो उनका प्रभाव एक दूसरे पर पड़ेगा। यही कारण है कि उत्तर भारत की अपेक्षा दक्षिण भारत पर अरबों का प्रभाव विशेष रहा। इस्लाम के उदय से पहले ही भारत के दक्षिणी तट पर अरबों की बस्तियाँ थीं। इनमें प्रमुख रूप से मालाबार का स्थान था। अरबों की बस्तियाँ चाउल, कल्याण और सोपारा में भी थीं। जब सातवीं शताब्दी में इस्लाम का उदय हुआ तो इसने इस दिशा में अत्यधिक सहायता की।

राष्ट्रकूटों के शासन काल (७५६ ई. से ९७३ ई.) के बीच व्यापार खूब होता था। आठवीं और नौवीं शताब्दी से ही अरब और फारस में सूफी मत का प्रचार जोरों से होने लगा था और दसवीं तथा बारहवीं शताब्दी में इसने असाधारण उन्नति कर ली थी। डॉ. मुहम्मद गौस के मतानुसार– "मलिक काफूर के दक्षिण आने से पहले और रुमी के पश्चात् दक्षिण भारत में लगभग बीस सूफियों के शिष्य धर्म प्रचार का कार्य कर रहे थे और इसकी जानकारी मलिक काफूर को थी। इसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं है कि दक्षिण में आने वाले मुस्लिम व्यापारियों के साथ ही इस्लाम धर्म के प्रचारक भी दक्षिण में आये। इन प्रचारकों ने भारत के निवासियों को अपनी ओर आकृष्ट किया और बहुत से लोगों को मुसलमान बनाया।

अरब व्यापारी लाल सागर से चलकर सिंध के मुहाने और खम्भात की खाड़ी से होते हुए मलाबार पहुँचते थे और वहाँ पड़ाव कर लंका जाया करते थे। ये लोग भी अपने धर्म का प्रचार करते थे। इसके कारण मलाबार तट पर इस्लाम का प्रभाव पड़ा और यह धर्म यहाँ के निवासियों को इतना अच्छा लगा कि यहाँ के शासक राजा क्रांगनूर ने इस्लाम धर्म को स्वीकार कर लिया। जब राजा ने ही इस धर्म को अपना लिया तो मुसलमान प्रचारकों को किसी प्रकार की समस्या नहीं रही और वे शांतिपूर्वक अपने धर्म का प्रचार करते रहे। दसवीं शताब्दी तक पूर्वी तट पर भी अरब मुसलमान आ बसे और मदुरा, त्रिपुरा (त्रिचनापल्ली) आदि में उनकी बस्तियाँ बन गयीं। तेरहवीं शताब्दी में मुसलमानों ने यहाँ की राजनीति में जगह बना ली। पांडव राजाओं के यहाँ मुसलमान ऊँचे पदों पर आसीन थे।

सिंध पर अरब शासक ७११ ई. से ही शासन कर रहे थे और इनका सम्बन्ध राष्ट्रकूटों से था। तेरहवीं शताब्दी में उत्तरी भारत से मुसलमान दक्षिण भारत आने लगे

थे। जिन मुसलमानों ने उत्तर से दक्षिण में आकर अपना निवास बनाया, वे अपने आपको 'दक्खिनी' अथवा 'मुल्की' कहते थे, एवं जो मुसलमान ईरान, ईराक और अरब से आये थे उन्हें 'आफ़ाक़ी' के नाम से सम्बोधित किया जाता था। यही 'आफ़ाक़ी लोग उच्च वर्ग से थे और इन्हीं की भाषा और वेशभूषा उच्च मानी जाती थी। वास्तव में ये लोग अपने आपको हिन्दुओं से ही नहीं बल्कि मुसलमानों से भी श्रेष्ठ समझते थे। स्वभावतः दक्खिनी मुसलमान भाषा और अध्ययन के क्षेत्र में आफ़ाक़ियों की श्रेष्ठता को स्वीकार करने पर भी छोटेपन की भावना से उत्पन्न होने वाली प्रतिक्रिया से वंचित न हो सके। बहमनी वंश के शासकों की नीति यह थी कि वे कभी आफ़ाक़ियों को बढ़ावा देते थे तो कभी दक्खिनी मुसलमानों को। आफ़ाक़ियों का संबंध विशेषकर शासकों और दरबारों तक ही सीमति था किन्तु दक्खिनी मुसलमानों का संबंध दरबार और स्थानीय लोगों से भी था। इस कारण इन्हें स्थानीय कुलीन हिन्दुओं का समर्थन भी समय-समय पर मिलता रहा। अतः दक्खिनी मुसलमान महाराष्ट्र तथा कर्नाटक की प्राचीन संस्कृति और जीवन से परिचित ही नहीं हुए उसे बहुत सीमा तक अपनाया भी। दक्खिनी और आफ़ाक़ी लोगों का संघर्ष गहरा होता गया। अब यह केवल प्रशासनिक ही नहीं रह गया था बल्कि दैनिक जीवन और संस्कृति के क्षेत्र में भी प्रवेश पा गया था।

अहमदनगर, बीजापुर और गोलकुण्डा के शासक यद्यपि अरब और ईरान की संस्कृति में बेहद रुचि रखते थे, साथ ही स्थानीय भाषाओं और रीति-रिवाजों से भी सम्बन्ध रखते थे एवं उसमें समय-समय पर सहयोग भी करते थे यद्यपि अफ़ाक़ियों को सम्मान देते थे। तत्कालीन परिस्थितियों ने दक्षिण में धर्म, संस्कृति और साहित्य के क्षेत्र में समन्वय एवं सहिष्णुता के प्रयोग का जो दायित्व उन्हें सौंपा था, उसे इन राजवंशों ने भलीभाँति निभाया।

३.९ दक्खिनी और हिन्दी का सम्बन्ध

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि दक्खिनी भाषा दक्खिनी अथवा मुल्की मुसलमानों की भाषा है जो परिस्थितिवश मिलजुलकर विकसित हुई। इस नयी भाषा की ओर दृष्टिपात करने से प्रतीत होता है कि यह उत्तर भारत की विभिन्न बोलियों को आत्मसात किये हुए है और इस पर पश्चिमी एवं पूर्वी बोलियों का प्रभाव है किन्तु पश्चिमी बोलियों का प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक है। इसमें अरबी और फारसी के शब्द बहुलता से पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त दक्षिण की भाषाओं- मराठी,

तेलुगु एवं कन्नड़ का भी प्रभाव कम नहीं है। अतः इन सब प्रभावों के कारण दक्खिनी (भाषा) भारतीय भाषाई मानचित्र पर एक नयी भाषा बन गयी।

दक्खिनी के दो रूप हैं– एक बोली का रूप और दूसरा साहित्यिक रूप। बोलचाल की दक्खिनी में स्थानीय बोलियों का प्रभाव रहा है। औरंगाबाद और देवगिरि की बोलचाल की भाषा पर मराठी का प्रभाव, बीजापुर और गुलबर्गा की दक्खिनी पर कन्नड़ का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। अतः मैसूर, मद्रास और अन्य अनेक नगरों की भाषाओं में बहुत अन्तर आ गया है। कभी-कभी तो एक स्थान का व्यक्ति दूसरे स्थान के व्यक्ति की बोली को कठिनाई से ही समझ पाता है।

डॉ. श्रीराम शर्मा ने लिखा है– "पछाँह की बोलियों से दक्खिनी का घनिष्ठ सम्बन्ध है। हिन्दी ही नहीं उर्दू के साहित्यिक परिनिष्ठित रूप के अध्ययन के लिए भी इन बोलियों का अध्ययन आवश्यक है। इसका एक कारण तो यह है कि परिनिष्ठित हिन्दी या उर्दू के अध्ययन के लिए हमारे पास आठरहवीं सदी से पहले की लिखित सामग्री बहुत कम है जबकि दक्खिनी में चौहदवीं से लेकर अठारहवीं सदी तक पाँच सौ वर्षों में लिखा हुआ समृद्ध साहित्य है। दूसरा कारण यह है कि हिन्दी से सम्बन्धित इस बोली का विकास उत्तर से हटकर दक्षिण के उस क्षेत्र में हुआ जहाँ दक्षिण भारत की दो बड़ी गौरवशाली भाषाएँ– तेलुगु और कन्नड़ बोली जाती हैं। इस बोली के विकास में गुजराती और मराठी ने भी सहायता की है। अरब, ईरान तथा मध्य एशिया के देशों से आने वाले साधकों और विचारकों के भाव-वहन करने का अवसर इस बोली को प्राप्त हुआ।"[२७] पंडित परशुराम चतुर्वेदी का कथन है कि– "दक्खिनी हिन्दी मूलतः वह कौरवी, हरियाणवी व हिन्दी बोली थी जो दिल्ली के मुस्लिम सुलतानों द्वारा की गयी दक्षिण भारत की विजय के साथ-साथ उस ओर प्रायः विक्रम की चौदहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध काल से ही पहुँचने लग गयी थी।"[२८]

प्राचीन काल से उत्तर-दक्षिण में अनेक भाषाएँ विद्यमान थीं फिर भी उनमें एक सामान्य भाषा का व्यवहार होता रहा। इतिहास साक्षी है कि सदियों से संस्कृत धार्मिक भाषा ही नहीं बल्कि संस्कृति एवं राजकाज की भाषा भी थी। आठवीं शताब्दी तक दक्षिण के शासक ताम्रपत्र अथवा शासन पत्र संस्कृत में लिखा करते थे। जैन और बौद्ध धर्मावलम्बियों ने धर्म के प्रचार के लिये प्राकृत भाषा का आश्रय लिया। इससे उत्तर भारत में प्राकृत सांस्कृतिक तथा साहित्यिक भाषा के रूप में स्वीकार की गयी और यही भाषा दक्षिण में भी अपनाई गयी अर्थात्, प्राकृत ने भी दक्षिण भारत में

संस्कृत की भाँति महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया। जब उत्तर में अपभ्रंश भाषा ने साहित्यिक एवं सांस्कृतिक स्तर को प्राप्त किया तब दक्षिण के *विद्वान* भी इसे अपनाने में पीछे नहीं रहे। इसमें उच्चकोटि के ग्रन्थों की रचनाएँ हुईं। इस प्रकार उत्तर और दक्षिण का सम्पर्क नयी भारतीय आर्य भाषाओं के विकास में भी सहायक सिद्ध हुआ। इस कड़ी को और अधिक दृढ़ करने का काम मुसलमानों ने किया। मुसलमान यों तो आठवीं-नवीं शताब्दी से ही भारत में रहने लगे थे किन्तु जब वे शासक के रूप में भारत आये तो इन्होंने इस कड़ी को दृढ़तर करने का प्रयास किया और चौदहवीं शताब्दी में ये अपने प्रयत्न में अधिक सफल हो सके।

सम्राट अलाउद्दीन खिलजी के शासन काल से लेकर निज़ामुल मुल्क आसफ़ जाह (प्रथम) तक सहस्त्रों परिवार उत्तर भारत से दक्षिण भारत में आये और उन्होंने दक्षिण को ही अपना निवास स्थान बनाया। ये परिवार केवल दिल्ली से ही संबंधित नहीं थे बल्कि उनका सम्बन्ध उत्तर भारत के विभिन्न स्थानों से था। किसी का मूल निवास स्थान अवध या किसी का बिहार तो किसी का राजस्थान और किसी का पंजाब, किन्तु इनमें दिल्ली के निवासी ही अधिक थे।

विभिन्न स्थानों से आये हुए उत्तर भारत के परिवारों की अपनी-अपनी मातृ भाषाएँ थीं, किन्तु सभी लोग दिल्ली के आस-पास बोली जाने वाली भाषाओं से भी परिचित थे। परिणामस्वरूप दिल्ली के आस-पास बोली जाने वाली भाषा दक्षिण में सांस्कृतिक भाषा बनने लगी और धीरे-धीरे ऐसे शब्दों का व्यवहार कम होने लगा जो किसी विशेष क्षेत्र से सम्बन्धित थे। उस समय तक खड़ी बोली भलीभाँति परिष्कृत नहीं हुई थी और उस पर हरियाणवी, मेवाती, शेखावती एवं ब्रज बोलियों का प्रभाव अधिक था।

आगन्तुक मुसलमानों ने खड़ी बोली के महत्व को समझा क्योंकि यह ऐसी भाषा थी जो क्षेत्रीय प्रभावों के रहते हुए भी राजस्थान से बिहार तक भली प्रकार समझी जाती थी, उसमें विचार विनमय सरलतया सम्भव था। इस कारण सामान्य जनता से सम्पर्क स्थापित करने के लिए उन्होंने खड़ी बोली को स्वीकार किया। इन लोगों ने जब खड़ी बोली को स्वीकार किया तो दक्खिनी में अरबी और फारसी के शब्दों का समावेश आरम्भ हुआ। खड़ी बोली में अरबी-फारसी के तत्सम शब्दों का प्रयोग करने में सामान्य जनता ने भी गौरव अनुभव किया। खड़ी बोली जैसे-जैसे परिष्कृत होती गयी वैसे-वैसे दक्खिनी पर भी उसका प्रभाव पड़ा, किन्तु दक्खिनी ने अपने ढाँचे में विशेष परिवर्तन नहीं किया।

दक्खिनी के विकास में मुस्लिम धर्म प्रचारकों का कम योगदान नहीं है यद्यपि इन धर्म प्रचारकों का मुख्य उद्देश्य यह था कि सहस्रों की संख्या में जो मुसलमान दक्खिन में आकर बस गये थे, उन्हें धार्मिक दृष्टि से केन्द्रीय भावधारा से पृथक न होने देना। इसी अन्तः प्रेरणा से इस्लाम के प्रचारक प्रसिद्ध सूफी साधक ख्वाजा बन्दा नवाज़ ९० वर्ष की आयु में दक्षिण में आये। इसके पश्चात् बहुत से सूफी सन्त अपने शिष्यों के साथ यहाँ आते रहे और उन्होंने औरंगाबाद, गुलबर्गा, बीजापुर तथा अन्य स्थानों को धार्मिक प्रचार का केन्द्र बनाया। इन सन्तों ने अपने विचारों को जनता तक पहुँचाने के लिए खड़ी बोली को उपयुक्त समझा और इस प्रकार दक्खिनी भाषा का साहित्य के लिए उपयोग आरम्भ हुआ। दक्खिन में दर्शन और धर्मशास्त्र की पारिभाषिक शब्दावली सन्तों के कारण ही आई।

उत्तर में नेपाली एवं उसके सर्वथा विपरीत दक्षिण में गोलकुण्डा की दक्खिनी में राजस्थानी के शब्द रूपों में कई स्थलों पर आश्चर्यजनक समानता मिलती है। दक्खिनी पर राजस्थानी के बहुवचन, पूर्वकालिक क्रिया, क्रिया के स्त्रीलिंग तथा क्रिया विशेषणों का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है।

दक्खिनी में हिन्दी बोलचाल के सभी स्वर–अ आ, इ ई, उ ऊ, एँ ए ऐ, आँ, ओ, औ विद्यमान हैं। हिन्दी बोलचाल के सभी व्यंजन भी दक्खिनी में पाये जाते हैं। इसमें अरबी–फारसी के भी कुछ अक्षर आ गये हैं जैसे– क़, ख़, ग़, ज़, फ़ आदि। उत्तर भारत की बोलचाल में जहाँ एक ही शब्द में दो मूर्धन्य ध्वनियाँ पास–पास के अक्षरों में आती हैं, वहाँ दक्खिनी में पहली के स्थान में दन्त्य ध्वनि आ जाती है। साहित्यिक खड़ी बोली की इकारान्त–ईकारान्त स्त्रीलिंग संज्ञाओं में इस अविकारी विभक्ति के बहुवचन में 'याँ' जुड़ता है उसी तरह दक्खिनी में भी। जैसे–

एक अये, अपनियाँ, एतियाँ मूरतियाँ।

बैसियाँ शाह परियाँ।

संबंध वाचक और अनिश्चय वाचक अंशों को जोड़कर बोलने का जो चलन उत्तर भारत में हैं, वह दक्खिनी में भी विद्यमान है। इनमें 'जो' का कभी–कभी 'जु' हो गया है। जैसे–जु को ई, जु कुछ, जु कुच आदि।

यद्यपि दक्खिनी ने खड़ी बोली अथवा पश्चिमी बोली से विशेष रूप विन्यास ग्रहण किया है तथापि पूर्वी बोलियों से भी संबंध बनाये रखा। दक्खिनी ने पूर्वी

बोलियों के क्रिया पदों को अपनाया। पूर्वी बोलियों में अवधी का अपना विशेष स्थान है। अवध सूफ़ी साधकों का प्रमुख केन्द्र रहा है। अतः सूफ़ी सन्तों ने अवधी भाषा में अनेक काव्यों की रचना की है। दक्षिण भारत में उत्तर भारत के बहुत से लोग आये और उनमें सूफ़ी सन्त भी थे जो अवधी भाषा से भली प्रकार परिचित थे तथा सूफ़ी सन्तों के उन ग्रन्थों से भी परिचित थे, जो अवधी में लिखे गये थे । यही कारण है कि बहुत से अवधी काव्यों का दक्खिनी में अनुवाद हुआ–मुल्ला दाऊद कृत *'चन्दायन'* का अनुवाद मुल्ला गवासी ने *'मैना सतवन्ती'* के नाम से किया। जायसी कृत *'पद्मावत'* का अनुवाद गुलाम अली ने उसी नाम से किया। इसके अतिरिक्त मंझन कृत *'मधुमालती'* का अनुवाद नुसरती ने *'गुलशन-ए-इश्क'* के नाम से किया। इसमें नाममात्र का अन्तर है अन्यथा कहानी, दृश्य एवं घटना स्थल सब एक समान है। इन रचनाओं की दक्षिण में विशेष ख्याति है।

इसके अतिरिक्त पूर्वी बोलियों का दक्खिनी पर जो प्रभाव पड़ा उसके कई कारण हैं– (१) हिन्दी के निर्गुण धारा के लगभग सभी सन्त, कवि पूर्वी क्षेत्र के थे जो वहाँ की ही बोली बोलते थे और उनकी कविताओं पर उसका प्रभाव स्वाभाविक ही है। (२) १६वीं और १७वीं शताब्दी में जौनपुर सूफ़ी सन्तों का केन्द्र था। *'मृगावती'* नामक प्रसिद्ध सूफ़ी काव्य की रचना शेख कुतुबन ने जौनपुर के शासक के आश्रय में की। जौनपुर के पतन के बाद वहाँ के बहुत से सामन्त, विद्वान और सम्भ्रान्त व्यक्ति गोलकुण्डा और बीजापुर आदि नगरों में आकर बस गये थे। ये सभी अपनी-अपनी भाषा बोलते थे, इससे उनकी रचनाओं पर उसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही है। (३) मुस्लिम शासकों की सेनाएँ किसी एक स्थल पर नहीं रहती थी, न ही उन सेनाओं में किसी क्षेत्र विशेष के व्यक्ति थे। अतः छावनियों में विभिन्न भाषाओं का एक विचित्र संगम हो जाता था।

ब्रजभाषा उत्तर भारत की बहुत समय तक सांस्कृतिक एवं साहित्यिक भाषा रही। जब उत्तर भारत से अनेक विद्वान दक्षिण आये तो उनमें बहुत से काव्य रसिक ब्रजभाषा से भी परिचित थे। अतः दक्षिण के लोग भी ब्रजभाषा के प्रभाव से वंचित न रह सके एवं दक्षिण के अनेक कवियों ने ब्रजभाषा में भी कविताएँ लिखीं। कुछ कवियों की दक्खिनी भाषा में ब्रजभाषा की प्रवृत्ति पाई जाती है। इब्राहिम शाह द्वितीय के *'नवरस नामा'* में ब्रजभाषा के शब्द ही नहीं प्रत्युतव्याकरणिक रूप में मौजूद हैं। शाह अली मुहम्मद गाँवधनी की रचना *'जवाहरुल असरार'* में ब्रजभाषा का प्रभाव

स्पष्ट दिखाई देता है। वजही की गद्य रचना *'सबरस'* में भी अनेक दोहे ब्रजभाषा के हैं। अशरफ़ कृत *'नौसर हार'* पर भी ब्रजभाषा का प्रभाव है।

प्रसिद्ध भाषाशास्त्री डॉ. धीरेन्द्र वर्मा ने अपना मत प्रकट करते हुए कहा है कि– "हिन्दवी के प्रारम्भिक कवि मुसलमान सूफी फकीर थे, जिन्होंने अपने धार्मिक विचारों के प्रचारों की दृष्टि से दक्खिनी रचनाएँ लिखीं थीं। यह साहित्य अभी देवनागरी लिपि में प्रकाशित नहीं हुआ है, यद्यपि इसकी भाषा पुरानी खड़ी बोली है"।[२९] दक्खिनी के ज्ञाता बाबूराम सक्सेना ने दक्खिनी को हिन्दी माना है– "दक्खिनी खड़ी बोली का ही पूर्वकालिक रूप है।"[३०] प्रसिद्ध भाषाविद् डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी ने दक्खिनी को हिन्दी की संज्ञा देते हुए कहा है कि– "इस साहित्य शैली का शाब्दिक, तात्विक और तथ्य विषयक ढाँचा उत्तर भारत के सन्त साहित्य जैसा ही था। इसके बाद शुद्ध हिन्दी या संस्कृत तत्सम या अर्धतत्सम ही होते थे, मामूली तौर पर विदेशी अरबी–फारसी शब्द अधिक नहीं आते थे। बाद में, केवल मुसलमान लेखकों द्वारा प्रयोग किए जाने के कारण इन विदेशी शब्दों की संख्या बढ़ती गयी, किन्तु उसका अनुपात उतना नहीं था जितना दिल्ली और लखनऊ की उर्दू में देखने को मिलता है। इससे भाषा के हिन्दीपन को कोई हानि नहीं पहुँची। इसलिए दक्खिनी साहित्य को हम असंदिग्ध रूप से शुद्ध हिन्दी साहित्य का ही अंश समझ सकते हैं।

३.१० दक्खिनी और क्षेत्रीय भाषाओं का सम्बन्ध

दक्खिनी भाषा और साहित्य पर सबसे अधिक प्रभाव मराठी का पड़ा। इसका प्रमुख कारण यह है कि मराठी आर्य कुल की भाषा है और खड़ी बोली और मराठी में कई दृष्टियों से समानता पाई जाती है। दौलताबाद, गुलबर्गा के पश्चात् जब बीजापुर में मुस्लिम राज्य की स्थापना हुई तो वहाँ के बड़े–बड़े पदों पर मराठी भाषी नियुक्त किये गये। इतना ही नहीं कई दिनों तक बीजापुर की राजभाषा मराठी ही रही। इससे दक्खिनी में मराठी भाषा के बहुत से शब्द आये और स्थायी बन गये। दूसरी बात यह है कि दक्खिनी भाषा का प्रचार–प्रसार चार–पाँच सदियों तक महाराष्ट्र अथवा उसके आस–पास के क्षेत्रों में ही हुआ है। ठीक से परखने पर कहा जा सकता है कि दक्खिनी को मराठी के साथ ही युवावस्था प्राप्त हुई। यही कारण है कि शब्दों के समावेश के साथ–साथ दक्खिनी के उच्चारण में भी मराठी का प्रभाव है। औरंगाबाद के दक्खिनी बोलने वालों के बोलने के ढंग में, स्वरों के उतार–चढ़ाव में,

महाप्राण और अल्पप्राण के उच्चारण में, वाक्य में शब्दों की स्थिति को व्यक्त करने वाली लय में मराठी का प्रभाव है।

दक्खिनी का क्षेत्र मराठी के अतिरिक्त गुजराती, तेलुगु, कन्नड़ और तमिल भाषाओं के क्षेत्रों से मिला हुआ है। अतः उनका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। सन् १६०१ ई. में मुगलों ने गुजरात पर अधिकार किया। उस समय अहमदाबाद सूफी सन्तों का प्रमुख केन्द्र था। वहाँ से बहुत से विद्वान और कुलीन व्यक्ति बीजापुर चले आये। इस प्रवास में बहुत से सूफी साधक भी आये। इससे अहमदाबाद की आध्यात्मिक उपलब्धियाँ पहले बीजापुर, फिर गोलकुण्डा को अनायास ही प्राप्त हुईं। गुजरात से आये हुए सन्तों ने बीजापुर और गोलकुन्डा की दक्खिनी में गुजराती के शब्दों का प्रयोग प्रारंभ किया और धीरे-धीरे गुजराती के शब्द आम हो गये।

शब्दों के मिश्रण के साथ-साथ दक्खिनी के उच्चारण संबंधी परिवर्तन का क्षेत्रीय भाषाओं के अनुसार होना भी स्वाभाविक था। कन्नड़ और तेलुगु का उच्चारण जिस विशेष ढंग से होता है उसी ढंग से दक्खिनी का उच्चारण भी परिवर्तित हो गया। हैदराबाद, बीजापुर, गुलबर्गा के दक्खिनी भाषियों की तुलना करने पर अन्तर स्पष्ट परिलक्षित होता है।

इन तथ्यों से स्पष्ट होता है कि दक्खिनी भाषा पर हिन्दी का प्रभाव अत्यधिक है किन्तु यह कहना भी अनुचित होगा कि दक्षिण भारत की क्षेत्रीय भाषाओं– विशेषकर मराठी, कन्नड़, तेलुगु और तमिल का प्रभाव नगण्य है। हिन्दी के साथ-साथ इन भाषाओं का भी विशेष योगदान है। भाषा जब स्वतन्त्र होती है और अन्य भाषाओं की शब्द सम्पदा को बचाने की शक्ति रखती है तो भाषा सशक्त बनती है। इस प्रकार वह किसी वर्ग विशेष और जाति विशेष की भाषा न होकर समस्त मानव समाज की भाषा होती है। यही कारण है कि दक्खिनी भाषा न किसी वर्ग विशेष से सम्बन्धित रही है और न ही किसी जाति विशेष से अपितु यह मध्ययुग में सभी वर्गों और जातियों की भाषा बनकर सामने आई। यह भाषा सुसमृद्ध इसी कारण बन सकी है कि उसने किसी विशेष भाषा से सम्बन्ध न रखकर समस्त भाषाओं से अपना सम्बन्ध जोड़ा है। यही कारण है कि कुछ विद्वान इसे गुजरी की संज्ञा से अभिहित करते हैं तो कुछ उर्दू और कुछ हिन्दी से दक्खिनी भाषा का विकास अपने आप में स्वतन्त्र है। यह खड़ी बोली के मार्ग पर चलने वाली है तथा उसकी अनुगामिनी है।

३.११ कर्नाटक के सन्दर्भ में दक्खिनी हिन्दी

यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि बीजापुर, बीदर आदि कर्नाटक के प्रदेशों ने सुल्तानों के शासनकाल में हिन्दी के अखिल भारतीय स्वरूप के निर्माण में महान योगदान दिया। यह बात भूलनी नहीं चाहिए कि जिस समय दक्षिण के उपर्युक्त क्षेत्र दक्खिनी हिन्दी में यानि खड़ी बोली में साहित्य निर्माण का कार्य कर रहे थे उस समय उत्तर में ब्रज, अवधी आदि ही साहित्य माध्यम के लिए प्रयुक्त थीं। यदि भारतेन्दु पूर्व की खड़ी बोली में रचित साहित्य का पता करेंगे तो हमें केवल अमीर खुसरो, फरीदगंज शक्कर, कबीर, मेरठ के संत गंगादास आदि गिने-चुने नाम ही उत्तर भारत में मिलेंगे, परन्तु दक्षिण भारत में गुजरात से तमिलनाडु तक कवियों, लेखकों की एक सुदीर्घ परंपरा प्राप्त होती है।

यह आश्चर्य की बात है कि खड़ी बोली का पहला आख्यानक काव्य *'मसनवी कदमराव पदमराव'* कि रचना कर्नाटक के बीदर में हुई। सन् १४२१-३५ ई. के बीच में फख्रुदीन निज़ामी (निज़ामी दकनी) द्वारा लिखित उपर्युक्त काव्य संस्कृत मूलक हिन्दी का प्राचीनतम रूप प्रस्तुत करता है। इससे यह सिद्ध होता है कि खड़ी बोली में साहित्य का निर्माण युगों पहले कर्नाटक में हुआ था।

कर्नाटक का हिन्दी के प्रति यह अनुराग आज भी अक्षुण्ण है। पूरे दक्षिण भारत में ही नहीं अपितु उत्तर भारत में भी चौदहवी-पंद्रहवीं शताब्दियों में खड़ी बोली हिन्दी में कोई एक रचना भी भाषा की दृष्टि से *'मसनवी कदमराव पदमराव'* के जैसे देखने को नहीं मिलती है। जानम का *'ईशादनाम'* भी अनूठा काव्य रत्न है। अतः हिन्दी के विकास में कन्नड़ भाषी क्षेत्र का योगदान सबसे बढ़कर है। खड़ी बोली के विकास में कर्नाटक के आगे कोई दूसरा क्षेत्र नहीं ठहरता।

संदर्भ ग्रन्थ

१. India, Ministry of Information and Broadcasting : *India 2006 : A reference annual.* p. 972
२. शरेश्चन्द्र चुलकीमठ : *कर्नाटक संस्कृति,* पृ. १३
३. India, Ministry of Information and Broadcasting : *India 2006 : A reference annual.* pp. 972-73
४. वही, पृ. १५-१६

५. शरेश्चन्द्र चुलकीमठ : *कर्नाटक संस्कृति,* पृ. ८-१२
६. के.कैम्पेगौडा : *'सामान्य भाषा विज्ञान'* (कन्नड़)। पृ. ३७८-३९५
७. वही, पृ. ४००-४०१
८. इकबाल अहमद : अमीर खुसरो की हिन्दी कविता में सूफी-साधना (लेख) शोध-पत्रिका, अंक ३ (जुलाई-सितम्बर) १९७१, पृ. ६५
९. इकबाल अहमद : *मध्यकालीन संस्कृतियों को सूफ़ी कवियों का योगदान,* पृ. ३३६
१०. वही, पृ. ३३७
११. वही, पृ. ३५९
१२. कामता प्रसाद गुरु : *हिन्दीं व्याकरण,* पृ. १३-१४
१३. बाबूराम सक्सेना : *दक्खिनी हिन्दी,* पृ. ३२-३३
१४. वही, पृ. ३३
१५. There is a good reason to believe that the Chalukyas migrated from Rajputana to the Deccan. They are connected with Gurjar tribes. *Bombay Gazetteer*, 1896 Pt.1, pp.127, 138, 463 Note 2, 467
१६. Mount Stuart Elphinstone : *The History of India*. p. 239
१७. कामता प्रसाद गुरु : *हिन्दी व्याकरण*। पृ. २२
१८. मीराँ जी शम्सुल उश्शाक- 'खुशनामा', पृ. २, हस्तलिखित प्रति सूफ़ी, सालार जंग म्यूज़ियम पुस्तकालय, हैदराबाद
१९. श्रीराम शर्मा : *वजही-'सबरस',* पृ. १०
२०. मुहम्मद सखावत मिर्ज़ा : बहरी- *'मन लगन',* पृ. २१
२१. शेख अशरफ : 'नौसर हार' पृ. ६९, क्र.सं. १२३, इदार-ए-अदबियात, उर्दू, हैदराबाद
२२. बुरहानुद्दीन जानम : *'कल्मतुल हक़ायक़',* पृ. ३, क्र.सं. १७३५, स्ट्रेट सेंट्रल लाइब्रेरी, हैदराबाद
२३. नसीरुद्दीन हाशमी : मुल्ला वजही- *'कुतुब मुश्तरी',* पृ. २९
२४. मौलवी अब्दुल हक़ : नुसरती- *'गुलशन-ए-इश्क',* पृ. १०
२५. धीरेन्द्र वर्मा : *हिन्दी भाषा का इतिहास,* पृ. ८०
२६. सुनीति कुमार चटर्जी : *भारतीय आर्य भाषा और हिन्दी,* पृ. २१२
२७. श्रीराम शर्मा : *दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास,* प्राक्कथन, पृ. ८
२८. परशुराम चतुर्वेदी : *हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास,* पृ. ३६७
२९. धीरेन्द्र वर्मा : *हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास,* पृ. ८०
३०. बाबूराम सक्सेना : *दक्खिनी हिन्दी,* पृ. ६५

●●●

अध्याय ४

कर्नाटक में हिन्दी का प्रयोग और प्रसार

४.१ कर्नाटक में हिन्दी

कर्नाटक में हिन्दी भाषा की स्थिति और उसके प्रचार-प्रसार के बारे में जानकारी हासिल करने से पहले हमें ये जानना होगा कि हिन्दी से पहले वहाँ कौन-कौन सी भाषाएँ स्थापित थीं और कैसे धीरे-धीरे हिन्दी ने अपनी स्थिति मजबूत की।

कर्नाटक में सदियों से संस्कृत के पठन-पाठन का कार्य चलता आया है। कहा जाता है कि 'चम्पू काव्य' संस्कृत साहित्य को कर्नाटक की देन है। ८वीं सदी में आदि शंकराचार्यजी ने कर्नाटक के शृंगेरी, पश्चिम में द्वारिका, उत्तर में बद्री और पूर्व में पुरी (जगन्नाथ) में चार अद्वैत-पीठों की स्थापना की। उस समय पंडितों, विद्वानों के बीच संस्कृत भाषा का प्रचलन था। माध्वाचार्य जी का जन्म उडुपि में हुआ था, इन्होंने द्वैत मत चलाया। बारहवीं सदी में विशिष्टाद्वैत मत की स्थापना श्री रामानुजाचार्य जी ने की। माना जाता है कि श्री वल्लभाचार्य जी का जन्म बेल्लारी के पास ही हुआ। कहने का तात्पर्य यह है कि इन चारों महापुरुषों की भूमि कर्नाटक रही है। इन आचार्यों की व्यावहारिक भाषा संस्कृत थी। उन दिनों कर्नाटक में संस्कृत समझी जाती थी इस बात के साक्ष्य कर्नाटक में उपलब्ध संस्कृत के शिलालेख हैं।[१]

कर्नाटक में चित्रदुर्ग जिले के सिद्धापुर में अशोक के प्राकृत-शिलालेख उपलब्ध हुए हैं। इस धर्म-भूमि में कई प्राकृत-अपभ्रंश कवि भी हुए हैं। इन प्राप्त शिलालेखों से पता चलता है कि उस समय संस्कृत के अलावा प्राकृत, पालि, अपभ्रंश आदि भाषाएँ भी बोलचाल के लिए प्रयोग की जाती थीं साथ ही इन भाषाओं में रचना भी की जाती थीं। ई.सन् ८७३ के आसपास स्वयंभू ने *'परमचरिउ'*, *'रिट्ठणेमि चरिउ'* और *'स्वयंभू छंद'* नामक तीन अपभ्रंश-ग्रन्थों की रचना की। स्वयंभू जैन थे। इनके

अलावा कई अन्य जैन कवि भी कर्नाटक में हुए। उन्होंने अपने मत-ग्रंथ महाराष्ट्री प्राकृत या जैन महाराष्ट्री और अपभ्रंश में रचे। जैनियों ने कन्नड़ में भी रचनाएँ लिखीं। कन्नड़ साहित्य की परंपरा ८वीं सदी से चली है। कर्नाटक के प्रथम कवि नृपतुंग नरेश ने *'कविराजमार्ग'* नामक लक्षण-ग्रंथ की कन्नड़ में रचना की। वे जैन थे। कन्नड़ साहित्य का प्रथम चरण "जैन युग" कहलाता है, जिसमें पंप, पोन्न व रन्न जैसे कन्नड़ के महाकवि हुए हैं। इस युग को कन्नड़ साहित्य का स्वर्णिम युग कहा जाता है। इस युग के प्रायः समस्त कवि जैन थे, साथ ही वे अपभ्रंश (या पुरानी हिन्दी) के भी विद्वान थे।

कर्नाटक की उर्वर भूमि में कई धर्मों ने प्रश्रय पाया है। सदियों से कर्नाटक धर्म-समन्वय भूमि रही है। यह सिद्धनाथों की भी भूमि रही है। गुलबर्गा के पास गाणगापुर में स्थित अद्वैत-पीठ सिद्ध अवधूतों के द्वारा प्रतिष्ठापित माना जाता है। राहुल सांस्कृत्यायन गोरखनाथ का समय ई. ८४५ मानते हैं पर इस संबंध में विद्वानों में मतभेद है। कर्नाटक के १४वीं सदी के शिव-शरण अल्लम प्रभु और गोरखनाथ के वार्तालाप की बात प्रसिद्ध है। गोरखनाथ का एक दोहा यहाँ उल्लेखनीय है :-

अंजन माँहि निरंजन भेट्या तिल मुख भेट्या तेल।
मूरति माँहि अमूरति परस्या भया निरंतरि खेल।।

(गोरखबानी : पृ. २१७)

इन सब तथ्यों के आधार पर स्वीकार करना होगा कि १२वीं सदी में कर्नाटक में मलिक काफूर के आगमन के पूर्व से ही प्राचीन खड़ीबोली हिन्दी या अपभ्रंश मिली हिन्दी का व्यवहार पर्याप्त मात्रा में होता रहा है। उस समय उसका रूप जनता की बोलचाल तक ही सीमित था। इसके पूर्ववर्ती रूप को लेकर जैन कवियों ने अपनी कृतियाँ रचीं। नाथ-सिद्ध लोगों ने भी अपनी वाणी अपभ्रंश में कही। हिन्दी के प्रसिद्ध सिद्ध कवि कण्हपा (जन्म ई. सन् ८२०) कर्नाटकी थे।[२]

आगे चलकर इस भाषा का परिवर्तित रूप दक्खिनी हिन्दी हुआ। बंदेनवाज़ और वली, दक्खिनी के प्रसिद्ध सूफी कवि हुए हैं। कबीर और गोरखनाथ जैसे हिन्दी कवियों की वाणी में राजस्थानी, पंजाबी, खड़ीबोली ब्रज आदि बोलियों के शब्द मिलते हैं। वे शब्द दक्खिनी में भी हैं। इतना ही नहीं दक्खिनी में कन्नड़, तेलुगु, मराठी के शब्द भी देखने को मिलते हैं।

कर्नाटक की हिन्दी में कन्नड़ के कई मुहावरों का अनुवाद भी उपलब्ध है। उदा. 'क्या भी नहीं' (कुछ भी नहीं), 'लड़की आको है' (लड़की आई है)। इसी मिली-जुली बोली को देखकर १९३४ में प्रेमचन्द ने दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास के पदवीदान समारोह के अभिभाषण में कहा था कि 'हिन्दी-हिन्दुस्तानी या राष्ट्रभाषा का जन्म दक्षिण में हुआ। इस दृष्टि से कर्नाटक राष्ट्रभाषा की जन्मभूमि है।

नाभादास कृत *भक्तमाल* के आधार पर मराठी-कन्नड़ *'भक्ति विजय'* की रचना हुई जिसमें कई भक्तों का उल्लेख मिलता है। इस आधार पर कर्नाटक की जनता को 'कबीर', 'तुलसी' और 'मीरा' जैसे हिन्दी सन्त भक्त कवियों का परिचय मिलता है।

वर्षों से बिहार, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और पंजाब से व्यापारी, ग्वाले और तीर्थयात्री दक्षिण में आते रहे हैं। ये लोग जहाँ जाते वहाँ अपनी भाषा को साथ ले जाते। कर्नाटक में आज भी ताँगेवाले, हमाल (कूली), कलईवाले 'पुराना कागज और खाली बोतल' का नारा लेकर गली-गली फेरी लगाने वाले, फल और अनाज के व्यापारी, लकड़ी के दलाल, शेअर मार्केट वाले ये सभी हिन्दुस्तानी बोलते हैं। कारण स्पष्ट है कि मुसलमानों के राज में दक्खिनी में राजकाज ही नहीं दैनिक व्यवहार भी चलता था।

ई. सन् १८७५ में पंजाब में आर्यसमाज की स्थापना हुई। इस समाज के प्रवर्त्तक श्री दयानन्द सरस्वती गुजराती थे। स्वामी जी ने आर्यधर्म का मूल ग्रन्थ *'सत्यार्थ प्रकाश'* हिन्दी या आर्यभाषा में लिखा, क्योंकि उनका मानना था कि इस भाषा के द्वारा आर्यधर्म के तत्त्व जनता तक पहुँचेंगे। आर्यधर्म के प्रचारक सारे देश में गये और वहाँ इस धर्म का प्रचार किया। १९२२ में मैंगलोर में श्री धर्मदेव 'विद्यावाचस्पति' आये। उन्होंने मैंगलोर के आर्यसमाज-कार्यालय में हिन्दी पढ़ाना शुरु किया। इसी तरह कोल्हापुर, गुलबर्गा, बैंगलोर और मैसूर में भी आर्यसमाज के लोग हिन्दी पढ़ाते थे।[३]

सन् १९२८ में जब महात्मा गाँधीजी ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के इन्दौर वाले अधिवेशन में राष्ट्रभाषा हिन्दी का बिगूल फूँका तब हिन्दी को एक नवचेतना मिली। यद्यपि हिन्दी तब भी लोकप्रिय रही थी, पर समूचे देश की राष्ट्रभाषा के रूप में केवल महात्मा गाँधी ने सर्वप्रथम इसकी कल्पना की। इस कल्पना को साकार रूप देने के लिए १९१८ में हिन्दी साहित्य सम्मेलन कार्यालय मद्रास में खोला गया। महात्मा जी ने अपने पुत्र देवदास गाँधी को दक्षिण में हिन्दी प्रचार के लिए भेजा। तब से दक्षिण में हिन्दी का प्रचार कार्य शुरु हुआ।

सन् १९२२ से महात्मा जी की प्रेरणा से हिन्दी प्रचार को लेकर कई नौजवान कर्नाटक में आगे बढ़े। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा (उन दिनों हिन्दी साहित्य सम्मेलन कार्यालय) की तरफ से मैंगलोर में आंध्र के एस.वी. शिवराम शर्मा और उनके बाद बिहार के देवदूत विद्यार्थी पहुँचे। बाद में राघवाचार्य को वहाँ का कार्य सौंपकर शिवराम शर्मा मद्रास चले गये और देवदूत विद्यार्थी केरल गये। जमुना प्रसाद श्रीवास्तव हुबली पहुँचे। वहाँ हिन्दी के लिए कार्यक्षेत्र तैयार कर वे १९२५ में मैसूर चले गये। बैंगलोर में योगा नरसिंहय्या, आर्यसमाज के स्वामी सत्यानन्द, सुब्बनरसिंह शास्त्री, डी.के. भारद्वाज और सिद्धनाथ पंत जैसे उत्साही कार्यकर्ताओं ने हिन्दी प्रचार क्षेत्र में बड़ी प्रशंसनीय सेवा की। धारवाड़ और गुलबर्गा में दत्तात्रेय हेरुर और बिजापुर में राम भरोसे श्रीवास्तव के बाद पराँजपे हिन्दी प्रचार के प्रथम चरण के कार्यकर्ता थे। मैसूर में मार्कंडेय राव, रंगाचार और गोविन्दराव ने हिन्दी पढ़ाने की जिम्मेदारी संभाली। मैसूर विश्वविद्यालय के गणित-शास्त्र-विभाग के लगभग सभी प्राध्यापकों ने सभा के कार्य में अपना बहुमूल्य योगदान दिया।[४]

महात्मा गाँधीजी की अध्यक्षता में सन् १९२४ में बेलगाँव में अखिल भारतीय कांग्रेस अधिवेशन का आयोजन किया गया। महात्मा गाँधीजी ने इस अधिवेशन में आदेश दिया कि अखिल भारतीय स्तर पर कार्य करने वालों को हिन्दी सीखनी ही होगी। उनके इस आदेश का लोगों पर इतना असर हुआ कि न सिर्फ कर्नाटक में अपितु पूरे भारत में हिन्दी के प्रचार-प्रसार का शँखनाद गूँज उठा। बेलगाँव के इसी अधिवेशन से ही कर्नाटक में हिन्दी के प्रचार-प्रसार को बल मिला इस अधिवेशन की सबसे बड़ी उपलब्धि रही गाँधीजी द्वारा हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा घोषित करना।[५]

भारत की राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार और प्रसार में शिक्षण तथा प्रशिक्षण में कर्नाटक सरकार एवं लोक शिक्षा विभाग तथा स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं का योगदान उल्लेखनीय है। कर्नाटक सरकार, लोक शिक्षा विभाग, विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग और स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं ने त्रिभाषा सूत्र को अपनाकर पाठशालाओं के पाठ्यक्रम में हिन्दी को उचित स्थान देने में और विभिन्न रचनात्मक कार्यों द्वारा छात्र-छात्राओं, हिन्दी लेखकों और अनुवादकों को प्रोत्साहित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनका यह कार्य सराहनीय एवं अनुकरणीय है।

हिन्दी का प्रचार-प्रसार के कार्य में कर्नाटक के महिलाओं का विशेष योगदान रहा है। उत्साही हिन्दी प्रचारकों से प्रेरणा लेकर महिलाओं ने प्रचार आंदोलन को

बढ़ावा दिया और स्वयं वे अपने घर पर ही हिन्दी वर्ग चलाया करती थीं। हिन्दी के साथ-साथ कन्नड़ का भी प्रचार कर महलिाओं ने राज्य में राष्ट्रीयता की भावना को जन्म दिया और इसका प्रचार-प्रसार भी खूब किया।

सन् १९३७ से कांग्रेस सरकार ने हिन्दी का पढ़ाई की व्यवस्था दक्षिण कन्नड़ जिले के कुछ चुने गये स्कूलों में की। बंम्बई प्रांत की कांग्रेस सरकार ने तब के उत्तर कर्नाटक अर्थात् धारवाड, कारवार, बेलगाँव और बिजापुर के जिलों के स्कूलों में हिन्दी की पढ़ाई अनिवार्य कर दी थी। उसी समय बैंगलोर के नैशनल हाईस्कूल और मैसूर के बानुमय्या हाईस्कूल में हिन्दी की पढ़ाई का शुभारंभ हुआ।

धीरे-धीरे हिन्दी अपने विकास पथ पर अग्रसर होने लगी और हिन्दी के प्रति लोगों का लगाव देखकर सन् १९४२ से स्कूली शिक्षा में हिन्दी को द्वितीय भाषा के रूप में स्थान दिया गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी को राजभाषा घोषित किया गया और १९५० से हिन्दी तृतीय भाषा के रूप में हाईस्कूलों में पढ़ाई जाने लगी। अब स्कूली शिक्षा में हिन्दी को अनिवार्य भाषा की समानता भी मिल चुकी है।

सन् १९६३ में नये पाठ्यक्रम के अनुसार कर्नाटक में प्राथमिक शाला की छठी कक्षा से हाईस्कूल की दसवीं कक्षा तक हिन्दी के अध्ययन और अध्यापन का प्रबंध हुआ और इसी वर्ष से टी.सी.एच और टी.सी.एल. नाम का प्रशिक्षण कोर्स के नियत पाठ्यक्रम में हिन्दी को भी शामिल किया गया। कर्नाटक के स्कूलों में त्रिभाषा सूत्र का कार्यक्रम जारी है। हाईस्कूल के पाठ्यक्रम में हिन्दी प्रथम, द्वितीय और तृतीय भाषा के रूप में सिखायी जा रही है और कक्षा ८ से १० तक के कक्षाओं में करीब १५ लाख विद्यार्थी हिन्दी का अध्ययन कर रहे हैं।

कॉलेजों में हिन्दी अध्ययन और अध्यापन के लिए अनेक प्रकार की सुविधाएँ प्रदान की गई हैं। सन् १९३५ में मैसूर नगर में इन्टरमिडिएट के छात्रों के लिए हिन्दी की पढ़ाई की व्यवस्था की गई। वैकल्पिक भाषा के तौर पर कॉलेजों में हिन्दी का अध्ययन १९३८ से शुरु हुआ। बी.ए. में भी १९४० से वैकल्पिक भाषा के रूप में हिन्दी को स्थान दिया गया। कर्नाटक राज्य के छः विश्वविद्यालयों (मैसूर, बैंगलोर, कर्नाटक, मैंगलोर, कुवेम्पु और गुलबर्गा) के स्नातकोत्तर विभागों में हिन्दी से एम.ए करने की सुविधा है।

सन् १९३७ से सरकार की ओर से प्राईमरी की प्रथम भाषा हिन्दी और अनिवार्य हिन्दी और हाईस्कूल की प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय भाषा हिन्दी के लिए

पाठ्य पुस्तकों का निर्माण किया गया। हिन्दी माध्यम से अध्ययन करने वाले छात्रों के लिए गणित, भूगोल, इतिहास, सामान्य विज्ञान जैसी पुस्तकों को हिन्दी में तैयार किया गया। इतना ही नहीं हर साल उन अहिन्दी भाषा-भाषियों को भारत सरकार की ओर से नियमानुसार छात्रवृत्तियाँ भी प्रदान की जाती हैं जिन्होंने पी.यू.सी.; बी.ए. और एम.ए. में हिन्दी का अध्ययन कर रहे हैं।

हिन्दी के अध्ययन और अध्यापन की प्रगति के सम्बन्ध में सरकार को सलाह देने के लिए १९५२ में "हिन्दी बोर्ड ऑफ स्टड़ीज की स्थापना की गई। (अब यह बोर्ड अस्तित्व में नहीं है) इस समिति की सलाहों के आधार पर सन् १९५५ में मैसूर सरकार ने लोक शिक्षा विभाग में हिन्दी अनुभाग को शुरु किया। सन् १९६० में राजस्तरीय हिन्दी अधिकारी के स्थान को मंजूरी दी गई। जुलाई १९८७ से इसे वरिष्ठ सहायक निदेशक का स्थान दिया गया। सर्वप्रथम जे. भगवंतराव ने यह कार्यभार संभाला था। पंद्रह वर्ष तक वे इस पद पर बने रहे फिर उनकी पद्दोन्नति के बाद १९७८-७९ तक जी. चन्नवीरस्वामी, जो कि संस्कृत विभाग के उपनिदेशक थे, अस्थाई तौर पर हिन्दी विभाग का काम संभालते रहे। स्थानांतरित होकर आये वेंकटराव १९७९- १९८२ जुलाई तक हिन्दी विभाग के सहायक निदेशक थे। तत्पश्चात् एन. रामय्या ने पदोन्नति पाकर इस पद को संभाला। एन. रामय्या ने इस पद पर रहते हुए कई महत्त्वपूर्ण कार्य किये। उन्होंने हाईस्कूल के अन्य विषयों के अध्यापकों को जो सरकारी सुविधाएँ प्राप्त थीं उसे भारतीय भाषाओं के अध्यापकों को भी दिलाने का कार्य किया। उन्होंने शिक्षक-प्रशिक्षण की योजना तथा सरकार से इसकी स्वीकृति प्राप्त करना, निःशुल्क हिन्दी वर्ग चलाने वाले हिन्दी विद्यालयों के अध्यापकों के आंशिक वेतन में वृद्धि कराने में, हिन्दी प्रचार-प्रसार में लगी हुई स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं के विकास में अपना बहुमूल्य समय और योगदान दिया है। १९८९ मई महीने में वे इस पद से सेवानिवृत हुए। अब इस पद को शेख मुस्तफा संभाल रहे हैं।

सन् १९७९ से विभिन्न स्वैच्छिक हिन्दी विद्यालयों के लाभ के लिए अनुदान संहिता (Grant in aid Code) सरकार की तरफ से जारी की गई। इस सुविधा का फायदा उठाकर राज्य के करीब सौ हिन्दी विद्यालय निःशुल्क हिन्दी वर्ग चला रहे हैं। किसी विद्यालय से अनुमति पाकर जितने वर्ग चलाए जाएंगे, उतने अध्यापकों को अनुदान दिया जाएगा।

कर्नाटक सरकार से अनुदान प्राप्त सौ हिन्दी विद्यालयों के अलावा राज्य में केन्द्र सरकार से सीधे अनुदान पाकर निःशुल्क हिन्दी वर्ग चलाने वाले पच्चीस हिन्दी विद्यालय भी हैं। राज्य की चार स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाएँ, केन्द्र संस्थाएँ केन्द्र सरकार से अनुदान पाकर करीब ८०० से ज्यादा निःशुल्क हिन्दी वर्ग चलाकर हिन्दी प्रचार कार्य कर रही हैं। राज्य सरकार से अनुदान प्राप्त हिन्दी विद्यालयों का निरीक्षण करने के लिए राज्य सरकार ने राज्य के चारों शिक्षा विभागों में हिन्दी विषय परिवीक्षकों की नियुक्ति की है। इनकी रिपोर्ट के आधार पर विभागीय सहनिदेशक अनुदान देने की सिफारिश करेंगे। इस पर लोक शिक्षा विभाग का हिन्दी कार्यालय अनुदान की अनुमति प्रदान करेगा।

लोक शिक्षा विभाग के हिन्दी अनुभाग ने हिन्दी प्रचार-प्रसार के लिए जो योजना तैयार की है उसे प्रोत्साहन देने के लिए राज्य सरकार १९८२ के वित्तीय वर्ष से लाखों रुपयों की रकम प्रदान करती आ रही है। तृतीय भाषा हिन्दी का अध्ययन करने वाले हाईस्कूल के विद्यार्थियों के लिए पहले जिला स्तर पर फिर राज्य स्तर पर हिन्दी में विभिन्न प्रतियोगिताएँ चलाईं जाती है, विजेता विद्यार्थियों को जिला केन्द्रों में फिर राज्य स्तर पर बैंगलोर में नकद पुरस्कार दिये जाते हैं।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय से स्वीकृत "हिन्दी विद्वान" नाम की चार वर्षों की लंबी अवधि का कोर्स १९५५ में मैसूर में आरंभ हुआ जो आज भी सुचारु रूप से चल रहा है।

हाईस्कूल हिन्दी अध्यापकों को प्रशिक्षित करने के उद्देश्य से हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालयों को भारत सरकार के द्वारा स्वीकृत योजना के अनुसार शत-प्रतिशत अनुदान से १९५६ में मैसूर और गुलबर्गा में और १९६३ में बागलकोट में हिन्दी शिक्षक महाविद्यालय आरंभ किये गये। किसी कारणवश १९८०-८१ में इन कॉलेजों को बन्द कर दिया गया।

सन् १९८३-८४ के वित्तीय वर्ष से भारत सरकार से शत-प्रतिशत आर्थिक सहायता प्राप्त कर सरकारी हिन्दी शिक्षक प्रशिक्षण कॉलेज फिर से मैसूर में आरंभ हुआ। इसमें उत्तीर्ण होने वाले छात्रों को जो डिग्री दी जाती है वह बी.एड. के समकक्ष है। यह कोर्स आगरा के केन्द्रीय हिन्दी संस्थान से सम्बद्ध है।

सरकार ने सन् १९८४ से बिना आर्थिक सहयाता के हिन्दी शिक्षक प्रशिक्षण कॉलेज को राज्य में प्रारम्भ करने की अनुमति दी है। इसका लाभ उठाकर विभिन्न

स्वैच्छिक संस्थाएँ राज्य में १७ कॉलेज चला रही हैं। यह कोर्स बी.एड. के बराबर है। इस कोर्स में संबंधित पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तक आदि को राज्य सरकार ने नवीकरण के साथ अनुमोदित किया है। इन कॉलेजों में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों की वार्षिक परीक्षा राज्य सरकार चलाती है। इसके अलावा दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की ओर से हिन्दी प्रशिक्षण के १२ कॉलेज चल रहे हैं। इनकी परीक्षा दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा खुद चला रही है। यह कोर्स भी बी.एड. के बराबर है।

आगरा का केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, हैदराबाद केन्द्र के द्वारा जो एक महीने का अल्पावधि प्रशिक्षण कार्यक्रम (ओरियन्टेशन कोर्स) चलाता है उससे कर्नाटक के हाईस्कूलों के बहुत से हिन्दी अध्यापक लाभान्वित होते हैं। सन् १९८८-८९ के वित्तीय वर्ष से भारत सरकार की आर्थिक सहायता से मैसूर नगर में आगरा के हिन्दी संस्थान ने अपना एक ओरियेंटेशन कोर्स खोला है जिसके द्वारा राज्य में समय-समय पर सफलतापूर्वक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। संस्थान ने अपने पत्राचार पाठ्यक्रम के द्वारा पारंगत प्रशिक्षण की उपाधि पाने के लिए कर्नाटक के हिन्दी अध्यापकों को प्रवेश पाने का मौका देकर प्रशिक्षण की सुविधा को बढ़ा दिया है। इससे अधिक से अधिक हिन्दी अध्यापक इसका लाभ उठा सकते हैं।

कर्नाटक राज्य में चार शैक्षिक विभाग हैं। बैंगलोर, बेलगम, मैसूर और गुलबर्गा विभाग। इन चारों विभागों के सहनिदेशालयों में हिन्दी विषय परिवीक्षक की नियुक्ति की गई है। कमीशन ऑफिस में हिन्दी विभाग के वरिष्ठ सहायक निदेशक हैं। वे कर्नाटक में हिन्दी की प्रगति एवं अनुदान संबंधी नीति पर सरकार को सलाह देते रहते हैं।

बैंगलोर में एक हिन्दी माध्यम की जूनियर कॉलेज है। हिन्दी बालक शिक्षा समिति की ओर से बैंगलोर छावनी में जैन बंधुओं से यह जूनियर कॉलेज प्रारंभ हुआ। कर्नाटक में हिन्दी माध्यम की प्राथमिक शालाएँ २० से अधिक हैं। हिन्दी माध्यम की हाईस्कूल ५ हैं।

सन् १९८३ से चार साल तक कर्नाटक के निवासी अहिन्दी भाषा-भाषी हिन्दी लेखकों के मूल हिन्दी ग्रन्थों पर तीन पुरस्कार, हिन्दी से कन्नड़ में और कन्नड़ से हिन्दी में अनूदित ग्रंथों को भी तीन-तीन पुरस्कार सरकार की ओर से दिये गये।

प्रथम पुरस्कार रु.१०००/- का था, द्वितीय पुरस्कार रु. ९००/- का तृतीय पुरस्कार रु. ८००/- का था। अब यह योजना बन्द है।

सन् १९८३-८४ के वित्तीय वर्ष से एक महत्वपूर्ण नयी योजना जारी की गयी। जिसके अनुसार २५-३० साल से हिन्दी की सेवा में लगे रहे हाईस्कूल के (हर जिले से एक-एक अध्यापक) कुल २१ हिन्दी अध्यापकों को सम्मानित किया जा रहा है। हर साल यह कार्यक्रम संपन्न हो रहा है। आज तक १५० वरिष्ठ हिन्दी अध्यापकों को सम्मानित किया जा चुका है। इस प्रकार राज्य सरकार की ओर से हिन्दी का प्रचार-प्रसार हो रहा है।

इस समय कर्नाटक में चार स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाएँ हिन्दी के प्रचार कार्य में लगी हैं- (१) मैसूर हिन्दी प्रचार-परिषद, बेंगलूर (२) दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की शाखा,धारवाड़ (३) कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति, बेंगलूर (४) कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति, बेंगलूर। ये संस्थाएँ केन्द्र सरकार से अनुदान प्राप्त कर लगभग ८०० निःशुल्क हिन्दी वर्ग चला रही हैं। और लगभग तीन लाख विद्यार्थी इन संस्थाओं की विभिन्न परीक्षाओं में प्रतिवर्ष उत्तीर्ण हो रहे हैं। इन संस्थाओं की उपाधि परीक्षाओं को बी.ए. के समकक्ष माना गया है।[६] इन संस्थाओं के कार्यकलापों से सम्बन्धित जानकारी आगे दी गयी है।

४.२ हिन्दी से संबंधित कर्नाटक सरकार के नियम

स्वतंत्रता के बाद से सरकारी क्षेत्रों में हिन्दी के कार्यों में काफी प्रगति हुई है। स्वतंत्रता के बाद दक्षिण भारत में सर्वप्रथम कर्नाटक राज्य के हाईस्कूलों में हिन्दी की पढ़ाई अनिवार्य कर दी गयी। निदान मिडिल स्कूलों के अंतिम दो वर्गों में भी हिन्दी को (अनिवार्य विषय के तौर पर) पढ़ाने का प्राविधान कर दिया गया। साथ ही हिन्दी विद्वान कोर्स और हिन्दी शिक्षक कोर्स को भी आयोजित किया गया। हिन्दी शिक्षक पास यूनिवर्सिटी ग्रेजुएट अध्यापकों को ट्रेन्ड ग्रेजुएट टीचर लोगों को दातव्य वेतन-श्रेणी मंजूर की गयी है। (GO. No. Ed., 102 S.L.B. 77/27-3-82) आजकल हिन्दी विद्वान कोर्स को बंद कर दिया गया है। कर्नाटक की चारों प्रधान परीक्षा चालक स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं की तरफ से हिन्दी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय चल रहे हैं। १९९७-९८ से इस कोर्स में प्रवेश के लिए पी.यू.सी. परीक्षा में उत्तीर्ण अनिवार्य कर दी गयी है।

सन् १९४५ के बाद से कर्नाटक के लगभग सभी कला, वाणिज्य और संगीत महाविद्यालयों में हिन्दी के अध्यापन का प्राविधान किया गया। आज २६ गवर्नमेंट कॉलेजों और २६५ प्राइवेट कॉलेजों में हिन्दी-अध्यापन का प्राविधान है। इन कॉलेजों के प्री-युनिवर्सिटी और डिग्री कोर्स में १९८९-९० में कुल २५,७०० हिन्दी के छात्र थे।

सरकार के शिक्षा-विभाग के आदेश सं. हिन्दी-१-इतर-२ : ७९-८०/१७-९-१९७९ के अनुसार स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं द्वारा चालित हिन्दी। वर्गों को कर्नाटक के किसी स्कूल-भवन में (बिना किराया दिये) स्कूली समय से परे सार्वजनिक लोगों की सुविधानुसार चलाने की अनुमति कर्नाटक राज्य सरकार द्वारा प्राप्त है। स्कूलों के हिन्दी अध्यापक ही प्रायः इन वर्गों में हिन्दी पढ़ाया करते हैं। हिन्दी प्रचार-प्रसार में इससे बड़ी मदद मिली है। स्कूली अध्यापकों को इन वर्गों को चलाने की अनुमति बाकायदा सरकार द्वारा मिल गयी है। १९७९-८० से हिन्दी ग्रैंट-इन-एइड कोड सं. ई. डी.पी.एच. एन. ७६/२६-७-७९ चालू कर दिया गया है। राज्य की कई हिन्दी संस्थाएँ इससे लाभान्वित हुई हैं। इससे हिन्दी अध्यापन के केन्द्रों एवं विद्यालयों की संख्या में काफ़ी वृद्धि हुई है।

४-१-७९ के दिन मैसूर रियासत हिन्दी प्रचार समिति के द्वारा आयोजित पदवीदान समारोह के अवसर पर अभिभाषण करते हुए कर्नाटक के राज्यपाल महामहिम माननीय श्री गोविन्द नारायण जी ने बताया कि "केवल सरकारी प्रयत्न से ध्येय पूर्ण रूप से सफल नहीं होगा। इस महत्त्वपूर्ण कार्य में हमारी स्वयंसेवक संस्थाएँ जो हिन्दी के प्रचार-प्रसार कार्य में लगी हुई हैं, उनके मुख्य स्थान पर मैं जोर देना चाहूँगा।" इससे स्पष्ट है कि सरकारी क्षेत्र में हिन्दी कार्य के विस्तार के बावजूद सार्वजनिक हिन्दी संस्थाओं की आवश्यकता पूर्ववत् बनी रही है और बनी रहेगी।

कर्नाटक सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा १९८०-८१ से राज्य में प्रकाशित कन्नड़ भाषियों की मौलिक हिन्दी कृतियों तथा कन्नड़ से हिन्दी में और हिन्दी से कन्नड़ में अनूदित रचनाओं पर पुरस्कार देने का आयोजन जारी किया गया है। इससे कर्नाटक के लोगों को हिन्दी के सृजनात्मक साहित्य की रचना हेतु प्रोत्साह प्राप्त हुआ है। हिन्दी कन्नड़ के आदान-प्रदान कार्य में भी प्रेरणादायक प्रोत्साह प्राप्त हुआ है।

प्रशासनिक आदेश सं. ई.डी.४११ एस.एल.बी.८४ बैंगलोर १७-६-८२ और आदेश सं. ई.डी.३१५ डी.पी.आई ७५/२२-५-७९ अनुसार कर्नाटक के प्रशासकीय अनुशास के अन्तर्गत सरकारी शिक्षण-संस्थाओं के भाषा टीचर और अन्य विषय पढ़ाने वाले टीचर लोगों के स्थान-मान, वेतन-श्रेणी और प्रमोशन एवं पदोन्नति की सुविधाओं में समानता लायी गयी है। अर्थात् कोई भी हिन्दी टीचर अपने गवर्नमेंट या प्राइवेट स्कूल का हेडमास्टर तक बन सकेगा। भाषाई पंड़ितों के स्थान एवं स्तर को अन्य अध्यापकों के स्थान एवं स्तर के समकक्ष कर दिया गया है। इसके अलावा सरकार ने हिन्दी पर्यवेक्षक (Hindi Subject Inspectors) नियुक्त किये हैं। शिक्षा विभाग के मुख्यालय में एक हिन्दी विभाग खोलकर उसके लिए एक राजपित्रत अधिकारी (Gazeted Officer) को विभागाध्यक्ष (Hindi Officer) नियुक्त किया गया है।

पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत राज्यीय स्कूलों के हिन्दी अध्यापकों की संख्या में निरंतर (उत्तरोत्तर) वृद्धि की जा रही है। साथ ही जो भी अतिरिक्त खर्च आयेगा उसकी मद में केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रथम पाँच वर्ष तक १००% ग्रैंट मिलेगा। उसके उपरान्त राज्य उस व्यय के लिए अपने बजट में प्राविधान करेगा। इतना ही नहीं, पंचवार्षिक योजनाओं के अन्तर्गत हिन्दी के प्रोत्साहन हेतु केंद्रीय सरकार से प्राप्त अनुदान से स्कूलों के छात्रों के लिए हिन्दी वाद-विवाद प्रतियोगिता, कंठ-पाठ-प्रतियोगिता आदि चलाकर पुरस्कार प्रदान किए जाते हैं। समय-समय पर हिन्दी अध्यापकों की विचार-गोष्ठियों की आयोजन की जाती हैं जिनमें हिन्दी शिक्षा के स्तर में वृद्धि करने के उद्देश्य से तत्संबधी समस्याओं पर परस्पर विचार-विनिमय किया जाता है।

इन बातों से यह तो स्पष्ट है कि कर्नाटक सरकार का रूख हिन्दी अध्यापन एवं हिन्दी प्रचार-प्रसार के प्रति अत्यन्त सहायक एवं प्रोत्साहवर्द्धक है।[७] राज्य सरकार ने छठवीं कक्षा में अब हिन्दी विषय को पढ़ाना अनिवार्य कर दिया है।

४.३ कर्नाटक में हिन्दी प्रचार संस्थाएँ

स्वतंत्रता से पूर्व हिन्दी प्रचार को केवल जनता की शक्ति और सहानुभूति प्राप्त थी। उस समय सरकार की ओर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए किसी भी तरह की आर्थिक सहायता नहीं मिलती थी। लेकिन धीरे-धीरे हिन्दी के प्रति लोगों के लगाव और उसे एक प्रमुख भाषा के रूप में समर्थन देने उसे राष्ट्र की भाषा बनाने में

लोगों के जोश और योगदान को देखते हुए सरकार ने भी स्वतंत्रता के बाद से इन संस्थाओं को सहयोग देना शुरु किया।

१९४७ के बाद स्कूल, कॉलेज, यूनिवर्सिटी एवं सरकारी क्षेत्र में कई एजेन्सियाँ हिन्दी अध्यापन कार्य करने लगीं। स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं के त्याग और सेवा-सुश्रुषा भाव से प्रभावित होकर जल्द ही हिन्दी को राजभाषा घोषित किया गया। स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं का अपना कार्य-क्षेत्र सरकारी 'राजभाषा' कार्यक्षेत्र से अलग अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ है। संस्था संघ का मुख्य कार्यालय दिल्ली में स्थित है। श्री बाबू गंगाशरण सिंह इस संस्था के संस्थापक अध्यक्ष रहे। १९८८ में उनके निधन के बाद श्री रामलाल पारीख जी (गुजरात विद्यापीठ के कुलपति) इस संस्थान के अध्यक्ष हुए और इस समय श्रीमति बी.एस. शांताबाई (कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति, बैंगलोर की सचिव) इसकी सचिव हैं।[८]

अब इन स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं का अपना एक अलग फेडरेशन बना है। जो है 'अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ' जिसकी २२ सदस्य संस्थाएँ हिन्दी परीक्षाएँ चलाती आई हैं। इन संस्थाओं की परीक्षाओं का अखिल भारतीय स्तर पर मानकीकरण हुआ है। स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा चलायी जा रही उच्चस्तर की तीन हिन्दी परीक्षाओं को केवल हिन्दी भाषा ज्ञान की दृष्टि से मैट्रिक, इंटर और बी.ए. (हिन्दी) के समकक्ष मान्यता केंद्रीय तथा राज्य सरकारों के द्वारा प्राप्त है। स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं को केन्द्रीय सरकार वित्तीय सहायता (अनुदान) भी अब प्रदान कर रही हैं।[९]

कर्नाटक के बेलगाँव में सन् १९२४ में महात्मा गाँधीजी के सुयोग से और उनकी अध्यक्षता में कांग्रेस अधिवेशन संपन्न हुआ। इस अधिवेशन में गाँधीजी ने हिन्दी प्रचार का पांचजन्य फूँका। कर्नाटक के कोने-कोने में यह शंखनाद गूँज उठा। इससे पूरे कर्नाटक में हिन्दी प्रचार में एक नई चेतना आयी और एक नये युग की शुरुआत हुई। यह युग गाँधी-हिन्दी युग कहलाया।[१०]

गाँधीजी की राष्ट्रभाषा हिन्दी संबंधी विचारधारा से प्रभावित होकर कर्नाटक के हिन्दी प्रेमी समर्पण भाव से हिन्दी प्रचार कार्य में लग गए। इस कार्य को विस्तृत रूप देने और इसमें गति लाने के उद्देश्य से कर्नाटक में कुछ स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं की स्थापना की गई। इन स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं के बारे में जानकारी निम्न है:-

४.३.१ मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद्, बेंगलूर

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के अध्यक्ष महात्मा गाँधीजी के निर्देशानुसार १९४०-१९४५ के बीच में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा का नाम बदलकर दक्षिण भारत हिन्दुस्तानी प्रचार सभा कर दिया गया। ये सभाएँ जो परीक्षाएँ आयोजित करती थीं उनके नियम के अनुसार परीक्षाएँ देने वालों का देवनागरी और उर्दू लिपि दोनों का ज्ञान होना आवश्यक था। पर मद्रास की भाषा-नीति हिन्दुस्तानी की ओर अधिक प्रवृत्त थी। मद्रास सभा द्वारा हिन्दुस्तानी और उर्दू लिपि के प्रचार का कुछ लोगों ने कड़ा विरोध जताया। इसका कारण यह बताया गया कि संस्कृत भूयिनिष्ठा हिन्दी भारतीय परंपरागत संस्कृति की अभिव्यक्ति में जैसी सक्षम है वैसी हिन्दुस्तानी नहीं हो सकती। इन दोनों लिपियों के विरोध को दूर कर देवनागरी लिपि के द्वारा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से पुराने मैसूर राज्य के कुछ हिन्दी प्रेमियों या समर्थकों ने और प्रचारक लोगों ने सन् १९४३ में मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद की बैंगलोर में स्थापना की। साथ ही ९ जनवरी १९४५ को इस परिषद का मैंसूर राज्य सरकार में पंजीकरण कराया गया।

इस परिषद के सर्वप्रथम अध्यक्ष डॉ. द.कृ. भारद्वाज थे। भारद्वाज के निधन के बाद क्रमशः इस परिषद् के अध्यक्ष हुए- पी.वी. नरसिंहराव, रामकृष्णराव और उसके बाद नागप्पा आल्वा। परिषद् के प्रधानमंत्री या सचिव क्रमशः सर्वप्रथम योगानरसिंहय्या, रामकृष्ण राव, के.बी. मानप्पा, वीरप्पा थे, वर्तमान में रामसंजीवय्या जी हैं।[११]

डॉ. बी. रामसंजीवय्या की अद्भुत कार्यक्षमता, कार्यकुशलता और कार्यतत्परता, साधारण सभा, कार्यकारिणी समिति के निष्ठावान सदस्यों, प्रामणिक प्रचारक बन्धुओं और कर्तव्यनिष्ठ कर्मचारियों के आपसी सहयोग से परिषद् की सर्वांगीण प्रगति में चार-चाँद लग गए हैं। १९७३ में बी. रामसंजीवय्या के सचिव बनने के बाद से सबके सहयोग से और अपनी कार्यक्षमता, दूरदर्शिता, निस्वार्थ सेवा, समर्पण भाव और अथक प्रिश्रम से परिषद् को 'शून्य' से 'शिखर' तक एक बृहत संस्था बनाने में संजीवय्या सफल हुए हैं।

परिषद् के शून्य से शिखर तक का सफर कैसे तय हुआ इसकी संक्षिप्त जानकारी इस प्रकार है:- डॉ. बी. रामसंजीवय्या के परिषद् के प्रधान सचिव बनने के पूर्व परिषद का कार्यालय बैंगलोर के शंकरपुरम में एक जर्जित पुराने मकान में

था। परिषद की आर्थिक स्थिति बड़ी दयनीय थी। कर्मचारियों को मासिक वेतन देने के लिए परिषद् के पास पैसे नहीं थे। परिषद् जिस मकान से अपना काम चला रही थी उसके मकान मालिक को कई महीनों का किराया नहीं दिया गया था। प्रचारक कुछ सौ ही थे और परीक्षार्थी कुछ हज़ार ही थे। उस समय परिषद् की गतिविधियाँ नहीं के बराबर थीं। केवल हिन्दी परीक्षाएँ संपन्न होती थीं। निष्ठावान कार्यकर्त्ताओं का अभाव था।

पर बहुत कुछ कमियाँ होते हुए भी परिषद् के कुछ निष्ठावान लोगों ने हार नहीं मानी थी। क्योंकि जहाँ चाह होती है वहाँ राहें अपने-आप दिखने लगती हैं और कुछ पाने का लक्ष्य अपनी मंज़िल तय कर ही लेता है। और ऐसा ही इस संस्था के साथ हुआ।

परिषद् के पास परिषद् को एक सफल स्वैच्छिक संस्था और मान्यता प्राप्त संस्था बनाने का उद्देश्य था और इस उद्देश्य को अपने लक्ष्य तक पहुँचाने का श्रेय बहुत हद तक डॉ. बी. रामसंजीवय्या जी को जाता है।

डॉ. बी. रामसंजीवय्या सबके सहयोग से परिषद् की आर्थिक स्थिति सुधारने में सफल हुए। सबसे पहले उन्होंने बैंगलोर के राजाजी नगर में परिषद् के लिए तीन मंजिला एक नया भवन तैयार करवाया। धीरे-धीरे प्रचारकों की संख्या में भी वृद्धि होने लगी। प्रचारकों की संख्या आज लगभग ८ हज़ार से अधिक है। हर सत्र में परीक्षार्थियों की संख्या लगभग ६० हज़ार से अधिक है। आज मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् एक प्रतिष्ठित संस्था बन गई है और उनकी गतिविधियाँ भी बढ़ती जा रही है। परिषद् की गतिविधियों की रूपरेखा इस प्रकार है[१२]:-

(i) हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए परिषद् की ओर से निष्ठावान कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की जाती है।

(ii) प्रामाणिक हिन्दी प्रचारकों को उनकी सही माँग के अनुसार भौतिक तथा आर्थिक सुविधाएँ समय-समय पर प्रदान की जाती हैं।

(iii) हिन्दी के लिए समर्पित सेवियों और प्रचारकों को उनके निस्वार्थ सेवा के लिए दीक्षांत समारोह के अवसर पर रजतपदक, स्वर्णपदक और नकद पुरस्कार प्रदान कर उन्हें सम्मानित किया जाता है।

(iv) हर सत्र में हिन्दी और कन्नड़ की परीक्षाओं में सबसे अधिक अंक पाने वाले छात्र-छात्राओं को दीक्षांत समारोह के अवसर पर नकद पुरस्कार देकर सम्मानित किया जाता है।

(v) हिन्दी और कन्नड़ परीक्षाओं में रैंक प्राप्त छात्र-छात्राओं को नकद पुरस्कार और स्वर्ण पदक देकर सम्मानित किया जाता है।

(vi) हिन्दी और कन्नड़ के शीर्ष साहित्यकारों का हर साल सम्मान किया जाता है।

(vii) हिन्दी से कन्नड़ और कन्नड़ से हिन्दी में अनुवाद की गईं पुस्तकों को प्रकाशित किया जाता है। और अनुवादकों का सम्मान भी किया जाता है।

(viii) हिन्दी और कन्नड़ की उत्तम कृतियों को प्रकाशित किया जाता है।

(ix) हिन्दी, कन्नड़ और अंग्रेजी त्रिभाषा शब्द कोश का निर्माण कार्य जारी है।

(x) परिषद् की ओर से विभिन्न प्रकार की पाठ्यपुस्तकों की रचना तैयार कर उन्हें प्रकाशित किया जाता है।

(xi) कर्नाटक भर में निःशुक्ल हिन्दी वर्ग लगभग ८०० हिन्दी केन्द्रों में चलाएँ जा रहे हैं।

(xii) तुमकूर जिले के मधुगिरि में अनुसूचित जातियों और जनजतियों के छात्र-छात्राओं के लिए एक हिन्दी महाविद्यालय चलाया जा रहा है।

(xiii) केंद्र और राज्य सरकार से मान्यता प्राप्त हिन्दी परीक्षाएँ साल में दो बार आयोजित की जा रही है:-

१. हिन्दी परिचय		प्रारंभिक परीक्षाएँ
२. हिन्दी प्रथमा		प्रारंभिक परीक्षाएँ
३. हिन्दी मध्यमा		प्रारंभिक परीक्षाएँ
४. हिन्दी प्रवेश	-	मैट्रिक स्तरीय
५. हिन्दी उत्तमा	-	इंटर स्तरीय
६. हिन्दी रत्न	-	बी.ए. स्तरीय

ये परीक्षाएँ कर्नाटक राज्य के लगभग ८०० से अधिक परीक्षा केंद्रों में आयोजित की जा रही हैं।

(xiv) परिषद् की ओर से कन्नड़ की परीक्षाएँ भी साल में दो बार आयोजित की जा रही हैं

१. कन्नड़ प्रथमा
२. कन्नड़ मध्यमा } प्रारंभिक परीक्षाएँ
३. कन्नड़ प्रवेश
४. कन्नड़ उत्तमा
५. कन्नड़ रत्न उच्च स्तरीय

(xv) विभिन्न जिलों में हिन्दी भवन निर्माण का कार्य जारी है, जिससे कि जिला स्तर पर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के कार्य को तीव्र गति से संपन्न कराने में सुविधा हो जाती है।

(xvi) हिन्दी प्रचारकों को हिन्दी अध्यापन की नयी विधियों से अवगत कराने के लिए समय-समय पर हिन्दी नवीकरण कार्यक्रम आयोजित किए जा रहे हैं।

(xvii) हिन्दी प्रचारकों और परीक्षार्थियों के लाभ के लिए परिषद् की मासिक मुख्य पत्रिका प्रकाशित की जाती है, जिसमें विविध विषयों पर प्रतिष्ठित विद्वानों द्वारा लिखे स्तरीय लेख प्रकट किए जाते हैं, साथ ही परीक्षा संबंधी और अन्य आवश्यक सूचनाएँ भी दी जाती हैं।

(xviii) हिन्दी शिक्षक को बोधप्रद और फलप्रद बनाने अर्थात् हिन्दी शिक्षण के बिना, शिक्षण बोधप्रद और फलप्रद नहीं होगा, इसका ध्यान रखते हुए कर्नाटक के निम्न केंद्रों में हाईस्कूल के हिन्दी अध्यापकों के लिए सात हिन्दी प्रशिक्षण कॉलेज चलाए जा रहे हैं।

(१) बैंगलोर, (२) अरसीकेरे, (३) शिमोग्गा, (४) चित्रदुर्ग, (५) हुबली, (६) मधुगिरि, (७) शिड्लघट्टा

(xix) परिषद् में एक बृहत् ग्रंथालय है जिसमें ३५,००० से अधिक अमूल्य और अपूर्व ग्रन्थ हैं। परिषद् के ग्रन्थालय के समान कोई बृहत् ग्रन्थालय कर्नाटक की किसी भी हिन्दी संस्था में नहीं है ऐसा नागप्पा जी ने लिखा है।

(xx) व्यावहारिक- हिन्दी प्रचार की दिशा में हिन्दी टंकण, आशुलिपि और कम्प्यूटर शिक्षण वर्ग परिषद् में चलाए जा रहे हैं।

(xxi) आजकल कार्यालयों में अनुवादक की बढ़ती माँग को देखकर उसकी पूर्ति के लिए अनुवाद कला और कार्यालयीय हिन्दी स्नातकोत्तर डिप्लोमा को परिषद् पत्राचार पाठ्यक्रम के द्वारा चला रही है।

(xxii) समय-समय पर वाक्-प्रतियोगिता, लेखन-प्रतियोगिता, कवि-सम्मेलन, नव लेखक शिविर आदि का आयोजन कर विजेताओं को पर्यायफलक और पुरस्कार प्रदान किये जाते हैं। संप्रति मुंशी प्रेमचन्द पर्यायफलक और कन्नड़ कुल-पुरोहित आलूर वेंकटराव पर्यायफलक प्रदान किये जाते हैं।

(xxiii) पारिभाषिक शब्द कोशों का निर्माण किया जा रहा है।

(xxiv) समय-समय पर विभिन्न जिलों में हिन्दी और कन्नड़ संगोष्ठियाँ आयोजित की जा रही हैं।

(xxv) प्राथमिक पाठशालाओं के शिक्षक एवं हिन्दी प्रचारकों के लिए हिन्दी शिक्षण प्रवेश परीक्षा पत्राचार पाठ्यक्रम के द्वारा चलायी जा रही है।

(xxvi) हिन्दी शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए आवश्यक और उपयुक्त एवं स्तरीय शिक्षण सामग्री तैयार की जा रही है।

(xxvii) हिन्दी प्रचारकों और परीक्षार्थियों के लाभ हेतु हिन्दी भाषा, साहित्य और विविध विधाओं पर वीडियो कैसेट तैयार किये जा रहे हैं।

(xxviii) कन्नड़ भाषा न जानने वाले भाषा-भाषियों को हिन्दी माध्यम से कन्नड़ सिखाने के लिए प्रारंभिक परीक्षा 'प्रथमा' से स्नातक परीक्षा 'रत्न' तक विविध परीक्षाएँ चलायी जा रही हैं।

(xxix) परिषद् के कर्मचारियों के हितों का ध्यान रखा जाता है। उनके सेवामुक्त होने पर उनके आर्थिक लाभ के लिए प्रॉविडेंट फंड की व्यवस्था परिषद् करती है।

(xxx) परिषद् ने २००३-०४ में अखिल कर्नाटक हिन्दी साहित्य अकादमी की स्थापना की और उसके द्वारा हिन्दी प्रचार-प्रसार, अनुवाद कार्य, स्तरीय पुस्तकों का प्रकाशन और हिन्दी-कन्नड़ के लब्ध साहित्यकारों का सम्मान किया गया।

(xxxi) अखिल कर्नाटक हिन्दी साहित्य अकादमी के तत्वाधान में एक अनुसंधान केन्द्र (Research centre) की स्थापना की गई है। यह परिषद् की एक विशेष उपलब्धि है।[१३]

इन गतिविधियों की जाँच कर मासिक रिपोर्ट देने के लिए निम्न समितियाँ गठित की गई हैं:–

१. हिन्दी प्रचार–प्रसार की जाँच समिति।
२. समय–समय पर हिन्दी प्रचारकों को आवश्यक सुविधाएँ प्रदान करने की समिति।
३. अनूदित रचनाओं और उत्तम ग्रंथों को आवश्यक सुविधाएँ प्रदान करने की समिति।
४. हिन्दी परीक्षा समिति
५. हिन्दी टंकण और आशुलिपि समिति।
६. पाठ्य पुस्तक रचना और प्रकाशन समिति।
७. पत्रिका प्रकाशन समिति।
८. महाविद्यालय (अनुसूचित जाति एवं जनजाति) प्रबन्ध समिति।
९. हिन्दी प्रशिक्षण कॉलेज प्रबन्ध समिति।
१०. कन्नड़ परीक्षा समिति।
११. भवन निर्माण प्रबन्ध समिति।
१२. शिक्षण सामग्री निर्माण समिति।
१३. अनुवाद कला समिति।
१४. डिप्लोमा इन एजुकेशन–प्रशिक्षण समिति।
१५. साहित्यिक तथा साहित्यिक प्रबन्ध समिति।
१६. ग्रन्थालय और वाचनालय प्रबन्ध समिति।[१४]

ये सभी समितियाँ परिषद् के अध्यक्ष और प्रधान सचिव को अपने–अपने कार्यों को सुचारु रूप से संपन्न करने के बारे में पाक्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करती हैं।

पूरे राष्ट्र में परिषद् की प्रतिष्ठा को आगे बढ़ाने में डॉ. बी. रामसंजीवय्या के सराहनीय और साहसिक कार्य के बारे में नागप्पा जी ने कहा था– 'परिषद् की स्वर्ण जयंती समारोह को दिल्ली के विज्ञान भवन में २५–२९ अक्टूबर १९९४ को आयोजित कर परिषद् की पताका ऊँची करने का सारा श्रेय डॉ. बी. रामसंजीवय्या को है। यह हिम्मत की बात है। डॉ. रामसंजीवय्या के जैसे हिम्मतवाले ही ऐसे ऐतिहासिक समारोह की व्यवस्था कर सकते हैं। वर्ना दक्षिण में ऐसी हिम्मत किसकी है?– "न भूतो, न भविष्यत्" (डॉ. रामसंजीवय्या अभिनंदन ग्रंथ पृ. सं. ३)

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी परिषद् की पहचान बनाने का श्रेय डॉ. बी. रामसंजीवय्या जी को जाता है। ५-९ जून २००३ को 'पारमीरिबो' 'सूरीनाम' (दक्षिण अमेरिका) में आयोजित सातवें विश्व हिन्दी सम्मेलन में कुछ भारतीयों का भी सम्मान किया गया। उनमें से एक रामसंजीवय्या जी भी थे। उन्हें हिन्दी भाषा एवं साहित्य के प्रति अमूल्य योगदान के लिए सम्मानित किया गया। परिषद् को प्राप्त उपलाब्धियों का श्रेय रामसंजीवय्या जी को जाता है। १९८९ में बिहार सरकार के राजभाषा विभाग की ओर से 'बाबू गंगाशरण सिंह पुरस्कार' और १९९५ में उत्तर प्रदेश की पंडित हरिदत्त शर्मा जयंती पुरस्कार समिति की ओर से 'पंडित हरिदत्त शर्मा पुरस्कार' प्रदान कर डॉ. बी. रामसंजीवय्या जी का सम्मान किया गया और भी अनेक सम्मानों से इन्हें सम्मानित किया गया है।

१९९४ में मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् की 'स्वर्ण जयंती समारोह' विज्ञान भवन, दिल्ली में मनाया गया। इसका उद्‌घाटन राष्ट्रपति के कर कमलों से हुआ। यह समारोह परिषद् की बड़ी उपलब्धियों में से एक है। इस कार्यक्रम का आयोजन रामसंजीवय्या जी ने किया था।

१९९८-२००३ तक अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ, नई दिल्ली के सचिव पद पर इन्होंने कार्य किया और उसकी उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया। २००३ में परिषद की 'हीरक जंयती' मनायी गयी। हिन्दी की महत्वपूर्ण भूमिका उजागर करने और दक्षिण भारत में हिन्दी के प्रयोग के संवर्धन के लिए त्रिदिवसीय 'हिन्दी भाषा कुंभ' का आयोजन २९, ३० और ३१ अक्टूबर २००४ को किया गया। इस अवसर पर देश-विदेश के २१ विद्वानों को विशिष्ट हिन्दी सेवी सम्मान से अलंकृत किया गया। इससे स्पष्ट है कि रामसंजीवय्या जी ने परिषद् परिवार के निष्ठावान कार्यकर्त्ताओं के सहयोग से और अपनी अद्‌भुत कार्यक्षमता, कार्यतत्परता, कार्यकुशलता, निःस्वार्थ सेवा और समर्पण भाव और अथक परिश्रम से परिषद् को 'शून्य' से एक बृहद संस्था बनायी। बिन्दुरूपी परिषद् को सिन्धु बनाया। परिषद् की प्रतिष्ठा को राज्यस्तर पर ही नहीं, राष्ट्रस्तर और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी बढ़ाया।

इस प्रकार इन सब के सहयोग से मैंसूर हिन्दी प्रचार परिषद् अपने कार्यक्षेत्र को बढ़ाकर हिन्दी प्रचार-प्रसार कार्य के माध्यम से भावैक्यता के पुनीत कार्य में संलग्न है।[३५]

४.३.२ कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति, बैंगलूर

महात्मा गाँधीजी की प्रेरणा से १९१८ में दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार का आरंभ मद्रास में साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के शाखा कार्यालय के आरंभ के साथ हुआ था। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास का पंजीकरण १९२८ में हुआ था। "कर्नाटक प्रान्तीय हिन्दी प्रचार सभा" की स्थापना १९३६ में हुई थी। १९३९ में "मैसूर रियासत हिन्दी प्रचार समिति" की स्थापना हुई जो १९६० में स्वतंत्र होकर 'कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति के नाम से कार्य कर रही है। १९४३ में "मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद की स्थापना हुई। इसी तरह अनेक स्वयं सेवी संस्थाओं की स्थापना हुई।

सन् १९३६ में महात्मा गाँधीजी ने अपने एक भाषण में हिन्दी प्रचार के लिए महिलाओं की सहभागिता की बात कही। उन्होंने कहा कि हिन्दी प्रचार का कार्य यदि महिलाएँ अपने हाथ में ले लें तो प्रचार कार्य को अधिक सफलता मिलेगी। गाँधीजी के भाषण से प्रभावित होकर कई महिलाओं ने हिन्दी सीखनी शुरू की और साथ ही प्रचार कार्य में भी विशेष योगदान दिया। उन्हीं में से एक थीं श्रीमती मुत्तुबाई माने जी। उन्होंने अपने घर से ही लोगों को हिन्दी सिखाने का अभियान चलाया और देखते ही देखते हिन्दी वर्ग भी चलाने लगीं।[१६]

उन्हीं दिनों डॉ. पी.आर. श्रीनिवास शास्त्री जी बैंगलोर आये और यहाँ आने के दो वर्ष बाद विश्वेश्वरपुरम् के आर्य समाज के स्वामी शांतानंद जी के मार्गदर्शन में इन्होंने हिन्दी पढ़ना शुरु किया। पंड़ित सिद्धनाथ पंत ने इन्हें प्रयाग के साहित्य सम्मेलन में हिन्दी का उच्च अध्ययन करने के लिए भेजा। शास्त्रीजी ने वहाँ से साहित्य विशारद की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद १९४६ में मद्रास में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के साहित्य विभाग में काम करने लगें। कुछ समय बाद बैंगलोर लौटकर मैसूर रियासत हिन्दी प्रचार समिति के संगठक श्री हिरण्मय जी के मार्गदर्शन में बैंगलोर के मल्लेश्वरम्, बसवनगुडी, चामराजपेट आदि जगहों पर सुबह और शाम हिन्दी वर्ग चलाने लगे। वाणी विलास गर्ल्स हाईस्कूल में ८ वीं कक्षा से मैट्रिक तक हिन्दी पढ़ाने का काम श्रीनिवास जी को सौंपा गया। सन् १९४७ में पूर्ण कालीन हिन्दी अध्यापक के रूप में इनकी नियुक्ति हुई। पुराने मैसूर राज्य में सरकारी नौकरी में पूर्ण कालीन हिन्दी अध्यापक बनने का सर्वप्रथम सौभाग्य श्रीनिवास जी को मिला। १९५३ में श्रीनिवास शास्त्री जी ने श्रीमती मुत्तुबाई जी से मिलकर महिलाओं के

द्वारा संचालित हिन्दी संस्था के बारे में सोचा और गाँधीजी की इच्छा का ध्यान रखकर इस दिशा में कदम बढ़ाया। उन्होंने सर्वश्री एम.के अहल्याबाई, बी.एस. मीराबाई, आर. माधवी, सी के. विमला आदि लोगों से इस बारे में विचार–विनिमय किया। इसके परिणाम का ही रूप था जो कि १९५३ में 'कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति की स्थापना की गई। स्थापना के बाद इसके संगठन कार्य की ओर ध्यान दिया जाने लगा। संस्था के संगठन कार्य के लिए श्रीमती मुत्तुबाई जी और श्रीनिवास शास्त्री जी ने कर्नाटक के विभिन्न भागों का भ्रमण किया।

१९५६ में राज्य की सभी महिला प्रचारिकाओं का एक सम्मेलन हुआ। इसमें सभी की अनुमति से संस्था को अपनी परीक्षाएँ चलाने का निर्णय लिया गया। संस्था को चलाने के लिए सरकार से अनुदान माँगने और इसके पंजीकरण का निर्णय भी हुआ। यह भी निर्णय लिया गया कि परीक्षाओं में छात्राओं के साथ–साथ छात्रों को भी बैठने की अनुमति दी जाय। साथ ही प्रचारिकाओं के साथ प्रचारकों को भी प्रोत्साहन दिया जाय। पर समिति की साधारण एवं कार्यकारिणी समिति में सिर्फ महिलाओं को ही शामिल करने का निर्णय किया गया।[१७]

१९५८ में इस संस्था का पंजीकरण हुआ। मुत्तुबाई इस संस्था की सर्वप्रथम अध्यक्ष चुनी गयी। प्रथम प्रधान सचिव श्रीमती एन. सुशीला, संचालिका सचिवा बनीं, बी.एस. शांताबाई और श्रीमती एन. सुशीला और श्रीमती एन.के. अहल्या परीक्षा विभाग का कार्य संभालने लगीं। समिति ने अपनी परीक्षाएँ १९५८–५९ से चलाना शुरु किया। सरकार के अनुदान से चालीस निःशुल्क हिन्दी वर्ग राज्य के बीस जिलों में आरंभ किये गये। बीस जिलों में परीक्षा केन्द्रों की स्थापना भी की गई।[१८]

१९६८ तक इस संस्था का काम–काज चामराजपेट के सिद्धाश्रम के दो–तीन कमरों में चलता रहा। लेकिन आगे चलकर संस्था ने अपना निजी भवन तैयार करने की सोची। श्रीनिवास शास्त्री और शांताबाई के अथक प्रयासों के फलस्वरूप संस्था को अपना निजी भवन बनाने में सफलता मिली। सन् १९६८ में महिलाओं के त्याग और परिश्रम से देढ़–दो लाख रु. जमा कर एक भव्य भवन संस्था के लिए खरीदा गया। इस भवन को खरीदने के लिए न तो किसी से दान माँगा गया था और न ही सरकार से कोई आर्थिक सहायता ली गयी थी। महिलाओं और हिन्दी प्रचारकों ने अपना पसीना बहाकर इसके लिए धन एकत्रित किया था।

जब तक श्रीनिवास शास्त्री जीवित रहे तब तक संस्था के सलाहकार की भूमिका निभाते रहे। वे न केवल संस्था के सलाहकार रहे अपितु संस्था के संरक्षक के रूप में उसकी सर्वतोमुखी उन्नति की योजनाएँ बनाते रहे।[११]

संस्था के मूल कार्य

यह संस्था संपूर्ण कर्नाटक राज्य में राष्ट्रीय भाव से राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार-प्रसार करती आ रही है। इसके साथ ही पुस्तकालय और अध्ययन कक्ष भी इस संस्था के द्वारा चलाये जाते हैं। ये संस्था केन्द्रीय सरकार द्वारा सहायता पाकर हिन्दी कक्षाएँ चलाती है। और संस्था द्वारा साल में दो बार परीक्षाएँ भी आयोजित की जाती है। ये परीक्षाएँ केन्द्रीय और राज्य सरकारों द्वारा मान्यता प्राप्त है। समिति का केन्द्रीय कार्यालय बैंगलोर (नं. १७८, IV मेन रोड़, चामराजपेट) में स्थित है। हिन्दी कक्षाएँ चलाने के लिए हिन्दी अध्यापकों को प्रशिक्षण दिया जाता है। संस्था के प्रमुख कार्य है:- प्रचारक अधिवेशन चलाना, निबंध, नाटक और साहित्यिक प्रतियोगिताओं में विद्यार्थियों को भाग दिलवाना, प्रिंटिंग प्रेस में केवल मलिाओं को ही कंपोजिंग, प्रिंटिंग और बाईन्डिंग का प्रशिक्षण देना और समिति की सभी सामग्री समिति प्रिंटिंग प्रेस में ही मुद्रण करवाना। बैंगलोर, हुबली, रायचूर, हासन, पुत्तुर, मैंगलोर और मंड्या आदि जगहों पर हिन्दी टंकण संस्था के द्वारा चलायी जाती है। जुलाई १९८४ से हिन्दी शिक्षक कॉलेज बैंगलोर, हुबली, रायचूर, बेलगाम, शिमोग्गा, हासन और बेल्लारी में चलाये जा रहे हैं। अधिक से अधिक विद्यार्थियों को प्रशिक्षण पाने का प्रोत्साहन भी दिया जाता है।

संस्था के प्रमुख विभाग

हिन्दी प्रचार विभाग, कार्यनिर्वहण विभाग, हिन्दी प्रचार वाणी विभाग, परीक्षा विभाग, विक्रय विभाग, हिन्दी परीक्षा से संबंधित पुस्तकें, प्रिंटिंग प्रेस, कम्प्यूटर विभाग, हिन्दी शिक्षण प्रशिक्षण कॉलेज।

साहित्यिक विभाग

समिति के साहित्य विभाग द्वारा प्रारंभिक पुस्तकों से लेकर उच्च और उत्तम साहित्य का निर्माण कार्य चलता है। *'हिन्दी प्रचार वाणी'* नाम की मासिक पत्रिका का प्रकाशन कई वर्षों से संस्था के द्वारा हो रहा है। अब तक १५० से अधिक ग्रन्थों का निर्माण हिन्दी में हो चुका है। समिति द्वारा पुस्तकों का जो निर्माण किया जाता है उसे

विश्वविद्यालय, हाईस्कूलों और प्री–यूनिवर्सिटी के कोर्सों में भी स्थान दिया गया है। कुछ स्वैच्छिक संस्थाओं ने भी अपने परीक्षा पाठ्यक्रम में भी इन्हें स्थान दिया है।

पाठ्य–पुस्तकों के अलावा अनूदित ग्रन्थों का भी प्रकाशन समिति करती है। कन्नड़ से हिन्दी और हिन्दी से कन्नड़ में अनूदित कुछ ग्रन्थ विशेष रूप से उल्लेखनीय है:–

कन्नड़ से हिन्दी में अनुवाद

(i) अपजय (ii) अपस्वर (iii) त्रिवेणी सप्तक (iv) श्रीनिवास अष्टक (v) बिल्ली की आँखे (vi) रक्ताक्षी (vii) नया रूस व नया जीवन (यात्रा वृत्त) (viii) सप्तपदी और गलत कदम (ix) आदि–जिन–तनय (x) अशोक के फूल।

मौलिक

(i) *कर्नाटक वैभव दर्शन, कर्नाटक दर्शन* (सं. राधाकृष्णमूर्ति)

(ii) *कर्नाटक में हिन्दी प्रचार की गतिविधियाँ* (पी.आर. श्रीनिवास शास्त्री)

इनके अतिरिक्त *"हिन्दी–कन्नड़ कोश"* का पुनर्मुद्रण कार्य चल रहा है। *"कन्नड़–हिन्दी कोश"*, *"मुहावरे कोश"*, "*हिन्दी–उर्दू कोश* आदि के भी पुनर्मुद्रण के शीघ्र आरंभ की योजना है।[२०]

समिति द्वारा संचालित परीक्षाएँ एवं संचालन कार्य

वर्ष में दो बार समिति की ओर से परीक्षाओं का संचालन किया जाता है। तीन प्रारंभिक परीक्षाएँ और तीन उच्च स्तरीय परीक्षाओं का आयोजन किया जाता है। राज्य में ५०० से अधिक प्रारंभिक परीक्षा केन्द्र है, और ३०० से अधिक उच्च परीक्षा केन्द्र। उच्च परीक्षाएँ केवल राज्य सरकार और भारत सरकार से ही मान्यता प्राप्त नहीं हैं बल्कि कुछ अन्य राज्य सरकारों से भी मान्यता प्राप्त है।

१. हिन्दी सुबोध २. प्रथमा ३. मध्यमा	प्रारंभिक परीक्षाएँ
४. उत्तमा (मैट्रिक स्तर) ५. भाषा–भूषण (इन्टरमीडियट स्तर) ६. भाषा प्रवीण (बी.ए. स्तर)	उच्च परीक्षाएँ

समिति की उच्च परीक्षा "प्रवीण" में उत्तीर्ण विश्वविद्यालयीय स्नातकों को बी.ए. में हिन्दी पढ़े बिना हिन्दी एम.ए. में प्रवेश लेने के लिए बैंगलूर, मैसूर, कर्नाटक और कालिकट विश्वविद्यालयों से सुविधा प्राप्त है। यदि एस.एस.एल.सी उत्तीर्ण लोगों ने प्रवीण परीक्षा उत्तीर्ण कर ली तो उन्हें हिन्दी शिक्षण प्रशिक्षण पाने पर राज्य के हाईस्कूलों में हिन्दी अध्यापन योग्य माना जाता है। सरकार की नकद पुरस्कार योजना में हिन्दी की उत्तमा परीक्षा को मान्यता प्राप्त है। इसमें उत्तीर्ण होने वाले सरकारी कर्मचारी को १००रु. का नकद पुरस्कार प्रदान किया जाता है। परीक्षा के संचालन के लिए एक समिति का भी गठन किया गया है।

इसके अलावा १९८८ से (टाईपराईटिंग) हिन्दी टंकण परीक्षाएँ भी समिति की ओर से चलायी जा रही हैं।

१.जूनियर – प्रारंभिक

२. सीनियर – उच्च

३. प्रोफेशिएन्सी – तीव्र गति – ये तीन परीक्षाएँ ली जाती हैं।[२१]

स्वर्ण पदक योजना का आयोजन

इतना ही नहीं, हिन्दी भाषा प्रवीण, हिन्दी भाषा भूषण और हिन्दी उत्तमा में अत्यधिक अंक पाने वाले छात्रों को राजस्तरीय अंकों के आधार पर स्वर्ण पदक के तीन पुरस्कार देने की योजना के अन्तर्गत समिति के कुछ हितैषी दानियों से प्राप्त आर्थिक सहायता की स्थायी निधि से प्राप्त वार्षिक ब्याज से तीन स्वर्ण पदक पदवीदान समारंभ के अवसर पर दिये जा रहे हैं, उन हितैषियों के नाम हैः– सर्वश्री स्व. बी.एस. मीराबाई, स्व. के.एस. श्रीधर शास्त्री, कटील गणपति शर्मा, एम. राजीवीबाइ, डॉ. सरगु कृष्णमूर्ती, डॉ. पी.आर. श्रीनिवास शास्त्री, बी.एस. शांताबाई, स्व. एच. हनुमंतप्पा, डॉ. आर. लक्ष्मी देवी, श्रीमती क्लेमेंट मेरी और सी.के. विमला।[२२]

पदवीदान समारंभ

"हिन्दी भाषा प्रवीण" में उत्तीर्ण छात्र–छात्राओं को पदवी प्रदान करने के लिए उनका उत्साह बढ़ाने के लिए प्रतिवर्ष पदवीदान समारोह का आयोजन समिति द्वारा १९६७ से आरंभ हुआ है।

प्रचारकों का सम्मान

पदवीदान समारंभ के अवसर पर प्रतिवर्ष वरिष्ठ हिन्दी सेवियों और हिन्दी विद्वानों का सम्मान करने का सिलसिला १९६७-६८ से जारी है। अब तक कुल २५० से अधिक प्रचारकों का सम्मान किया जा चुका है। श्री रामेश्वरदयाल दुबे द्वारा प्राप्त रकम से वरिष्ठ प्रचारकों को एक हज़ार रुपये नकद देकर सम्मानित किया जाता है। साथ ही बी.एस. शांताबाई द्वारा प्राप्त रकम से हर वर्ष दो महिला प्रचारकों का भी सम्मान समिति की ओर से किया जाता है।

प्रमाणित प्रचारकों की संख्या

राज्य के विविध जिलों में सुबह और शाम हिन्दी वर्ग चलाया जाता है। समिति की परीक्षाओं के लिए छात्रों को बैठाने वाले समिति के कुल ५०९२ प्रमाणित प्रचारक है, जिनमें ३००० से अधिक महिला प्रचारक कार्यरत हैं। साथ ही समिति के आजीवन प्रमाणित प्रचारकों की संख्या ३१२८ है।

संस्था द्वारा प्रकाशित मुख्य पत्रिका

१९८० में समिति की ओर से एक पत्रिका का प्रकाशन कार्य शुरु हुआ। जो कि अब तक प्रतिमास प्रकाशित होती आ रही है। इस पत्रिका का नाम है *"हिन्दी प्रचार वाणी"*। इसकी ४००० प्रतियाँ छपती हैं और बिकती हैं। लेकिन समिति के २२०० प्रमाणित प्रचारकों को यह पत्रिका मुफ्त में प्रदान की जाती है। इस पत्रिका द्वारा हिन्दी प्रचार-प्रसार का कार्य तो होता ही है साथ ही समिति के द्वारा किये गये कार्यों, विभिन्न आयोजनों आदि का विवरण इस पत्रिका में दिया जाता है। इस पत्रिका की प्रधान संपादिका हैं 'बी.एस. शांताबाई। प्रारंभ में समिति के संस्थापक श्रीनिवास शास्त्री इसके संपादक थे। १९८८ से डॉ. श्रीमती राधाकृष्णमूर्ति इस पत्रिका की मानद संपादिका के रूप में कार्यरत हैं।

इस पत्रिका के अतिरिक्त वार्षिकी डायरी (दैनन्दिनी) भी प्रकाशित तथा वितरित की जाती है।[२३]

प्रिंटिंग प्रेस

सन् १९६८ में महिलाओं को हिन्दी सिखाने के साथ-साथ मुद्रण कला में प्रशिक्षण देने के उद्देश्य से मुद्रण कला महिला प्रशिक्षण महाविद्यालय का आरंभ किया

गया। समिति की ओर से हिन्दी, कन्नड़ और अंग्रेजी तीनों, भाषाओं में छपाई का काम किया जाता है। यहाँ तीनों भाषाओं में कंपोजिंग, प्रिंटिंग और बाईन्डिंग का कार्य सिखाया जाता है। इसमें केवल महिलाओं को ही कार्य करने की अनुमति है। महिलाओं को मासिक वृत्ति देकर उन्हें सारे कार्य सिखाया जाता है। मुद्रणालय की विशेषता यह है कि महिलाओं को मुद्रण का पूरा कार्य सिखाकर उन्हें अपनी जीविका चलाने हेतु प्रेस प्रारंभ करने के लिए मदद दी जाती है। राज्य सरकार द्वारा इसे पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है। समिति ने इसमें उत्तरोत्तर वृद्धि करते हुए बैंक से आर्थिक सहायता प्राप्त कर "डबल क्रौन" आफ़सेट मशीन खरीदा जिस कारण डी.टी.पी की सहायता से मुद्रण कार्य को और भी सुचारु रूप से चलाने में सफलता मिली है।

इसके साथ ही साथ समिति की कार्य विस्तार योजना के अन्तर्गत १९९१ से कम्प्यूटर विभाग का शुभारंभ हुआ। देवनागरी लिपि के साथ वर्ग की शुरुआत हुई है। मुद्रण कार्य के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है।

समिति के कार्यालय में १९८५ से हिन्दी टंकण वर्ग भी प्रारंभ किया गया है। १९८९ से हासन, मैंगलोर, पुत्तूर, हुबली, गुलेदगुड्डु, और रायचूर में समिति के तत्वाधान में हिन्दी टंकण वर्गों का आरंभ हुआ। १९९० से हिन्दी शीघ्रलिपि वर्ग का भी आरंभ हुआ है।

भाषण-लेखन, वाद-विवाद प्रतियोगिता और पुनश्चर्या पाठ्यक्रम शिविर का आयोजन

१९६६-६७ से इस प्रतियोगिता को आंरभ किया गया। उच्च कक्षाओं में पढ़ने वाले अहिन्दी-भाषियों के लिए पहले जिलास्तर पर, फिर राज्य स्तर पर भाषण और लेखन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। १९६८ में सरकार ने इस योजना को अपनाया और महिला समिति को आर्थिक सहायता देकर शिक्षा विभाग के मार्गदर्शन पर प्रतियोगिताएँ चलाने की व्यवस्था की। १९७८ तक यह कार्य सुचारु रूप से चलता रहा, फिर कर्नाटक में कार्यरत मुख्य हिन्दी संस्थाओं को यह कार्य सौंपा गया। अब यह योजना बन्द है।

वहीं दूसरी ओर हिन्दी विद्यार्थियों में हिन्दी बोलने की कला को विकसित करने के लिए समिति सरकार द्वारा प्राप्त अनुदान से हिन्दी वाद-विवाद प्रतियोगिता चलाकर कई तरह के पारितोषक प्रदान करती है।

साथ ही सरकार द्वारा प्राप्त अनुदान से समिति की ओर से हिन्दी अध्यापन-स्तर में प्रगति लाने के उद्देश्य से कई पुनश्चर्या पाठ्यक्रम का भी आयोजन किया जाता है। १९६४-६५ से सरकार ने प्राथमिक शालाओं के हिन्दी अध्यापकों के लिए शाम के समय पुनश्चर्या पाठ्यक्रम शिविर चलाने के लिए आर्थिक सहायता को मंजूरी दी। तब से समिति ने इस योजना को सफलतापूर्वक संपन्न किया है।[२४]

हिन्दी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय

कर्नाटक राज्य सरकार द्वारा स्वीकृत पाठ्यक्रम के अनुसार समिति द्वारा हिन्दी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय चलाया जा रहा है। समिति ने जुलाई १९८४ में इसकी स्थापना बैंगलोर में की थी। विद्यार्थियों की आवश्यकता को ध्यान में रखकर हुबली, शिमोग्गा, बेलगाम, बेल्लारी, हासन और रायचूर में समिति की ओर से कॉलेज खोले गये हैं। इस हिन्दी शिक्षक प्रशिक्षण कोर्स को राज्य सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त है और राज्य सरकार द्वारा ही इस प्रशिक्षण कोर्स की परीक्षा ली जाती है। हिन्दी शिक्षक उपाधि प्राप्त लोगों को ही हाईस्कूल में हिन्दी अध्यापक की नौकरी मिलती है। एन.टी.सी.ई. (राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद) के अधिकारियों द्वारा १९९७-९८ में इस हिन्दी शिक्षण महाविद्यालय का निरीक्षण किया गया और उन्होंने भी इसे चलाने की अनुमति समिति को प्रदान की। एन.टी.सी.ई. के नियमानुसार सभी कॉलेजों में बहुत कुछ सामग्रियाँ तैयार कर निजी भवन बनाये गये। हिन्दी माध्यम से प्रशिक्षण दिये जाने के कारण एन.टी.सी.ई. ने इसे हिन्दी शिक्षक नाम दिया। उनके आदेशानुसार इसमें से बी.एड. नाम को हटा दिया गया। अब यह कोर्स सिर्फ "हिन्दी शिक्षक" के नाम से चलाया जा रहा है। सामान्य ज्ञान हाईस्कूल उत्तीर्ण होने के साथ-साथ किसी भी स्वैच्छिक संस्था द्वारा 'प्रवीण' के समकक्ष उत्तीर्ण विद्यार्थी को ही इस प्रशिक्षण कोर्स में प्रवेश दिया जाता था। लेकिन १९९७-९८ से एन.टी.सी.ई. के नये आदेश के अनुसार इस प्रशिक्षण कोर्स के लिए विद्यार्थियों का सामान्य ज्ञान इण्टरमीडियट उत्तीर्ण करना आवश्यक कर दिया गया और साथ ही सामान्य ज्ञान इण्टरमीडियट और 'प्रवीण' में ५० प्रतिशत अंक पाने वाले छात्रों को ही इस प्रशिक्षण में प्रवेश की अनुमति दी गयी।

इस प्रशिक्षण कोर्स में बैंगलोर की परीक्षा में सबसे अधिक अंक पाने वाले विद्यार्थी को प्रथम पुरस्कार के रूप में स्व. श्रीमती ललिता अश्वत्थनारायण नाम से स्वर्णपदक प्रदान किया जाता है। दूसरे पुरस्कार के रूप में रजत पदक श्री कटील

गणपति शर्मा के नाम से और तीसरा रजत पदक पुरस्कार श्री के.एस. श्रीकण्ठ शास्त्री के नाम से दिया जाता है।

इस प्रकार इस तरह के पुरस्कार योजना और ट्रेनिंग कॉलेजों की वजह से कई लोगों को हिन्दी सीखने एवं सिखाने में मदद मिलती है।

निःशुल्क हिन्दी वर्ग

समिति को निःशुल्क हिन्दी वर्ग चलाने के लिए भारत सरकार की तरफ से आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है। फिलहाल ३०० निःशुल्क हिन्दी वर्ग चलाये जा रहे हैं। इसके अलावा संस्था अपनी ओर से भी वर्ग चलाती है।

इस प्रकार स्व. डा. पी.आर. श्रीनिवास शास्त्री का धैर्य, राष्ट्रभाषा प्रेम, और कन्नड़ भाषा–भाषियों के घर–आंगन तक हिन्दी प्रवेश कराने की उनकी दृढ़ इच्छा, दृढ़ संकल्प और राष्ट्रभाषा प्रेमी महिलाओं के अथक प्रयास के कारण यह संस्था आज दिन–दूनी रात चौगुनी तरक्की कर रही है।

४.३.३. कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति, बैंगलोर (पूर्व नाम मैसूर रियासत हिन्दी प्रचार समिति, बैंगलोर)

अन्य संस्थाओं की तरह मैसूर रियासत हिन्दी प्रचार समिति यानि आज की कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति भी पूरे जोश के साथ हिन्दी प्रचार–प्रसार के लिए अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। पहले–पहल जब १९३७ में कांग्रेस मंत्रिमण्डल की स्थापना बम्बई कर्नाटक प्रांत में हुई थी तब यह क्षेत्र हिन्दी प्रचार के लिए विशेष अनुकूल था। इस अनुकूलता को ध्यान में रखकर १९३६ में बैंगलोर में स्थापित कर्नाटक प्रान्तीय हिन्दी प्रचार सभा का मुख्यालय १९३७ में धारवाड़ में स्थानांतरित कर दिया गया। प्रचार कार्य की सफलता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि हिन्दी प्रचार के प्रति जनता के उमंग, उत्साह का साथ देना हिन्दी प्रचारकों के लिए मुश्किल हो गया था।

वहीं दूसरी तरफ मैसूर में राष्ट्रीयता की भावना और उत्साह भी जन्म ले रही थी। हिन्दी प्रचार का एक उद्देश्य लोगों में राष्ट्रीयता की भावना को जागृत करना भी था। इस राष्ट्रीयता की भावना, उत्साह को अमली जामा पहनाने और इसकी पृष्ठभूमि तैयार करने के लिए, इस कार्य को सुचारु रूप से चलाने के लिए एक संगठन का होना आवश्यक था। धारवाड़ की कर्नाटक प्रान्तीय हिन्दी प्रचार सभा ने इस पर

विचार-विमर्श कर अपने कार्यकारिणी के मैसूर राज्य के सदस्यों की उपसमिति १९३९ में गठित की। इसमें कुल सदस्यों की संख्या निश्चित थी। और इस प्रकार इस संगठन का नाम मैसूर रियासत हिन्दी प्रचार समिति रखा गया जिसका मुख्यालय १९३९ में मैसूर में था। अंबले सुब्रह्मण्य अय्यर इसके प्रथम अध्यक्ष थे और एन. नागेश्वरराव जो कि अंग्रेजी के प्रोफेसर थे इस संस्था के मन्त्री थे। समिति का मुख्यालय एक वर्ष बाद बैंगलोर स्थानांतरित कर दिया गया।[२५]

समिति ने हिन्दी प्रचारक विद्यालय के कई सत्र बैंगलोर में चलाये। समिति के कार्यकलापों से संतुष्ट होकर सरकार ने जयनगर में एक विशाल भूमि समिति को मुफ्त में प्रदान की। आज वहाँ एक विशाल भवन है जहाँ पर सुचारु रूप से समिति के कार्यकलापों को क्रियान्वित किया जाता है। १९६० तक कर्नाटक प्रान्तीय हिन्दी प्रचार सभा से समिति का संबन्ध रहा बाद में यह एक स्वतन्त्र संस्था बन गई।

१९३९ से १९६१ तक दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की परीक्षाएँ समिति चलाती आ रही थी। पर १९६१ से समिति अपनी स्वतंत्र परीक्षा चलाने लगी।

१. हिन्दी बोध २. प्रथमा ३. मध्यमा	प्रारंभिक परीक्षाएँ
४. राजभाषा प्रवेश ५. राजभाषा प्रकाश ६. राजभाषा विद्वान्	उच्च परीक्षाएँ

ये परीक्षाएँ वर्ष में दो बार आयोजित की जाती हैं। हिन्दी बोध परीक्षा १९७५ से शुरु की गई। राजभाषा प्रवेश, राजभाषा प्रकाश और राजभाषा विद्वान ये तीनों क्रमशः मैट्रिक, इण्टरमीडिएट और बी.ए. के समकक्ष परीक्षाएँ हैं जिसे केन्द्रीय एवं स्थानीय सरकारों से मान्यता प्राप्त है।

राजभाषा विद्वान परीक्षा में द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले छात्र-छात्राओं को प्रतिवर्ष पदवीदान समारोह के अवसर पर श्री एच.सी. दासप्पा, श्री एम.जी. रामचन्द्र और श्रीमती रुक्मिणियम्मा हिन्दी पुरस्कार प्रदान किये जाते हैं। समिति अपनी तरफ से राजभाषा विद्वान के प्रत्येक पत्र में प्रथम परीक्षार्थियों को पुरस्कारों के रूप में हिन्दी पुस्तकें प्रदान करती है।[२६]

'राजभाषा भूषण' नामक मानद पदवी भी समिति की ओर से दी जाती है। यह पदवी राष्ट्रभाषा प्रचार क्षेत्र में महत्त्वपूर्व सेवा करने के उपलक्ष्य में दी जाती है।

समिति के प्रमुख कार्यकर्त्ताओं में श्री.ए.वी. श्रीनिवासमूर्ति, हिरण्मय, तंगवेलन आदि का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इन्होंने समिति की उन्नति के लिए अपना हरसंभव विशेष योगदान दिया है। श्रीनिवास मूर्ति तो समिति के प्राण थे। श्रीनिवास मूर्ति ने कोलार में हिन्दी प्रचार का कार्य आरंभ किया। बाद में वे बैंगलोर आये और समिति के कार्यों में अपना योगदान देने लगे। मूर्ति ने बसवेश्वर के चुने हुए वचनों का हिन्दी में अनुवाद भी किया। साथ ही दासप्पा के कार्यों उनके सफल व्यक्तित्व का पूर्णलाभ और योगदान समिति को मिला। समिति के लिए किये गये उनके विशेष प्रयासों के कारण ही समिति के भवन का नामकरण एच.सी. दासप्पा हिन्दी प्रचार भवन कर दिया गया।

समय-समय पर समिति विशेष समारोहों का आयोजन भी करती है। हिन्दी प्रचार के उद्देश्य हेतु समिति अपनी ओर से ३०० केंद्रों में निःशुल्क वर्ग चलाती है। समिति के भवन में प्रचारकों एवं हिन्दी कार्यकर्त्ताओं हेतु एक बृहत हिन्दी पुस्तकालय भी है। समिति अलग से अपना हिन्दी वाचनालय भी चलाती है।

हिन्दी परीक्षाओं को चलाने के लिए एक समिति की स्थापना भी समिति ने की है। इसके अतिरिक्त समिति के अलग से पाठ्य-पुस्तक समिति और पुस्तक प्रकाशन समिति भी है। दिसंबर १९८० से समिति की ओर से एक हिन्दी त्रैमासिक पत्रिका *"भाषा पीयूष"* का प्रकाशन भी होता आ रहा है। जिससे हिन्दी प्रचार के कार्यों में प्रेरणा मिलती है। अन्य संस्थाओं की तरह ये संस्था भी प्रचार कार्य में किसी भी संस्था से पीछे नहीं है।[२७]

४.३.४ दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, धारवाड़ (पूर्वनाम कर्नाटक प्रान्तीय हिन्दी प्रचार सभा, धारवाड़)

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि गाँधीजी के द्वारा १९१८ में दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार कार्य की नींव पड़ी। इस कार्य का संचालन मद्रास से होता था। दक्षिण के चारों राज्यों में हिन्दी प्रचार का कार्य सुचारु रूप से हो रहा है कि नहीं इसका निरीक्षण करने एवं उसमें सुधार लाने हेतु सन् १९३५ में काका कालेलकर ने दक्षिण भारत के चारों राज्य का भ्रमण किया। तत्पश्चात् उन्होंने यह सुझाव दिया कि

हिन्दी के प्रचार कार्य को सुचारू रूप से चलाने के लिए चारों प्रांतों में एक प्रांतीय कार्यालयों की स्थापना की जाय। सन् १९३५ में सभा का नया संविधान बना और निर्णय लिया गया कि चारों प्रांतों में प्रांतीय कार्यालय खोला जाय। उन्हीं दिनों श्री निट्टूर श्री निवासराव के अथक प्रयत्नों द्वारा १९३५ में अखिल कर्नाटक प्रांतीय हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना बैंगलोर में हुई। इसके प्रथम मानद अध्यक्ष सर के.पी. पुट्टण्णा चट्टी थे। आगे चलकर इस सभा का कार्यभार सिद्धान्त पंत ने संभाला। हिन्दी का प्रचार कार्य बैंगलोर में ठीक ढंग से चल रहा था। उन्हीं दिनों जब १९३७ में बम्बई राज्य में काँग्रेस की सरकार बनी और बालासाहब गंगाधर खेर मुख्यमंत्री नियुक्त किये गये तब उन्होंने बैंगलोर की अपेक्षा धारवाड़ में हिन्दी के प्रति अधिक उपयुक्त एवं अनुकूल वातावरण देखकर प्रांतीय सभा का मुख्यालय बैंगलोर से स्थानांतरित कर धारवाड़ कर दिया। साथ ही इसके पूर्व नाम कर्नाटक प्रान्तीय हिन्दी प्रचार सभा, धारवाड़ को परिवर्तित कर दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, धारवाड़ कर दिया गया।

इसी वर्ष (१९३७) यहाँ एक हिन्दी विद्यालय की स्थापना की गयी। जिसके प्रधान आचार्य ना. नागप्पा नियुक्त हुए। इस विद्यालय में विशारद तक की पढ़ाई होती थी। उन्हीं दिनों 'हिन्दी शिक्षक सनद" नामक एक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम की सुरुआत बम्बई सरकार की तरफ से की गयी थी। धारवाड़ में खोले गये इस हिन्दी विद्यालय में इस परीक्षा हेतु प्रशिक्षण पाठ्यक्रम चलाया गया। सभा के कार्यों में दिनों-दिन प्रगति होती रही। कलेक्टर कंपाउंड में जगह मिलने पर सभा ने अपना भवन १९५७ में तैयार कर लिया। हिन्दी प्रचार कार्य को एच. हनुमंतप्पा, एम.ए. कामत, श्री सी.बी. गुत्तल, आर.एफ. नीरलकट्टी, डॉ. बी.डी. जत्ती आदि का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ जिसके कारण सभा का कार्य निर्बाध गति से चलने लगा। सिद्धानाथ पंत जी के अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् रामकृष्ण नावडा, वेंकाटाचल शर्मा, जी सुब्रमण्य, एस. श्रीकंठमूर्ति, के.सी. सारंगमठ, के.आर. विश्वनाथन आदि ने सभा को उत्कृष्ट सेवाएँ प्रदान की।[२८]

सभा के महत्वपूर्ण प्रचार कार्य

पुस्तकालय एवं वाचनालय:- सभा का अपना एक बृहत् पुस्तकालय है जिसकी ओर सभा ने विशेष ध्यान दिया है। सभा का यह पुस्तकालय कर्नाटक में हिन्दी की दृष्टि से सबसे पुराना एवं बड़ा पुस्तकालय है। कर्नाटक विश्वविद्यालय के

शोध छात्र भी इसका लाभ उठाते हैं। इस पुस्तकालय में कर्नाटक के किसी भी पुस्तकालय से अधिक पत्र-पत्रिकाएँ उपलब्ध हैं। इस परिसर में तीन पुस्तकालय संचालित हैं- (१) बी.एड. पुस्तकालय (२) स्नातकोत्तर पुस्तकालय (३) पुरुषोत्तम वैद्यकीय पुस्तकालय। इन तीनों पुस्तकालयों में प्रशस्त वाचनालयों की भी व्यवस्था है।

प्रचार परीक्षाओं का संचालनः- सभा की तरफ से प्राथमिक, मध्यमा, राष्ट्रभाषा, प्रेवेशिका जो कि प्रारंभिक परीक्षाएँ हैं का आयोजन किया जाता है, तथा उच्च परीक्षाएँ- राष्ट्रभाषा विशारद और राष्ट्रभाषा प्रवीण का आयोजन केंद्र सभा चेन्नै से होता है।

प्रांतीय पदवीदान समारोह- सभा की ओर से प्रांतीय स्तर पर पदवीदान समारोह का आयोजन किया जाता है क्योंकि प्रतिवर्ष नियमित रूप से चेन्नै में आयोजित पदवीदान समारोह में सभी छात्र नहीं जा पाते हैं।

पत्रिका का प्रकाशन- सभा द्वारा लगभग ५० वर्ष पूर्व *'भारतवाणी'* नामक मासिक पत्रिका का शुभारंभ हुआ। इसमें सभा की गतिविधियों की जानकारी के अतिरिक्त साहित्यक विधाओं पर समीक्षात्मक लेख, अनुवाद, मौलिक रचनाओं का उल्लेख रहता है। इस तरह की पत्रिका द्वारा हिन्दी के लिए एक अच्छा मंच तैयार होने की संभावना नजर आती है। वर्तमान समय में इस पत्रिका का संपादक कार्य चंदूलाल दूबे संभाल रहे हैं। इस पत्रिका को मानव संसाधन व विकास मंत्रालय से अनुदान प्राप्त है। इसके अलावा *'रजतोत्सव'* नामक हिन्दी ग्रन्थ का भी प्रकाशन होता है जिसके संपादक श्री सिद्धनाथ पंत हैं। कोर्स की पुस्तकों का भी प्रकाशन होता है, कन्नड़ ग्रन्थों के प्रकाशन की ओर भी सभा ध्यान देती है।

हिन्दी माध्यम की शालाएँः- हिन्दी प्रचार के उद्देश्य से सभा द्वारा, हिन्दी माध्यम की प्राथमिक और माध्यमिक शालाएँ चलायी जा रही हैं जो इस प्रकार हैं-

(i) कर्नाटक हिन्दी अपग्रेडेड प्राईमरी स्कूल, बैंगलोर
(ii) पार्श्वनाथ प्राईमरी स्कूल, धारवाड़
(iii) कर्नाटक हिन्दी हाईस्कूल, बैंगलोर
(iv) गाँधी हिन्दी हाईस्कूल, धारवाड़
(v) राजीव गाँधी हिन्दी विद्यालय, धारवाड़
(vi) श्री शिवण्णा जिगलूर हाईस्कूल, हुबली

हिन्दी टंकण विद्यालय:- पिछले कई वर्षों से इस शाखा ने छात्रों को हिन्दी टंकण प्रशिक्षण देने की भी व्यवस्था की है। अधिक से अधिक छात्र इस व्यवस्था का लाभ उठा रहे हैं।[२९]

निःशुल्क हिन्दी कक्षाएँ- ज्यादा से ज्यादा लोग हिन्दी सीख सकें और हिन्दी का प्रचार-प्रसार अधिक हो सके इसके लिए इस शाखा की ओर से साढ़े पाँच सौ से भी अधिक निःशुल्क हिन्दी कक्षाएँ चलायी जा रही हैं। इस योजना के अन्तर्गत हिन्दी सीखने वालों की संख्या प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है। यह केन्द्र सरकार की योजना है।

हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालय:- संसद द्वारा पारित अधिनियम में हिन्दी प्रशिक्षण के लिए अच्छे अवसर प्रदान किये गये हैं, जिसके परिणामस्वरूप १९८५ से यह प्रांतीय शाखा बी.एड. उत्तीर्ण उपाधि धारकों के लिए बी.एड तथा उच्चतर माध्यमिक - पी.यू.सी - परीक्षा के साथ राष्ट्रभाषा प्रवीण उत्तीर्ण छात्रों के लिए 'हिन्दी शिक्षा स्नातक' का प्रशिक्षण देने के लिए पाँच बी.एड. महाविद्यालय और आठ शिक्षा स्नातक विद्यालय चला रही है। इन सभी प्रशिक्षण महाविद्यालयों को भारत सरकार द्वारा स्थापित एन.टी.सी.ई. द्वारा मान्यता प्राप्त है।

स्नातकोत्तर केन्द्र- १९६४ में संसद द्वारा केन्द्र सभा को राष्ट्रीय महत्त्व की संस्था घोषित किया गया जिसके तहत सभा को बी.ए., एम.ए., एम.फिल., पीएच.डी., डी. लिट. जैसी उपाधियाँ देने का अधिकार अधिनियम के द्वारा प्राप्त हुआ है। इसी योजना के परिणामस्वरूप धारवाड़ में सन् १९८७ में स्नातकोत्तर विभाग खोला गया। इस समय धारवाड़ में हिन्दी एम.ए., एम.फिल. तथा पीएच.डी. की पढ़ाई की सुविधा है। चन्दूलाल दूबे इस विभाग के प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष हैं।

बी.ए. व्याख्यानमाला- परीक्षाओं के स्तर में सुधार करने की दृष्टि से सभा ने अपने ढंग से प्रयत्न कर बी.ए. व्याख्यानमाला का कार्य शुरु किया है। धारवाड़ में तथा धारवाड़ के बाहर भी विश्वविद्यालय के अनुभवी प्राध्यापकों को बुलाकर सभा द्वारा भाषण आदि की योजना की जाती है। १९८७ से इस प्रकार के कार्य की शुरुआत हुई थी।[३०]

हिन्दी दिवस:- यूँ तो भारत में 'हिन्दी दिवस' मनाने की शुरुआत १९५४ से हुई थी पर सभा की ओर से इसकी शुरुआत १९८७ से हुई। तब से प्रतिवर्ष १४

सितंबर को सभा भी हिन्दी दिवस का आयोजन करती है। इस अवसर पर प्रतियोगिताओं का आयोजन कर पुरस्कार वितरित किये जाते हैं। सभा द्वारा संचालित सभी संस्थाओं में हिन्दी दिवस मनाया जाता है।

गोवा राज्य में हिन्दी प्रचारः- गोवा कर्नाटक का पड़ोसी राज्य है सर्वप्रथम १९४० में धारवाड़ के पुराने प्रचारक देवजी बाबू मुतालिक देसाई गोवा में हिन्दी प्रचार करने के लिए गये थे। गोवा में हिन्दी का प्रचार करने का उत्तरदायित्व धारवाड़ शाखा ने संभाला है। इसके लिए पणजी में कार्यालय खोला गया है जहाँ सभा के संगठक वहाँ के हिन्दी प्रचारकों का मार्गदर्शन करते हैं।[३१]

प्रचारकों के लिए सम्मेलन का आयोजनः- हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए सभा की तरफ से प्रतिवर्ष प्रचारकों, अध्यापकों एवं प्राध्यापकों के लिए सम्मेलन का आयोजन किया जाता है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की सफलता का श्रेय इन्हीं प्रचारकों को जाता है जिन्होंने अपनी निःस्वार्थ सेवा से इस संस्था को मजबूती प्रदान की है, जिस कारण यह संस्था आज दिन-दूनी, रात-चौगुनी प्रगति के पथ पर अग्रसर है। आज भी इस सभा का मुख्य आधार ये प्रचारक गण ही हैं। इस सम्मेलन में प्रचारकों की समस्याओं पर विशेष ध्यान देकर उन्हें दूर करने का प्रयास किया जाता है, साथ ही पुराने प्रचारकों को आमंत्रित कर उनके अनुभवों से प्रेरणा लेकर प्रचार कार्य को सक्रिय बनाने का कार्य भी किया जाता है।

राष्ट्रीय स्तर की संगोष्ठियों का आयोजनः- भारत की सभी भाषाओं को भावनात्मक और सांस्कृतिक स्तर पर हिन्दी भाषा के माध्यम से बाँधे रखना निहायती जरूरी है। किसी भी भाषा का अस्तित्व इस बात पर निर्भर करता है कि उसमें आदान-प्रदान की और ग्रहण करने की एवं आत्मसात करने की प्रवृत्ति किस हद तक है। चूँकि हिन्दी भारत की संपर्क एवं जनभाषा है तो इस दृष्टि से हिन्दी का महत्व और भी बढ़ जाता है कि वो सभी भाषाओं के साथ तादात्म्य बनाये रखे। इस बात को ध्यान में रखकर राष्ट्रीय स्तर की संगोष्ठियों का आयोजन किया जाता है। इस तरह के आयोजनों से हिन्दी के साथ-साथ अन्य भाषाओं के विकास का मार्ग प्रशस्त करने का कार्य किया जाता है।

सभा की अन्य योजनाएँः- उपर्युक्त कार्यों के अतिरिक्त सभा के द्वारा दक्षिण की भाषाओं के लिए अनुवादकों और दुभाषियों को तैयार करना, प्रशिक्षण महाविद्यालयों के प्राध्यापकों के लिए पुनश्चर्या पाठ्यक्रम चलाना, प्रौढों जन-साधरण के लिए हिन्दी

पाठ तैयार करना, विदेशियों को हिन्दी सिखाने का उपक्रम बनाना आदि कार्य भी किये जा रहे हैं।

इन सब कार्यों को देखकर कह सकते हैं कि हिन्दी के प्रचार-प्रसार में धारवाड़ शाखा की यह सभा प्रगति पथ पर अग्रसर है।[३२]

४.४ कर्नाटक में हिन्दी प्रचार के अन्य स्थान एवं संस्थाएँ

४.४.१ मैसूर राजघराने द्वारा हिन्दी प्रचार

सदियों से संस्कृति, साहित्य तथा संगीत मैसूर राजघराने में प्रश्रय पाता आया है, जिस वजह से इनको बराबर प्रोत्साहन मिलता आया है। संस्कृति, संगीत के अलावा साहित्य के क्षेत्र में कुछ न कुछ नया करते रहना, नयी चीजों को अपनाने आदि में मैसूर राजघराने के लोगों का ध्यान रहता ही था। उसी तरह हिंन्दी सीख कर उसका ज्यादा से ज्यादा प्रचार करना भी ये जरूरी समझते थे। हिन्दी के क्षेत्र में किये जाने वाले कार्यों को देखकर लोगों को पुरस्कृत करना मैसूर राजघराने की परंपरा रही है। हिन्दी प्रचार कार्य के लिए आर्थिक सहायता भी प्रदान करने में ये हिचकते नहीं थे। सन् १९१९ में *'हिन्दी शब्दार्थ पारिजात'* के संपादक श्री द्वारका प्रसाद शर्मा द्वारा संकलित *'भारतीय चरिताम्बुधि'* नामक ग्रंथ के लिए श्री कृष्णराज वोडेयर (चतुर्थ) ने मुक्त हस्त से आर्थिक सहायता प्रदान की। उस समय हिन्दी प्रचार आंदोलन जोर-शोर से अपनी पकड़ बनाये हुए था उसी का परिणाम था कि किसी सम्मेलन में आमंत्रित होने पर वे अपना भाषण हिन्दी में ही दिया करते थे। कृष्णराज वोडेयर (चतुर्थ) के समय में ही मैसूर विश्वविद्यालय में हिन्दी का प्रवेश हो गया था। उनके बाद जो भी गद्दी पर बैठे उन सभी ने हिन्दी के प्रचार-प्रसार में विशेष योगदान दिया। इससे हिन्दी प्रचार आन्दोलन को काफी प्रोत्साहन मिला।[३३]

४.४.२ दक्षिण कन्नड़ प्रदेश में हिन्दी प्रचार

दक्षिण कन्नड़ प्रदेश यानि कि मैंगलोर में हिन्दी प्रचार के कार्य में एस.वी. शिवराम शर्मा, देवदूत विद्यार्थी, वी.एन. बिजूर, कटील गणपति शर्मा, वेंकटराव उद्यावर, मंजेश्वर रत्नाकर कामत, श्रीमती पद्मावती विट्टलराव आदि का विशेष योगदान रहा है। एस.वी. शिवराम शर्मा के मैंगलोर आगमन के बाद यहाँ प्रचार कार्य प्रारंभ हुआ और उसमें धीरे-धीरे प्रगति होने लगी। मैंगलोर में हिन्दी वर्ग खोलने का श्रेय हिन्दी का प्रचार करने वाले आर्यसमाजी प्रचारक एवं हिन्दी साहित्य

सम्मेलन की परीक्षाएं आयोजित करने वाले हिन्दी सेवा समाज (मैसूर) के आर्य समाज के लोगों को जाता है।

देवदूत विद्यार्थी ने स्कूल और कॉलेजों में विद्यार्थियों एवं अध्यापकों को हिन्दी पढ़ाना शुरु किया। विद्यार्थियों, शिक्षित युवकों, अध्यापकों एवं महिलाओं के लिए १९३१-३२ में हिन्दी वर्ग चलाये गये। मैंगलोर में एक केन्द्र की स्थापना कर मद्रास सभा की परीक्षाओं का आयोजन किया जाता था। देवदूत विद्यार्थी के एर्नाकुलम जाने के बाद भी हिन्दी के प्रचार कार्य में यहाँ कमी नहीं आयी अपितु इस कार्य की ज्योति विश्ववेश्वर नारायण बिजूर ने प्रज्ज्वलित कर रखी थी। जिस स्कूल में वे हिन्दी अध्यापन का कार्य संभालते थे उसके अलावा भी उन्होंने अन्य स्कूलों में निःशुल्क हिन्दी वर्ग चलाने का विशेष कार्य शुरु किया था। विद्यार्थियों की बढ़ती संख्या को देखकर उन्होंने अपने सुयोग्य हिन्दी विद्यार्थियों को हिन्दी वर्गों में पढ़ाने के लिए भेजा। बिजूर जी की अथक परिश्रम त्याग-तपस्या का ही फल था कि उनके नेतृत्व में मैंगलोर में हिन्दी युवक प्रचारक दल बना जो बड़े उत्साह के साथ हिन्दी प्रचार कार्य करने लगा। उसी का परिणाम है कि आज भी वहाँ हिन्दी के प्रति लोगों का लगाव देखते ही बनता है।

४.४.३ बेल्लारी में हिन्दी प्रचार

बेल्लारी शहर में हिन्दी प्रचार का कार्य देवदास गाँधीजी की प्रेरणा से सन् १९२८ में शुरु हुआ। १९२९-३० में सुचारु रूप से प्रचार कार्य का प्रारंभ हुआ। सुबह-शाम हिन्दी पढ़ाने का काम टी.बी. केशवराव हरपनहल्ली के हाईस्कूल में किया करते थे। हिन्दी का प्रचार करने के लिए १९३०-३१ में बेल्लारी में हिन्दी वर्ग खोला गया। उन दिनों बेल्लारी पुरानी मद्रास प्रेसिडेन्सी में पड़ता था। १९३७-३८ में मद्रास में जब काँग्रेस मंत्रिमण्डल बना तो स्कूलों में हिन्दी का प्रवेश कर दिया गया। प्रचारकों को हिन्दी अध्यापकों के रूप में नियुक्त किया गया। लेकिन हिन्दी स्कूल में परीक्षा का विषय नहीं रही इस कारण सार्वजनिक रूप से हिन्दी वर्ग चलते रहे। स्कूलों में हिन्दी को स्थान मिलने से हिन्दी का प्रचार और तीव्र गति से होने लगा। इसको देखते हुए जिला हिन्दी प्रेमी मण्डल की स्थापना की गयी। तब से बराबर बेल्लारी शहर और जिले में हिन्दी का प्रचार कार्य चलता आ रहा है।

१९४७ के बाद प्रचार कार्य में तेजी को देखते हुए निदान हिन्दी महाविद्यालय की स्थापना की गयी। इस हिन्दी विद्यालय को मद्रास सरकार ने विशेष शैक्षणिक

संस्था परिगणित करके कुल खर्चे का आधा अनुदान देना शुरु किया। १९५६ में बेल्लारी शहर मैसूर राज्य का हिस्सा बना। १९६१-६२ में मैसूर सरकार के शक्षा विभाग ने अनुदान-विधि में परिवर्तन किया। तब से हिन्दी महाविद्यालय को ग्रैंट-इन-एड्ड (आर्थिक सहायता) उपलब्ध होने लगी।

१९६० से ७० के बीच बेल्लारी में कई जगहों पर हिन्दी वर्ग चलने लगे थे। १९३२-६२ तक १५, ४०० लोगों ने दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की अलग-अलग परीक्षओं के वर्गों में नाम लिखवाया था। उसी समय ११,२४० लोग प्रारंभिक परीक्षाओं में और २,३०० उच्च परीक्षाओं में बैठे थे। हाईस्कूल के हिन्दी टीचर के लिए नियत योग्यता प्राप्त करने वालों की संख्या ९५० थी, जिनमें से ३६३ हिन्दी अध्यापक नियुक्त हुये और जिनमें १६० महिलायें थीं। हिन्दी के प्रचार के लिए मैसूर (कर्नाटक) सरकार से प्राप्त अनुदान से समय-समय पर हिन्दी अध्यापक प्रचारकों के सेमिनार, सम्मेलन और बड़े पैमाने पर समारोह बेल्लारी में पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत आयोजित किये गये।

स्कूलों में शाम के समय स्कूल के हिन्दी अध्यापकों द्वारा हिन्दी वर्ग चलाये जाते हैं। इन्हें कर्नाटक सरकार की तरफ से ऐसे वर्ग स्कूल भवन में ही चलाने की अनुमति सरकारी आदेश सं. हिन्दी-२-इतर-२:७९-८०/१७-९-१९७९ के अनुसार प्राप्त हुई है।[३४] आज भी बेल्लारी में उसी उत्साह-जोश के साथ हिन्दी प्रचार कार्य का काम जारी है।

४.४.४ बेंगलोर की अन्य संस्थाओं द्वारा हिन्दी प्रचार

चारों अखिल कर्नाटकीय संस्थाओं का मुख्यालय बेंगलोर नगर में ही स्थित है। यह चारों संस्थाएँ है:- (१) राष्ट्रभाषा प्रचार सभा, चामराजपेट (२) हिन्दी प्राचरक स्थायी समिति, बेंगलोर (३) कर्नाटक स्वैच्छिक हिन्दी संस्था-संघ, बेंगलोर (४) हिन्दी साहित्य परिषद्, बेंगलोर। पूरे कर्नाटक में ये चारों संस्थाएँ स्तरीय परीक्षाएँ चलाती हैं। इन संस्थाओं को राज्य एवं केंन्द्रीय सरकार से मान्यता प्राप्त है।

राष्ट्रभाषा प्रचार सभा, चामराजपेट:- हिन्दी प्रचार के उद्देश्य से राष्ट्रभाषा प्रचार सभा, चामराजपेट में हिन्दी वर्ग चलाती थी। इस सभा का पुस्तकालय काफ़ी समृद्ध था। कुछ वर्षों तक यह सभा सुचारु रूप से प्रचार कार्य करती रही पर किन्हीं कारणों से आगे चलकर यह सभा बंद हो गयी।

हिन्दी प्रचारक स्थायी समिति, बेंगलोर :- सन् १९४६-५० के बीच जब कई हिन्दी प्रचारक सरकारी हाईस्कूलों में हिन्दी अध्यापक के पद पर नियुक्त किये गये तब उनके स्थायित्व, वेतन-मूल्यों एवं अन्य सुविधाओं की रक्षा करने के लिए हिन्दी प्रचारक स्थायी समिति की स्थापना की गयी थी। जो सही ढंग से अपने कार्यों को संपन्न करती रही। आज भी इस संस्था द्वारा प्रचार कार्य किया जा रहा है। पर इसकी गति में शिथिलता आ गयी है।

कर्नाटक स्वैच्छिक हिन्दी संस्था संघ, बेंगलोरः- इस संस्था की स्थापना का उद्देश्य हिन्दी प्रचार क्षेत्र की सामयिक समस्याओं और हिन्दी के कार्यकर्त्ताओं की कठिनाइयों का समाधान कर उन्हें दूर करना है।

हिन्दी साहित्य परिषद्, बेंगलोर :- सन् १९४०-४४ के बीच यह संस्था बड़े उत्साह से हिन्दी प्रचार कार्य को अंजाम देती रही। उसी समय इस संस्था द्वारा कुछ पुस्तकों को प्रकाशित भी किया गया और साथ ही यह संस्था अपनी परीक्षाएँ भी चलाती थी पर कुछ वर्षों बाद संस्था के हिन्दी प्रचार कार्य की गति धीमी पड़ती गयी और उसका असर यह हुआ कि आज यह संस्था बंद पड़ी है।

४.४.५ भारतीय संस्कृत विद्यापीठ

उपर्युक्त चारों अखिल कर्नाटक स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं की तरह ही भारतीय संस्कृत विद्यापीठ भी एक मान्यता प्राप्त संस्था है। यह संस्था भी बेंगलोर नगर में स्थित है। १९५८ में स्थापित इस संस्था ने शिक्षण संस्था, हाईस्कूल, कॉलेज के रूप में काफी प्रगति कर ली है। इस संस्था की शाखाएँ नगर के भिन्न-भिन्न जगहों पर हैं। स्कूल समय से हटकर सुबह-शाम स्कूलों में हिन्दी वर्ग चलते हैं। इनके विद्यार्थी मद्रास सभा की परीक्षाओं के लिए तैयार किये जाते हैं।

इस संस्था के केन्द्रीय ग्रंथालय में ४,००० से अधिक हिन्दी ग्रंथ हैं। यहाँ पर हिन्दी पुस्तकों के अलावा पत्र-पत्रिकाएँ भी उपलब्ध है। संस्था द्वारा समय-समय पर हिन्दी की वाद-विवाद प्रतियोगिता, सत्रान्त समारोह, वार्षिकोत्सव एवं विद्वानों के भाषण आयोजित किये जाते हैं। इस संस्था को राज्य एवं केन्द्र सरकार से अनुदान प्राप्त है।

४.४.६ आदर्श हिन्दी विद्यालय, बेंगलोर

यह एक स्वतंत्र स्वैच्छिक संस्था है जो बेंगलोर में अपने बलबूते हिन्दी का प्रचार कार्य करती रही है। सरकार की तरफ से इसे कोई आर्थिक सहायता प्राप्त नहीं

है। इस आदर्श हिन्दी विद्यालय की स्थापना १९६० में के. शंकरनारायण के अदम्य उत्साह एवं अध्यवसाय से बसवनगुडी में हुई थी। विद्यार्थियों की बढ़ती संख्या को देखकर इसकी कई और शाखाएँ भी खुलीं। आज तक इस संस्था से हज़ारों छात्र हिन्दी सीख चुके हैं। संस्था द्वारा हिन्दी वाद-विवाद, लेखन-स्पर्धा, मासिक परीक्षा के अलावा सूर, तुलसी और प्रेमचन्द जयन्ती भी मनायी जाती है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की परीक्षाओं के लिए यह संस्था लोगों को तैयार करती है। इस संस्था को एन.डी. कृष्णमूर्ति, बी.एन. नागराजराव, डॉ. सुशीला उपाध्याय, के.एस. श्रीनिवास मूर्ति आदि कई लोगों का विशेष सहयोग मिलता रहा है। आज भी यह संस्था बराबर हिन्दी प्रचार कार्य करती आ रही है।

४.४.७ बेलगाँव में हिन्दी प्रचार

बेलगाँव में १९२४ में हुए काँग्रेस के अधिवेशन में जब गाँधीजी ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित किया तभी से यहाँ हिन्दी का प्रचार कार्य जोर-शोर से चल रहा है। बम्बई हिन्दी विद्यापीठ, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा और राष्ट्रभाषा प्रचार सभा, पुणे के अलावा बेंगलोर की चारों संस्थाओं की परीक्षाएँ इस शहर में आयोजित की जाती है। बेलगाँव में ही हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की परीक्षाओं को भी आयोजित किया जाता रहा है। यहाँ के लोगों में हिन्दी सीखने में बड़ा उत्साह देखने को मिलता है। नागराज ने हिन्दीतर भाषी लोगों को संरचनात्मक पद्धति से कम से कम समय में हिन्दी सिखायी। बेलगाँव हिन्दी प्रचार का एक प्रमुख केन्द्र रहा है और आज भी हिन्दी प्रचार के कार्य में यहाँ उत्साह देखा जा सकता है।

४.४.८ हिन्दी शैक्षणिक सेवा समिति, बीजापुर

इस संस्था का उदय १९६३ में हुआ। सरकारी आदेश संख्या एस. ०६/६४-६५ के अनुसार २०-३-६५ के दिन इसका पंजीकरण हुआ। इस संस्था में कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति की परीक्षाओं के लिए लोगों को तैयार किया जाता है। इसका अपना पुस्तकालय एवं वाचनालय है। कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति की ओर से यहाँ समय-समय पर जिला हिन्दी प्रचार सम्मेलन का आयोजन किया जाता है। इस संस्था द्वारा अब तक बीजापुर एवं उसके आस-पास के स्थानों को मिलाकर हजारों लोगों को हिन्दी पढ़ायी जा चुका है। हर साल केन्द्र सरकार इस संस्था को अनुदान देती है।[३५]

४.४.९ कर्नाटक हिन्दी प्रचार सभा, गुलबर्गा

पहले पुराने हैदराबाद निज़ामी राज्य के अन्तर्गत तीन-चार जिले आते थे जिनमें लोगों की मातृभाषा कन्नड़ थी। उन दिनों दाक्खिनी, मराठी, तेलुगु बोलने वालों की संख्या कम थी। कन्नड़ भाषा प्रदेश के जिले हैं गुलबर्गा, रायचूर, बीदर। इन क्षेत्रों को निज़ाम कन्नड़ कहा जाता था। इस क्षेत्र के हिन्दी प्रचारकों का संबंध हिन्दी प्रचार सभा नामपल्ली, हैदराबाद से था और अब भी है।

१९५६ के बाद ये सभी जिले मैंसूर राज्य के अन्तर्गत आ गये। १९५७-५८ में कर्नाटक के अन्तर्गत आ जाने से इन जगहों पर हिन्दी प्रचार कार्य में तेजी आयी। यहाँ के मुख्य प्रचार संस्था 'कर्नाटक हिन्दी प्रचार सभा' है। जिसका मुख्यालय गुलबर्गा में स्थित है। यहाँ से हैदराबाद की हिन्दी प्रचार सभा की परीक्षाओं का आयोजन किया जाता था। १९५७-५८ में ६५ केंद्रों में ३८०९ परीक्षार्थी बैठे थे।

आजकल यहाँ हिन्दी का प्रचार कार्य काफ़ी तेजी से हो रहा है। गुलबर्गा में स्नातकोत्तर विभाग में हिन्दी एम.ए. (साहित्य) की पढ़ाई होती है। १९८० से गुलबर्गा विश्वविद्यालय में भी हिन्दी विभाग खुल चुका है। उम्मीद है कि आगे इस कार्य में और भी तेजी आयेगी।

४.४.१० हिन्दी प्रचार सभा, कोडगु

इस सभा की स्थापना १९४७ में हुई थी। कोडगु कर्नाटक का एक जिला है। पहले यह एक छोटा सा राज्य था। ब्रिटिश काल में मद्रास का गवर्नर ही कोडगु का चीफ कमीश्नर था। स्वतंत्रता के बाद मडिकेरी में सरकार ने कॉलेज खोला। सी.एम. पुणच्चा के नेतृत्व में सबसे पहले कॉलेज में हिन्दी प्रोफेसर के पद को शुरु किया गया। एम. रजनीबाई हिन्दी प्रोफेसर नियुक्त की गयीं। कोडगु हिन्दी प्रचार सभा के १९५७-५८ में ९ परीक्षा केन्द्र थे। उस वर्ष ३८१ परीक्षार्थी अलग-अलग परीक्षाओं में बैठे थे। इस सभा द्वारा दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की ही परीक्षाएँ चलायी जाती हैं। आज भी यहाँ हिन्दी प्रचार का कार्य अच्छे ढंग से चल रहा है।

४.४.११ हिन्दी प्रचार सभा, तुमकूर

अन्य प्रचार संस्थाओं की तरह ही तुमकूर हिन्दी प्रचार सभा का हिन्दी प्रचार कार्य काफी उल्लेखनीय है। टी. सुब्रह्मणयम, बी.सी. नंजुण्डय्या, वासुदेव आदि की निःस्वार्थ सेवा सुश्रुषा से यह सभा बराबर प्रचार कार्य करती आ रही है।[३६]

कुछ और प्रचार संस्थाओं के द्वारा हिन्दी का प्रचार कार्य किया जा रहा है वे हैं:– श्री ज्ञानज्योति एजुकेशन सोसाइटी, बेंगलोर ; श्री निधि शिक्षण समिति, बेंगलोर ; आदर्श महिला विद्यालय, बेंगलोर ; गुरु हिन्दी शिक्षण मण्डल, बैंगलोर ; श्री जयभारती हिन्दी विद्यालय, बेंगलोर ; सरस्वती हिन्दी विद्यालय, बेंगलोर ; राष्ट्रीय हिन्दी विद्याभवन, धारवाड़ ; हिन्दी विद्यापीठ, हुबली ; आदर्श हिन्दी विद्यापीठ, हुबली ; जनता शिक्षण समिति, हुबली ; हिन्दी प्रचार समिति, मुधोळ ; जनता सेवा संघ, हंसभावी ; गाँधी हिन्दी विद्यापीठ, कुन्दगोळ ;भारती हिन्दी विद्यालय, मैंसूर ; भारती हिन्दी विद्यालय, भद्रावती ; जिला हिन्दी प्रेमी मण्डल, बेल्लारी।

कर्नाटक में हिन्दी का प्रयोग एवं प्रसार कार्य में कई स्वैच्छिक संस्थाओं का योगदान के बारे में अध्ययन करने के बाद अब बैंक, रेलवे, स्कूल, कालेज एवं विश्वविद्यालय में हिन्दी का प्रचार और प्रसार के बारे में चर्चा करेंगे।

४.५ कर्नाटक के बैंकों में हिन्दी

भारत के अधिकांश जन-समुदाय की सम्पर्क भाषा हिन्दी है। इसी के आधार पर संविधान में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया गया है। प्रत्येक राष्ट्रीयकृत बैंक कर्मचारियों का यह कर्त्तव्य बनता है कि वह अपने कार्यालय के सभी काम-काज हिन्दी में करें साथ ही हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाने के लिए पूरी निष्ठा एवं गंभीरता के साथ प्रयास करें। हिन्दी के प्रति प्रतिबद्धता केवल सांविधिक प्रावधानों का अनुपालन करने के लिए ही आवश्यक नहीं है बल्कि इसलिए भी आवश्यक है, क्योंकि हिन्दी राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधने का महत्वपूर्ण आयाम है।

हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए अहिन्दी भाषी क्षेत्र कर्नाटक के राष्ट्रीयकृत बैंकों में कारगर कदम उठाये गये हैं। हिन्दी शिक्षण से लेकर हिन्दी कम्प्यूटर प्रशिक्षण के लिए बैंकों ने अपनी निजी संस्थाएँ कायम की हैं। शाखाओं और कार्यालयों में हिन्दी के लिए उन्मुख वातावरण बनाने के लिए विभिन्न प्रतिस्पर्धाओं एवं प्रतियोगिताओं का आयोजन निरंतर किया जाता है। हिन्दी में काम करने वाले कर्मचारियों, अधिकारियों के लिए प्रोत्साहित योजनाओं का आयोजन भी किया जाता है। इनमें नकद पुरस्कार, स्वर्ण पदक, शील्ड, प्रमाण पत्र आदि शामिल हैं। हर एक बैंक में अपने स्थान पर अलग-अलग पुरस्कार दिये जाते हैं। सभी बैंकों द्वारा प्रयोजन-मूलक हिन्दी प्रशिक्षण के लिए हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है, जिसमें हिन्दी व्याकरण, भारत सरकार के राजभाषा नीति-नियम, हिन्दी

तिमाही प्रगति रिपोर्ट, हिन्दी में पत्राचार, अनुवाद एवं बैकिंग तकनीकी शब्दों पर प्रशिक्षण दिया जाता है। कुछ बैंकों में ३ दिन, कुछ बैंकों में ६ दिन का प्रशिक्षण हिन्दी कार्यशालाओं के माध्यम से दिया जाता है।

सभी बैंकों में सामान्य प्रशिक्षण कार्यक्रमों को भी हिन्दी माध्यम द्वारा चलाना शुरु किया जा चुका है। ग्राहक सेवा, बैंक प्रबंधन, व्यक्तित्व विकास, आंतरिक नियंत्रण, व्यावाहारिक संप्रेषण आदि विषयों पर भी हिन्दी में पढ़ाने का काम शुरु किया गया है। कर्नाटक स्थित केनरा बैंक में इसका अधिक प्रयोग हो रहा है, बैंकों में प्रभावी रूप से हिन्दी लागू करने के लिए भारत सरकार, भारतीय रिर्जव बैंक से समय-समय पर निरीक्षण किया जाता है, राजभाषा संसदीय समिति द्वारा भी बैंकों में राजभाषा कार्यान्वयन का जायजा लिया जाता है। बेंगलूर, मंगलूर, मैसूर, धारवाड़, बेलगाम, हुबली, बीजापुर के अलावा कार्नाटक के अन्य जगहों पर नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति गठित की गई है। समिति द्वारा ६ महीने में एक बार आयोजित होने वाली बैठक में भारत सरकार के अधीन में आने वाली सभी बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं में कार्यान्वित की जा रही हिन्दी की समीक्षा की जाती है। उस समिति द्वारा भारत सरकार के आदेश, जो राजभाषा हिन्दी के बारे में समय-समय पर दिया जाता है, उसको कार्यान्वयन करने हेतु अनुदेश दिये जाते हैं। कर्नाटक से ही प्रारंभ हुए चार प्रमुख बैंकों- केनरा बैंक, विजया बैंक, सिंडिकेट बैंक और कार्पोरेशन बैंक में अधिक काम हिन्दी में किया जा रहा है, क्योंकि इन बैंकों के प्रधान कार्यालय, कर्नाटक में स्थित हैं और वहाँ राजभाषा विभाग होने के कारण बैंकिंग से संबंधित हर काम हिन्दी में करने का प्रयास किया जाता है। इसके अलावा बैंकों के आंचलिक कार्यालयों, क्षेत्रीय कार्यालयों एवं स्थानीय प्रधान कार्यालयों में हिन्दी अधिकारी, हिन्दी अनुवादक कार्यरत होने के कारण हिन्दी में काम दिन-दुगनी रात-चौगुनी बढ़ता जा रहा है। सभी बैंकों के बचत खाता पर्ची, चालू खाता पर्ची, खाता खोलने का आवेदन, अनुदेश पुस्तिका, पास बुक, चेक बुक सभी द्विभाषी अर्थात् हिन्दी और अंग्रेजी में मुद्रित करके उपयोग किया जा रहा है। कुछेक बैंकों में त्रिभाषा अर्थात् कन्नड़, हिन्दी और अंग्रेजी में भी अनुदेश पुस्तिका, पर्ची मुद्रित करके इस्तेमाल किया जा रहा है।

कर्नाटक के सार्वजनिक क्षेत्र बैंकों में अधिकतम कर्मचारी अहिन्दी भाषी होने के कारण, काफी कर्मचारियों को हिन्दी में कार्यसाधक ज्ञान नहीं है। भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग के आदेशानुसार वर्ष २००५ तक सभी कर्मचारियों को

हिन्दी कार्यसाधक ज्ञान दिलाना है, जिसके लिए सभी बैंकों में अलग-अलग योजनाएँ बनाकर सबको हिन्दी सिखाने का कार्य प्रारंभ किया गया है।

हिन्दी में पास बुक भरना, डी.डी. हिन्दी में बनाकर देना, हिन्दी में भरा हुआ आवेदन, चेक स्वीकार करने का काम शुरु हुआ है। बैंकों में कम्प्यूटर क्षेत्रों में काफी सुधार हुआ है। सभी बैंकों की शाखाओं में काम कम्प्यूटर द्वारा हो रहा है। लगभग सभी बैंकों की शाखाएँ कम्प्यूटरीकृत हो गयी हैं। कम्प्यूटरों पर अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी में भी काम शुरु हो गया है। प्रशासनिक कार्यालयों के अलावा शाखा स्तर पर भी कम्प्यूटरों द्वारा हिन्दी में काम होता है। बेंगलूर स्थित केनरा बैंक के अशोक पिल्लर एवं लालबाग (पश्चिम) शाखा में 'बैंक स्क्रिप्ट' नामक सॉफ्टवेयर के जरिए, पास शीट भी हिन्दी एवं द्विभाषी में जारी किया जा रहा है। शब्दरत्न, लीफ आफीस, विन्की, अक्षर, आकृति आदि हिन्दी सॉफ्टवेयर का अधिकतम उपयोग कर्नाटक स्थित बैंकों द्वारा किया जा रहा है।

भारत सरकार के अन्य उपक्रम और कार्यालयों की तुलना में बैंकिंग क्षेत्र में काफी सुधार हिन्दी में हुआ है और हिन्दी में काम बहुत तेजी से आगे बढ़ता जा रहा है।[३७]

४.५.१ कर्नाटक के बैंकों में हिन्दी की प्रगति

राजभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में कर्नाटक राज्य का योगदान स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है। कर्नाटक राज्य में हिन्दी का अस्तित्व अति प्राचीन काल से था। इस संबंध में पर्याप्त प्रमाण मौजूद हैं, परन्तु आधुनिक काल में हिन्दी की विकास यात्रा में कर्नाटक राज्य के बैंकों की भूमिका उल्लेखनीय रही है।

कर्नाटक राज्य के बैंकों में हिन्दी की प्रगति की समीक्षा करने से पहले यह जान लेना जरूरी होगा कि हिन्दी के प्रयोग में कर्नाटक के बैंकों की भूमिका किस क्षेत्र में कितनी है।

(१) निजी क्षेत्र के बैंक

कर्नाटक के बैंकों में निजी बैंक व अन्य सहकारी बैंक तथा विदेशी बैंकों में हिन्दी कहीं-कहीं बोलचाल हेतु प्रयुक्त होती है व कुछ बैंकों के साइन बोर्डों में हिन्दी को भी स्थान मिला है, निजी क्षेत्र के बैंकों में हिन्दी का प्रयोग कम है, लेकिन सरकारी क्षेत्र के बैंकों में हिन्दी की प्रगति उल्लेखनीय है।

(२) सरकारी क्षेत्र के बैंक

कर्नाटक राज्य में सरकारी क्षेत्र के बैंकों में हिन्दी की प्रगति अत्यधिक तेजी से हुई है। इस प्रगति का मुख्य कारण यह है कि कर्नाटक स्थित बैंकों ने राजभाषा हिन्दी को एक संवैधानिक दायित्व के रूप में ही नहीं बल्कि मन से अपनाया है। इसलिए कर्नाटक के बैंक इस दिशा में काफी आगे हैं।

(३) वार्षिक कार्यक्रम

जहाँ तक कर्नाटक के बैंकों में हिन्दी को सरकारी स्तर पर लागू करने का प्रश्न है, इस दिशा में भी कर्नाटक के बैंक काफी आगे हैं। भारत सरकार, गृह मंत्रालय द्वारा जारी वार्षिक कार्यक्रम के कार्यान्वयन की दृष्टि से कर्नाटक के बैंकों की प्रगति निम्न बिंदुओं से आँकी जा सकती है:-

(क) कर्नाटक के बैंकों में राजभाषा अधिनियम की धारा ३ (३) व राजभाषा नियम के नियम ५ का शत-प्रतिशत अनुपालन हो रहा है।

(ख) पत्राचार के निर्धारित लक्ष्यों में भी कर्नाटक के बैंक राजभाषा कार्यान्वयन कार्यक्रम २००४-२००५ में वर्णित लक्ष्यों को अधिकांश बैंक पार कर चुके हैं तथा कुछ बैंक लक्ष्य प्राप्त करने के निकट हैं।

(ग) हिन्दी में कम्प्यूटरीकरण की दिशा में कर्नाटक, स्थित बैंक बहुत आगे हैं, इनमें से भी कार्पोरेशन बैंक व केनरा बैंक की प्रगति बहुत अच्छी है।

(घ) हिन्दी भाषा प्रशिक्षण के मामले में कर्नाटक बैंक अपने निर्धारित लक्ष्य प्राप्त करने के अति निकट है। भारत सरकार द्वारा निर्धारित अवधि अर्थात् २००५ तक सभी कर्नाटक स्थित बैंक इस लक्ष्य को प्राप्त कर लेंगे इसकी पूरी उम्मीद है।

(ङ) कर्नाटक के सभी सरकारी क्षेत्र के बैंकों की वेबसाइट हिन्दी में हैं तथा इसमें बैंक की समस्त जानकारियाँ हिन्दी में भी उपलब्ध हैं।

(च) कर्नाटक स्थित बैंकों में जितना भी प्रशिक्षण साहित्य, हैण्डआउट, तथा प्रक्रियागत सामग्री जैसे कोड, मैनुअल, डेस्क गाइड आदि सबी हिन्दी में उपलब्ध हैं।

(४) राजभाषा नीति का कार्यन्वयन

राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम के अलावा राजभाषा नीति के कार्यान्वयन में भी कर्नाटक के बैंकों की स्थिति बहुत मजबूत है। इसको विश्लेषित करने के निम्न कारण हैं:-

(क) हिन्दी में मौलिक पुस्तक लेखन योजना को सभी बैंकों ने अपनाया है और इसके अन्तर्गत अनेक पुस्तकें लिखी जा रही हैं।

(ख) कर्नाटक स्थित बैंक संदर्भ साहित्य/सहायक सहित्य व शब्दावली निर्माण में काफी आगे हैं।

(ग) बैंक की प्रगति परीक्षा व पदोन्नति परीक्षाओं में हिन्दी का विकल्प उपलब्ध है।

(घ) राजभाषा सम्बन्धी सूचनाओं का कम्प्यूटरीकृत भण्डारण व प्रसारण नियमित रूप से होता है।

(ङ) कार्यालयों की अधिसूचना की स्थिति संतोषजनक है।

(च) राजभाषा के प्रचार-प्रसार के लिए व दैनिक कामकाज में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के लिए हिन्दी कार्यशालाएँ व हिन्दी संगोष्ठियाँ नियमित रूप से आयोजित की जाती हैं।

(छ) कर्नाटक स्थित बैंकों में हिन्दी कार्यान्वयन के लिए निर्धारित पदों की भर्ती की गई है व इस कार्य में निष्ठावान व समर्पित अधिकारियों, कर्मचारियों की टीम निरंतर राजभाषा की सेवा में लगी है।

(ज) कर्नाटक स्थित बैंकों के कार्यपालक हिन्दी कार्यान्वयन के प्रति जागरूक हैं। उनके योग्य निर्देशन में राजभाषा उत्तरोत्तर प्रगति की ओर अग्रसर हैं।

यहाँ पर उदाहरण के तौरपर कार्पोरेशन बैंक का जिक्र किया गया है।

४.५.२ कार्पोरेशन बैंक, मण्डल कार्यालय, हुबली

बैंकों में हिन्दी का कार्य कैसे चल रहा है यह जानने के लिए हुबली स्थित कॉर्पोरेशन बैंक के मण्डल कार्यालय का निरीक्षण किया गया। वहाँ से यह ज्ञात हुआ कि कॉर्पोरेशन बैंक का प्रधान कार्यालय मंगलूर में स्थित है। वहाँ पर राजभाषा प्रभाग है जिसका अधिकारी का पदनाम मुख्य प्रबंधक (हिन्दी) है। मुख्य प्रबंधक के अलावा उस राजभाषा प्रभाग में अन्य ८ हिन्दी अधिकारी के पद भी हैं। इसके अलावा तीन टंकक तथा दो अनुवादक भी हैं। कॉर्पोरेशन बैंक के प्रधान कार्यालय के अलावा पाँच मण्डल कार्यालय बैंगलोर, उडुपी, हुबली, हासन, एवं बेलगम में है। इन सभी मण्डल कार्यालयों में एक-एक हिन्दी अधिकारी के पद भी हैं। कार्पोरेशन

बैंक अपने अधिकारी एवं कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने हेतु बैंगलोर एवं मंगलूर में एक-एक प्रशिक्षण कॉलेज चलाती है।

कॉर्पोरेशन बैंक हिन्दी के प्रचार के उद्देश्य से *'मंगला'* नामक हिन्दी की त्रैमासिक पत्रिका पिछले छः सालों से प्रकाशित कर रही है। इससे पहले *'क्षेम'* नामक द्विभाषी (हिन्दी-अंग्रेजी) त्रैमासिक पत्रिका पिछले तीस सालों से कॉर्पोरेशन बैंक द्वारा प्रकाशित होती आ रही है। इन दोनों पत्रिकाओं में कॉर्पोरेशन बैंक की गतिविधियों के अलावा अनेक प्रकार के उपयोगी लेख, साहित्यिक विधाएँ आदि कर्मचारी एवं उनके बच्चों द्वारा लिखे जाते हैं। इन दोनों पत्रिकाओं में छपने वाले लेखादि को रु. १५० प्रति एक हज़ार शब्द के अनुपात में बैंक अदा करती है।

कॉर्पोरेशन बैंक द्वारा "राजभाषा श्रेष्ठता पुरस्कार" प्रदान किया जाता है जिसकी धनराशि पाँच हज़ार रुपया है। इसी तरह हिन्दी में काम करने के लिए "कार्य राजभाषा पुरस्कार" भी दिया जाता है जिसकी धनराशि निम्नलिखित हैं:-

प्रथम पुरस्कार - रु. २०००/-
द्वितीय पुरस्कार - रु. १५००/-
तृतीय पुरस्कार - रु. १०००/-

इसके अतिरिक्त इसी पुरस्कार के अन्तर्गत रु. ५००/- का सात सांत्वना पुरस्कार भी दिया जाता है। उपरोक्त पुरस्कार पाने के लिए साल में न्यूनतम ८००० हिन्दी शब्दों का प्रयोग करना अनिवार्य है।

कॉर्पोरेशन बैंक के अधिकारियों को भी "संपर्क राजभाषा अधिकारी पुरस्कार" दिया जाता है जिसकी धनराशि निम्नलिखित है:-

प्रथम पुरस्कार - रु. २०००/-
द्वितीय पुरस्कार - रु. १५००/-
तृतीय पुरस्कार - रु. १०००/-

इसके अतिरिक्त इसी पुरस्कार के अन्तर्गत रु. ५००/- का सात सांत्वना पुरस्कार भी अधिकारियों को दिया जाता है।

कॉर्पोरेशन बैंक के कर्मचारी अगर निम्नलिखित परिक्षाएँ उत्तीर्ण करते हैं तो उन्हें भी उन परीक्षाओं के आगे दर्शायी गयी धनराशि पुरस्कार के रूप में दी जाती है।

परीक्षा का नाम	धनराशी
(i) प्रबोध	रु. १०००/–
(ii) प्रवीण	रु. १५००/–
(iii) प्राज्ञ	रु. १५००/–
(iv) हिन्दी टंकण	रु. १२००/–
(v) हिन्दी आशुलिपि	रु. १५००/–

इसके अतिरिक्त हिन्दी में टंकण का कार्य करने वाले कर्मचारी को रु. १२० प्रतिमाह के दर से मिलता है।

यह स्वाभाविक है कि उपरोक्त पुरस्कारों को पाने के लिए निश्चित तौर पर अधिकारी एवं कर्मचारी हिन्दी में कार्य करने में रुचि लेंगे। इससे हिन्दी का प्रचार और प्रसार करने में मदद मिलेगी। सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि कर्नाटक के बैंकों में काम करने वाले सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों का हिन्दी के प्रति बहुत ही आदरपूर्ण भावना है। सभी हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में आदर देते हैं। आज तक कोई भी ऐसा मामला सामने नहीं आया है जहाँ किसी अधिकारी या कर्मचारी ने हिन्दी के प्रति अरुचि या विरोध दर्शाया हो।

हिन्दी कर्नाटक में सही अर्थों में बड़ी बहन का आदर पा रही है, यही कारण है कि हिन्दी का यहाँ इतना विस्तार हो रहा है। कुल मिलाकर कर्नाटक के बैंकों में हिन्दी की प्रगति बहुत ही अच्छी है व भविष्य में इसके और अधिक प्रभावी होने की पूर्ण संभावना है।

४.६ मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालय, हुबली में हिन्दी का प्रयोग एवं प्रसार

सीमित संसाधन एवं अन्य कठिनाईयों के कारण यहाँ केवल हुबली स्थित मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालय का चर्चा किया गया है।

हुबली मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालय केन्द्र सरकार का एक प्रमुख एवं हुबली–धारवाड़ का सबसे बड़ा प्रशासनिक मण्डल कार्यालय है। इसके अन्तर्गत दक्षिण मध्य रेल के बहुत से स्टेशन आते हैं, कोल्हापुर, वास्को से गुंटकल, सोलापुर के सभी स्टेशन इस मण्डल के अधीन हैं।

मण्डल रेल प्रबंधक कार्यालय में अध्यक्ष के अलावा ६०० से अधिक कर्मचारी एवं ३० से अधिक अधिकारी हैं। इनमें से ५० प्रतिशत से अधिक कर्मचारी और अधिकारी हिन्दी का ज्ञान रखते हैं। जिनको हिन्दी का ज्ञान नहीं है उन कर्मचारियों को हिन्दी में प्रशिक्षण देना है। सरकारी नियमों के अनुसार इन्हें 'प्रबोध' 'प्रवीण' 'प्राज्ञ' परीक्षाओं में उत्तीर्ण होना अनिवार्य है। यह परीक्षाएँ साल में दो बार आयोजित की जाती हैं।

४.६.१ हिन्दी अनुभाग और उसका कार्य क्षेत्र

हुबली मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालय और उनके अधीन के स्टेशनों और अन्य संबंधित कार्यालयों में राजभाषा हिन्दी को प्रयोग में लाने के लिए तथा नियमों के पालन के लिए मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालय में एक हिन्दी अनुभाग कार्यरत है। इस हिन्दी अनुभाग में एक राजभाषा अधिकारी और उनके अधीन जो कर्मचारी काम करते हैं वे इस प्रकार हैं:–

(१) एक राजभाषा अधिक्षक
(२) एक राजभाषा सहायक ग्रेड-I
(३) चार राजभाषा सहायक-ग्रेड-II (३ पद रिक्त)
(४) एक हिन्दी टंकक
(५) एक लिपिक
(६) एक चपरासी

उपरोक्त हिन्दी अनुभाग का कार्य काफी विस्तृत है। निम्नलिखित रेल लाईनों में आने वाले सभी स्टेशनों में हिन्दी के काम का निरीक्षण करना इसी अनुभाग का दायित्व है

१. हुबली – पुणे के बीच आने वाले सभी स्टेशन
२. हुबली – वास्को के बीच आने वाले सभी स्टेशन
३. हुबली – गुटंकल के बीच आने वाले सभी स्टेशन
४. हुबली – सोलापुर के बीच आने वाले सभी स्टेशन
५. मिरज – सोलापुर के बीच आने वाले सभी स्टेशन

उपरोक्त सभी स्टेशनों में हिन्दी में काम करवाने का कार्य बहुत ही क्लिष्ट एवं चुनौतिपूर्ण है। सभी स्टेशनों के नामपट्ट, सूचनापट्टों में नियमानुसार प्रादेशिक भाषा

तथा अंग्रेजी के साथ हिन्दी के प्रयोग को सुनिश्चित करना और इन स्टेशनों में कार्य करने वाले ऐसे कर्मचारी/अधिकारियों को प्रशिक्षित करना जिनके पास हिन्दी का नियमानुसार ज्ञान नहीं है, इन्हें हिन्दी की गतिविधियों में शामिल करवाना, प्रोत्साहित करना निश्चित तौर पर चुनौती भरा काम है।

इस समय हिन्दी अनुभाग में राजभाषा अधिकारी के पद पर श्री वी.के. वानखेड़े कार्यरत हैं। वे हिन्दी के प्रचार के लिए अपना पूरा सहयोग कर रहे हैं।

हुबली मण्डल रेल प्रबनधक कार्यालय का हिन्दी अनुभाग निम्नलिखित कार्य करता है।

(१) हिन्दी के कार्यान्वयन के लिए बैठकों का आयोजनः- भारत सरकार, गृह मंत्रालय के अनुदेशों के अनुसार तिमाही में एक बार हर कार्यालय में राजभाषा कार्यान्वयन की बैठक करना अनिवार्य है। इस बैठक की अध्यक्षता कार्यालय अध्यक्ष को करनी होती है। इस बैठक में कार्यालय में हो रहे हिन्दी के काम की प्रगति का जायजा लिया जाता है और निर्णय लिए जाते हैं। मण्डल रेल कार्यालय में भी राजभाषा कार्यान्वयन् समिति का गठन किया गया है। इस समिति के कुल सदस्यों की संख्या २१ है तथा मण्डल रेल प्रबन्धक इसके अध्यक्ष हैं। राजभाषा अधिकारी इस समिति के सदस्य सचिव हैं। इस समिति की तिमाही में एक बार बैठक होती है।

हुबली मण्डल रेल कार्यालय के अतिरिक्त निम्नलिखित स्टेशनों/कार्यालयों में भी उप राजभाषा कार्यान्वयन समितियों का गठन किया गया हैः-

(i) हुबली रेल स्टेशन
(ii) लोकोफोरमेन कार्यालय, हुबली
(iii) गदग
(iv) होसपेट
(v) बेल्लारी
(vi) कैसलरोक
(vii) वास्को
(viii) बेलगम
(ix) मिरज

(x) कोल्हापुर
(xi) घोर्पडी

इन उपसमितियों की बैठक भी हर तिमाही में होती है जिसकी अध्यक्षता उस कार्यालय के अध्यक्ष करते हैं। इस तरह ये समितियाँ मण्डल रेल कार्यालय के हिन्दी अनुभाग के कामों में हाथ बटा रही है।

प्रशिक्षण

मण्डल रेल कार्यालय हिन्दी प्रशिक्षण आयोजन करने में बड़ी भूमिका निभाती है। मण्डल रेल कार्यालय के वरिष्ठ मण्डल लेखा अधिकारी हिन्दी शिक्षण योजना, हुबली के कार्यप्रभारी हैं। इसके तहत हुबली धारवाड़ स्थित सभी केन्द्र सरकार के कार्यालयों, बैंकों, उपक्रमों के कर्मचारियों को हिन्दी प्रशिक्षण प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ परीक्षाओं के माध्यम से दिया जाता है। रेल मण्डल कार्यालय में ही हिन्दी कक्षाओं का आयोजन होता है। कक्षाओं के लिए एक अलग कक्ष उपलब्ध है। इन कक्षाओं में ज्यादातर रेल कर्मचारियों को ही प्रशिक्षित किया जाता है लेकिन कभी-कभी दूसरे कार्यालयों के कर्मचारी भी यहाँ प्रशिक्षण पाने आ जाते हैं। इसके अलावा हिन्दी टाईपिंग प्रशिक्षण भी यहाँ दिया जाता है और यह कार्यालय गृह मंत्रालय द्वारा आयोजित परीक्षाओं का परीक्षा केन्द्र भी है।

हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन

हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त, कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त तथा प्राज्ञ परीक्षाओं में उत्तीर्ण कर्मचरियों के लिए हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है। इन कार्यशालाओं में दिन-प्रतिदिन का काम किस तरह हिन्दी में करना है इसको सिखाया जाता है। यह एक तरह का प्रशिक्षण है।

गृह मंत्रालय राजभाषा विभाग के अनुदेशों के अनुसार साल में चार बार कार्यशालाओं का आयोजन करना होता है। मगर मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालय, हुबली में साल में दो बार कार्यशाला का आयोजन किया जाता है। जिसमें लगभग ३० कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया जाता है। इन कार्यशालाओं का आयोजन ५ दिन के लिए होता है। प्रतिदिन ६ घंटे का व्याख्यान होता है। इन कार्यशालाओं में व्याख्यान देने हेतु प्रधान कार्यालय से व्याख्याता आते हैं तथा कार्यालय के हिन्दी अधिकारी तथा हिन्दी अधीक्षक भी व्याख्यान देते हैं। इस तरह इस कार्यालय में

हिन्दी में कार्य करने के लिए कर्मचरियों को सही दिशा में नियमानुसार सुविधाएँ दी जा रही हैं।

राजभाषा सप्ताह का आयोजन

हुबली मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालय में हर साल मार्च के महीने में राजभाषा सप्ताह का आयोजन किया जाता है। इस सप्ताह में हिन्दी के प्रति लोगों को विशेष रूप से आकर्षित करने के लिए कई कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। हिन्दी निबन्ध, हिन्दी भाषण तथा हिन्दी टंकण प्रतियोगिताओं को आयोजित किया जाता है।

राजभाषा सप्ताह का समापन सांस्कृतिक कार्यक्रमों में हिन्दी नाटक अभिनय, गीत-संगीत कार्यक्रम प्रमुख होते हैं। सप्ताह के प्रतियोगिताओं में भाग लेकर सफल हुए विजेताओं को पुरस्कार दिया जाता है। इस तरह का समारोह हिन्दी के प्रति कर्मचारियों में आकर्षण पैदा करता है।

विभागीय परीक्षाओं में हिन्दी का विकल्प

मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालय कई विभागीय परीक्षाओं का आयोजन करता है और भारत सरकार के आदेशों के अनुसार इन परीक्षाओं को हिन्दी में लिखने की सुविधा है। इन आदेशों का पूरा-पूरा पालन हो रहा है। सभी प्रश्न-पत्रों को हिन्दी/अंग्रेजी में ही बनाया जाता है। इस तरह हिन्दी का ज्ञान रखने वाले कर्मचारियों को हिन्दी में लिखने की सुविधा से काफी लाभ है।

४.६.२ हिन्दी पुस्तकालय

हिन्दी साहित्य के जरिये हिन्दी भाषा में रुचि पैदा करने के लिए सारे मण्डल में १० पुस्तकालय हैं जिनमें हिन्दी पुस्तकें उपलब्ध हैं। जहाँ पुस्तकालय हैं उन कार्यालयों का नाम निम्नलिखित हैं:-

(१) मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालय, हुबली
(२) रेलवे अस्पताल, हुबली
(३) रेलवे स्टेशन, हुबली
(४) लोकोफोरमेन कार्यालय, हुबली
(५) गदग रेलवे स्टेशन
(६) होसपेट रेलवे स्टेशन
(७) कैसलरोक रेलवे स्टेशन
(८) बेलगम रेलवे स्टेशन

(९) मिरज रेलवे स्टेशन
(१०) घोर्पडी रेलवे स्टेशन

यह देखा जा सकता है कि रेल विभाग में हिन्दी को सही रूप में कार्यालय में पहुँचाने में काफी प्रयत्न किया जा रहा है। उपरोक्त गदग, बेलगम, कैसलरोक जैसे छोटे या मध्यम श्रेणी के रेलवे स्टेशनों में हिन्दी का पुस्तकालय होना केन्द्र सरकार के मंत्रालयों में रेल मंत्रालय का राजभाषा हिन्दी को सही रूप देने के प्रति सक्रिय रहने का प्रमाण है।

मण्डल कार्यालय के हिन्दी पुस्तकालय में ५००० से अधिक हिन्दी किताबें हैं जो एक काफी सराहनीय संग्रह है। इस पुस्तकालय के सदस्यों की संख्या २०० से अधिक है। यह पुस्तकालय एक अलग कक्ष में स्थित है जो प्रतिदिन १-२ बजे तक खुला रहता है। इस अवधि में कम-से-कम २०-२५ कर्मचारी पुस्तकालय आते हैं।

रेलवे में प्रयुक्त हिन्दी शब्दावली

हिन्दी में मूल रूप से काम करने में कर्मचारियों को हिन्दी तकनीकी शब्द लिखने की समस्या आती है। जब अंग्रेज़ी शब्दों के समानार्थ शब्द हिन्दी में उपयोग कर वाक्यों की रचना करनी पड़ती है, तब कर्मचारी दुविधा में पड़ जाते हैं। इस तरह की समस्या को सुलझाने में भारत सरकार ने कई कदम उठाये हैं। शिक्षा विभाग ने वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली के लिए एक आयोग गठित किया था। इस आयोग ने कई शब्दों को सृजित किया है। इसके अलावा हर मंत्रालय ने अपने स्तर पर पारिभाषिक शब्दों के लिए व्यवस्था की है।

इसी क्रम में रेल मंत्रालय ने भी अपनी शब्दावली को प्रकाशित किया है।

नामपट्ट, सूचनापट्ट, फॉर्म, रबड़ की मुहरें, रजिस्टरों, मैनुअलों की स्थिति

रेल मण्डल कार्यालय के सभी नामपट्टों में अंग्रेजी तथा कन्नड़ के साथ हिन्दी का प्रयोग हुआ है। अधिकारियों के नाम फलक भी हिन्दी में बनाये गये हैं। रेल विभाग के सभी फॉर्म हिन्दी और अंग्रेज़ी दोनों भाषाओं में मुद्रित हैं। ज्यादातर फाइल शीर्षक हिन्दी एवं अंग्रेज़ी में पाये जाते हैं। विभाग के मैनुअल भी हिन्दी एवं अंग्रेजी में मुद्रित हैं। कार्यालय में प्राप्त हिन्दी पत्रों का उत्तर हिन्दी में ही दिया जा रहा है।

सरकारी कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग को ध्यान में रखते हुए हुबली मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालय विभिन्न विभागों के लिए हिन्दी पर्याय की शब्दावलियाँ तैयार कर रही है। अभी तक अंग्रेज़ी-हिन्दी शब्दावली चिकित्सा विभाग के लिए, कार्मिक

विभाग के लिए तथा वाणिज्य विभाग के लिए प्रकाशित किये गये है। अन्य विभाग के लिए यह कार्य जारी है।

सन् १९८५ में *'रेल भारती'* नामक पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ हुआ मगर पिछले दो साल से इसका प्रकाशन स्थगित है। हुबली रेल मण्डल प्रबन्धक कार्यालय में स्थित हिन्दी अनुभाग को हिन्दी के प्रयोग और प्रसार के कार्य के लिए प्रतिवर्ष साढ़े तीन लाख रुपये की धनराशि उपलब्ध करायी जाती है।

यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि मण्डल कार्यालय परिसर में हिन्दी का वातावरण दिखायी देता है। न सिर्फ नामपट्ट में ही हिन्दी का प्रयोग किया जाता है बल्कि पूरे परिसर में ऐसे प्लेट एक-एक खम्भे पर लटकाये गये हैं जिसमें एक तरफ हिन्दी की लोकोक्तियों को लिखा गया है, दूसरी तरफ प्रादेशिक भाषा कन्नड़ में लोकोक्तियाँ लिखी गयी हैं। ऐसा माहौल तो अन्यत्र कम ही दिखायी पड़ता है। कुल मिलाकर मण्डल कार्यालय में हिन्दी के प्रयोग और प्रसार का कार्य संतोषजनक है।

४.७ कर्नाटक के शैक्षणिक संस्थाओं में हिन्दी

४.७.१ स्कूलों में हिन्दी

४.७.१.१ स्वतंत्रता पूर्व स्कूलों में हिन्दी

मैसूर राज्य के दो प्राईवेट हाई स्कूलों (नैनल हाईस्कूल, बैंगलोर और बानुमय्या हाईस्कूल, मैसूर) में १९३५ के पहले से ही स्कूल की प्रथम एवं द्वितीय कक्षा में हिन्दी का अध्यापन अनिवार्य कर दिया गया। शिक्षा विभाग के आदेश संख्या १००१-शिक्षा ५९२-२९-४/६-३-१९३० के अनुसार एस.एस.एल.सी. परीक्षा के पाठ्यक्रम में द्वितीय भाषा के तौर पर हिन्दी पढ़ाने का प्रावधान कर दिया गया। पर किसी भी स्कूल में पढ़ाई का प्रबंध नहीं था। ५-४-३२ वाले सरकारी आदेश सं. ४०८६-शिक्षा२९७-३१-८ के अनुसार इसमें संशोधन करके हिन्दी को वैकल्पिक स्थान दिया गया। यदि कोई हिन्दी प्रचार सभा स्थानीय सरकारी हाईस्कूल में तीन वर्ष तक अवैतनिक रूप से हिन्दी की पढ़ाई की व्यवस्था की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेती तो सभा के हिन्दी प्रचारक को वहाँ हिन्दी पढ़ाने की अनुमति प्रदान की जाती। १९३८ से ऐसे हिन्दी प्रचारक को स्कूली वर्ष में (यानि वर्ष में दस महीने) अंशकालीन अध्यापक मानकर सरकार की ओर से भत्ता मिलने लगा और यह भत्ता १९४५ से वर्ष में बारहों महीने देने का प्रावधान कर दिया गया।[३८]

हिन्दी, मराठी, गुजराती, सिंधी, बंगला, भाषा-भाषी छात्रों को मैसूर राज्य प्रशासन के आदेश सं.ई. ३६३३ शिक्षा/१६९-४१-४/१८-३-१९४२ के अनुसार एस.एस.एल.ली में द्वितीय भाषा हिन्दी पढ़ने की अनुमति प्रदान की गयी। लेकिन पढ़ाई की व्यवस्था छात्रों को अपनी तरफ से करनी पड़ती थी। १९३५ से मैसूर राज्य के मिडिल स्कूलों की अंतिम तीन कक्षाओं में हिन्दी वैकल्पिक विषय के तौर पर पढ़ने की सुविधा कर दी गयी। १९३७ में जब मद्रास में राजाजी वाली काँग्रेसी सरकार ने प्रशासन संभाला तब उन दिनों के विशाल मद्रास प्रान्त के १२५ स्कूलों में १९३७-३८ में सर्वप्रथम हिन्दी का प्रवेश करा दिया गया। कर्नाटक का दक्षिणी कन्नड़ जिला उस समय मद्रास प्रान्त में पड़ता था। १९३७-३८ में दक्षिण कन्नड़ के छः स्कूलों-गवर्मेंट मॉडल स्कूल, मैंगलोर ; सेकेंडरी टीचर्स ट्रेनिंग स्कूल फॉर वूमन, मैंगलोर ; बोर्ड हाईस्कूल, कार्कल ; संत एलोयशियस कॉलेज (स्कूल विभाग) मैंगलोर ; बोर्ड हाईस्कूल, मुल्की ; कैनरा हाईस्कूल, मैंगलोर में हिन्दी की पढ़ाई अनिवार्य कर दी गयी। बम्बई प्रान्त के काँग्रेसी प्रशासन ने भी खेर-साहब के मंत्रित्व काल में धारवाड़, कारवार, बेलगाम और बीजापुर जिलों के स्कूलों में हिन्दी की पढ़ाई अनिवार्य कर दी।

इस प्रकार स्वतंत्रता से पूर्व सारे कर्नाटक के कई स्कूलों में हिन्दी का प्रवेश हो चुका था।

४.७.१.२ स्वतंत्रता बाद स्कूलों में हिन्दी

इस समय तक हिन्दी के प्रति सारे देश में आभूतपूर्व उत्साह उत्पन्न हो गया था। १९५१ में हिन्दी के राज्य भाषा घोषित होने के पश्चात् हिन्दी प्रचार आन्दोलन में नई गति आई। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की प्रथम दशाब्दि में (देश के सारे हिन्दीतर प्रांतों में सर्वप्रथम) मैसूर राज्य के हाईस्कूलों में हिन्दी का अध्ययन आवश्यक कर दिया गया। मैसूर राज्य द्वारा उठाया गया यह कदम अन्य राज्यों के लिए आदर्श बन गया।

मैसूर रियासत हिन्दी प्रचार समिति ने एच.सी. दासप्पा की अध्यक्षता में मार्च १९४८ में बैंगलोर में अखिल मैसूर हिन्दी प्रचारक सम्मेलन का समावेश किया। उसके एक प्रस्ताव स्वरूप मैसूर सरकार ने हिन्दी की पढ़ाई स्कूलों में आवश्यक करते हुए ई. ५०६५-७-शिक्षा १५९-४८-१५/१८-११-४९ वाला निम्रांकित आदेश निकाला। इस आदेश के मुख्य अंश इस प्रकार है :

(१) मार्च १९४८ में संपन्न चतुर्थ अखिल मैसूर राज्यीय हिन्दी प्रचारक सम्मेलन ने मैसूर राज्य सरकार से एक प्रस्ताव के द्वारा प्रार्थना की है कि राज्य की शिक्षा प्रणाली में ऐसे परिवर्तन किये जायें जिससे राज्य के मिडिल स्कूल, हाईस्कूल और कॉलेजों की कक्षाओं में हिन्दी अध्ययन आवश्यक हो।

(२) शिक्षा विभाग के डायरेक्टर का कथन है कि भारत के स्वतन्त्र होने के उपलक्ष्य में हमारी शिक्षा-प्रणाली में तुरन्त कतिपय सुधार लाना ज़रूरी है। "संकीर्ण प्रांतीयता से बचने और देश की एकता के सूत्रों को मज़बूत करने के लिए समूचे राष्ट्र के लिये एक सामान्य भाषा अत्यन्त आवश्यक है।" इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु स्कूलों के पाठ्यक्रम में हिन्दी के लिए प्राविधान करना हमारी शिक्षा-प्रणाली के अत्यावश्यक सुधारों में से है। अतः निम्नांकित मुद्दों पर प्रशासन का आदेश अपेक्षित है जिससे हाईस्कूलों में हिन्दी का प्रवेश कराने की दिशा में आगे कदम बढ़ाया जाय :

(i) पहले समस्त हाईस्कूलों में हिन्दी का प्रवेश हो, मिडिल स्कूलों में बाद में हो।

(ii) एस.एस.एल.सी के वर्तमान पाठ्यक्रम में ही हिन्दी के लिए स्थान दिया जाय। समूचे पाठ्यक्रम में परिवर्तन करना भी विचाराधीन है।

(iii) अंग्रेजी से एक पीरियड और पुस्तकालय कार्य (Library work) से एक पीरियड निकाल कर हिन्दी के लिए दिये जायें।

(iv) समस्त छात्रों का हिन्दी पढ़ना आवश्यक हो। हिन्दी देवनागरी लिपि के द्वारा पढ़ायी जाय।

(v) हिन्दी आंतरिक (स्कूली) परीक्षा का विषय मात्र रहे; पर वह एस.एस.एल.सी सार्वजनिक परीक्षा का विषय न हो।

(vi) सार्वजनिक परीक्षा देने के योग्य छात्रों का चुनाव करते समय अर्थात् एस.एस.एल.सी परीक्षा में बैठने के लिए यह आवश्यक है कि छात्रों के बारे में स्कूली अधिकारी इस बात से आश्वस्त हो जायें कि छात्र सफलतापूर्वक हिन्दी कोर्स पूरा कर चुके हैं।

(vii) पण्डित और मौलवी लोगों को दिये जाने वाले वेतनमान हिन्दी अध्यापकों को भी प्रदान किया जाय।

(viii) अंशकालीन हिन्दी अध्यापकों की नियुक्ति पर उन्हें प्रति सप्ताह एक घंटे की पढ़ाई के पीछे तीन रूपये के हिसाब से मासिक भत्ता मंजूर किया जाय।

फिलहाल पाँच वर्ष की सेवा किये हुए हिन्दी अध्यापकों को एस.एस.एल.सी पास न होने पर भी और सरकारी सेवा प्रवेश के लिए निश्चित वयोमिति से अधिक वयवाले हों तो भी सरकारी सेवा में सम्मिलित कर लिया जाय। इन्हें (Central Recruitment Board) के नियमों से छूट दी जाय।

आदेश

(३)........शिक्षा-विभाग के निदेशक के प्रस्ताव स्वीकृत हैं।

(४) हिन्दी अध्यापकों के लिए निम्नांकित योग्यताएँ निश्चित की जाती हैं :

(i) दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास की राष्ट्रभाषा विशारद परीक्षा में उत्तीर्णता। नौकरी के स्थायित्व एवं वेतनमान की प्राप्ति के लिए अध्यापकों का राष्ट्रभाषा विशारद विशेष योग्यता परीक्षा में उत्तीर्ण होकर प्रचारक कोर्स पूरा करना आवश्यक है।

अथवा

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की 'मध्यमा' अर्थात् विशारद (साहित्य) में उत्तीर्णता ।

या

काशी विद्यापीठ की 'कोविद' परीक्षा में उत्तीर्णता या मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद, बैंगलोर के ई. १९५० के बाद की 'हिन्दी रत्न परीक्षा' में उत्तीर्णता ।

मद्रास विश्वविद्यालय की हिन्दी विद्वान परीक्षा में उत्तीर्णता उपर्युक्त योग्यताओं के समकक्ष मानी जाय।

(५) शिक्षा विभाग के निदेशक का कहना है कि 'हिन्दी विद्वान' कोर्स का प्रविधान करना आवश्यक है। इस संबंध में आवश्यक कारवाई करने की शिक्षा निदेशक से प्रार्थना की जाती है।

(६) पाठ्यपुस्तकों के संबंध में : उपलब्ध पाठ्यपुस्तकों में से इस समय कोर्स के लिए आवश्यक पुस्तकें चुनी जाये। भविष्य में आवश्यक पुस्तकों को शिक्षा विभाग की तरफ से तैयार करने की व्यवस्था की जायेगी।

(७) शिक्षा विभाग में निदेशक को हिन्दी से संबन्ध रखनेवाली बातों के बारे में आवश्यक सलाह देने के लिए एक बोर्ड का गठन किया जायेगा।

१९५० के स्कूली वर्ष से तत्कालीन मैसूर राज्य के समस्त हाईस्कूलों में हिन्दी का प्रवेश कर दिया गया। १९५२ में हिन्दी बोर्ड गठित किया गया। हिन्दी प्रचार की दिशा में शिक्षा विभाग का यह दूसरा कदम था। हिन्दी बोर्ड की प्रथम बैठक तत्कालीन शिक्षा निदेशक जे.बी. मल्लाराध्य की अध्यक्षता में ८-१०-१९५२ के दिन बैंगलोर में संपन्न हुई। इस बैठक में निदेशक महोदय ने सदस्यों को स्कूलों में पर्याप्त संख्या में द्वितीय भाषा हिन्दी के छात्रों के होने पर हिन्दी अध्यापकों की नियुक्ति का आश्वासन दिया।

एस.एस.एल.सी. की परीक्षा में हिन्दी

१९५० से राज्य के स्कूलों में हिन्दी अनिवार्य होते हुए भी वह एस.एस.एल.सी. की परीक्षा का विषय नहीं रही। १९७२ से हिन्दी से भी परीक्षा देना अनिवार्य हो गया है। उसके लिए ५० अंकों वाला एक प्रश्नपत्र नियत है। उसमें उत्तीर्णता हेतु १३ अंकों का पाना आवश्यक है पर हिन्दी में न्यूनतम अंक पाये बिना भी कोई छात्र एस.एस.एल.सी. परीक्षा में उत्तीर्ण हो सकेगा। यदि वह हिन्दी में पास हो तो किसी हिन्दीतर विषय में नियत न्यूनतम अंक से पाँच तक कम अंक पाने पर भी समूची परीक्षा में पास घोषित किया जायेगा। ये नियम इस तरह से बनाये गये हैं कि हिन्दी पढ़ने से लाभ ही लाभ होगा।

गोकाक समिति की रिपोर्ट जिसे सरकार से स्वीकृति मिल गयी है, उसके अनुसार एस.एस.एल.सी. कोर्स का कोई भी कन्नड़ भाषा-भाषी छात्र भाषा के तृतीय खण्ड में हिन्दी या संस्कृत ले सकेगा। इस खण्ड में परीक्षा देना और उसमें निश्चित न्यूनतम अंक पाना समूची एस.एस.एल.सी. परीक्षा में पास होने के लिए आवश्यक है।[३९]

४.७.२ कॉलेजों में हिन्दी

४.७.२.१ स्वतंत्रता पूर्व कॉलेजों में हिन्दी

जून १९३५ में मैसूर राज्य के वैकल्पिक हिन्दी के साथ एस.एस.एल.सी. पास छात्रों में से प्रत्येक के पते पर मैसूर हिन्दी प्रचार सभा के मंत्री की तरफ से पत्र भेजा गया कि वह इन्टर मीडिएट कॉलेज मैसूर में हिन्दी पढ़ने की इच्छा व्यक्त करे। इस तरह कई छात्रों की तरफ से हिन्दी की पढ़ाई की मांगवाले पत्र १९३५, १९३६,

१९३७ तीनों वर्ष मैसूर विश्वविद्यालय के अधिकारियों के पास गये। लेकिन विश्वविद्यालय के अधिकारियों की तरफ से इस पर कोई कार्यवाही नहीं की गयी। १९३७ तक काफी प्रयत्न करने पर भी हिन्दी को कॉलिजों में स्थान नहीं मिला। १९३७ में सी. वाई चिन्तामणि, मैसूर विश्वविद्यालय में कान्वोकेशन ऐड्रस देने बुलाये गये। जब वे बैंगलोर आये तब सिद्धानाथ पंत ने उनसे गुजारिश की कि मैसूर विश्वविद्यालय में हिन्दी का प्रवेश कराने की, अपने अभिभाषण में चर्चा करें। उन दिनों स्टेट के राजा साहब, दीवान आदि बड़े-बड़े लोग कान्वोकेशन में उपस्थित रहते थे। राजा साहब चान्सलर की हैसियत से कान्वोकेशन के अध्यक्ष होते थे। उस समय सर मिर्ज़ा इस्माइल दीवान थे। १९३७ के मैसूर विश्वविद्यालय के पदवीदान समारोह के अवसर पर अपने अभिभाषण में लखनऊ की अंग्रेजी दैनिक पत्रिका के संपादक सी.वाई. चिन्तामणि ने मैसूर विश्वविद्यालय में विधि निकाय और कला निकाय के अंतर्गत हिन्दी को स्थान देने की वांछनीयता पर बल दिया। उन्होंने हिन्दी को इन निकायों में प्रवेश दिलाने के संदर्भ में अपना भाषण इतनी संजीदगी के साथ दिया कि उसका प्रभाव बड़े अधिकारियों पर पडे बिना न रह सका। और तत्कालीन वाईसचांसलर एन.एस. सुब्बाराव ने १९३८ में सरकार के पास सिफारिश भेजी कि जुलाई १९३८ से मैसूर विश्वविद्यालय में इंटरमिडिएट आर्ट्स में पहले वैकल्पिक भाषा के रूप में हिन्दी का प्रवेश कर दिया जाय। सरकार की अनुमति पाकर वाईसचांसलर ने १ जुलाई १९३८ से ना. नागप्पा की नियुक्ति हिन्दी प्रवक्ता के रूप में इंटरमिडिएट कॉलेज, मैसूर में कर दी। तब से मैसूर वि.वि. में हिन्दी की उन्नति होती गई। उन दिनों ११ छात्रों ने हिन्दी ली थी। १९४० में जब वे इंटर पास होकर बी.ए. में आये तब उन्हें बी.ए. में हिन्दी का अध्ययन आगे भी जारी रखने की सुविधा प्रदान की गयी। १९४०-४१ से हिन्दी पढ़ाने का प्रावधान बी.ए. में कर दिया गया। दक्षिण में यही प्रथम विश्वविद्यालय था जिसने वैकल्पिक भाषा के तौर पर (अर्थात् बी.ए. पार्ट III में) हिन्दी में अध्यापन की डिग्री स्तर तक व्यवस्था कर दी। यद्यपि बी.ए.,बी.एस.सी., ओ.एल. विद्वान और एम.ए. में भी हिन्दी की परीक्षा प्राईवेट स्टडीज़ से देने की सुविधा, मद्रास विश्वविद्यालय में इससे पहले हो चुकी थी। आगे चलकर बी.ए. वैकल्पिक उर्दू और उर्दू एवं अंग्रेजी ऑनर्स के छात्रों को हिन्दी पढ़ने की सुविधा प्रदान की गयी।[४०]

१९४६ तक मैसूर विश्वविद्यालय में चार अध्यापकों (ना. नागप्पा, गु.

सच्चिदानन्दन, के. भारतीरमणाचार्य और राजेश्वरय्या) की नियुक्ति हो चुकी थी। १९४६ तक हिन्दी विभाग की इतनी उन्नति हुई थी कि मैसूर नगर के तीन कॉलेज और बैंगलोर के दो कॉलेजों में हिन्दी की पढ़ाई का प्रबन्ध किया गया था। १९४२-४३ में महाराजा कॉलेज, मैसूर में रामलाल सिंह हिन्दी के प्रवक्ता थे। साथ ही साथ कॉलेज वर्गों में हिन्दी की पढ़ाई पर विचार होता रहा। इस संदर्भ में आंध्र विश्वविद्यालय के तत्कालीन वाईस चांसलर सी.आर. रेड्डी का समय-समय पर मार्गदर्शन भी प्राप्त होता रहा। उन्होंने आंध्र में बी.कॉम में हिन्दी की पढ़ाई अनिवार्य कर दी थी, इसकी देखा-देखी मैसूर विश्वविद्यालय में भी १९४८-१९५८ तक इंटरमीडिएट कॉमर्स और बी.कॉम में हिन्दी की पढ़ाई अनिवार्य कर दी गयी। कर्नाटक विश्वविद्यालय में इंटर (कला) में हिन्दी का पढ़ना और परीक्षा देना सब छात्रों के लिए अनिवार्य कर दिया गया था।

४.७.२.२ स्वतंत्रता के बाद कॉलेजों में हिन्दी

सन् १९३८ में ही मैसूर विश्वविद्यालय में हिन्दी का प्रवेश हो चुका था। १९४० से दक्षिण भारत में प्रथमतः बी.ए. में हिन्दी वैकल्पिक भाषा के तौर पर पढ़ने का महाराजा कॉलेज, मैसूर में प्रावधान किया गया। १९४२ में बी.ए. पास तीन छात्रों में से एस. रामचन्द्र और एम. के भारतीरमणाचार्य, ने काशी हिन्दू वि.वि. में दो वर्ष तक हिन्दी एम.ए. का अध्ययन किया और वापस आकर क्रमशः कर्नाटक विश्वविद्यालय और बैंगलोर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में हिन्दी अध्यापन करते रहे। साथ ही भारतीरमणाचार्य ने मैसूर विश्वविद्यालय से पीएच.डी. की उपाधि भी प्राप्त की। तीसरे विद्यार्थी सी.के. रंगनाथ जोशी ने भी आगे चलकर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से हिन्दी से एम.ए. किया। अध्ययन करने के पश्चात् वापस आकर वे मैसूर गवर्नमेंट सर्विस में गये और सरकारी आर्टस कॉलेज (बैंगलोर) के हिन्दी रीडर तथा हिन्दी विभाग के अध्यक्ष हुए। अब ये तीनों रिटायर हो चुके हैं। इन तीनों की हिन्दी सेवा सराहनीय रही है।

१९४८ में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद मैसूर विश्वविद्यालय के अंतर्गत इन्टर, कॉमर्स में और १९५० से बी. कॉम में हिन्दी की पढ़ाई आवश्यक बना दी गयी। कर्नाटक वि.वि. में भी इंटर आर्ट्स में हिन्दी अनिवार्य थी। १९५८ में पी.यू.सी. कोर्स के प्रारंभ होने पर हिन्दी का वही स्थान हो गया जो अन्य भाषाओं का था। स्वतंत्रता के बाद से राज्य के प्रायः समस्त आर्ट्स, साइन्स, कॉमर्स डिग्री कोर्स वाले

कॉलेजों में हिन्दी अध्यापकों की नियुक्ति हुई है। राज्य के अधिकांश जूनियर कॉलेजों में भी हिन्दी की पढ़ाई की सुविधा कर दी गयी है।

१९५९ में मैसूर विश्वविद्यालय में, १९६० से कर्नाटक विश्वविद्यालय में और १९७१ से बैंगलोर विश्वविद्यालय में हिन्दी एम. ए. वर्ग खुले। १९८० से गुलबर्गा विश्वविद्यालय में हिन्दी एम.ए. कोर्स खुला और उसके पूर्व छात्रों को हिन्दी से एम.ए. करने हेतु छात्रवृत्ति देकर उत्तर भारत में सरकार की ओर से भेजा जाता था। एम.ए. के लिए राजेश्वरय्या को तथा पीएच.डी. के लिए हिरण्मय को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में मैसूर सरकार द्वारा भेजा गया। काशी जाने के पूर्व ही वे दोनों हिन्दी के प्रवक्ता थे।

इसके अलावा दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की कर्नाटक शाखा, धारवाड़ में भी हिन्दी एम.ए., एम. फिल और पीएच.डी. करने की सुविधा है।

सरकारी आदेश सं. ई. १९५०-५१ यूनि. ८८-५६-२ ता. २५-१०-१९५६ के अनुसार महाराजा कॉलेज, मैसूर में हिन्दी प्रोफेसर का पद सृजन किया गया। इस पर नंजराज अर्स प्रथमतः महाराजा कॉलेज में हिन्दी प्रोफेसर नियुक्त किये गये। इस समय मैसूर, बैंगलोर, कर्नाटक तथा गुलबर्गा विश्वविद्यालयों में हिन्दी से एम.ए. तथा पीएच.डी. करने का प्रावधान है। इसके अलावा १९९४ से कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति के अन्तर्गत राष्ट्रीय स्नातकोत्तर हिन्दी अध्ययन तथा शोध संस्थान (बैंगलोर विश्वविद्यालय से सम्बद्ध) में हिन्दी एम.ए. की पढ़ाई चल रही है।

मैसूर विश्वविद्यालय की ओर से १९७३-७४ से पत्राचार कोर्स में हिन्दी एम.ए. का प्रवेश कर दिया गया है। कॉलेजों में हिन्दी का अध्ययन करने वाले योग्य छात्रों को (पी.यू.सी या इंटर में ५० रु., डिग्री क्लास में ७५ रु., और एम.ए., पीएच.डी में १०० रु.) की मासिक छात्रवृत्ति भारत सरकार की तरफ से दी जाने लगी है।

४.७.३ विश्वविद्यालयों में हिन्दी

कर्नाटक में निम्नलिखित विश्वविद्यालय स्थित है।

(१) मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर

(२) कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड़

(३) बेंगलूर विश्वविद्यालय, बेंगलूर

(४) गुलबर्गा विश्वविद्यालय, गुलबर्गा

(५) मंगलूर विश्वविद्यालय, मंगलूर
(६) कुवेंपु विश्वविद्यालय, शिमोगा
(७) कर्नाटक राज्य महिला विश्वविद्यालय, बिजापूर

उपरोक्त विश्वविद्यालयों में से क्रम संख्या ५ और ७ को छोड़कर बाकी सभी विश्वविद्यालयों में स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग हैं, जहाँ शोधकार्य भी होता है।

कर्नाटक में मैसूर विश्वविद्यालय की स्थापना १९१६ में हुई। इस तरह यह कर्नाटक का पहला विश्वविद्यालय है। इस कारण यहाँ सबसे पहले १९३८ में हिन्दी पढ़ाने का कार्य प्रारंभ हुआ। यहाँ पर उस विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग द्वारा हिन्दी के प्रचार में जो योगदान हुआ उसका विस्तार से जिक्र किया गया है।

४.७.३.१ मैसूर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग द्वारा प्रचार कार्य

१. हिन्दी विभाग की स्थापना एवं संक्षिप्त इतिहासः- दक्षिण भारत में गाँधीजी के हिन्दी प्रचार कार्य को देखते हुए मैसूर विश्वविद्यालय के कुछ उत्सुक विद्वानों ने इण्टरमीडिएट के स्तर पर सन् १९३८ में हिन्दी पढ़ाने का कार्य शुरु किया। हिन्दी विभाग के प्रोफेसर ना. नागप्पा सर्वप्रथम हिन्दी विभाग के अध्यक्ष नियुक्त किये गये। नागप्पा जी के अथक प्रयास से सन् १९४० में डिग्री के स्तर पर हिन्दी को द्वितीय भाषा एवं वैकल्पिक भाषा के रूप में पढ़ाने का कार्य प्रारंभ हुआ।

२. हिन्दी स्नातकोत्तर विभाग- सन् १९५९ में मैसूर विश्वविद्यालय में स्नात्कोत्तर हिन्दी विभाग का प्रारंभ हुआ। प्रो. नागप्पा और प्रो. राजेश्वरय्या के प्रयासों से यह कार्य संभव हो पाया। अब तक हज़ारों छात्र हिन्दी में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त कर चुके हैं। इसके अलावा अब तक ७० से अधिक छात्र हिन्दी में पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं। इस विभाग में तब से लेकर अब तक नामी अध्यापकगण अध्यापन का कार्य करते हुए हिन्दी साहित्य में अपना योगदान भी बराबर देते रहे।

३. पत्राचार माध्यम के द्वारा हिन्दी एम.ए. की शुरुआत- देश के विभिन्न प्रान्तों में हिन्दी प्रचार करने के उद्देश्य से मैसूर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग ने पत्राचार माध्यम द्वारा एम.ए. की पढ़ाई प्रारंभ की। अब तक हज़ारों छात्रों ने एम.ए. की उपाधि प्राप्त कर ली है।

४. स्नातकोत्तर डिप्लोमा में प्रयोजन मूलक हिन्दी- सन्, १९९१-९२ में एक साल का स्नातकोत्तर डिप्लोमा कोर्स के अंतर्गत प्रयोजन मूलक हिन्दी की शुरुआत हुई जिसका उद्देश्य विश्वविद्यालय के अन्य छात्रों को हिन्दी का प्रशिक्षण देना है जिससे वे सार्वजनिक कार्यालयों में हिन्दी में कार्य कर सकें। इसी साल विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के आर्थिक सहायता से हिन्दी में सर्टिफिकेट कोर्स को भी शुरु किया गया। उपरोक्त दोनों पाठ्यक्रमों ने विश्वविद्यालय के अनेक छात्रों को नौकरी दिलाने में सहायता प्रदान की।

५. उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा आर्थिक सहायता- उत्तर प्रदेश सरकार ने राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने के उद्देश्य से मैसूर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग को चार लाख एवं एक लाख का अनुदान दे रही है। एक अनुदान के अन्तर्गत हिन्दी विभाग ने आधुनिक कन्नड़ साहित्य को हिन्दी में तथा हिन्दी साहित्य को कन्नड़ में अनुवाद करने का कार्य प्रारंभ किया। अब तक *'आधुनिक कन्नड काव्य'* एवं *'आधुनिक हिन्दी काव्य'* (मुख्य संपा. डॉ. जे.एस. कुसुमगीता) प्रकाशित किये गये हैं। *'प्रातिनिधिक हिन्दी कथेगलु'* (डॉ. तिप्पेस्वामी द्वारा संपादित) का प्रकाशन किया गया। डॉ. तिप्पेस्वामी द्वारा संपादित 'कन्नड़ की श्रेष्ठ कहानियाँ' भी २००४ में प्रकाशित हुई है ।

दूसरे अनुदान के अन्तर्गत जो कन्नड़ नहीं जानते उनके लिए हिन्दी माध्यम द्वारा कन्नड़ सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम को प्रारंभ किया गया है। यह पाठ्यक्रम १९९६ तक पत्राचार संस्थान द्वारा चलाया जाता था। बाद में यह संस्थान कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय में परिवर्तित हो गया। उसके बाद मैसूर विश्वविद्यालय ने यह निर्णय किया कि उपरोक्त पाठ्यक्रम हिन्दी विभाग द्वारा चलाया जाय।

६. त्रिभाषा कोश परियोजना:- केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय ने (मानव संसाधन विकास मंत्रालय) त्रिभाषा कोश परियोजना को आर्थिक सहायता दी, जिसके अन्तर्गत कई कोश प्रकाशित किये गये। प्रो. नागप्पा, एवं प्रो. राजेश्वरय्या, वेंकटाचल शर्मा, जी. सच्चिदानन्दन, के.वी. राधवाचार्य एवं प्रो. एच.एम. नायक इस परियोजना के संपादक मण्डली के सदस्य थे।

७. *'मानसी'*: एक शोध पत्रिका:- १९६५ में हिन्दी विभाग द्वारा *मानसी* नामक एक शोध पत्रिका का प्रकाशन शुरु किया गया जो १९९३ तक चलता रहा।

किसी कारणवश इसका प्रकाशन अब नहीं हो पा रहा है।

८. विद्यार्थी योगक्षेम निधि:- हिन्दी विभाग में 'रामकृष्णप्पा एवं श्रीमती मुद्दलिंगम्मा विद्यार्थी योगक्षेम निधि' स्थापित की गयी है। इसके अन्तर्गत एम.ए. पूर्वार्द्ध में प्रथम तीन स्थान पाने वाले विद्यार्थियों को क्रमशः रु.५००, रु.३००, एवं रु.२०० की नकद धनराशि दी जाती है। इसी निधि के अन्तर्गत हिन्दी विभाग द्वारा *'प्रतिभा'* नामक हस्तलिखित पत्रिका (वार्षिकी) का प्रकाशन किया जात है। इसका उद्देश्य प्रतिभावान विद्यार्थियों को रचनात्मक लेख लिखने को प्रोत्साहित करना है।

९. महत्त्वपूर्ण योगदान:- हिन्दी विभाग में प्रमुख विद्वानों ने हिन्दी एवं कन्नड़ के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनमें से प्रो. नागप्पा के *'हिन्दी व्याकरण'*, डॉ. हिरण्मय के *'हिन्दी और कन्नड़ भक्ति आन्दोलन का तुलनात्मक अध्ययन'*, डॉ. एन. दक्षिणामूर्ति के *'कन्नड़-हिन्दी कोश'*, डॉ. एम.एस. कृष्णमूर्ति के *'सिद्धसाहित्य'* और *'सूफीप्रेमकाव्य'* (कन्नड़) तथा डॉ. तिप्पेस्वामी के *'शरणरु मत्तु संतरु'* (कन्नड़) प्रमुख हैं।

यह ध्यान देनेवाली बात है कि विभाग के सभी अध्यापकगण कन्नड़ से हिन्दी तथा हिन्दी से कन्नड़ में अनुवाद करने के कार्य में लगे हुए हैं। डॉ. कृष्णस्वामी और डॉ. तिप्पेस्वामी ने हिन्दी के कवियों को कन्नड़ से तथा कन्नड़ के कवियों को हिन्दी से परिचित कराया।

१०. पुरस्कार एवं पारितोषिक- हिन्दी विभाग के अनेक अध्यापकों को राष्ट्रीय एवं राज्यस्तर के पुरस्कार एवं पारितोषिक उनके उच्चकोटि के कार्यों के लिए मिला है। हिन्दी विभाग के निम्नलिखित अध्यापकों को सम्मान प्राप्त हुए हैं:-

- प्रो. नागप्पा को बिहार एवं उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा तथा केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा द्वारा पुरस्कार प्रदान किया गया है।
- प्रो. एम. राजेश्वरय्या को कर्नाटक सरकार का 'राज्योत्सव' पुरस्कार प्राप्त हुआ है।
- प्रो. एम.एस. कृष्णमूर्ति को केन्द्रीय हिन्दी संस्थान द्वारा, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा तथा हैदराबाद द्वारा 'आनन्द ऋषि' पुरस्कार प्राप्त हुआ है।
- डॉ. एस.एन. दक्षिणामूर्ति को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान एवं केन्द्रीय हिन्दी

निदेशालय द्वारा पुरस्कार दिया गया है।

- डॉ. तिप्पेस्वामी को सौहार्द्र सम्मान सन् १९९४ में उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ द्वारा प्रदान किया गया। १९९५ में केन्द्रीय साहित्य अकादमी द्वारा सम्मानित किया गया, १९९६ में कर्नाटक साहित्य अकादमी पुरस्कार १९९७-९८ में अहिन्दी भाषी हिन्दी लेखक का राष्ट्रीय पुरस्कार तथा २००० में राष्ट्रीय हिन्दी सेवी सहस्राब्दि सम्मान प्राप्त है।
- डॉ. वी.डी. हेगड़े को १९९५-९६ में अहिन्दी भाषी हिन्दी लेखक का राष्ट्रीय पुरस्कार मिला।
- डॉ. प्रतिभा मुद्लियार को भी १९९५-९६ में अहिन्दी भाषी हिन्दी लेखिका का राष्ट्रीय पुरस्कार मिला है।

११. शोध कार्य:- हिन्दी विभाग न केवल एक अध्यापन विभाग है बल्कि यह एक शोध विभाग भी है। जब से हिन्दी विभाग की शुरुआत हुई है तब से हिन्दी विभाग के अध्यापक शोध कार्य में कार्यरत हैं। अब तक ७० से अधिक शोध छात्रों को पीएच.डी. की उपाधि मैसूर विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान की गयी है।

हिन्दी विभाग द्वारा समय-समय पर गोष्ठियाँ, ग्रीष्मकालीन स्कूल एवं पुनश्चर्या पाठ्यक्रम का आयोजन भी कॉलेज के अध्यापकों के लाभ हेतु किया जाता है। प्रो. नागप्पा एवं प्रो. एन राजेश्वरय्या जब हिन्दी विभाग के अध्यक्ष थे तब ऐसे ही त्रिविदसीय ग्रीष्मकालीन स्कूल का आयोजन किया गया था। 'भक्ति साहित्य में वर्गहीन समाज की प्रतिकल्पना' विषय पर दो दिवसीय गोष्ठी का आयोजन भी किया गया था। इस गोष्ठी की निर्देशिका डॉ. जे.एस. कुसुमगीता थीं। हिन्दी का प्रथम रिफ्रेशर पाठ्यक्रम कॉलेज के अध्यापकों के लिए सन् २००० में एकेडेमिक स्टॉफ कॉलेज में अयोजित किया गया था। डॉ. तिप्पेस्वामी इसके सह-आयोजक थे।

मैसूर विश्वविद्यालय, कर्नाटक का प्रथम विश्वविद्यालय है जहाँ हिन्दी का प्रवेश सर्वप्रथम हुआ था। आज भी मैसूर विश्वविद्यालय का हिन्दी विभाग अध्यापन एवं शोध कार्यों में कर्नाटक के अन्य विश्वविद्यालयों से आगे हैं।[४२]

४.७.३.२ कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड के हिन्दी विभाग द्वारा प्रचार कार्य

कर्नाटक में मैसूर विश्वविद्यालय के बाद कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड दूसरा विश्वविद्यालय है जिसकी स्थापना सन् १९५० में हुई है। हिन्दी विभाग की

शुरूवात सन् १९७१ में हुई है। प्रस्तुत हिन्दी विभाग में निम्नलिखित कोर्स की पढ़ाई एवं शोध की सुविधा उपलब्ध है।

एम.ए. ; स्नातकोत्तर अनुवाद डिप्लोमा (दो साल) ; अनुवाद डिप्लोमा (एक साल); एम.फिल्. तथा पीएच.डी.

उपरोक्त कोर्स की पढ़ाइ के अलावा हिन्दी विभाग द्वारा समय-समय पर संगोष्ठि एवं कार्यशालाएँ आयोजित किया जाता है। इस तरह कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड के हिन्दी विभाग द्वारा हिन्दी की प्रचार एवं प्रसार कार्य सुचारू रूप से चल रहा है।

४.७.३.३ बेंगलूर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग द्वारा प्रचार कार्य

बेंगलूर विश्वविद्यालय, बेंगलूर में हिन्दी विभाग विश्वविद्यालय के साथ-साथ स्थापित हुई। हिन्दी विभाग में एक साल का स्नातकोत्तर अनुवाद डिप्लोमा; एम.ए.; एम.फिल्. तथा पीएच.डी. की पढ़ाई की सुविधा उपलब्ध है। हिन्दी विभाग द्वारा हिन्दी के प्रचार के लिए समय-समय पर संगोष्ठि एवं कार्यशालायें आयोजित किया जाता है।

४.७.३.४ गुलबर्गा विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग द्वारा प्रचार कार्य

गुलबर्गा विश्वविद्यालय कर्नाटक का चौथा विश्वविद्यालय है। यहाँ का हिन्दी विभाग भी हिन्दी की पढ़ाई के लिए एम.ए.; एम.फिल.; तथा पीएच.डी. कोर्स चलाती है। इसके अलावा संगोष्ठि एवं कार्यशालाएँ भी आयोजित करती है।

४.७.३.५ कुवेंपु विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग द्वारा प्रचार कार्य

कुवेंपु विश्वविद्यालय, शिमोगा में हिन्दी विभाग तो पहले से ही शुरु हुआ था लेकिन सन् २००३ तक स्थाई रूप से अध्यापकों की नियुक्ति नहीं होने के कारण हिन्दी की पढ़ाई में उतना प्रगति नहीं हो पाया था। सन् २००३ से एक अध्यापक की स्थाई रूप से नियुक्ति हुई है इस वजह से वहाँ अब हिन्दी की पढ़ाई का कर्य सुचारू रूप से चल रहा है। इस विभाग द्वारा एम.ए.; एम.फिल.; एवं पीएच.डी. कोर्स चलाये जाते हैं।

यह कहना उचित होगा कि कर्नाटक के उपरोक्त सभी विश्वविद्यालय किसी न किसी रूप में कर्नाटक में हिन्दी का प्रयोग और प्रसार के कार्य में अपना योगदान

कर रहे हैं।

४.८ हिन्दी शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण

नवम्बर १९४९ के आदेशानुसार राज्य के हिन्दी शिक्षकों को अपनी नौकरी को स्थायित्व प्रदान करने के लिए और साथ ही एक निश्चित वेतन प्राप्त करने के लिए (मद्रास सभा की) राष्ट्रभाषा विशारद विशेष योग्यता परीक्षा या 'राष्ट्रभाषा प्रवीण' पास करना और प्रचारक कोर्स पूरा करना अनिवार्य था। हिन्दी को हाईस्कूलों में अनिवार्य तो कर दिया गया लेकिन अध्यापकों की नियुक्ति की समस्या उठ खड़ी हुई। लेकिन यह समस्या भी सुलझ गयी। नियत योग्यता प्राप्त कोई भी (चाहे वह मद्रास सभा की परीक्षा पास हो या अन्य किसी संस्था की) हाईस्कूल में हिन्दी शिक्षक बन सकता था उन्हें 'प्रचारक' कोर्स में प्रवेश देकर नौकरी के स्थायित्व के योग्य आवश्यक सहायता प्रदान करना मद्रास-सभा का कर्त्तव्य था। नवम्बर १९४९ के सरकारी आदेशानुसार इसका नैतिक उत्तरदायित्व मद्रास सभा पर था। पर मद्रास सभा ने अपनी इस जिम्मेदारी का निर्वाह नहीं किया। अपनी राष्ट्रभाषा विशारद परीक्षा में जो पास नहीं था, पर नियम के अनुसार राज्य के हाईस्कूल में हिन्दी शिक्षक था उसे केवल इस कारण 'प्रचारक' कोर्स में प्रवेश देने से इंकार कर दिया कि उसने सभा की हिन्दी परीक्षा पास नहीं की है। इस कारणवश हिन्दी शिक्षकों के स्थायित्व की समस्या आ खड़ी हुई। इसलिए मैसूर सरकार को अपने हिन्दी शिक्षकों के प्रशिक्षण की अलग व्यवस्था करनी पड़ी। १०-७-५४ वाले हिन्दी बोर्ड ऑफ स्टडीज़ एंड एग्ज़ामिनेशन्स के प्रस्तावानुसार १९५६ से मैसूर नगर में स्थित 'टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज फॉर मेन' में हिन्दी शिक्षक कोर्स खोला गया। इस समय सरकार द्वारा स्वीकृत कोर्स एवं पाठ्यक्रम के अनुसार 'छात्राध्यापकों को सरकार की अनुमति से हिन्दी प्रचार संस्थाओं के द्वारा चलाये जाने वाले हिन्दी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में अध्यापन का प्रशिक्षण दिया जाता है। सरकार इन छात्राध्यापकों की परीक्षा लेती है। इसमें उत्तीर्णता स्कूलों में हिन्दी शिक्षक बनने के लिए आवश्यक कर दी गयी है।[४२]

हिन्दी क्षेत्र में अभी तक प्रशिक्षण को बहुत महत्त्व नहीं दिया गया था जबकि इसकी जरूरत ज्यादा थी। न तो प्रशिक्षण की आवश्यकता को महसूस किया गया और न ही इसके भिन्न-भिन्न पहलुओं पर वैज्ञानिक रूप से विचार किया गया।

कर्नाटक राज्य में हिन्दी माध्यम से सन् १९५७ से सरकार की ओर से हिन्दी शिक्षक कोर्स मैसूर, बागलकोट और रायचूर में चल रहे थे। लेकिन किसी कारणवश १९८१-८२ में इन तीनों कॉलेजों को बन्द कर दिया। फिर १९८३-८४ में मैसूर में केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा द्वारा संचालित पाठ्यक्रम के अन्तर्गत हिन्दी पारंगत कोर्स का प्रारंभ हुआ।

बिना प्रशिक्षण लिए हिन्दी पदवी पाने वाले छात्रों को नौकरी नहीं मिलती थी। स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं के बुजुर्ग नेताओं, प्रधान सचिवों और हितैषियों के प्रयत्नस्वरूप सन् १९८४-८५ में कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति को हिन्दी शिक्षक-प्रशिक्षण कॉलेज चलाने की अनुमति कर्नाटक राज्य सरकार से प्राप्त हुई। हिन्दी शिक्षक प्रशिक्षण कॉलेज प्राप्त करने में स्व. डॉ. पी.आर. श्रीनिवास शास्त्री और सुश्री बी.एस. शांताबाई का विशेष योगदान रहा है।

१९८४-८५ में सरकार ने कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति को 'हिन्दी शिक्षक कोर्स' का पाठ्यक्रम तैयार करने के लिए आदेश दिया। इसके लिए तीन सदस्यों की समिति गठित हुई। इस प्रशिक्षण कोर्स के पाठ्यक्रम को तैयार करने के लिए स्व. पी.आर. श्रीनिवास शास्त्री, कटील गणपति शर्मा और प्रो. श्रीकंठमूर्ति इन तीनों अनुभवी विद्वानों ने कर्नाटक, मैसूर और बैंगलोर विश्वविद्यालय के बी.एड. कोर्स, आगरा में चलने वाले भारत सरकार के "केन्द्रीय हिन्दी संस्थान" के प्रशिक्षण पाठ्यक्रम एवं कर्नाटक राज्य में चल रहे हिन्दी प्रशिक्षण कोर्स के पाठ्यक्रमों का अध्ययन करके एक उचित पाठ्यक्रम तैयार करके सरकार को सौंप दिया। सरकार ने इसे मानकर कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा को सर्वप्रथम १९८४-८५ में बैंगलोर में हिन्दी शिक्षक (बी.एड.) प्रशिक्षण कॉलेज चलाने की अनुमति देकर कर्नाटक प्रौढ़ शिक्षण परीक्षा मंडली से परीक्षा चलाने की व्यवस्था भी की। विद्यार्थियों की सुविधा और आवश्यकता को ध्यान में रखकर १९८५-८६ में दो कक्षाओं में १२० छात्रों को लेने की स्थायी मान्यता प्रदान की गयी। इसके साथ ही साथ लोगों के आग्रह पर हुबली और रायचूर में बी.एड. कॉलेज प्रारंभ करने की अनुमति सरकार ने दे दी। सन् १९८६ से हुबली और रायचूर में हिन्दी शिक्षक ट्रेनिंग कॉलेज का शुभारंभ हुआ। हासन, शिमोग्गा, बेलगाम और बेल्लारी में भी कॉलेज प्रारंभ करने की अनुमति १९८९-९० से राज्य सरकार की ओर से प्रदान की गयी।

इस कोर्स में १९८४ से लेकर १९९६ तक सामान्य ज्ञान एस.एस.एल.सी और बी.ए. स्तर की स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं की उपाधि परीक्षाओं में उत्तीर्ण छात्रों को प्रवेश देते थे। १९९७ से एन.टी.सी.ई. के आदेशानुसार एस.एस.एल.सी. का नाम परिवर्तन कर इसे सामान्य ज्ञान पी.यू.सी. की संज्ञा दी गई। १९८४ से १९९६ तक प्रमाण पत्र, हिन्दी शिक्षक (बी.एड. स्तर) इस तरह से प्रदान किया जाता था। लेकिन १९९७ से 'हिन्दी शिक्षक' नाम से प्रमाण पत्र दिया जाने लगा।

कर्नाटक में १९८५ से लगभग ६-७ सालों तक प्राईमरी और हाईस्कूलों में शिक्षकों के रूप में छात्रों की नियुक्तियाँ की जाती थी। उसके बाद राज्य सरकार ने अचानक हिन्दी शिक्षक परीक्षा में उत्तीर्ण छात्रों की उच्च प्राथमिक शालाओं में नियुक्ति पर रोक लगा दी। इसका कारण शिक्षा विभाग ने यह बताया कि हिन्दी शिक्षक ट्रेनिंग कोर्स का स्तर बी.एड. स्तर का है और उच्च प्राथमिक शालाओं के लिए टी.सी.एच. की आवश्यकता है।

१७ नवम्बर २००१ के समाचार पत्रों में यह बात प्रकट हुई कि हिन्दी शिक्षण प्रशिक्षण पाने वाले विद्यार्थियों को हाईस्कूल के अध्यापकों के रूप में नियुक्ति नहीं की जा सकती। लेकिन शैक्षिक संस्थाओं ने न्यायालय में इसके विरुद्ध आवाज़ उठायी और उनकी ये कोशिश रंग लायी। काफी संघर्ष के बाद १६-८-२००३ के दिन सरकार ने शिक्षक कोर्स को मान्यता प्रदान की। इसका परिणाम यह हुआ कि शिक्षक प्रशिक्षण पाने वाले छात्राध्यापक अब सामान्य प्रवेश परीक्षा (सी.ई.टी) देकर अध्यापन का कार्य करने लगे।[४३]

संदर्भ ग्रंथ

१. ना. नागप्पा : *कर्नाटक में हिन्दी प्रचार*, पृ. १
२. वही, पृ. १-२
३. वही, पृ. ३-४
४. ना. नागप्पा: "कर्नाटक में हिन्दी प्रचार" एन. वेंकटेश्वरन (संपा.), *दक्षिण में हिन्दी प्रचार आन्दोलन का इतिहास*, पृ. १२८
५. ना. नागप्पा : *कर्नाटक में हिन्दी प्रचार*, पृ. ५
६. एन. रामय्या. कर्नाटक राज्य में हिन्दी का प्रचार और प्रसार, मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद, स्वर्ण जयंती समारोह विशेषांक, १९९५, पृ. ६०-६२

७. ना. नागप्पा: *कर्नाटक में हिन्दी प्रचार*, पृ., ८९-९१
८. वही, पृ. ४०-४१
९. वही, १९९९, पृ. ४१
१०. वही, पृ. ५
११. वही, पृ. ५४
१२. ए.एम. रामचंद्र : मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद्, बैंगलोर, हीरक जयंती समारोह विशेषांक 'ज्ञान सरिता', २००३, पृ, २
१३. वही, पृ. २-४
१४. वही, पृ. ४
१५. वही, पृ. ५
१६. एस. श्रीकंठमूर्ति : कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति की स्थापना एवं संवर्धन, बैंगलोर, कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति, स्वर्ण जयंती समारोह विशेषांक *'हिन्दी प्रचार वाणी'* २००३, पृ. ७
१७. वही, पृ. ७-८
१८. वही, पृ. ८
१९. ना. नागप्पा : *कर्नाटक में हिन्दी प्रचार*, पृ. ५९-६०
२०. वही, पृ. ६१
२१. वही, पृ. ६२-६३
२२. एस. श्रीकण्ठमूर्ती : कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति की स्थापना एवं संवर्धन, पृ. ९
२३. वही.
२४. वही, पृ. ८
२५. ना. नागप्पा : *कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति*, पृ. ४३
२६. वही, पृ. ४५
२७. वही, पृ. ४७-५२
२८. आर.एफ. नीरलकट्टी : दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, कर्नाटक शाखा, धारवाड़ : एक परिचय, द.भा.हि.प्र.स. दीक्षान्त समारोह - २००३, स्मारिका
२९. वही.
३०. वही.
३१. वही.
३२. आर. राजवेल : द.भा.हि.प्र.स.-कर्नाटक शाखा धारवाड़ की योजनायें।
३३. ना. नागप्पा : *कर्नाटक में हिन्दी प्रचार*, पृ. ७३-७४

३४. वही, पृ. ७४-७७
३५. वही, पृ. ८२-८७
३६. ना. नागप्पा : कर्नाटक में हिन्दी प्रचार में एन. वेंकटेश्वरन (संपा.) : *दक्षिण में हिन्दी प्रचार आन्दोलन का इतिहास*। द.भा.हि.प्र. सभा, मद्रास, १९९४, पृ. १६६-१६८
३७. एस.टी. रामचन्द्र : 'कर्नाटक के बैंकों में हिन्दी का कार्यान्वयन' मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद, बेंगलूर, हीरक जयंती समारोह विशेषांक, ज्ञान सरिता - २००३, पृ. १५४-१५५
३८. ना. नागप्पा : *कर्नाटक में हिन्दी प्रचार*, पृ. २७
३९. वही, २९-३२
४०. वही, पृ. ३४
४१. Thippeswamy. Department of studies in Hindi. In : V.G. Talawar and B.S. Kirangi (Eds.) *Legacy of learning.* Mysore : University of Mysore, 2002. pp.
४२. ना. नागप्पा : *कर्नाटक में हिन्दी का प्रचार*। पृ. ३२-३३
४३. टी.एस. उषाराणी : कर्नाटक में हिन्दी शिक्षक प्रशिक्षण ; महाविद्यालय और उनका महत्व, कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति, बेंगलूर, स्वर्णजयंती विशेषांक *"हिन्दी प्रचार वाणी"* २००३, पृ. ४८-४९



अध्याय ५

कर्नाटक में जनसंचार माध्यमों द्वारा हिन्दी का प्रचार एवं प्रसार

आधुनिक युग में पत्रकारिता का महत्त्व बढ़ता ही जा रहा है। आसपास में घटित घटनाओं की जानकारी हमें पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से ही मिलती है, साथ ही जनसंचार के अन्य श्रोत भी इसमें महती भूमिका निभाते हैं। यह हमारे दैनिक जीवन का एक हिस्सा हैं। इनसे हमें कई तरह की सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। ऐसा ही जनसंचार का एक माध्यम है 'पत्रकारिता'।

इस अध्याय में हम 'कर्नाटक में जनसंचार माध्यमों द्वारा हिन्दी का प्रचार एवं प्रसार' विषय पर प्रकाश डालेंगे, लेकिन उससे पहले पत्रकारिता के इतिहास, उसके विकास, विभिन्न अर्थ, उसका उद्देश्य, क्षेत्र आदि की जानकारी देना उचित होगा, तदुपरान्त 'कर्नाटक में पत्रकारिता' तथा 'कर्नाटक में हिन्दी पत्रकारिता' आदि की बात बताते हुए हिन्दी के प्रचार-प्रसार में इसके योगदान की बात बतायेंगे।

५.१ जनसंचार का माध्यम : पत्रकारिता

प्रेस और पत्रकारिता का संबंध चोली दामन की तरह होता है। प्रेस के भारत आने से पहले यहाँ समाचार पत्र नहीं था। मुगलों के शासन काल में वाकया नवीस या घटना लेखक हुआ करते थे। स्वतंत्र या सामंत राजाओं के दरबार में भी पर्चा नवीस या अख़बार नवीस हुआ करते थे, पर इनके द्वारा लिखे अख़बार दरबार और सरकार के लिए हुआ करते थे। ये अख़बार सर्व साधारण की पहुँच के बाहर थे। *'सिराज-उल'* अख़बार जिसे बहादुरशाह ज़फर ने निकाला था बेहद प्रसिद्ध रहा। इन पत्रों के ग्राहक कभी-कभी एक से अधिक हुआ करते थे तब इन पत्रों की नकल कर अखबार नवीस ग्राहकों को बेचकर अपना मेहनताना निकालते थे।

उन दिनों प्रेस के आविष्कार से पहले इन पत्र-पत्रिकाओं की पहुँच आम जनता तक नहीं थी। छापने की कला का आविष्कार विश्व में सबसे पहले चीन ने किया था। उसने जो पहला अख़बार निकाला वह १५०० वर्षों तक चला।

भारत में कला व छपाई के साधन पश्चिम से आये। विश्व का पहला प्रेस सन् १५५० में पुर्तगलियों द्वारा स्थापित किया गया था।[१] इतना ही नहीं भारत में पत्र-पत्रिकाओं की शुरुआत भी पश्चिम के लोगों द्वारा ही हुई। सर्वप्रथम २९ जनवरी १७८० को जेम्स आगस्टस हिकी ने कलकत्ता से *'बंगाल गज़ट एंड कलकटा जरनल एडवरटाइज़र'* नामक पत्र प्रकाशित किया। यह पत्र बहुत ही छोटा था, इसकी पृष्ठ संख्या केवल दो थी। बारह इंच लम्बे और आठ इंच चौड़े इस पत्र को *'हिकी गज़ट'* के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त हुई। हिकी ने भारत में पत्रकारिता की जो मशाल जलाई थी उसका असर यह हुआ कि भारत की तीनों प्रेसिडेंसियों बाम्बे, मद्रास तथा कलकत्ता, से पत्र प्रकाशित होने लगे। सन् १७८० से सन् १७९९ तक लगभग एक दर्जन अंग्रेजी के पत्र प्रकाशित होने लगे थे।[२]

हिन्दी पत्रकारिता की शुरुआत कलकत्ता से हुई और कलकत्ता को ही भारतीय पत्रकारिता की जन्मभूमि माना जाता है। जैसा कि ऊपर की पंक्तियों में कहा जा चुका है कि २९ जनवरी १७८० को *"हिकी गजट"* नामक पत्रिका कलकत्ता से छपने वाली पहली पत्रिका थी, नवम्बर १७८० में कलकत्ता से ही *"इंडिया गज़ट"* नाम की दूसरी पत्रिका का प्रकाशन हुआ। आगे चलकर अन्य भाषाओं में भी पत्रों का प्रकाशन होने लगा। सन् १८१२ में गुजराती का पहला समाचार पत्र *"मुम्बई समाचार"* प्रकाशित हुआ। बंगाली भाषा का मासिक समाचार पत्र *"दिग्दर्शन"* सन् १८१८ में प्रकाशित हुआ। राजा राममोहन राय, ताराचन्द दत्त और भवानीचरण बैनर्जी इन तीनों ने मिलकर *"संवाद कौमुदी"* नामक पत्र का प्रकाशन सन् १८२० में किया। हिन्दी का पहला समाचार पत्र *"उदन्त मार्तण्ड"* ३० मई सन् १८२६ में कलकत्ता से प्रकाशित हुआ। इस पत्र की स्थापना युगल किशोर शुक्ल ने की थी। मूलतः वे कानपुर के निवासी थे पर ये पत्र उन्होंने कलकत्ता से प्रकाशित किया अतः इस कारण कलकत्ता का महत्त्व और भी बढ़ गया। *"उदन्त मार्तण्ड"* एक वर्ष सात महीने तक ही चल पाया। यह पत्र प्रति मंगलवार को प्रकाशित होता था पर आर्थिक तंगी के कारण इस पत्र को ४ दिसम्बर १८२७ को हमेशा के लिए बन्द कर देना पड़ा। हिन्दी का दूसरा पत्र *"बंगदूत"* नाम से १८५७ के आस-पास कलकत्ता से ही प्रकाशित हुआ। इसके

सम्पादक नीलरतन हालदार थे। यह पत्र प्रत्येक रविवार को प्रकाशित होता था और इसका मासिक मूल्य एक रुपये था। बहुत समय तक हिन्दी पत्रकारिता का केन्द्र कलकत्ता ही रहा। १८५७ के आसपास ही कई अन्य पत्रों का प्रकाशन हुआ जिसमें प्रमुख थेः– *"प्रजामित्र"*, *"साम्यदंत मार्तण्ड"*, और *"समाचार सुधावर्षण"*। १८५७ में हुए जन-जागृति आंदोलन के बाद कई और पत्रों का भी प्रकाशन हुआ जैसे– *"भारत मित्र"* (१८७८), *"सारसुधा निधि"* (१८७९), *"उचित वक्ता"* (१८८०), *"हिन्दी बंगवासी"* (१८९०) आदि। १९२३ में *"मतवाला"* पत्र प्रकाशित हुआ जिससे निराला जी जुड़े हुए थे। १९२८ में *"विशाल भारत"* प्रारंभ हुआ।

कलकत्ता के बाद पत्र-पत्रिकाओं का दूसरा महत्त्वपूर्ण क्षेत्र बनारस रहा। सन् १८४५ में बनारस से *"बनारस अख़बार"* नाम से पहला हिन्दी पत्र प्रकाशित हुआ जिसके सम्पादक थे गोविन्द थत्ते। *"बनारस सुधाकर"* नाम से १८५० में दूसरा पत्र निकला जो हिन्दी और बंगला में तीन वर्ष तक निकलता रहा लेकिन १८५३ से यह केवल हिन्दी में छपने लगा, इसके संपादक एवं प्रकाशक तारामोहन मैत्र थे। आगे चलकर अन्य पत्र पत्रिकाओं का प्रकाशन होता रहा जैसे–आगरा से *"बुद्धिप्रकाश"* १८५२ में, भरतपुर राज्य से हिन्दी व उर्दू में *"मज़रुल सदर"* १८५३ में आदि।[३]

हिन्दी का प्रथम दैनिक समाचार पत्र *"समाचार सुधावर्षण"* सन् १८५४ में कलकत्ता से प्रकाशित हुआ। इस पत्र के सम्पादक श्याम सुन्दर थे, यह हिन्दी और बंगला में प्रकाशित होता था और करीब १४ वर्षों तक यह पत्र प्रकाशित होता रहा।

वर्तमान हिन्दी पत्रकारिता का जनक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को माना जाता है। सन् १८६८ में *'कवि वचन सुधा'* का प्रकाशन शुरु हुआ। वैसे तो यह कविता की पत्रिका थी परन्तु इस पत्रिका में समाज सुधार राजनैतिक और साहित्य का भी समावेश था। यह पत्र पहले मासिक रूप से छपता था परन्तु आगे चलकर यह साप्ताहिक रूप में छपने लगा। इस पत्र को बनारस से भारतेन्दु ने शुरु किया था। काँग्रेस पार्टी के जन्म के बाद से यह हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में छपने लगा। इस पत्र में भाषा का जो स्वरूप निर्धारित किया गया था वही लगभग ७५ वर्षों तक चलता रहा। आज भी उस भाषा को मूल आधार माना जाता है। भारतेन्दु ने स्वयं १५ अक्टूबर १८७३ में *"हरिश्चन्द्र मैगज़ीन"* निकाली पर बाद में इसका नाम परिवर्तित कर *"हरिश्चन्द्र चंद्रिका"* कर दिया गया।[४] भारतेन्दु से प्रेरणा पाकर अन्य कई विदुषियों ने अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन किया परन्तु सबकी विस्तृत जानकारी यहाँ संभव नहीं है

अतः जितना हो सका हमने पत्रकारिता के इतिहास की एक संक्षिप्त जानकारी यहाँ प्रस्तुत की है।

५.१.१ पत्रकारिता का अर्थ एवं परिभाषा

यूँ तो किसी भी शब्द और उसके व्यापक स्वरूप को परिभाषा या किसी भी सीमा में बाँधना हमेशा से ही कठिन रहा है और पत्रकारिता को आज आधुनिक परिवेश में जबकि उसका अर्थ और भी विस्तृत और व्यापक होता जा रहा है उसे किसी भी सीमा में बाँधना एक कठिन कार्य है। फिर भी कुछ विद्वानों के मत पत्रकारिता के विषय में इस प्रकार हैं।[५]

अर्जुन तिवारी– "एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका" के आधार पर अुर्जन तिवारी ने पत्रकारिता की परिभाषा इस प्रकार की है:–

'पत्रकारिता के लिए अंग्रेजी में 'जर्नलिज्म' शब्द व्यवहृत होता है जो 'जर्नल' से निकला है। जिसका शाब्दिक अर्थ "दैनिक" है। दिन–प्रतिदिन के क्रियाकलापों, सरकारी बैठकों का विवरण 'जर्नल' में रहता था। सत्रहवीं एवं अठारहवीं शताब्दी में 'पीरियॉडिकल' के स्थान पर लैटिन शब्द 'डियूरनल' और 'जर्नल' प्रयोग हुए। बीसवीं सदी में गंभीर समालोचना और विद्वतापूर्ण प्रकाशन को इसके अन्तर्गत माना गया। 'जर्नल' से बना 'जर्नलिज्म' अपेक्षाकृत व्यापक शब्द है। समाचार पत्रों और विविधकालिक पत्रिकाओं के संपादन एवं लेखन और तत्संबधी कार्यों को पत्रकारिता के अन्तर्गत रखा गया। इस प्रकार समाचारों का संकलन–प्रसारण, विज्ञापन की कला एवं पत्र का व्यावसायिक संगठन पत्रकारिता है। समसामयिक गतिविधियों के संचार से संबद्ध सभी साधन, चाहे वह रेडियो हो या टेलीविजन इसी के अन्तर्गत आते हैं'।[६]

बद्रीनाथ कपूर के अनुसार– "पत्रकारिता पत्र–पत्रिकाओं के लिए समाचार लेख आदि एकत्रित तथा संपादित करने, प्रकाशन आदेश आदि देने का कार्य है।"[७]

रामकृष्ण रघुनाथ खाडिलकर के अनुसार– 'ज्ञान और विचार शब्दों तथा चित्रों के रूप में दूसरे तक पहुँचाना ही पत्र कला है।'[८]

लेसी स्टेफेस के अनुसार– 'जिन बातों की आपको जानकारी नहीं है, उनके बारे में अवगत कराना पत्रकारिता है।'[९]

'टाइम पत्रिका' के एक संवाददाता के अनुसार– 'पत्रकारिता इधर–उधर से एकत्रित सूचना का केंद्र है, जो सही अंतदृष्टि और प्रेषण का कार्य इस ढंग से करता है कि सत्य का पालन हो और घटनाओं के सहीपन को देखा गया हो, भले ही तुरन्त न सही, पर अधिक साक्षी हो।'[१०]

सी.जी.मूलर सामयिक ज्ञान के व्यवसाय की पत्रकारिता मानते हैं। इस व्यवसाय में आवश्यक तथ्यों की प्राप्ति, सावधानी पूर्वक उनका मूल्यांकन तथा उचित प्रस्तुतीकरण होता है।

'जर्नलिज्म' शब्द की उत्पत्ति फ्रेंच शब्द 'जर्नी' से हुई है जिसका अर्थ है प्रतिदिन के कार्यों और घटनाओं का विवरण प्रस्तुत करना। पत्रकारिता प्रतिदिन की घटनाओं का यथातथ्य विवरण प्रस्तुत करती है।

हर्बर्ट ब्रूकर ने लिखा है कि पत्रकारिता वह माध्यम है जिसके द्वारा हम अपने मस्तिष्क में उस दुनिया के बारे में समस्त सूचनाएँ संकलित करते हैं जिसे हम स्वतः कभी नहीं जान सकते।

जेम्स मैकडोनल्ड के अनुसार– "पत्रकारिता रणभूमि से भी अधिक श्रेष्ठ है, यह व्यवसाय नहीं, यह व्यवसाय से श्रेष्ठ वस्तु है, यह एक जीवन है।'

प्रायः पत्रकारिता (Journalism), माध्यम (Media), प्रेस (Press), जन माध्यम (Mass Media), जन संचार (Mass Communication) को एक ही अर्थ में ग्रहण किया जाता है, पर सूक्ष्म दृष्टि से इन सभी शब्दों का अपना एक विशिष्ट अर्थ है।

(१) पत्रकारिताः– समाचारों के संकलन, चयन, विश्लेषण और संप्रेषण की प्रक्रिया है।

(२) माध्यमः– संचार के साधन और पत्रकारिता की गतिविधियों को संचालित करने वाले संगठन इसके अन्तर्गत आते हैं।

(३) प्रेसः– यह तकनीकी रूपसे समाचार पत्र को संकेतित करता है।

(४) जन माध्यमः– इसका तात्पर्य सभी प्रकार के प्रकाशन, प्रसारण कार्यक्रम, पुस्तक और फिल्म आदि प्रमुख साधनों से है।

(५) जन संचार– इसमें जन माध्यम के सभी साधनों के अतिरिक्त टेलीफोन, टेलीग्राफ, डाक सेवा आदि सम्मिलित हैं।[११]

५.१.२ पत्रकारिता का विकास

आज की पत्रकारिता और पहले की पत्रकारिता में बहुत अन्तर आ गया है। यह कहना की पहले की तुलना में आज की पत्रकारिता ने बेहद प्रगति की है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। पर आज की पत्रकारिता में कुछ खामियाँ भी हैं। जहाँ आज़ादी के पूर्व की पत्रकारिता का मुख्य उद्देश्य अंग्रेजी शासन के विरूद्ध बगावत को हवा देना था लोगों में स्वतंत्रता के प्रति जागरूकता पैदा करना, उन्हें जगाना और समाज में व्याप्त एवं विद्यमान कुरीतियों का विरोध करना था, वहीं आज़ादी के बाद की पत्रकारिता के सामने कोई विशेष मुद्दा नहीं था। बस उसके सामने एक ही विषय था उस समय की सरकार और उसकी नीतियों के बारे में लिखना। सामाजिक विषयों से ध्यान हटकर राजनैतिक मुद्दों की ओर लग गया। आज की पत्रकारिता का उद्देश्य अधिक से अधिक अखबार बेचकर पैसा कमाना है चाहे इसके लिए जो भी करना पड़े। आज की पत्रकारिता एक मिशन नहीं, व्यवसाय नहीं, पूर्ण 'व्यवसाय' बन चुकी है।

लेकिन इन सब खामियों के बावजूद आज की पत्रकारिता ने आगे आने वाले समय में भारतीय पत्रकारिता के लिए प्रगति के नये द्वार खोल दिये हैं। आज का युग प्रगति का युग है। जहाँ पहले पत्रकार कंधे पर झोला टाँगे अखबार लेकर जगह-जगह घूमकर अखबार बेचते नज़र आते थे वहीं इलैक्ट्रॉनिक्स सिस्टम के आ जाने से पत्रकारिता के क्षेत्र में नयी क्रांति सी आ गयी है। खबरों को लोगों तक पहुँचाने का माध्यम जहाँ एक ओर डाक, तार, कोरियर, टेली प्रिंटर, टेलीफोन हुआ करते थे वहीं इनका स्थान अब फैक्स और मॉडम ने ले लिया है। हालाँकि ये सेवाएँ आज भी उपलब्ध हैं फिर भी फैक्स और मॉडम के इस क्षेत्र में आ जाने से समय की काफी बचत हो गयी है। भारत में इन दिनों जो दो समाचार पत्र उपग्रह के माध्यम से छप रहे हैं उनमें, एक है *'पंजाब केसरी'* और दूसरा है *'हिन्दू'*। *'पंजाब केसरी'* जालंधर, अंबाला, और दिल्ली से प्रकाशित होता है। इसका अंबाला संस्करण उपग्रह के माध्यम से छपता है। वैसे ही अंग्रेजी दैनिक पत्र *'हिन्दू'* चन्नै, कोयंबटुर, बेंगलूर, हैदराबाद, मदुरै, दिल्ली, विशाखापट्टणम, तिरूवनंतपुरम, कोच्चि, विजयवाड़ा, मैंगलूर और तिरुचिरापल्ली, से प्रकाशित होता है और इसका दिल्ली संस्करण उपग्रह के माध्यम से प्रकाशित होता है।

नई तकनीकों के इस क्षेत्र में आ जाने से भारतीय पत्रकारिता में बिना कलम के पत्रकार का युग शुरु हो गया है। आज समाचार सम्प्रेषण के साधन विकसित हो चुके हैं। प्रिंट मीडिया नई तकनीक के साथ क्रांति के दौर से गुज़र रहा है। कम्प्यूटरों के आ जाने से इस क्षेत्र में प्रगति की और भी संभावनायें नज़र आती हैं। आज समाचार पाठकों तक शीघ्रता से पहुँचने लगे हैं। आज सचित्र समाचार पत्र छपने लगे हैं, उनकी छपाई सुंदर है लेकिन इन सब से भी ज्यादा जरूरी चीज जो है, वह यह कि मशीनों के विकास, प्रगति के साथ–साथ हम मनुष्य भी प्रगति करें। कहने का तात्पर्य यह है कि एक पत्रकार के लिए यह जरूरी नहीं है कि उसने एक कहानी तैयार कर ली बल्कि उससे भी ज्यादा जरूरी है कि उसने कहानी को कितनी सूझबूझ से तैयार किया है। क्योंकि किसी भी पत्रकारिता का उद्देश्य न केवल समाचार पत्रों के लिए समाचार तैयार करना है बल्कि कहानी, लेख, चित्रों आदि के माध्यम से समाज के हर वर्ग को शिक्षित, जागरूक करना भी है। और ये काम मशीनों द्वारा नहीं एक सफल–सुलझे हुए पत्रकार के द्वारा ही किया जा सकता है और तब सही मायने में पत्रकारिता का उद्देश्य सफल होगा और आगे भी वह विकास पथ पर अग्रसर होगी।

आने वाले समय में कम्प्यूटर और नयी तकीनीकों के कारण अखबार का स्वरूप कैसा होगा यह तो अभी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता पर विशेषज्ञों की मानें तो इलैक्ट्रॉनिक अखबार आज की तुलना में सस्ते होंगे और इन्हें प्रसारित करना आसान होगा।

अन्त में विकास के संदर्भ में डॉ. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी की एक बात "पहाड़ से गिरते हुये पत्थर के टुकड़ों में यदि जुबान होती और कोई उन्हें लुढ़कते देख पूछता कि आप क्या कर रहे हैं तो वह यही जवाब देता कि मैं प्रगति कर रहा हूँ।" हमारी मशीनें ही नहीं हम मनुष्य भी प्रगति करें, करते रहें और प्रगति की इच्छा में अपने संस्कार और संस्कृति को भी साथ–साथ रखे तो ही सही प्रगति होगी।[१२]

५.१.३ पत्रकारिता का उद्देश्य

पत्रकारिता समाचारों का संकलन, संपादन, प्रकाशन और प्रेषण है साथ ही वह वर्तमान समय की नब्ज को पहचानने वाला उसे महसूस करने वाला एक माध्यम भी है। जहाँ एक ओर यह लोगों की सेवा करती है, अन्याय और दमन का

विरोध करती है वहीं दूसरी ओर रचनात्मक प्रवृत्तियों को जागृत और प्रोत्साहित करने का कार्य भी करती है। व्यापक अर्थों में वह समाज में उच्च मूल्यों और आदर्शों की प्रतिष्ठा में सहयोगी बनती है। संक्षेप में यहाँ पत्रकारिता के प्रमुख तीन उद्देश्य प्रस्तुत किये जा रहे हैं :-

(क) *सूचना देना*

पत्रकारिता जन-जन को विश्व रंगमंच पर घटित होने वाली घटनाओं की जानकारी कराती है। इसके माध्यम से जनता को सरकार की नीतियों और गतिविधयों के बारे में जानकारी मिलती रहती हैं। एक प्रकार से यह जनहितों की संरक्षिका है।

(ख) *शिक्षित करना*

सूचना के अतिरिक्त पत्रकारिता का प्रमुख उद्देश्य लोगों को शिक्षित करना भी है। पत्रकार जनता के आँख और कान होते हैं। एक पत्रकार जो देखता, सुनता है उसे मुद्रित और इलैक्ट्रॉनिक माध्यमों से जनता तक पहुँचाता है। पत्रकारिता जनमत निर्धारित करने की दिशा में महत्वपूर्ण आधार भूमि तैयार करती है। संपादकीय स्तंभों, अग्रलेखों, पाठकों के पत्र, परिचर्चाओं, साक्षात्कारों आदि विविध तरीकों द्वारा जनता को सामयिक और महत्त्वपूर्ण विषयों पर जानकारी देते हैं। देश की वैचारिक चेतना को पत्रकारिता ही उद्वेलित करती है। इस प्रकार पत्रकारिता जन शिक्षण का प्रमुख माध्यम है।

(ग) *मनोरंजन करना*

यूँ तो मनोरंजन की दृष्टि से रेडियो और दूरदर्शन का महत्व अधिक है, या ये कहें कि मनोरंजन करना रेडियो और दूरदर्शन का प्रमुख कार्य है तो यह काफी हद तक सही है। पर समाचार पत्र पत्रिकाएँ भी इस दृष्टि से काफी स्थान पाठकों के मनोरंजन संबंधी सामग्री के लिए सुरक्षित कर रही हैं। मनोरंजक सामग्री पाठकों को स्वाभाविक रूप से आकृष्ट भी करती हैं। मनोरंजन में कई बार शिक्षा का मार्मिक संदेश भी छिपा होता है। उदा:-राजनीतिक कार्टून और ऐसे ही हास्य-व्यंग्य के स्तंभ। इनका मूल उद्देश्य सामाजिक-राजनीतिक जीवन में स्वस्थ भावों का संचार करना ही होता है। मनोरंजन की दृष्टि से जहाँ पत्र-पत्रिकाएँ मनोरंजक समाचारों के प्रकाशन में रुचि प्रदर्शित करती हैं, वहीं यह कार्य फीचर लेखों के माध्यम से विशेष रूप से किया जाता है। मनोरंजन मानवीय रुचि का महत्वपूर्ण पक्ष है।

५.१.४ पत्रकारिता का क्षेत्र

समाचार पत्र जनता की संसद होती है, जिसका अधिवेशन हमेशा चलता रहता, ये कभी सत्ता से पदच्युत नहीं होती। जिस प्रकार संसद में विभिन्न प्रकार की समस्याओं पर चर्चा की जाती है, विचार-विमर्श किया जाता है, सरकार का ध्यान आकृष्ट किया जाता है, उसी प्रकार समाचार पत्रों का स्वरूप भी बहुआयामी और व्यापक होता है। पत्रकारिता विभिन्न जनसमस्याओं से जुड़ी होती है, समस्याओं को प्रशासन के समक्ष प्रस्तुत कर उस पर रचनात्मक बहस को प्रोत्साहित करती है। आधुनिक पत्रकारिता के पाँच महत्वपूर्ण भाग किए जा सकते हैं:- (i) समाचार पत्र-पत्रिकाँए (ii) रेडियो (iii) टेलीविजन (iv) फिल्म (v) विज्ञापन। पत्रकारिता का मूल अर्थ यहाँ रेडियो, टेलीविजन और समाचार पत्र से ही है। रेडियो और टेलीविजन पत्रकारिता से संबंधित जानकारी आगे प्रस्तुत की जायेगी। संक्षिप्त रूप से वर्तमान पत्रकारिता के प्रमुख क्षेत्र की जानकारी यहाँ दी जा रही है:-

(i) *आर्थिक पत्रकारिता*

आज का युग अर्थ प्रधान युग है। औद्योगिकीकरण की रफ्तार ने विश्व की अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया है। वे सभी गतिविधियाँ जो देश और विदेशों के अर्थ जगत् से जुड़ी हैं आर्थिक पत्रकारिता का विषय हैं। आर्थिक योजनाएँ, बाजार सामाचार, मुद्रा बाजार, पूँजी बाजार, वस्तु बाजार आदि के समाचार और उनसे जुड़े विश्लेषणात्मक लेख अब पत्र-पत्रिकाओं में अधिक संख्या में छपने लगे हैं और आजकल तो अर्थ जगत् से संबंधित एक पूरा समाचार पत्र ही बड़ी संख्या में प्रकाशित होता है।

(ii) *ग्रामीण पत्रकारिता*

पोषण, स्वास्थ्य, कृषि उत्पादन संबंधी तकनीक, परिवार कल्याण और विकासात्मक गतिविधियों के बारे में संपूर्ण जानकारी देने का महत्वपूर्ण जरिया ग्रामीण पत्रकारिता है। भारत एक ग्राम प्रधान देश है और यहाँ की अधिकांश जनता गाँवों में निवास करती है अतः उनकी समस्याओं, आशा-आकाक्षाओं को प्रमुखता से पत्रकारिता के माध्यम से प्रस्तुत करना प्रत्येक समाचार पत्रों का प्रमुख दायित्व है।

परिभाषा- जिन समाचार पत्रों में चालीस प्रतिशत से अधिक जानकारी गाँवों के बारे में, कृषि, पशुपालन, खाद, बीज, कीटनाशक, पंचायती राज सहकारिता

आदि विषयों पर होगी उन्हीं पत्रों को ग्रामीण पत्र माना जाएगा।[१३] ग्रामीण पत्रों से तात्पर्य उन छोटे पत्रों से है जो कम प्रसार संख्या के बावजूद एक छोटे से समुदाय की उन आवश्यकताओं और अपेक्षाओं की पूर्ति करते हैं जो शहरी प्रेस के लिए संभव नहीं हैं। ग्रामीणों के लिए आजकल प्रांतीय और राष्ट्रीय पत्रों में भी विशेष कॉलम प्रकाशित किए जा रहे हैं।

(iii) *शैक्षिक पत्रकारिता*

शिक्षा का पत्रकारिता से सीधा संबंध है। दोनों का उद्देश्य एक समान है। जहाँ पत्रकारिता शिक्षा और सूचना का सार्थक माध्यम है, वहीं यही उद्देश्य शिक्षा का भी है। जिस प्रकार सामाजिक परिवर्तन के लिए पत्रकारिता उत्तरदायित्व की भूमिका निभाती है उसी प्रकार मनुष्य को 'सामाजिक प्राणी' बनाने उसके विकास में शिक्षा प्रमुख भूमिका निभाती है। शिक्षा और पत्रकारिता के इस संबंध को शैक्षिक पत्रकारिता की संज्ञा दी जा सकती है। शैक्षिक संस्थाओं के द्वारा चलायी जा रही शैक्षिक प्रवृत्तियों, शिक्षा संबंधी घटनाओं उनकी समस्याओं को जनसंचार माध्यमों द्वारा जनता तक पहुँचाना शैक्षिक पत्रकारिता है।

साथ ही शैक्षिक पत्रकारिता, पत्रकारिता का वह सकारात्मक पक्ष है जिसके समुचित विकास से समाज में वैचारिक चेतना का विकास होगा और शिक्षण संस्थाओं के छात्र–अध्यापकों के बीच आपसी समझ का वातावरण भी उत्पन्न एवं विकसित होगा। उच्च सिक्षा को प्रत्यक्ष रूप से समाज और 'आमजन' तक इसके द्वारा पहुँचाया जा सकता है।

(iv) *व्याख्यात्मक पत्रकारिता*

घटनाओं को यथातथ्य प्रस्तुत करना पत्रकारिता के प्रारंभिक दौर में पर्याप्त माना जाता था। पर बदले हुए परिवेश में पाठक इतने से ही संतुष्ट नहीं है। हमेशा से ही मनुष्य के अंदर कुछ न कुछ जानने की जिज्ञासा बनी रही है। वह कुछ 'और' भी जानना चाहता है। इसी 'और' की संतुष्टि के लिए आज संवाददाता घटनाओं की पृष्ठभूमि और उसके कारणों की खोज़ करता है और उसके बाद उसका विश्लेषण कर उसको प्रस्तुत करता है, इस तरह की प्रस्तुति को ही व्याख्यात्मक पत्रकारिता कहा जाता है। *'टाइम्स ऑफ इंडिया'* के 'News Analysis' और *'राजस्थान पत्रिका'* के 'मंथन' आदि स्तंभ व्याख्यात्मक पत्रकारिता के प्रतीक हैं। प्रेस स्वतंत्रता

पर अमेरिका के प्रेस आयोग ने भी यह स्वीकार किया था कि अब समाचार के तथ्यों को सत्य रूपसे रिपोर्ट करना ही पर्याप्त नहीं है वरन् यह भी आवश्यक है कि तथ्य के संपूर्ण सत्य को भी प्रकट किया जाए।[१४]

(v) *विकास पत्रकारिता*

आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों के बारे में रचनात्मक लेखन को विकास पत्रकारिता के रूप में देखा जाता है। पत्रकार का मुख्य कार्य अपने पाठकों को तथ्यों से परिचित कराने के साथ-साथ जहाँ संभव हो वहाँ निष्कर्षों से उन्हें अवगत कराना भी है। अपराध और राजनीतिक जगत् के संवाददाताओं का यह मुख्य कार्य है। तीसरा मुख्य दायित्व प्रसार (Promotion) का है। आर्थिक-सामाजिक जीवन के बारे में तथ्यों के प्रस्तुतीकरण के साथ उसका प्रसार भी आवश्यक है। विकासात्मक लेखन में शोध का भी मुख्य कार्य है।

(vi) *संदर्भ पत्रकारिता*

आधुनिक पत्रकारिता में संदर्भ पत्रकारिता अथवा संदर्भ सेवा का विशिष्ट स्थान है। संदर्भ सेवा का अर्थ है संदर्भ सामग्री की उपलब्धता। संपादकीय लिखते समय किसी सामयिक विषय पर टिप्पणी लिखने या लेख लिखने की दृष्टि से कई बार विशेष संदर्भों की आवश्यकता होती है। किसी भी विषय को सिर्फ स्मरण शक्ति के आधार पर लिखना किसी पत्रकार के लिए संभव नहीं है और वह भी तब जब ज्ञान-विज्ञान का विस्तार और यांत्रिक युग की व्यस्तताओं से जीवन भरा पड़ा हो। अतः पाठकों को संपूर्ण जानकारी देने के लिए आवश्यक है कि पत्र-प्रतिष्ठान के पास अच्छा संदर्भ साहित्य संगृहीत हो।

(vii) *संसदीय पत्रकारिता*

संसद और विधानमंडल समाचार पत्रों के लिए समाचारों के प्रमुख स्रोत हैं। सदनों की कार्यवाही के समय समाचार पृष्ठ इनकी गतिविधियों से पटे होते हैं। आम जनता की इन गतिविधियों में विशेष रुचि होती है और समाचार पत्र जनता तक इन खबरों को पहुँचाकर उनका पथ-प्रदर्शन करते हैं।

संसदीय कार्यवाही की रिपोर्ट तैयार करने के लिए विशेष दक्षता और सावधानी की आवश्यकता है। प्रत्येक पत्रकार के लिए यह आवश्यक है कि वह संसदीय विशेषाधिकारों और इनसे संबंधित कानूनों की जानकारी रखे।

(viii) *खेल पत्रकारिता*

खेलों का मानव जीवन से पुराना संबंध है। मनोरंजन और स्वास्थ्य की दृष्टि से लोगों ने इसके महत्त्व को समझा है। आधुनिक विश्व में विभिन्न देशों के मध्य होने वाली प्रतियोगिताओं के कारण कई खेल एवं खिलाड़ी लोकप्रिय होने लगे हैं। ओलंपिक और एशियाई आदि अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगताओं के कारण भी खेलों के प्रति लोगों की रुचि का विकास हुआ है। खेलों के प्रति जन–जन की रुचि को देखते हुए पत्र–पत्रिकाओं में खेलों के समाचार और उनसे संबंधित नियमित स्तंभों का प्रकाशन किया जाता है। प्रायः सभी समाचार–पत्रों में एक पूरा पृष्ठ खेल गतिविधियों से भरा रहता है।

(ix) *अन्वेषणात्मक पत्रकारिता*

जब कोई व्यक्ति या अधिकारी किसी तथ्य को उद्घाटित होने से बचाता है, उसे छिपाता है, तो वह अन्वेषणात्मक पत्रकारिता कहलाती है। उस समाचार या तथ्य को पत्रकार प्रकाश में लाने के लिए तत्पर हो जाता है। अमेरिका का "वाटरगेट कांड" इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। इस कांड के कारण सत्ता परिवर्तन के बाद अन्वेषणात्मक पत्रकारिता को विशेष प्रोत्साहन और मान्यता मिली। अन्वेषणात्मक पत्रकारिता का मूल उद्देश्य सामाजिक–राजनीतिक जीवन में शुद्धता का होना है। यदि पत्रकारिता चरित्र हनन, किसी व्यक्ति या संस्था को बदनाम या अपमानित करने की दृष्टि से की जाए तो वह 'पीत पत्रकारिता' कहलाती है। अन्वेषणात्मक पत्रकारिता सही उद्देश्यों से अनुप्राणित होकर की जाए तो यह समाज और राष्ट्र के लिए बहुत बड़ी सेवा होगी।

(x) *अनुसंधानात्मक पत्रकारिता*

प्रवीण दीक्षित ने अनुसंधानात्मक पत्रकारिता को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि– 'अनुसंधान पत्रकारिता, पत्रकारिता की वह विधा है जिसके द्वारा किसी समसामयिक महत्त्व के विषय, घटना, स्थिति या तथ्यों का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन, सर्वेक्षण और अनुसंधान करके वास्तविक निष्कर्ष निकाले जाते हैं।[५]

पत्रकारिता के इस क्षेत्र में जन माध्यम और पत्रकारिता से जुड़े विविध, विषयों, प्रश्नों और समस्याओं का सर्वेक्षण किया जाता है। आज जन माध्यम और पत्रकारिता का क्षेत्र इतना विस्तृत और व्यापक हो गया है कि इसमें काफी अध्ययन

अनुसंधान की संभावनाएँ बढ़ गई हैं। अन्वेषणात्मक पत्रकारिता और अनुसंधान पत्रकारिता को स्पष्ट करते हुए प्रवीण दीक्षित ने लिखा है– 'एक व्यापक अर्थ में अन्वेषी पत्रकारिता को भी अनुसंधान पत्रकारिता का एक रूप या प्रकार कहा जा सकता है; किन्तु इन दोनों में सबसे बड़ा अन्तर यह होता है कि अन्वेषी पत्रकारिता में किसी घटना या स्थिति का विधिवत् योजनाबद्ध वैज्ञानिक रूप से अध्ययन या अनुसंधान नहीं किया जाता, जबकि अनुसंधान पत्राकारिता में ऐसा करना अनिवार्य है।[१६]

(xi) ***साहित्यिक सांस्कृतिक पत्रकारिता***

डॉ. भास्कर राव ने छः सौ प्रकाशनों के आधार पर एक सर्वेक्षण करके यह निष्कर्ष निकाला कि, 'अधिकांश समाचार पत्र जहाँ राजनीति के प्रति पूर्वाग्रह से ग्रसित हैं, वहीं वे हिंसा, अपराध और आन्दोलनों के समाचारों का निराशाजनक रूप (Gloomy picture) प्रस्तुत करते हैं।[१७]

आज पत्रकारिता पर राजनीति बुरी तरह हावी होती जा रही है। ऐसी परिस्थिति में समाचार पत्रों में साहित्यिक–सांस्कृतिक समारोहों को विशेष स्थान नहीं मिलता और यदि मिलता भी है तो काफी कम और ऐसे स्थान पर जहाँ–जहाँ पाठकों की दृष्टि जल्दी नहीं पड़ती। इसलिए आवश्यक है कि समय–समय पर आयोजित प्रमुख विचार–गोष्ठियों, साहित्यकारों के सम्मेलन, पुस्तक विमोचन, कवि–गोष्ठियों, बौद्धिक चर्चाओं, संगीत, नृत्य, नाटक आदि गोतिविधियों को पत्रकारिता के माध्यम से उचित प्रोत्साहन मिले और समाचार पत्रों में प्रमुख स्थान भी मिले।

(xii) ***फिल्म पत्रकारिता***

आज हमारा समाज फिल्मों से काफी हद तक प्रभावित है। फिल्मों की समीक्षा, फिल्मी कलाकारों के साक्षात्कार, उनकी गतिविधियाँ और फिल्मों पर समीक्षात्मक लेख फिल्मी पत्रकारिता के प्रमुख पक्ष हैं। और आजकल बड़ी संख्या में पाठकों की इसमें रुचि होने के कारण हिन्दी–अंग्रेजी भाषा में अनेक फिल्मी पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं।

(xiii) ***रेडियो पत्रकारिता***

रेडियो पत्रकारिता की दृष्टि से आकाशवाणी के वे कार्यक्रम महत्त्वपूर्ण हैं जिनमें समाचार तत्त्व अधिक होता है। आकाशवाणी के इन समाचार कार्यक्रमों को

तैयार करने का मुख्य दायित्व समाचार सेवा प्रभाग पर है। समाचारों के अतिरिक्त सामयिकी, जिले अथवा राज्य की चिट्ठी, रेडियो न्यूजरील, समाचार दर्शन आदि कार्यक्रम प्रमुख हैं, जो रेडियो पत्रकारिता की परिधि में आते हैं।

(xiv) *टेलीविजन पत्रकारिता*

टेलीविजन कार्यक्रमों के समाचार कार्यक्रम टी.वी. पत्रकारिता का क्षेत्र है। इसके लिए विशेष तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता है। लेखन, शब्द, ध्वनि, श्रव्य ध्वनि, दृश्य ध्वनि और फिल्म तकनीक का ज्ञान भी टी.वी. पत्रकार के लिए अपेक्षित है।

(xv) *विज्ञान पत्रकारिता*

आज हमारा दैनिक जीवन कदम-कदम पर विज्ञान के प्रभाव से प्रभावित है, अतः इस कारण जनसामान्य की विज्ञान में रुचि बढ़ना स्वाभाविक ही है। विज्ञान संबंधी अनुसंधान और विज्ञान जगत् की गतिविधियाँ, हलचल आदि विज्ञान पत्रकारिता के माध्यम से ही आम जनता, पाठक तक पहुँच पाती हैं। अतः आवश्यक है कि पत्रकार विज्ञान जैसे तकनीकी, गंभीर विषय को सरल, सुबोध ढंग से पाठकों तक पहुँचा सकें। विज्ञान संबंधी पत्र-पत्रिकाओं ने विज्ञान पत्रकारिता के विकास में वर्तमान समय में विशेष सहयोग प्रदान किया है।

इन सब के अलावा भी पत्रकारिता के और भी क्षेत्र हो सकते हैं, जैसे- राजनीतिक पत्रकारिता, वृत्तांत (कमेंट्री) पत्रकारिता, बाल पत्रकारिता, ब्रेल पत्रकारिता, फोटो पत्रकारिता महिला पत्रकारिता विज्ञापन पत्रकारिता आदि पर सभी की यहाँ जानकारी दे पाना संभव नहीं है अतः पत्रकारिता के क्षेत्र की एक छोटी सी जानकारी पाठकों के लिए इस अध्याय में प्रस्तुत की गई है। चूँकि इस अध्याय का प्रमुख विषय 'कर्नाटक में जनसंचार माध्यमों द्वारा हिन्दी का प्रचार एवं प्रसार' है अतः आगे चलकर इस विषय से संबंधित जानकारी प्रस्तुत की जा रही है।

५.१.५ कर्नाटक में पत्रकारिता की शुरुआत

कन्नड़ पत्रकारिता के १६० वर्षों के इतिहास को संक्षेप में कहना अनुचित होगा फिर जितना हो सका है, जितनी सामग्री प्राप्त हो सकी है उसकी कुछ झलकियाँ यहाँ प्रस्तुत हैं।

भारत में सभी भाषाओं में प्रकाशन एवं पत्रकारिता की परंपरा विदेशी मिशनरियों के द्वारा प्रारंभ हुई थी। इन्हीं मिशनरियों में एक जर्मन मिशनरी हेर्मन फ्रेड्रिक मोग्लिंग ने मंगलूर में १ जुलाई १८४३ को *'मंगलूर समाचार'* नाम से कन्नड़ का प्रथम समाचार पत्र प्रारंभ किया। आधुनिक पत्रकारिता के सारे लक्षण एवं तत्त्व इसमें मौजूद थे। बासेल मिशन से इसका प्रकाशन होता था। यह लिथो पर छपता था और इस पाक्षिक पत्र का मूल्य चार पाई था।[१८]

इस पत्र में स्थानीय समाचार, सरकारी आदेश, नीतिपरक कहावतें, पद्य व अन्य देशी व विदेशी समाचार होते थे। इसे बाद में बल्लारी शहर स्थानांतरित कर दिया गया, जहाँ इसका नाम बदलकर *'कन्नड़ समाचार'* कर दिया गया और यह लिथो की जगह आधुनिक यंत्र से छपने लगा। यह पत्र अच्छा चल निकला था फिर भी किसी कारणवश १८४४ में इसे बंद कर दिया गया। इसकी स्मृति में प्रतिवर्ष कर्नाटक में 'पत्रकारिता दिवस' मनाया जाता है।

स्वतंत्रता पूर्व कर्नाटक मैसूर, हैदराबाद, मुंबई, कोडगु और मैसूर रियासत में बँटा हुआ था। मंगलूर के बाद कर्नाटक के अन्य भागों से भी पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन होने लगा। यहाँ के स्थानीय लोगों ने अपनी पसंद का विषय चुनकर पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारंभ किया। १८५७ में एक बार फिर मोग्लिंग ने *'कन्नड़ समाचार'* का पुनः प्रकाशन आरंभ किया। साथ ही ईसाई धर्म प्रचार से संबंधित कई पाक्षिक व साप्ताहिक प्रकाशित होने लगे। १८५७ में ईसाई धर्म प्रचार के लिए मुंबई से और १८६२ में बेंगलूर से *'अरुणोदय'* नामक पत्रिका शुरु की गई।

उन्हीं दिनों मैसूर सरकार ने भी अपनी मासिक पत्रिका *'कर्नाटक वाग्विधायनी'* का प्रकाशन शुरु किया। और साथ ही अंग्रेजी पत्रिका *'मैसूर गज़ट'* का प्रकाशन भी शुरु किया जो आजकल *'कर्नाटक गज़ट'* नाम से प्रकाशित हो रही है।

एम. वेंकटकृष्णय्या जिन्हें कर्नाटक की पत्रकारिता का पितामह नाम से संबोधित किया जाता है, उन्होंने मैसूर से मासिक पत्रिका *'साध्वी'* का प्रकाशन प्रारंभ किया, जो बाद में साप्ताहिक रूप में और अब दैनिक रूप में प्रकाशित हो रही है।

सन् १९२४ में कर्नाटक के बेलगाँव में काँग्रेस का एक अधिवेशन हुआ जिसमें पहली और अंतिम बार गाँधी जी काँग्रेस के अध्यक्ष बने। कर्नाटक की पत्रकारिता पर इस आंदोलन का विशेष प्रभाव पड़ा।

सन् १९३०-४० के बीच अन्य कई पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ। इसी समय कई साप्ताहिक पत्रों ने दैनिक पत्रों का रूप धारण कर लिया। लिथो पर छपने वाले पत्र अब मशीनों पर छपने लगे। बेंगलूर से प्रकाशित होने वाला *'तायिनाडु'* (१९२६) दैनिक कन्नड़ पत्रकारिता के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। *'संयुक्त कर्नाटक'* हुबली से दैनिक के रूप में प्रातःकाल प्रकाशित होने लगा। उन दिनों सारे दैनिक शाम को प्रकाशित होत थे पर *'संयुक्त कर्नाटक'* इसका अपवाद रहा।

१९४८ में *डेक्कन हेराल्ड* जो कि अंग्रेजी दैनिक था और इसके अगले वर्ष कन्नड़ दैनिक *'प्रजावाणी'* पत्रिका प्रकाशित हुई।

१९५६ में कर्नाटक का एकीकरण हुआ। यह एकीकरण आंदोलन लम्बे समय तक चला और इस आंदोलन में पत्र-पत्रिकाओं ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

कर्नाटक एक ऐसा राज्य है जहाँ दक्षिण की चारों भाषाओं के अलावा कोंकणी, तुलु, कूर्गी, मराठी, उर्दू, हिन्दी, अंग्रेजी कई भाषाओं में पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं। १९६० के बाद से बेंगलूर दक्षिण भारत की पत्र-पत्रिकाओं की राजधानी बन गया है।

अब तक हमने देखा कि कर्नाटक में कई प्रकार के पत्र-पत्रिकाएँ प्रारंभ हुईं, इसके बाद अब विशेषकर कर्नाटक में हिन्दी पत्रकारिता से संबंधित विषय पर प्रकाश डालेंगे।

५.१.६ कर्नाटक में हिन्दी पत्रकारिता

यह सर्वविदित है कि हिन्दी को अखिल भारतीय स्तर पर प्रतिष्ठित कराने, उसे राष्ट्र की भाषा बनाने का गौरव प्रदान करने और हिन्दी प्रचार को एक आंदोलन के रूप में चलाने का श्रेय गाँधीजी को जाता है। भारत, जहाँ अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं, ऐसे देश में भावात्मक एकता को स्थापित करने और अंतरप्रांतीय स्तर पर संवाद स्तापित करने की दृष्टि से हिन्दी को एक सशक्त माध्यम भाषा के रूप में स्वीकार किया गया। प्रांतीय भाषाओं के प्रयोग उनके विकास पर बल देते हुए गाँधीजी ने अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी के प्रचार-प्रसार पर जोर दिया और कहा कि हिन्दी एक जोड़ने वाली भाषा है न कि तोड़ने वाली। हिन्दी के प्रचार-प्रसार को राष्ट्रीय महत्त्व का कार्य मानकर उन्होंने एक आन्दोलन चलाया जिसके तहत

सन् १९१८ में मद्रास में सर्वप्रथम उन्होंने हिन्दी की नींव रखी जिससे आगे चलकर दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा का निर्माण हुआ। गाँधीजी ने सिर्फ मद्रास को ही इसके लिए नहीं चुना अपितु कर्नाटक को मिलाकर पूरे दक्षिण भारत में हिन्दी के प्रचार-प्रसार पर बल दिया।

गाँधीजी के विचारों से प्रेरणा लेकर कर्नाटक में कई उत्साही युवकों, महिलाओं, विद्वानों ने आकृष्ट होकर हिन्दी सीखी और इसके प्रचार में अपना विशेष योगदान दिया। हिन्दी भाषा में पूर्ण दक्षता हासिल कर उसमें साहित्यिक कृतियों, उपन्यासों, नाटकों आदि में उन्होंने लिखना शुरु किया। साथ ही आगे चलकर हिन्दी में कई पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन भी कर्नाटक में होने लगा।

आज पत्र-पत्रिकाओं के महत्त्व को सभी ने असंदिग्ध रूप से स्वीकारा है। राष्ट्र जीवन पर पत्रिकाओं के प्रभाव को हर किसी ने रेखांकित किया है। राष्ट्रीय जीवन में पत्रकारिता की अनिवार्यता को स्वीकारते हुए नेपोलियन का यह कथन सर्वथा सत्य लगता है कि- 'पत्रकार गर्जन करता है, खंडन करता है, विवेक देता है, राजा या प्रभुता का प्रतिनिधि बनता है और राष्ट्र की विवेक का उपदेश देने वाला शांतिदूत बनता है।"[१९]

पत्रिकाएँ और पत्रकार जनता के हितों के संरक्षक हैं, लोकसत्ता के अभिभावक हैं। पत्रकारों की कलम सिर्फ कलम नहीं तलवार हैं। इस तलवार से एक ओर उन्होंने समाज की प्रतिगामी शाक्तियों का सामना किया है तो दूसरी ओर मानव और मानवता के अधिकारों के संरक्षण के लिए कुर्बानियाँ दी है। इसी कारण पत्रकारिता को लोकतंत्र का "चौथा स्तंभ" कहा जाता है।[२०]

दूसरी ओर पत्रिकाएँ किसी भी भाषा की जीवंत चेतना होती हैं। भाषा को जीवंत रखने में, उसमें चेतना भरने में और उसे समृद्ध बनाने में पत्रिकाओं का ज़बरदस्त दायित्व होता है। भारत की हर भाषा की अपनीं पत्रिकाएँ हैं, जिनके द्वारा वह भाषा जिंदा है।[२१]

कर्नाटक में हिन्दी पत्रकारिता का इतिहास ४०-५० सालों से ज्यादा नहीं है। इस बीच कई पत्रिकाएँ शुरु हुईं और बन्द भी हो गई। कर्नाटक में हिन्दी पत्रकारिता एक संस्था या संगठन से जुड़कर पल्लवित हुई है। इस कारण संस्थाओं एवं संगठनों की आर्थिक स्थिति व क्षमता के अनुसार हिन्दी पत्रकारिता को काफी

दिक्कतों का सामना करना पड़ा। अन्य प्रांतों के मुकाबले यहाँ की हिन्दी पत्रकारिता का क्षेत्र समृद्ध नहीं है।

स्वतंत्रता से पहले कर्नाटक में कोई पत्रिका प्रकाशित नहीं हुई थी पर बाद में कुछ छोटी-बड़ी पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ जिनमें प्रमुख थीं *'भारतवाणी'*, *'हिन्दी वाणी'*, *'हिन्दी सुधा'* आदि। इनकी विशेषताएँ इस प्रकार थीं :-

विशेषताएँ

(i) ये पत्रिकाएँ किसी न किसी हिन्दी प्रचार संस्थाओं से संबंधित थीं।

(ii) ये पत्रिकाएँ मासिक थीं।

(iii) संस्था की मासिक गतिविधियों का परिचय इसमें होता था।

(iv) हिन्दी के माध्यम से प्रान्तीय भाषाओं के साहित्य का प्रचार-प्रसार करना और उसके द्वारा प्रान्तीय भाषा को पूरक भाषा के रूप में उपयोग करना।

(v) अपनी-अपनी संस्थाओं से संचालित परीक्षाओं के परीक्षार्थियों के लिए परीक्षापयोगी लेख छापना।

५.१.६.१ पत्रिकाओं का संक्षिप्त विवरण

(१) *भारतवाणी*

कर्नाटक की हिन्दी पत्रकारिता को एक सुदृढ़ आयाम सुनिश्चित रूप देने में इस पत्रिका का विशेष योगदान है। यह कर्नाटक प्रान्तीय हिन्दी प्रचार सभा की मुख्य पत्रिका है। कर्नाटक में हिन्दी पत्रकारिता की शुरुआत के समय *'भारतवाणी'* ने सन् १९५६ में इस घोषणा के साथ हिन्दी जगत में प्रवेश किया- 'Its clientele is its own and untouched by other Journals in the whole of South India especially in all the Nineteen Districts of Karnataka. *'Bharatvani'* is the only and the best medium to introduce articles in the markets of North India in general, and Karnataka in particular. In addition to its popularity, it has a special privilege to be received kindly being the organ of the National Language movements.'[22] और इस पत्रिका ने हिन्दी के माध्यम से आधुनिक कन्नड़ साहित्य के कवियों, कृतियों और प्रवृत्तियों पर आलोचनात्मक लेख प्रकाशित कर उत्तर-दक्षिण के बीच सशक्त सेतु रूप का कार्यभार संभाला।

इस पत्रिका ने कर्नाटक की सांस्कृतिक संपदा, कन्नड़ साहित्य की विभिन्न विधाओं का परिचय लोगों को कराया। इसमें कन्नड़ के कवियों की रचनाओं को हिन्दी में अनुवाद कर प्रकाशित किया गया। उन दिनों कन्नड़ की कविताएँ नागरी लिपि में हिन्दी अनुवाद के साथ प्रकाशित हुईं। *'भारतवाणी'* ने कर्नाटक में हिन्दी पत्रकारिता की एक अच्छी नींव तैयार की परन्तु धीरे-धीरे इसके स्तर में गिरावट आने लगी। न केवल अपनी साज-सज्जा अपितु सामग्री संचयन में यह पत्रिका अपनी उपर्युक्त घोषणा से दूर होती चली गयी। और इसका परिणाम यह रहा कि कुछ वर्षों तक इसका प्रकाशन बंद रहा।

पर पिछले कुछ ८-१० सालों से डॉ. चन्दूलाल दूबे के संपादकत्व में यह पत्रिका एक नये जोश के साथ पाठकों के सामने आयी है। अब इसमें न केवल साहित्यिक विधाओं पर समीक्षात्मक लेख, मौलिक रचनाओं और अनुवादों का जिक्र ही होता है बल्कि शिक्षा से संबंधित महत्वपूर्ण लेखों, विषयों की जानकारी के साथ सभा की पूर्व सूचनाओं को भी प्रकाशित किया जाता है। इस प्रकार यह पत्रिका एक नये रंग-रूप में सफल होकर आज हमारे समक्ष उपस्थित है और इसे कर्नाटक की सर्वप्रथम मासिक पत्रिका होने का गौरव भी प्राप्त है।

(२) *हिन्दी वाणी*

अक्टूबर १९५४ में पी.आर. श्रीनिवास शास्त्री के संपादकत्व में बैंगलोर हिन्दी साहित्य परिषद् से प्रकाशित यह *'भारतवाणी'* की समकालीन पत्रिका थी जिसका प्रकाशन बैंगलोर से होता था। इसमें कार्यकर्ताओं का परिचय प्रकाशित होता था, साथ ही कन्नड़ साहित्य को हिन्दी मंच पर लाने की दिशा में इस पत्रिका का विशेष महत्त्व एवं योगदान है। अप्रैल १९५७ से इस पत्रिका का प्रकाशन बंद है।

(३) *हिन्दी सुधा*

यह एक मासिक पत्रिका थी जो बैंगलोर की हिन्दी प्रचार परिषद् से प्रकाशित होती थी। पर आजकल यह भी जीवित अवस्था में नहीं है।

(४) *साहित्य सौरभ*

मनोहर भारती के संपादकत्व में जनवरी १९७२ में बैंगलोर से इस मासिक पत्रिका का प्रकाशन शुरु हुआ। इसका प्रथम अंक कहानी के तौर पर निकला। इस

पत्रिका का उद्देश्य था– अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के साहित्य और इतिहास, संस्कृति, भिन्न–भाषा–भाषियों के बीच घनिष्ठता बढ़ाना। साथ ही दक्षिण भारत के अनेक अहिन्दी भाषा–भाषियों द्वारा हिन्दी में जो कुछ भी लिखा गया उसे तथा लेखकों को प्रोत्साहित कर उनकी गंध को हिन्दी द्वारा हिन्दी जगत् के विशाल प्रांगण में पहुँचाना। पर इस अच्छे उद्देश्य को लेकर शुरु की गयी इस पत्रिका का आर्थिक कठिनाईयों के कारण जून १९७२ में दुःखद अन्त हो गया।

(५) *सप्तांशु*

इसके संपादक डॉ. परमानंद गुप्त थे। यह पत्रिका भी मासिक थी, जो बैंगलोर से प्रकाशित हुआ करती थी। इसकी दशा भी *'साहित्य सौरभ'* की तरह रही, कहने का अर्थ है कि पत्रिका आजकल प्रकाशित नहीं हो रही है।

(६) *मानसी*

'मानसी' नामक वार्षिक पत्रिका का प्रकाशन मैसूर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग द्वारा १९६५ में प्रो. नागप्पा और डॉ. हिरण्मय के संपादन में शुरु हुआ। इसमें प्रमुख रूप से हिन्दी विद्वानों अध्यापकों शोध–छात्रों के शोध संबंधी लेख को प्रकाशित किया जाता था। जिसका वितरण शोध–छात्रों एवं विश्वविद्यालय में किया जाता है। लेकिन यह नियमित रूप से प्रकाशित न हो पायी, मगर १९७२ में एक नयी स्फूर्ति के साथ न केवल नियमित रूप से प्रकाशित हुई बल्कि १९७६ से यह अर्द्ध वार्षिकी पत्रिका भी बनी। पर किन्हीं कारणों से १९९३ से *'मानसी'* पत्रिका का प्रकाशन स्थगित है।

(७) *हिन्दी प्रचार वाणी*

यह सन् १९८० से कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति की ओर से प्रकाशित मासिक पत्रिका है, जो पिछले कई वर्षों से श्रीमती बी.एस. शांताबाई के संपादकत्व में प्रकाशित हो रही है। महिलाओं द्वारा संचालित यह भारत की अकेली हिन्दी प्रचार समिति है। समिति की गतिविधयों की सूचनाएँ, परीक्षा संबंधी महत्त्वपूर्ण लेख और साहित्य एवं संस्कृति जगत् के विभिन्न पहलुओं पर लेख इसमें प्रकाशित होते हैं। कर्नाटक की सांस्कृतिक परंपरा का परिचय हिन्दी भाषियों को कराने में इस पत्रिका का योगदान उल्लेखनीय है। हिन्दी के कई प्रतिष्ठित लेखक इस पत्रिका से जुड़े हैं।

(८) मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् पत्रिका

मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् की यह मासिक पत्रिका है, जिसका प्रकाशन १९५६ से होता आ रहा है। इसके प्रधान संपादक बी. रामसंजीवय्या हैं। परीक्षापयोगी लेखों के अतिरिक्त इसमें हिन्दी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख का पुनः प्रकाशन बराबर किया जा रहा है। इस पत्रिका का विशेष आकर्षण हिन्दी साहित्य जगत् की गतिविधियों से जुड़े लेख हैं। अपनी सुंदर साज-सज्जा और आकर्षक छपाई के कारण यह पत्रिका पठनीय है।

(९) *भाषा-पीयूष*

कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति, बैंगलोर की तरफ से दिसम्बर १९८० से प्रकाशित यह त्रैमासिक मुख पत्रिका है। इसके संपादक प्रो. नागप्पा हैं। इसमें भी समिति की सूचनाएँ प्रकाशित होती हैं। साथ ही हिन्दी और कन्नड़ के बीच साहित्यिक आदान-प्रदान की दिशा में यह पत्रिका बड़ी भूमिका निभा रही है। हिन्दी और कन्नड़ कवियों, कृतियों प्रवृत्तियों पर महत्वपूर्ण लेख भी इस पत्रिका में प्रकाशित होते हैं।

(१०) *राजस्थान पत्रिका*

कर्पूरचंद्र कुलिश के नेतृत्व में २६ जनवरी १९९६ को इस दैनिक पत्रिका का प्रकाशन बैंगलोर से शुरु हुआ। दक्षिण के विभिन्न भागों में बसे प्रवासी राजस्थानियों को अपने प्रदेश से जोड़कर रखना इसका उद्देश्य है। इसके दो संस्करण प्रकाशित होते हैं- डाक एवं नगर संस्करण। डाक संस्करण का वितरण कर्नाटक एवं तमिलनाडु के दूरदराज के प्रांतों में किया जाता है और नगर संस्करण का वितरण बैंगलोर नगर के आस-पास के प्रांतों में किया जाता है। ऑडिट ब्यूरो ऑफ सर्क्युलेशन (A.B.C.) द्वारा 18 Oct. 2000 को प्रकाशित रिपोर्ट ने यह प्रमाणित किया है कि राजस्थान पत्रिका के बैंगलोर संस्करण की कुल प्रसार संख्या १७, २६७ है, जिसमें बैंगलोर नगर में पत्रिका की प्रसार संख्या १०,४६६ है। A.B.C. के रिपोर्ट के अनुसार तमिलनाडु में ३,६४२ और आंध्रप्रदेश में २९५ प्रतियों का प्रसार है। इस पत्रिका को २००२ में एशिया के २ प्रतिष्ठित सर्वश्रेष्ठ रिपोर्टिंग का सोपा-२००२ और सर्वश्रेष्ठ मुद्रण के लिए इफ्रा एशिया-२००२ का पुरस्कार प्राप्त हुआ है। यह पुरस्कार प्राप्त करके पत्रिका के जयपुर संस्करण ने पाठकों के बीच गहरी पैठ बना ली है। इस पत्रिका में सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, शैक्षणिक, वाणिज्यिक, विकास परक समाचार एवं खेल समाचारों को मुख्य स्थान दिया जाता है।

(११) बसव-मार्ग

बसव समिति की ओर से पिछले कुछ वर्षों से प्रकाशित यह षाण्मासिक प्रत्रिका है। डॉ. टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी' इसके संपादक है। यह पत्रिका बारहवीं शताब्दी के शरणांदोलन के प्रमुख बसवेश्वर और उनके समकालीन शरणों के जीवन और संदेश के प्रचार-प्रसार के लिए समर्पित है। एक निश्चित उद्देश्य को लेकर छपने वाली यह एकमात्र पत्रिका है।

(१२) बीदर की आवाज़

बीदर, कर्नाटक का पिछड़ा जिला है और इसके विकास से संबंधित बातों को सरकार तथा जन-जन तक पहुँचाने का बीड़ा *"बीदर की आवाज़"* ने उठाया है। यह बीदर की वास्तविक आवाज़ है। १९७७ से इस पत्रिका का श्रीगणेश हुआ। शुरूआत में यह पत्रिका साप्ताहिक रूप में प्रकाशित होती थी परन्तु १५ अगस्त १९७९ से दैनिक के रूप में निकलने लगी। इस पत्रिका के संस्थापक एवं संपादक कजी अर्षद अली हैं। अहिन्दी भाषी राज्य होने के बावजूद यह पत्रिका पिछले २९ वर्षों से लगातार छप रही है। कर्नाटक के अलावा यह पत्रिका महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश के कुछ जिलों में भी उपलब्ध है। पत्रिका २ पृष्ठों की है और इसका मूल्य १ रु. है। सभी विषयों को पत्रिका में जगह दी जाती है। प्रतिदिन २००० प्रतियाँ इस अखबार की बिकती हैं, इससे हिंदी के प्रचार-प्रसार को बल मिलता है।

(१३) बीदर संदेश

बीदर से निकलने वाली यह लोकप्रिय हिन्दी दैनिक पत्रिका है। इस पत्रिका की शुरुआत २१ जुलाई १९८७ से हुई। इस पत्रिका के संस्थापक कमलाकर जोशी हैं। इसके संपादक एवं मालिक शशिकांत दीक्षित हैं। यह पत्रिका सुबह के वक्त छपती है। इस पत्रिका की बिक्री संख्या कुल ४८०० के आस-पास है। हिन्दी के प्रति यहाँ के लोगों की रुचि होने के कारण यह पत्रिका अभी भी बराबर छप रही है। पत्रिका की बिक्री संख्या को देखते हुए इस बात का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। हिन्दी के प्रचार-प्रसार में ये पत्रिका महत्त्वपूर्ण योगदान निभा रही है।

(१४) दमन

बीदर से ही निकलने वाली यह दैनिक पत्रिका है। इस पत्रिका का श्रीगणेश २६ जनवरी १९७० से हुआ, उन दिनों यह साप्ताहिकी के रूप में प्रकाशित होती थी।

इसके संस्थापक, विश्वनाथ बाबाराव पाटील हैं, संपादक सीदराम एवं इसके मालिक अमृतबाई विश्वनाथ पाटील हैं। यह पत्रिका २-४ पृष्ठों की है। प्रतिदिन पत्रिका की बिक्री संख्या २००० के आस-पास है। इससे यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि हिन्दी के प्रति यहाँ के लोगों का विशेष लगाव है उसके प्रति एक आदर की भावना लोगों में विद्यमान हैं। *दमन* बुराई का संहार करने वाला अखबार है, कहने का तात्पर्य यह है कि सभी विषय, घटनाओं को सत्यता के साथ छापने और अपनी जिम्मेदारी को सही ढंग से निभाने की विशेषता *दमन* अखबार की है। इस अखबार में सभी विषयों को प्रमुखता से छापा जाता है चाहे वह राजनीतिक गतिविधयाँ हों, चाहे साहित्यिक सांस्कृति-सामाजिक गतिविधयाँ या घटनाएँ, फिल्म, खेल-जगत की ख़बरें हो सभी के लिए एक निश्चित स्थान है। बीदर में हिन्दी का प्रचलन होने के कारण ही अपने स्थापना वर्ष से ही बराबर यह पत्रिका प्रकाशित होती आ रही है। आजकल इसका कार्यभार सिद्धरामय्या संभाल रहे हैं। यह अखबार सप्ताह में ६ दिन प्रकाशित होता है। शनिवार का दिन *'दमन'* के लिए अवकाश का दिन है।

(१५) *नानक टाइम्स*

आम्टे जी के संपादकत्व में बीदर से निकलने वाला यह दैनिक अखबार है। एक सिख प्रमुख की आर्थिक योगदान से इसका प्रकाशन कार्य चल रहा है। इसमें मुख्यतया सिख समुदाय से जुड़ी ख़बरों को प्रमुखता से छापा जाता है। बीदर में बसे सिख समुदाय के हितों को प्राथमिकता इस अखबार में दी जाती है। समुदाय के लोगों के अलावा स्थानीय समस्याओं, गतिविधियों, एवं घटनाओं से संबंधित समाचार भी इसमें छपते हैं।

(१६) *महाकयास*

बीदर से ही निकलने वाली यह दैनिक पत्रिका है। इसका प्रकाशन पिछले कुछ दशकों से किया जा रहा है। बीदर में हिन्दी पत्रकारिता की जो परंपरा रही है, उसी परंपरा को कायम रखने की दिशा में इसका प्रकाशन उल्लेखनीय है।

(१७) *मनसुबा*

दैनिक के रूप में संजीव के संपादन में पिछले कुछ दशकों से यह पत्रिका बीदर से निकल रही है। इसमें स्थानीय समस्याओं पर केंद्रित रिपोर्टिंग के अतिरिक्त बीदर और उसके आस-पास के इलाकों के समाचार प्रमुखता से प्रकाशित होते हैं।

(१८) आदर्श

सन् १९८७ में बैंगलोर से निकलने वाली यह दैनिक पत्रिका थी। इसके संपादक रणजीत सुराणा थे। किसी कारणवश यह पत्रिका १९८७ में ही बंद हो गयी। इसमें स्थानीय समाचारों के अलावा राष्ट्रीय समाचारों को भी स्थान दिया जाता था।

(१९) भानूदय

यह एक मासिक पत्रिका थी जो १९५६ में 'बाईबल प्रचार शिक्षा संस्थान, बैंगलोर' के द्वारा प्रकाशित होती थी। इसका उद्देश्य ईसाई धर्म का प्रचार-प्रसार करना था। इसमें अंग्रेजी में हिन्दी से अनूदित धार्मिक रचनाएँ छपती थीं। १९५८ में इसका प्रकाशन बंद हो गई।

(२०) अहिंसा दर्शन

श्रीकंठमूर्ति के संपादकत्व में सन् १९७९ में शुरु हुई यह मासिक पत्रिका थी जो बैंगलोर से छपती थी। अहिंसा का प्रचार करना इसका मूल उपद्धेश्य था। बौद्ध, वैदिक, जैन, पारसी, सिक्ख, ईसाई, इस्लाम आदि धर्मों एवं सम्प्रदायों के अहिंसा संबंधी विचारों का तुलनात्मक अध्ययन इसमें प्रकाशित होता था। पर यह पत्रिका भी १९८८ में बंद हो गई।

(२१) टैक्स पत्रिका

इस मासिक पत्रिका का प्रकाशन बैंगलोर से सन् १९८५ में शुरु हुआ। इसके संपादक कैलाश बंसाली हैं। इस पत्रिका का मुख्य उद्देश्य करदाताओं को कर संबंधी सभी पहलुओं की जानकारी देना, कर बचत का उपाय बताना, शेयर मार्केट की गतिविधियों संबंधी जानकारी उपलब्ध कराना आदि इसी विषय से संबंधित है। इस पत्रिका का प्रकाशन आज भी जारी है।

(२२) मानस

नौवें दशक के आस-पास बीदर से इस मासिक पत्रिका का प्रकाशन मानिक मानस के संपादकत्व में शुरु हुआ। इसमें साहित्य जगत से संबंधित गतिविधियों, सूचनाओं का ब्यौरा रहता था। लेकिन यह पत्रिका नौवें दशक में ही बंद हो गयी।

(२३) उद्योग व्यापार विकास पत्रिका

उद्योग व्यापार से जुड़ी ख़बरें, अर्थ जगत, सेंट्रल एक्ससाइज-प्रबंधन, उपभोक्ता मंच, पूँजी बाज़ार और आदि ऐसे ही विषयों से संबंधित ख़बरें छापने वाली इस

मासिक पत्रिका का प्रकाशन बैंगलोर से जनवरी १९९२ में कृष्णकांत पाराशर के संपादन में शुरु हुआ था। कुछ वर्षों तक प्रकाशित होने के बाद १९९६ में यह पत्रिका बंद हो गयी।

(२४) *विप्र विचार*

श्रीकांत पाराशर के संपादन में सन् १९९४ में इस मासिक पत्रिका की शुरुआत हुई। बैंगलोर से निकलने वाली इस मासिक पत्रिका में ब्राह्मण वर्ग की गतिविधियों से संबंधित जानकारी होती थी। एक वर्ष तक प्रकाशित होने के बाद सन् १९९५ में इस पत्रिका का भी अस्तित्व समाप्त हो गया।

(२५) *वेद तरंग*

कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा, बैंगलोर की ओर से बैंगलोर से प्रकाशित यह मासिक पत्रिका है। आर्य समाज की विचारधारा के प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से, गंभीर एवं विचारोत्तेजक लेखों के अलावा आर्य प्रतिनिधि सभा की गतिविधियों की जानकारी इस पत्रिका में होती है। इसका प्रचार-प्रसार केवल आर्य समाज से संबद्ध परिवारों तक ही सीमित है। इसका प्रकाशन आज भी जारी है।

(२६) *जैन पत्रिका*

मैसूर जैन समाज की ओर से प्रकाशित जैन समाज की खबरें प्रकाशित करने वाली यह मासिक पत्रिका थी। इसका प्रकाशन आजकल स्थगित है।

(२७) *जनप्रिय भारत वार्ता*

१५ अगस्त १९९६ में इस साप्ताहिक पत्रिका की शुरुआत हुई। बैंगलोर से प्रकाशित इस पत्रिका के संपादक संजय प्रकाश थे। इसकी पृष्ठ संख्या ४ थी और यह टैब्लाइड आकार में छपती थी। निर्भीक, निष्पक्ष एवं स्वतंत्र लेखन इसका उद्देश्य था। २०-२५ पृष्ठों का विशेष अंक दीपावली के अवसर पर निकलता था। अंग्रेजी-हिन्दी के विज्ञापनों के अलावा सामान्य साहित्यिक रचनाएँ भी प्रकाशित होती थीं। २००१ से इस पत्रिका का प्रकाशन स्थगित है।

(२८) *जनप्रिय अंदाज*

बाबूसिंह राजपुरोहित के संपादकत्व में हिन्दी-कन्नड़ द्विभाषी यह साप्ताहिक पत्रिका १५ अगस्त १९९६ से बैंगलोर से प्रकाशित हो रही है। चार पृष्ठों में प्रकाशित

टैब्लाइड आकार की इस पत्रिका में स्थानीय समाचारों के अलावा, कविता, कहानी, फिल्मी दुनिया की ख़बरें प्रकाशित होती हैं। इस तरह की पत्रिका जिसमें फिल्मी दुनिया की ख़बरे हों ज्यादा से ज्यादा मात्रा में बिकती हैं साथ ही इससे लोगों को हिन्दी सीखने में मदद मिलती है अतः ऐसी पत्रिकाओं को प्रोत्साहित कर हिन्दी के लिए एक अच्छा मंच तैयार किया जा सकता है।

(२९) *साउथ टुडे*

बैंगलोर से प्रकाशित होने वाली इस साप्ताहिक पत्रिका के संचालकों का उद्देश्य इस पत्रिका को क्षेत्रीय समाचार पत्र के रूप में प्रकाशित करना था किन्तु किन्हीं कारणों से उनका यह उद्देश्य असफल रहा और आज इस पत्रिका का प्रकाशन स्थगित है।

(३०) *चंद्रदीप*

इस साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन बी. कृष्णमूर्ति राजू के संपादन में शुरु हुआ था। इसका प्रकाशन बैंगलोर से होता था। इसमें स्थानीय समाचार एवं फ़ीचर प्रकाशित होते थे। पर कुछ अंक प्रकाशित होने के बाद यह पत्रिका बंद हो गयी।

(३१) *दक्षिण ध्वज*

हिन्दी एवं अंग्रेजी दो भाषाओं में बैंगलोर से निकलने वाली इस साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन श्रीकांत पाराशर के संपादन में ३ जुलाई २००२ से शुरु हुआ। श्रीकांत पाराशर ने *राजस्थान पत्रिका* के बैंगलोर संस्करण से त्यागपत्र देकर २००२ से *'दक्षिण ध्वज'* का संपादन कार्य संभाला। इस पत्रिका के प्रकाशक देवेंद्र शर्मा हैं। राष्ट्रीय राजनीतिक समाचार, संपादकीय, सिनेमा की ख़बरे, साप्ताहिक राशिफल फैशन ट्रेन्ड, चर्चित चेहरे आदि कई विषयों को पत्रिका में स्थान दिया जाता है। अपने प्रकाशन वर्ष से यह पत्रिका नियमित रूप से प्रकाशिथ होती आ रही है।

(३२) *नानावाणी*

बैंगलोर से सन् १९८८ से एक ट्रस्ट द्वारा इस पाक्षिक पत्रिका की शुरुआत हुई थी। इसका प्रसार ट्रस्ट के सदस्यों तक ही सीमित है।

(३३) *मरुधर केसरी*

श्री मरुधर केसरी जैन गुरु सेवा समिति (कर्नाटक) बैंगलोर की मुख पाक्षिक पत्रिका *'मरुधर केसरी'* का शुभारंभ १९९३ से हुआ। समिति के पदाधिकारी ही इसके

संपादन का कार्य संभालते हैं। समिति की गतिविधियों की जानकारी इस पत्रिका में होती है और इसका प्रचार-प्रसार भी समिति के सदस्यों तक ही सीमित है। नियमित रूप से यह पत्रिका आज भी प्रकाशित हो रही है।

(३४) *सत्य सटीक*

यह एक पाक्षिक पत्रिका है जिसके संपादक संतोष कुमार पांडेय है। सन् २००० से इस पत्रिका का प्रकाशन बैंगलोर से होता आ रहा है। इस पत्रिका में स्थानीय समाचारों के अलावा, राशिफल, पहेली, सर्वोदय प्रेस सेवा से प्राप्त फ़ीचर, कुछ साहित्यिक रचनाएँ जैसे- कविता, लेख, कहानियाँ आदि भी प्रकाशित होते हैं। जैन समुदाय की कुछ गतिविधियाँ भी इसमें प्रकाशित होती हैं। यह पत्रिका ८ पृष्ठों में टैब्लाइड आकार में छपती है। इस पत्रिका का प्रकाशन नियमित रूप से जारी है।

(३५) *कंचन कावेरी*

असरचंद वर्मा के संपादकत्व में बैंगलोर से यह पत्रिका अनियमित रूपसे छपती रही। इसका उद्देश्य स्थानीय लेखकों को एक मंच प्रदान करना था पर उनका यह उद्देश्य सफल न हो सका। प्रवेश अंक निकालने के बाद ही यह पत्रिका स्थगित हो गयी।

(३६) *राज़स्थान*

यह पत्रिका बैंगलोर से प्रकाशित होती है। इसमें प्रवासी राजस्थानी समुदाय के समाचार प्रकाशित होते थे। आजकल इस पत्रिका का प्रकाशन भी स्थगित है।

(३७) *सत्यार्थ दर्पण*

गुलबर्गा से निकलने वाली यह पत्रिका आर्य समाज की ओर से प्रकाशित होती थी। अनियतकालीन इस पत्रिका में संस्था की गतिविधियों एवं आर्य समाज के विचारधारा के प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से लेख छपते थे। यह पत्रिका भी आज-कल अस्तित्व में नहीं है।

(३८) *हरी धरती नीला आकाश*

४ अप्रैल १९९९ से यह पत्रिका त्रैमासिक रूप में बैंगलोर से प्रकाशित हुई। इसकी संपादिका सरोजा व्यास हैं। बैंगलोर नगर की 'शब्द' नामक साहित्यिक संस्था की ओर से यह प्रकाशित होती थी। इस पत्रिका का प्रवेश अंक ही अब तक

प्रकाशित हो पाया है जिसमें विभिन्न विधाओं की साहित्य रचनाएँ छपी थीं। एक अंक प्रकाशित होने के बाद कोई दूसरा अंक अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ है।

(३९) *अपना देश*

गदग से इस साप्ताहिक पत्रिका का आरंभ १९५८ में शुरु हुआ। इस पत्रिका के संपादक डॉ. श्रीकांत हैं। इस साप्ताहिक के अंक धारवाड़ स्थित हिन्दी प्रचार प्रेस में छपवाए गये थे। राजस्थान से आये हुए कई व्यापारी परिवार जब गदग में बस गये तब वहाँ हिन्दी का एक अच्छा वातावरण तैयार हो गया और इस कारण यहाँ हिन्दी पत्र के अस्तित्व की संभावना भी नज़र आने लगी थी किन्तु *'अपना देश'* का प्रयास असफल रहा और उसी वर्ष यह पत्रिका बंद हो गयी।

(४०) *धीर*

१९७० में धीरेन्द्र कुमार के संपादन में साप्ताहिक रूप में बैंगलोर से इस पत्रिका का प्रकाशन शुरु हुआ। इस पत्रिका के मुख पृष्ठ पर अंकित है– 'दक्षिण भारत का अद्वितीय हिन्दी साप्ताहिक'। इस पत्रिका में स्थानीय समाचार, पत्र के सहयोगियों, जैन समुदाय के समाचार प्रकाशित होते हैं। इसमें विज्ञापनों को भी स्थान दिया जाता है। टैब्लाइड आकार में यह पत्रिका छपती है। यह पत्रिका पिछले कई वर्षों से आज भी प्रकाशित होती आ रही है।

(४१) *तीर*

नवम्बर १९७७ में *तीर* पत्रिका का साप्ताहिक अंक बैंगलोर से संपत कुमार मिश्र के संपादन में शुरु हुआ। १९८३–८८ के मध्य यह दैनिक रूप में प्रकाशित हुआ। पर १९८८ के बाद से पुनः यह साप्ताहिक रूप में प्रकाशित होने लगा। दैनिक *तीर* में स्थानीय समाचार, राष्ट्रीय समाचार, मनोरंजन एवं ज्ञान परक जानकारियाँ प्रकाशित होती थीं विज्ञापनों के लिए भी एक स्थान सुनिश्चित था आजकल दैनिक *तीर* का प्रकाशन स्थगित है पर साप्ताहिक *तीर* का प्रकाशन जारी है।

(४२) *अर्चना*

श्रीकांत पाराशर के संपादकत्व में सन् १९८० में इस त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन बैंगलोर से शुरु हुआ। युवाओं में जागृति जगाने एवं सामाजिक चेतना को प्रोत्साहित करने में इस पत्रिका का विशेष योगदान था। बैंगलोर नगर की विभिन्न गतिविधियों की जानकारी, साहित्य समीक्षा, राजनीतिक, सामाजिक, गतिविधियों एवं

व्यंग्य लेखकों की भी जानकारी इस पत्रिका में होती थी। एक वर्ष तक प्रकाशित होने के बाद यह पत्रिका १९८१ में बंद हो गयी।

(४३) *दक्षिण द्वीप*

सन् १९८१ में ही श्रीकांत पाराशर के संपादन में यह साप्ताहिक पत्रिका बैंगलोर से प्रकाशित हुई। इस पत्रिका के प्रमुख विषय थे राष्ट्रीय, स्थानीय समाचारों के अलावा, कहानियाँ, लेख, व्यंग्य आदि। सामाजिक चेतना को जागृत करने का प्रयास थी यह पत्रिका। अन्याय, अकृत्यों जैसे विषयों को जनता के सामने लाना इसका मूल उद्देश्य था पर इसी कारण इस पर दबाव पड़ने लगा और साथ ही आर्थिक अभाव होने के कारण भी इस पत्रिका को १९८२ में बंद कर दिया गया।

(४४) *कुंतल भारती*

इस वार्षिक पत्रिका का श्री गणेश १९८२ में हुआ। प्रो. सरगु कृष्णमूर्ति के संपादन में यह पत्रिका बैंगलोर से छपती थी। इसमें हिन्दी विभाग के आचार्य वर्ग, शोधार्थियों के शोध परक तुलनात्मक शोध अध्ययन संबंधी लेख प्रकाशित होते थे। पर इस अच्छी पत्रिका का प्रकाशन आजकल स्थगित है।

(४५) *कारण*

सन् १९८३ में इस पाक्षिक पत्रिका की शुरुआत हुई। इसके संपादक श्रीकांत पाराशर थे और यह बैंगलोर से प्रकाशित होती थी। १९८६ तक यह पाक्षिक रूप में निकलती रही तत्पश्चात् २ अक्टूबर १९८६ से यह दैनिक रूप में प्रकाशित होने लगी। एक वर्ष दैनिक रूप में निकलने के बाद १९८७ से फिर पाक्षिकी में छपने लगी और १९९१-९२ तक साप्ताहिकी तौर पर प्रकाशित हुई। इसमें किसी विषय से संबंधित महत्वपूर्ण कारण एवं विचार छपते थे। १९९२ से इस पत्रिका का प्रकाशन बंद है।

(४६) *आदित्य*

इस पत्रिका के संपादक गंदर्व सेन थे। बीदर से प्रकाशित इस पत्रिका की शुरुआत १९९३ में हुई थी। यह दैनिक पत्रिका थी। मुख्यतः इसमें राष्ट्रीय स्तर के महत्त्वपूर्ण समाचारों पर प्रकाश डाला जाता था। इस पत्रिका का भविष्य भी अच्छा नहीं रहा और दो वर्ष प्रकाशित होने के बाद १९९५ में यह पत्रिका बंद हो गई।

(४७) विश्व सेतु निर्माण

बैंगलोर से छपने वाली इस साप्ताहिक पत्रिका की शुरुआत १९९४ में हुई। गंगा प्रसाद पाण्डेय इस पत्रिका के संपादक थे। स्थानीय समाचार, राष्ट्रीय महत्त्व के समाचार एवं विभिन्न साहित्यिक रचनाएँ इसमें प्रकाशित होती थीं। पर इसका प्रचार-प्रसार हिन्दी भाषियों एवं बैंगलोर के कुछ गिने चुने व्यापारियों तक ही रहा और यह पत्रिका अधिक विस्तार न पा सकी एवं नियमित रूप से छपने के बाद आजकल इसका प्रकाशन स्थगित है।

(४८) सरिता संगम

कविता नैनाणी के संपादकत्व में अप्रैल १९९५ से इस साप्ताहिक पत्रिका की शुरुआत हुई, इसका प्रकाशन बैंगलोर से होता है। पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक चेतना की प्रतीक यह पत्रिका देवनागरी लिपि में छपती है। आजकल इसका प्रकाशन *'सुजाग सिंधि'* के नाम से किया जा रहा है। इस पत्रिका में यह उल्लेख मिलता है कि पूरे भारत में देवनागरी लिपि में छपने वाली सिंधि पत्रों में इसका सर्वाधिक प्रचलन है। यह पत्रिका ८ पृष्ठों में टैब्लाइड आकार में छपती है। पत्रिका में लेख, निबंध, कहानियाँ, व्यंग्य, लघुकथाएँ, कविता आदि को स्थान दिया जाता है। त्योहारों के अवसर पर पत्रिका विज्ञापनों से भरी पड़ी रहती है। यह पत्रिका आज भी प्रकाशित हो रही है।

(४९) जागृति दौर

१९९५ में इस साप्ताहिक पत्रिका की शुरुआत मंगल सेणचा के संपादन में शुरु हुई। यह पत्रिका बैंगलोर से प्रकाशित होती थी। इसमें मुख्यतया प्रवासी हिन्दी भाषी समाज की गतिविधियों का ब्यौरा रहता था। १९९९ से यह पत्रिका प्रकाशित नहीं हो रही है।

(५०) मोक्षद्वार ज्ञान पत्रिका

बैंगलोर से प्रकाशित इस पाक्षिक पत्रिका का आरंभ अगस्त १९९२ में हुआ। इसके संपादक गौतमचंद ओस्तवाल हैं। इसमें अधिकतर जैन समुदाय की गतिविधियों, उनके विचारों, व्रत, दीक्षाओं पर संपन्न कार्यक्रम का ब्यौरा, धार्मिक, सामाजिक एवं जीवन के लिए उपयोगी लेख आदि प्रमुखता से प्रकाशित होते हैं। इन विषयों के अतिरिक्त कुछ अन्य विषयों के साथ यह पत्रिका आज भी प्रकाशित हो रही है।

(५१) राष्ट्रमत

अगस्त १९९३ से इस पाक्षिक पत्रिका का शुभारंभ श्रीकांत पाराशर के संपादकत्व में हुआ। इसका प्रकाशन बैंगलोर से होता था। इसमें सभा संस्थाओं के समाचारों को सचित्र प्रकाशित किया जाता था साथ ही आस-पास की घटनाओं की ख़बरें भी प्रकाशित होती थीं पर किसी कारणवश १९९३ से इसका प्रकाशन बंद हैं।

कर्नाटक के हिन्दी पत्रकारिता को जीवंत रखने में *'मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद पत्रिका'* *'हिन्दी प्रचार वाणी'* तथा *'भाषा पीयूष'* महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

आगे कुछ और कर्नाटक से प्रकाशित राजभाषा हिन्दी की गृह पत्रिकाओं का उल्लेख किया जा रहा है।

५.१.६.२ कर्नाटक से प्रकाशित कुछ राजभाषा हिन्दी की गृह पत्रिकाएँ

कर्नाटक में लगभग ५ दर्जन राजभाषा हिन्दी गृह पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही है।[२३]

(१) आदित्य

दूरदर्शन केन्द्र, बैंगलोर की वार्षिकी हिन्दी पत्रिका *'आदित्य'* का प्रकाशन पिछले कई वर्षों से जारी है। इसमें रोचक साहित्यक रचनाओं के साथ-साथ कार्यालयीय कामकाज हिन्दी के प्रयोग के महत्व को ध्यान में रखते हुए प्रेरणात्मक सामग्री छपती है। साज-सज्जा साधारण है पर सार्थक एवं उपयोगी है।

(२) *सत्य सटीक*

इसमें स्थानीय समाचारों के अलावा, राशिफल, पहेली, सर्वोदय प्रेस सेवा से प्राप्त फीचर कुछ साहित्यिक रचनाएँ- कविता, लेख कहानी भी प्रकाशित होती है। जैन समुदाय की गतिविधियाँ भी शामिल है। यह टैब्लाइड आकार का ८ पृष्ठों का पत्र है।

(३) *कंचन कावेरी*

स्थानीय लेखकों को एक मंच प्रदान कराने की इस पत्रिका की संकल्पना थी पर प्रवेशांक के बाद दूसरा अंक नहीं आया।

(४) *कावेरी*

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बैंगलोर की ओर से पत्रिका का प्रकाशन सितम्बर १९९८ से हो रहा है। इस पत्रिका में बैंगलोर नगर की राजभाषा कार्यान्वयन

समिति के सदस्य कार्यालयों के राजभाषा प्रमुखों की वैविध्यमय एवं ज्ञानवर्धन आलेख छपते हैं। आलेखों का हिन्दी में प्रकाशन इसकी उपलब्धि है।

(५) *रागनिधि*

कर्मचारी भविष्य निधि संगठन, क्षेत्रीय कार्यालय, बैंगलोर की वार्षिक हिन्दी गृह पत्रिका के रूप में *'रागनिधि'* के १३ अंक अब तक प्रकाशित हो चुके हैं। विभागीय महत्त्व के लेखों के अलावा कर्मचारियों के सुरुचिपूर्ण रचनाओं को स्थान दिया जाता है।

(६) *वृंदावन*

केन्द्रीय उत्पाद एवं सीमा शुल्क आयुक्तालय, बैंगलोर की ओर से प्रकाशित होने वाली पत्रिका *वृंदावन* द्विभाषी है। कन्नड एवं हिन्दी में विभागीय कर्मचारियों में राजभाषा हिन्दी और क्षेत्रीय भाषा कन्नड़ की चेतना जगाने में इस पत्रिका की विशेष भूमिका है।

(७) *रेशम भारती*

केंद्रीय रेशम बोर्ड की राजभाषा त्रैमासिक गृह-पत्रिका *'रेशम भारती'* सार्थक एवं सुंदर संयोजन के लिए उल्लेखनीय पत्रिका है। रेशम बोर्ड के विभिन्न शाखा कार्यालयों के कर्मचारियों के साहित्यिक लेखों के अलावा रेशम से संबंधित वैज्ञानिक आलेख भी हिन्दी में प्रकाशित होते हैं। इसमें देवनागरी लिपि व हिन्दी के माध्यम से कन्नड़ भाषा सिखाने हेतु श्री के.एस. ईश्वर के द्वारा पाठों का संकलन किया जा रहा है।

(८) *सुरभि*

कॉफी बोर्ड, बैंगलोर की राजभाषा को समर्पित त्रैमासिक गृह पत्रिका में बोर्ड के कर्मचारियों के अलावा स्थानीय हिन्दी विद्वानों के महत्वपूर्ण लेख और साहित्यिक सामग्री प्रकाशित होती है। कॉफी संबंधी विषय पर बोर्ड की ही अंग्रेजी पत्रिका *'इंडियन कॉफी'* के सौजन्य से हिन्दी में अनूदित अधिकांश सामग्री इसमें प्रकाशित होती है।

(९) *त्रिधारा*

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, मंगलूर की यह छमाही पत्रिका राजभाषा नियम और नीतियों के प्रति चेतना जगाने में सक्रिय है। कार्पोरेशन बैंक के प्रधान कार्यालय के संयोजन से इसका प्रकाशन होता है।

(१०) *मंगल निधि*

कर्मचारी भविष्य निधि संगठन, उप क्षेत्रीय कार्यालय, मंगलूर की ओर से टंकण मशीन पर संयोजित होकर इस मुद्रित पत्रिका का कुछ वर्षों तक प्रकाशन हुआ है जो एक सार्थक प्रयास का प्रतीक है।

(११) *जायंट*

यह पत्रिका सिंडिकेट बैंक, प्रधान कार्यालय, मणिपाल की ओर से १९६० से हिन्दी-अंग्रेजी में नियमित रूप से प्रकाशित होती आ रही है, जिसमें बैंक के विभिन्न अंचलों के समाचार प्रकाशित किए जाते हैं। समय-समय पर राजभाषा विशेषांक भी प्रकाशित होते हैं। यह पत्रिका भारतीय समाचार पत्र के पंजीयक के यहाँ पंजीकृत पत्रिका है।

(१२) *कुद्रेमुख समाचार*

कुद्रेमुख आयरन ओर कंपनी लिमिटेड़, बैंगलोर की यह त्रैमासिक मुख पत्रिका है। कुद्रेमुख समाचार आमतौर पर ८ ही पृष्ठों में प्रकाशित होती है। संस्था की गतिविधियों के समाचार सचित्र छपते हैं।

(१३) *प्रतिबिंब*

प्रतिबिंब दक्षिण मध्य रेलवे, हुबली मंडल की ओर से हिन्दी-अंग्रेजी में छपने वाली द्विभाषी पत्रिका है। यह १९९९ से प्रकाशित होती आ रही है।

(१४) *हुबली राजदीप*

सेंट्रेल बैंक ऑफ इंडिया, क्षेत्रीय कार्यालय, हुबली की मासिक पत्रिका *हुबली राजदीप* है। हिन्दी-अंग्रेजी में छपती है। जिसमें बैंक की विभिन्न शाखाओं की उपलब्धियों के आंकड़े प्रकाशित होते हैं। कुछ वर्षों से प्रकाशन जारी है।

(१५) *श्रेयस*

केनरा बैंक की द्विमासिक गृह पत्रिका *श्रेयस* अंग्रेजी-हिन्दी में छपती है। केनरा बैंक के देशभर स्थित शाखाओं की गतिविधियाँ, कार्यनिष्पादन संबंधी आँकड़े, विभिन्न अंचलो के समाचार इसमें छपते हैं। एकाध साहित्यिक रचनाओं के अलावा अंग्रेजी माध्यम से हिन्दी सिखाने का प्रयास किया जाता है। बैंकिग विषयक लेख हिन्दी में प्रकाशित होते हैं।

(१६) *मंगल*

मंगल कार्पोरेशन बैंक, प्रधान कार्यालय, मंगलूर की त्रैमासिक गृह पत्रिका है जो राजभाषाई चेतना भरने में भी सक्रिय है।

(१७) अंतर्ध्वनि

भारत संचार निगम लिमिटेड, बेलगाँव दूरसंचार जिले की तिमाही पत्रिका के रूप में *'अंतर्ध्वनि'* का नियमित प्रकाशन कुछ वर्षों से हो रहा है। सामयिक विभागीय गतिविधियों के समाचार प्रमुखता से इस पत्रिका में छपते हैं। विभाग के कर्मचारियों के अलावा हिन्दी से जुड़े स्थानीय व्यक्तियों की हिन्दी में सृजनात्मक अभिव्यक्ति के लिए मंच के रूप में भी इस पत्रिका का योगदान उल्लेखनीय है।

(१८) *उत्तरमुखी*

पोस्टमास्टर जनरल कार्यालय, धारवाड़ की अर्धवार्षिक गृह पत्रिका के रूप में *'उत्तर मुखी'* का प्रकाशन जनवरी-जून २००१ से आरम्भ हुआ। विभागीय कर्मचारियों की सृजनात्मक लेखन के लिए इस पत्रिका के माध्यम से अधिक प्रेरणा मिली है।

(१९) *जीवन बृंदावन*

भारतीय जीवन बीमा निगम, मैसूर मंडल की हिन्दी गृह पत्रिका *जीवन बृंदावन* ४ षृष्ठीय पत्रिका है। इसमें सृजन की चेतना है।

(२०) *सह्याद्रि*

दि न्यू इंडिया इन्शूरेन्स कंपनी लिमिटेड, क्षेत्रीय कार्यालय, बैंगलोर की अर्द्धवार्षिक हिन्दी पत्रिका *'सह्याद्रि'* का पिछले कुछ वर्षों से प्रकाशन हो रहा है। लगभग पचास पृष्ठों की इस पत्रिका में रोचक सामग्री प्रकाशित की जाती है। कन्नड़ एवं अंग्रेजी के माध्यम से हिन्दी सिखाने के लिए नियमित रूप से इस पत्रिका में पाठों का प्रकाशन किया जा रहा है।

(२१) *उपवन*

इंडियन ओवरसीज़ बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय, बैंगलोर क्षेत्र की त्रिभाषी गृह पत्रिका *'उपवन'* का प्रकाशन अप्रैल १९९९ से क्रिया जा रहा है क्षेत्रीय भाषा 'कन्नड़' शीर्षक से प्रकाशित स्तंभ हिन्दी भाषियों को कन्नड़ सीखने में उपयोगी है।

(२२) विजया विकास

यह विजया बैंक, प्रधान कार्यालय, बैंगलोर की गृह पत्रिका है। इसका प्रकाशन १९७५ से हो रहा है। इस पत्रिका में राजभाषा खंड में लगभग १५ पृष्ठों में हिन्दी की सामग्री प्रकाशित होती है। एकाध पृष्ठ कन्नड़ के लिए होता है।

कर्नाटक से प्रकाशित सभी पत्र-पत्रिकाओं की सूची परिशिष्ट में दी गई है।

५.२ कर्नाटक के रेडियो कार्यक्रमों में हिन्दी का प्रयोग एवं प्रसार

जैसा कि हमने इससे पहले जनसंचार का माध्यम 'पत्रकारिता' के बारे में चर्चा की, उसी तरह रेडियो भी जन संचार का एक माध्यम है जिसका अध्ययन करना अति आवश्यक है। जैसे ही हम 'रेडियो' नामक शब्द सुनते हैं तो तुरंत हमारे मन में यह ध्यान आता है कि यह कार्यक्रम आकाशवाणी द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। रेडियो प्रसारण का मूल उद्देश्य है कि जनता को समय-समय पर समाचार, मनोरंजन के कार्यक्रम तथा अन्य सूचनाएँ जैसे- कृषि, वाणिज्य, शिक्षा तथा अन्य विषयों से संबंधित कार्यक्रमों की जानकारी देना।

भारत के सभी आकाशवाणी केंद्रों पर वहाँ की क्षेत्रीय भाषा के अलावा हिन्दी, अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं में कार्यक्रम प्रस्तुत किया जाता है। यहाँ पर हमारा अध्ययन कर्नाटक में स्थित आकाशवाणी केन्द्र में हिन्दी का प्रयोग और प्रसार कैसे हो रहा है इस विषय से संबंधित है।

कर्नाटक में १३ आकाशवाणी केन्द्र हैं- बैंगलोर, धारवाड़, भद्रावती, गुलबर्गा, मैंगलोर, मैसूर, चित्रदुर्ग, होसपेट, मडिकेरी, कारवार, रायचूर, बिजापुर एफ.एम. हासन[२४] सीमित संसाधनों एवं समय के अभाव के कारण उपरोक्त सभी आकाशवाणी केन्द्रों में जाकर उनके हिन्दी कार्यक्रमों के बार में जानना संभव नहीं था, अतः हमने धारवाड़ के आकाशवाणी केन्द्र का ही सर्वेक्षण किया है। जिसका ब्यौरा आगे प्रस्तुत है।

५.२.१ आकाशवाणी धारवाड़ में हिन्दी का प्रयोग एवं प्रसार

धारवाड़ का आकाशवाणी एक प्रसार माध्यम केन्द्र है। भारत सरकार का सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के अधीन कार्यरत इस केन्द्र का मूल उद्देश्य कार्यक्रमों

को प्रसारित करना है। आकाशवाणी धारवाड़ का प्राईमरी चैनल मुख्य रूप से प्रादेशिक भाषा कन्नड़ में बनाए गये कार्यक्रमों को प्रसारित करता है। इसके अलावा मराठी, उर्दू, कोंकणी तथा संस्कृत कार्यक्रम भी इस केन्द्र द्वारा प्रसारित होते हैं। इस आकाशवाणी केंद्र के कार्यालय में कुल २० अधिकारी तथा १०८ कर्मचारी कार्यरत हैं। जिसमें ९२ कर्मचारियों को तथा १८ अधिकारियों को हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त है।

५.२.२ आकाशवाणी केन्द्र का हिन्दी अनुभाग एवं उसका कार्यक्षेत्र

इस आकाशवाणी केन्द्र के कार्यालय में एक हिन्दी अनुभाग कार्यरत है, जिसमें एक हिन्दी अधिकारी, एक हिन्दी अनुवादक तथा दो हिन्दी लिपिक कार्य करते हैं। हिन्दी अनुभाग का कार्यक्षेत्र कार्यालय तक ही सीमित है क्योंकि आकाशवाणी केन्द्रों के अधीनस्थ कार्यालय नहीं होते। हिन्दी अनुभाग बराबर हिन्दी के अधिक से अधिक प्रयोग एवं प्रसार के लिए प्रयासरत है।

५.२.३ हिन्दी में प्रसारित कार्यक्रमों का विवरण

आकाशवाणी धारवाड़ के प्राईमरी चैनल में प्रादेशिक भाषा कन्नड़ के ही कार्यक्रम अधिकतर प्रसारित होते हैं, फिर भी सप्ताह में तीन दिन मंगलवार, गुरुवार एवं शनिवार को 'हिन्दी पाठ' शीर्षक से १५ मिनट का कार्यक्रम सायंकाल ६ बजकर २० मिनट पर प्रसारित किया जाता है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य श्रोताओं को पाठ के जरिए हिन्दी सिखाना होता है। इस कार्यक्रम में एक शिक्षक, एक छात्रा एवं एक छात्र भाग लेते हैं। शिक्षक कन्नड़ भाषा के माध्यम से छात्रों को हिन्दी सिखाते हैं। पाठ का विषय कार्यालय देता है और इसके अनुसार शिक्षक आलेख बनाकर कार्यालय को सुपुर्द करते हैं, बाद में आलेख को कार्यालय की स्वीकृति मिलने के बाद कार्यक्रम का ध्वन्यांकन होता है। छोटी-छोटी कहानियाँ सरल व्याकरण, भेंट-वार्ता, जीवन-चरित्र यह पाठ का विषय होते हैं।

हुबली-धारवाड़ में कार्यरत हिन्दी शिक्षकों को कार्यक्रम बनवाने के लिए आमंत्रित किया जाता है। पहले इस कार्यक्रम का प्रसारण समय १० मिनट का था अब उसे बढ़ाकर १५ मिनट कर दिया गया है। इस 'हिन्दी पाठ' के अलावा हर माह के प्रथम रविवार को एक बार 'नवरस' नामक आधे घण्टे का हिन्दी कार्यक्रम

प्रसारित किया जाता है। यह एक साहित्यिक कार्यक्रम है जिसे उस रविवार को प्रातः ११.३० बजे प्रसारित किया जाता है। इस कार्यक्रम में लेखकों, कवियों एवं हिन्दी प्राध्यापकों को आमंत्रित किया जाता है। लघु-काथाएँ-वार्ताएँ, स्वरचित कविता वाचन, परिचर्चा, संवाद, भेंट आदि इस कार्यक्रम के विषय होते हैं। इस तरह आकाशवाणी धारवाड़ द्वारा दो हिन्दी कार्यक्रम प्रस्तुत किये जाते हैं। इसके अलावा धारवाड़ एक वाणिज्यिक प्रसारण केन्द्र भी है, इससे मुम्बई विविध भारती द्वारा प्रस्तुत किये गये कार्यक्रम प्रसारित होते हैं। यह कार्यक्रम मुम्बई में बनकर प्रसारण दिन से पहले प्राप्त होते हैं।

विविध भारती द्वारा प्रस्तुत यह कार्यक्रम अधिकतर हिन्दी भाषा में ही होते हैं। फिल्म संगीत ही ज्यादा प्रसारित होता है तथा साथ-साथ नाटक, घरेलू स्त्रियों तथा बच्चों के लिए कार्यक्रम भी हिन्दी में प्रसारित किये जाते हैं।

५.२.४ हिन्दी के कार्यान्वयन के लिए विभिन्न बैठकों का आयोजन

राजभाषा विभाग के अनुदेशों के अनुसार हर तिमाही में एक बार राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक का आयोजन करना होता है, जिसके अनुसार आकाशवाणी धारवाड़ में हर तीन महीने में एक बार राजभाषा कार्यान्वयन समिति का आयोजन होता है। इस बैठक की अध्यक्षता कार्यालय अध्यक्ष करते हैं। आकाशवाणी धारवाड़ में हर साल कार्यालय अध्यक्ष का पद अधीक्षक अभियन्ता और केन्द्र निदेशक बारी-बारी से संभालते हैं। इस तरह राजभाषा से संबंधित कार्य को एक साल अधीक्षक अभियंता देखते हैं तो एक साल केन्द्र निदेशक। राजभाषा समिति के सत्रह-अट्ठारह सदस्य हैं। बैठक में कार्यसूची के अनुसार चर्चा होती है तथा निर्णय किये जाते हैं। बाद में कार्यवृत्त जारी किया जाता है तथा हिन्दी अनुभाग अनुवर्ती कार्यवाही करता है।

५.२.५ हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन

भारत सरकार के आदेशानुसार इस कार्यालय में हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है। पाली प्रणाली होने के बावजूद भी कर्मचारियों को कार्यशालाओं में प्रशिक्षित करने की कोशिश की गई है। अकाशवाणी धारवाड़ में फरवरी १९८९ में सर्वप्रथम कार्यशाला का आयोजन किया गया था। इस ६ दिवसीय कार्यशाला में ८

कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया गया था। दूसरे कार्यशाला का अयोजन फरवरी १९९० में किया गया। इस कार्यशाला में आकाशवाणी धारवाड़ ने दूसरे केन्द्र सरकार कार्यालय के कर्मचारियों को सम्मिलित किया था। तीसरी हिन्दी कार्यशाला का आयोजन नवंबर में हुआ जिसमें आकाशवाणी ने भारतीय जीवन बीमा निगम के कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया।

आकाशवाणी के अधिकारियों को प्रशिक्षण की आवश्यकता को ध्यान में रखकर अधिकारियों के लिए पाँच दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन फरवरी १९९३ में किया गया। यह कार्यशाला सफल रही। फरवरी १९९४ में और एक हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला में ८ लोगों को प्रशिक्षित किया गया। इसी तरह साल-दर-साल आकाशवाणी में हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन किया जा रहा है।

५.२.६ हिन्दी दिवस/हिन्दी सप्ताह का आयोजन

धारवाड़ के आकाशवाणी कार्यालय में हिन्दी दिवस/हिन्दी सप्ताह का आयोजन हर साल किया जाता है। हिन्दी सप्ताह के दौरान निबंध, भाषण, तथा अन्ताक्षरी प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाती हैं। इस प्रतियोगिताओं में लिपिक, अभियन्ता, अधिकारी भाग लेते हैं। हिन्दी गीतों पर आधारित अन्ताक्षरी प्रतियोगिता में बहुत से अधिकारी एवं कर्मचारी उत्साह से भाग लेते हैं। इसके अलावा चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों के लिए वाचन प्रतियोगिता तथा कर्मचारियों के बच्चों के लिए विभिन्न हिन्दी प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाती हैं। इस तरह सभी कर्मचारी, अधिकारी एवं उनके बच्चों को प्रतियोगिता में भाग लेने का अवसर दिया जाता है। यह सभी प्रतियोगिताएँ सप्ताह भर आयोजित की जाती हैं और अन्तिम दिन यानि हिन्दी दिवस के अवसर पर सभी विजेताओं को पुरस्कार दिये जाते हैं। आकाशवाणी धारवाड़ में पूरे सप्ताह भर हिन्दी का वातावरण बना रहता है।

५.२.७ प्रशिक्षण की स्थिति

आकाशवाणी धारवाड़ के कार्यालय में १९८९ से हिन्दी प्रशिक्षण जारी है। यहाँ तब से लेकर अब तक नियमित रूप से हिन्दी शिक्षण योजना के अन्तर्गत प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ परीक्षाओं के लिए कक्षाएँ नियमित रूप से चलायी जाती हैं। हर सत्र में औसतन १०-१२ कर्मचारी कक्षाओं के लिए नामित किये जाते हैं। कार्यालय की

यह उपलब्धि है कि हर बार ९० प्रतिशत से ज्यादा कर्मचारी उपरोक्त परीक्षाओं में उत्तीर्ण होते हैं और नकद पुरस्कार भी अच्छे अंकों के आधार पर पाते हैं।

५.२.८ प्रोत्साहन योजनाएँ

इस कार्यालय में दो श्यामपट्ट हैं, एक प्रशासनिक भवन में तथा दूसरा स्टूडियो ब्लॉक में। इन श्यामपट्टों पर प्रतिदिन एक कार्यालय कामकाज से संबंधित अंग्रेजी शब्द लिखा जाता है और उसके नीचे हिन्दी का अनुवादित शब्द लिखा जाता है। इसका उद्देश्य है कि कर्मचारी कुछ प्रशासनिक हिन्दी शब्दों को सीख लें। इस तरह लिखे गये शब्दों पर आधारित एक प्रोत्साहन योजना कार्यालय द्वारा लागू की गई है, जिसे 'आज का शब्द' प्रतियोगिता नाम रखा गया है। इस प्रतियोगिता के अन्तर्गत माह में एक बार कर्मचारियों के लिए एक परीक्षा ली जाती है, जिसमें पिछले महीने लिखे गये हिन्दी-अंग्रेजी शब्दों से संबंधित प्रश्न पूछे जाते हैं। इन परीक्षाओं में अच्छे अंक पाने वालों को हिन्दी दिवस के अवसर पर पुरस्कृत किया जाता है।

५.२.९ पुस्तकालय

यहाँ के कार्यालय में एक पुस्तकालय है। इस पुस्तकालय में करीब ४०० से अधिक हिन्दी पुस्तकें उपलब्ध हैं। इनमें साहित्यिक, ज्ञानवर्धक उपन्यास, नाटक, कविता-संग्रह आदि जैसी पुस्तकें हैं। कर्मचारी इन पुस्तकों को घर ले जाकर पढ़ सकते हैं। कार्यालय के लिए एक दैनिक पत्रिका तथा एक मासिक पत्रिका भी मँगवाई जाती है। आकाशवाणी धारवाड़ के कार्यालय को सन् १९९२-९३ में हिन्दी में किये गये काम के लिए केन्द्र सरकार के कार्यालयों की श्रेणी में तीसरा स्थान प्राप्त है। इसके लिए प्रशस्ति पत्र दिया गया है।

इस तरह हम लोगों ने देखा कि रेडियो जैसे संचार माध्यम ने कार्नाटक में हिन्दी का प्रयोग और प्रसार करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया और दे रही है। धारवाड़ आकाशवाणी की तरह ही कर्नाटक के अन्य आकाशवाणी केन्द्र भी हिन्दी के प्रचार-प्रसार कार्य में रुचि लेकर कार्यक्रमों को प्रसारित कर रहे हैं। इससे यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि कर्नाटक की जनता हिन्दी के प्रति उत्साहपूर्ण रवैया अपनाये हुए है।

५.३ कर्नाटक में दूरदर्शन द्वारा हिन्दी का प्रचार और प्रसार

अभी तक हम लोगों ने रेडियो द्वारा हिन्दी के प्रचार और प्रसार कार्यक्रमों को जाना। रेडियो द्वारा प्रसारित कार्यक्रमों को केवल सुना जा सकता है, मगर देखा नहीं जा सकता। जब से दूरदर्शन का आविष्कार हुआ लोगों को सभी प्रकार के कार्यक्रमों को सुनने के साथ-साथ देखने का भी अवसर प्राप्त हुआ। यह एक बड़ी उपलब्धि है। कोई भी चीज़ सुनने के साथ-साथ अगर देखी भी जाय उसका प्रभाव ज्यादा होता है।

सन् १९८० के दशक में भारत में दूरदर्शन का ज़बरदस्त प्रचार हुआ। तब से लेकर अब तक दूरदर्शन का प्रचार बढ़ता ही जा रहा है। शायद ही भारत में ऐसा कोई गाँव बचा हो जहाँ दूरदर्शन की सुविधा न हो। इस संचार माध्यम द्वारा भारतवर्ष के हर शहर, हर गाँव और हर घर में एक साथ समूचे कार्यक्रमों को देखा जा सकता है।

इस समय भारत के हर प्रान्त में हिन्दी का कार्यक्रम दूरदर्शन द्वारा प्रसारित किया जा रहा है। कर्नाटक प्रान्त भी इससे अछूता नहीं है। अब तक हम लोगों ने देखा कि कर्नाटक की जनता हिन्दी को सीखने में बहुत उत्साह दिखा रही है। कर्नाटक में बैंगलोर, धारवाड़, शिमोगा, हासन, गुलबर्गा एवं बैंगलोर मेट्रो ये सभी हाई पावर ट्रांस्मीटर के प्रमुख दूरदर्शन केन्द्र हैं। लो पावर ट्रांस्मीटर्स के दूरदर्शन केन्द्र निम्नलिखित स्थानों पर स्थित हैं:-

मंगलोर, डावणगेरी, बिजापुर, बेल्लारी, गदग, रायचूर, मैसूर, उड्डुपी, बेलगाम, होसपेट, मडिकेरी, चिक्कमंगलूर, बीदर, कारवार, चित्रदुर्ग, कोलार गोल्डफिल्ड्स, अथणी, तिपटूर, शिर्शी, राणेबेन्नूर, चिक्कोड़ी, सोंडूर, बंथवाल, रामदुर्ग, बागलकोट, गंगावती, मंड्या, पावगड़, मुडिगेरे, पुत्तुर, सुल्या, कुमटा, गोकाक, बसवकल्याण, तांडूर, हुनगुंद, तुमकूर, हथ्थिहाळ, अरसिकेरे, होलेनरसिपुर, सागर, हरपनहल्लि, जमखंडी, मुधोळ एवं भटकल।

जब से दूरदर्शन के हिन्दी कार्यक्रम प्रसारित होने लगे हैं तब से कर्नाटक की जनता का उत्साह दुगुना हो गया है। हमने कर्नाटक के बहुत से शहर और गाँवों को देखा जहाँ पर हर घर में चाहे वह बच्चा हो, महिला हो, बुर्जुग हो, शिक्षित हो या अशिक्षित हो सब लोग शाम के समय अवश्य ही दूरदर्शन द्वारा प्रसारित होने वाले

हिन्दी कार्यक्रमों को देखते हैं। दूरदर्शन द्वारा प्रसारित हिन्दी कार्यक्रमों को देखने के बाद वहाँ की जनता आपस में हिन्दी में बातचीत करने का प्रयास करती हैं।

सरकारी चैनल के अलावा ऐसे सैकड़ों निजी चैनल भी हैं जो हिन्दी कार्यक्रमों को प्रसारित करने में एक दूसरे से प्रतिस्पर्धा में लगे हैं। इससे जनता को अपने मन-पंसद हिन्दी कार्यक्रमों को देखने का अवसर मिलता है। दूरदर्शन के सरकारी एवं निजी चैनलों ने हिन्दी का प्रचार और प्रसार करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

इससे अंदाजा लगाया जा सकता है कि कर्नाटक के लोगों में हिन्दी का प्रयोग और प्रसार बराबर हो रहा है। इससे आने वाले दिनों में पूरे देश में हिन्दी को राष्ट्रभाषा मानने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

संदर्भ ग्रन्थ

१. पी.एस. चन्द्रशेखर– "कर्नाटक में पत्रकारिता", कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति स्वर्णजयन्ती विशेषांक, *हिन्दी प्रचार वाणी*, २००३, पृ. ५०

२. वंशीधरलाल : "पत्र-कानूनों (प्रेस एक्ट) का इतिहास", सुरेश गौतम एवं वीणा गौतम (संपा.) : *हिन्दी पत्रकारिता : कल, आज और कल*, पृ. १६६

३. सविता चड्ढा "हिन्दी पत्रकारिता का क्रमिक विकास", मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद, बैंगलोर की स्वर्ण जयन्ती समारोह विशेषांक, १९९५, पृ. २२३

४. वही, पृ. २२३-२२४

५. संजीव भानावत "पत्रकारिता ; अर्थ उद्देश्य क्षेत्र" सुरेश गौतम एवं वीणा गौतम (संपा.) *हिन्दी पत्रकारिता कल आज और कल*, पृ. ३८

६. अर्जुन तिवारी : *आधुनिक पत्रकारिता*, पृ. १०

७. बद्रीनाथ कपूर : *वैज्ञानिक परिभाषा कोष*, पृ. ११७

८. रामकृष्ण रघुनाथ खाडिलकर : *आधुनिक पत्रकार कला*, पृ.२

९. Journalism consists of writing for pay on matters of which you are ignorant.

१०. *Time* (Magazine) : Journalism is the conveying of information from here to there with accuracy, insight and dispatch in such a manner that the truth is served and the rightness of thing is made slowly even if not immediately, more evident.

११. संजीव भानावत : "पत्रकारिता ; अर्थ, उद्देश्य और क्षेत्र", सुरेश गौतम एवं वीणा गौतम (संपा.) : *हिन्दी पत्रकारिता : कल, आज और कल*, पृ. ४०-४१

१२. सविता चड्ढा "हिन्दी पत्रकारिता का क्रमिक विकास", मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद, बैंगलोर की स्वर्ण जयन्ती समारोह विशेषांक १९९५, पृ. २२४-२२७

१३. मदनमोहन गुप्ता : "ग्रामीण पत्रकारिता", वेद प्रताप वैदिक (संपा) : *हिन्दी पत्रकारिता विविध आयाम*। पृ. ३६२

१४. It is no longer enough to report the fact truthfully, it is now necessary to report the whole truth about the fact– *Press Commission of America*

१५. प्रवीण दीक्षित : *जन माध्यम और पत्रकारिता*। भाग-२, पृ. ४४४

१६. वही, पृ. ४४६

१७. *Times of India*, 7 June 1982

१८. पी.एस. चन्द्रशेखर : कर्नाटक में पत्रकारिता। पृ. ५०

१९. तिप्पेस्वामी : "कन्नड़ पत्रकारिता" सुरेश गौतम एवं वीणा गौतम (संपा). *भारतीय पत्रकारिता ; कल, आज और कल*। पृ. ७६-७७

२०. वही.

२१. वही.

२२. तिप्पेस्वामी : "कर्नाटक में हिन्दी पत्रकारिता", सुरेश गौतम एवं वीणा गौतम (संपा.) : *भारतीय पत्रकारिता ; कल, आज और कल*। पृ. २९३

२३. सी. जयशंकर बाबू : *दक्षिण भारत में हिन्दी पत्रकारिता ; एक अध्ययन* (शोध प्रबंध)। मैसूर विश्वविद्यालय, पृ. ३२९-३८२

२४. India, Ministry of Information and Broadcasting : *Mass Media in India 2003.*, p. 141



अध्याय ६

कर्नाटक में मौलिक एवं अनूदित साहित्य द्वारा हिन्दी का प्रचार-प्रसार

क़िसी भी भाषा के विकास के लिए यह आवश्यक है कि अन्य भाषाओं से अनुवाद की प्रक्रिया निरंतर बनी रहे। इससे उस भाषा में वृद्धि होती है जिसमें अनुवाद होता है। विश्व की अधिकांश भाषा में मौलिक साहित्य की अपेक्षा अनूदित साहित्य की संख्या अधिक है। आदान-प्रदान के कारण ही भाषा-साहित्य सर्वांगीण रूप से सुन्दर हो जाता है और विचारों की नयी शृंखला, धाराओं का जन्म होता है और भाषा के विकास के नये मार्ग खुल जाते हैं।

स्वतंत्रता से पहले भाषा के आदान-प्रदान की प्रक्रिया कम थी जो थोड़ी बहुत थी उसमें कार्य करने का तरीका न तो सुनियोजित था और न ही सुसंगठित। स्वतंत्रता के बाद साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र में नयी विचारधारा का जन्म हुआ। आदान-प्रदान की प्रक्रिया को सुचारु रूप से आगे बढ़ाने के उद्देश्य से राष्ट्रीय स्तर पर कई संस्थाओं का गठन किया गया। इनमें प्रमुख हैं– केन्द्रीय साहित्य अकादमी, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत (नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया), ललित कला अकादमी। इन संस्थाओं के कारण भारत की विभिन्न भाषाओं के साहित्य का परिचय, राष्ट्रभाषा हिन्दी के द्वारा, अन्य भाषाओं का आदान-प्रदान होने लगा।

अनुवाद के संबंध में प्रसिद्ध अनुवादक-चिंतक पोगियोली का कहना है कि– "आधुनिक युग में कोई भी राष्ट्रीय पुनर्नवीनीकरण और पुनर्जीवन की शक्ति अनुवादकों की संख्या और उनकी गुणवत्ता के द्वारा ही प्रकट होती है।"

भारत में अनुवाद की परंपरा आज़ादी से पहले की है। अनुवाद के कारण भारत की भाषाओं का आपस में घनिष्ठ संबंध आज स्थापित होता जा रहा है। कर्नाटक में हिन्दी प्रचार-प्रसार के उद्देश्य में जिस प्रकार संस्थाओं, पत्र-पत्रिकाओं,

जनसंचार माध्यमों का योगदान रहा है उसी प्रकार हिन्दी के मौलिक साहित्य एवं अनूदित साहित्य के द्वारा भी कर्नाटक में हिन्दी प्रचार-प्रसार को एक नयी दिशा मिली है। चाहे वह कन्नड़ से हिन्दी में अनुवाद हो, या हिन्दी से कन्नड़ में या फिर हिन्दी की मौलिक कृति ही क्यों न हो, ऐसे साहित्य के आदान-प्रदान की प्रक्रिया से न केवल हिन्दी के प्रचार को बढ़ावा मिल रहा है अपितु इससे एक-दूसरे की संस्कृति से भी परिचित होने का अवसर प्राप्त होता है।

आज कर्नाटक में कई कवियों, लेखकों, विद्वानों द्वारा हिन्दी मौलिक एवं अनूदित साहित्य रचे जा रहे हैं जिससे निश्चित रूप से कर्नाटक में हिन्दी प्रचार-प्रसार के कार्य को आगे बढ़ाने में मदद मिल रही है।

इस अध्याय का विषय है 'कर्नाटक में मौलिक एवं अनूदित साहित्य द्वारा हिन्दी का प्रचार-प्रसार' लेकिन इस विषय की गहराई में जाने से पहले यह बता देना उचित रहेगा कि अनुवाद क्या है, विदेशी एवं भारतीय विद्वानों की दृष्टि में अनुवाद का क्या अर्थ है तथा भारत एवं कर्नाटक में हिन्दी अनुवाद की क्या परंपरा रही है। तब आगे जाकर विस्तार से इस अध्याय के विषय से संबंधित तथ्यों पर प्रकाश डाला जायेगा।

६.१ अनुवाद

संसार के सभी प्राणियों में मनुष्य ही सबसे श्रेष्ठ प्राणी है क्योंकि उसके पास सोचने-समझने, किसी भी वस्तु के विषय के बारे में जानकारी हासिल करने, नये-नये आविष्कारों की खोज करने आदि की महत्त्वपूर्ण विशेषता है। प्रकृति से कुछ वरदान उसे सहज ही प्राप्त है और कुछ वह अपने बुद्धि-विवेक से प्राप्त करता है। ऐसा ही एक वरदान, जो मनुष्य को प्राप्त है वह है 'भाषा'। आज का मनुष्य एक नहीं अनेक भाषाओं की जानकारी, ज्ञान हासिल करने में निपुण हैं, इससे उसके बौद्धिक विकास के साथ-साथ सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक विकास की संभावना भी प्रबल हो जाती है। एक से अधिक भाषाओं का ज्ञान होने पर वह दूसरी भाषा में मूल ग्रन्थ का अनुवाद कर मूल ग्रन्थ एवं अपनी बात या सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक गतिविधियों संबंधी बातों से लोगों को परिचय करा सकता है और इस विभिन्नता से उभरने की प्रवृत्ति 'अनुवाद' है।[१]

Karl Vossler के शब्दों में- 'यदि एक व्यक्ति अनुवाद की अवधारणा को अस्वीकार करता है तो निश्चय ही भाषा समुदाय की अवधारणा को छोड़ना पड़ेगा।'[२]

एक भाषा की विषय-वस्तु को दूसरी भाषा में पहुँचाना 'अनुवाद' है। जिस मात्रा में यह होती है उसी मात्रा में अनुवाद सफल कहा जाता है। अनुवाद करते समय जिस पद्धति को अपनाया जाता है वह उपयुक्त होने के साथ-साथ अंतिम पद्धति भी है यह कहना कठिन है। अनुवाद वास्तव में एक ज्ञान-विधा न होकर एक व्यवहार-विधा है। यह सर्जनात्मक भी है और समीक्षात्मक भी है।

डॉ. जॉनसन के शब्दों में अनुवाद का अर्थ है- To change into another language retaining sense. डॉ. जॉनसन के अनुवाद संबंधी इस अर्थ को और विस्तृत ढंग से व्याख्यादित करते हुए ए.एल. स्मिथ ने कहा है कि- Translation is to change into another language retaining as much of the sense as one can, for some of the original effect is almost always lost. कहने का तात्पर्य केवल इतना है कि अनुवाद करते समय जहाँ तक हो सके इसके मूल अर्थ को बचाये रखना चाहिए।

प्राचीन भारत में सिक्षा की मौलिक परंपरा थी। गुरु जो कहते थे, शिष्यों द्वारा उसे दुहराना 'अनुवाद' कहा जाता था।

'अनुवाद' शब्द 'वद्' धातु से संबंधित है। जिसका अर्थ होता है 'बोलना' या 'कहना' और अनुवाद का मूल अर्थ है 'पुनः कथन' या 'किसी के कहने के बाद कहना'।

६.१.१ भारतीय साहित्य एवं विद्वानों की दृष्टि में अनुवाद का अर्थ

'शब्दार्थ चिन्तामणि' कोश में अनुवाद का अर्थ 'प्राप्तस्य पुनः कथने' कहा गया है।

न्याय-सूत्र में अनुवाद की व्याख्या को इस प्रकार प्रेषित किया गया है- "विधिविहितस्यानुवचनमनुवादः" अर्थात् विधि एवं विहित का पुनः कथन 'अनुवाद' है। पुनः कथन से तात्पर्य यहाँ शब्द को सार्थक बनाने से है।

पाणिनि के *अष्टाध्यायी* में अनुवाद शब्द का प्रयोग एक सूत्र में मिलता है- 'अनुवादे चरणाम'। पाणिनी के इस सूत्र की वासुदेव दीक्षित ने व्याख्या इस प्रकार की है- 'अवगतार्थस्य प्रतिपादने इत्यर्थः'। दुबारा कहने के अर्थ के साथ-साथ यहाँ अवगत अर्थ की संहितता का भी उल्लेख किया गया है। कहने का अर्थ है कि जो बात भली-भाँति समझी गयी है उसे पुनः कथन के रूप में प्रकाशित करना अनुवाद है।

६.१.२ विदेशी विद्वानों की दृष्टि में अनुवाद की परिभाषा एवं स्वरूप

अनुवाद लैटिन भाषा का शब्द है और इसका अंग्रेजी पर्याय Translation है।

Samuel Johnson– "To interpret in other language : to change into another language, retaining the sense."[3]

अर्थात् एक भाषा से दूसरी भाषा में प्रतिपादित करना, और भाषा में बिना अर्थ को ठेस पहुँचाये परिवर्तित करना अनुवाद कहलाता है।

Peter Newmark, P.I.– "Translation is a craft consisting of an attempt to replace a written message and/or statement in another language."[4]

लिखित संदेश/वक्तव्य को एक भाषा से दूसरी भाषा में प्रतिस्थापित करने के कौशल से युक्त प्रयास को ही अनुवाद कहते हैं।

६.१.३ भारतीय भाषाओं में अनुवाद की परंपरा

अनुवाद संस्कृति का संवाहक है। राष्ट्रों, राज्यों के बीच आपसी समझ, सौहार्द्र और सद्भाव की वृद्धि अनुवाद से संभव है। अनुवाद हृदय और ज्ञान की दूरी को मिटाता है और एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से तथा एक-दूसरे की संस्कृति से परिचय कराता है।

यद्यपि प्राचीन भारतीय परंपरा में अनुवाद के सिद्धांत प्रायः देखने को नहीं मिलते तथापि प्राचीन भारतीय मनीषियों ने निरुक्त वार्तिक आदि ग्रन्थों में अनुवाद की परिभाषाएँ दी हैं।

जहाँ आर्य भाषाओं ने संस्कृत की ज्ञान परंपरा को अक्षुण्ण और सुरक्षित रखने की कोशिश की, वहीं द्रविड़ भाषाओं ने संस्कृत के प्रभाव को ग्रहण करने के साथ-साथ उससे प्राप्त ज्ञान का प्रचार-प्रसार भी किया।

भारतीय सामाजिक और धार्मिक जीवन में *गीता, रामायण, महाभारत* और *श्रीमद्भागवत्* आदि ग्रन्थों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारत की अधिकतर भाषाओं में इन ग्रन्थों का अनुवाद किया गया है तथा काल, समय एवं भाषाओं की सीमा के परे जाकर इन कृतियों को स्वीकार किया गया है।

भारतीय भाषाओं का विकास काल १०वीं शताब्दी से माना जाता है। इस समय तक अनुवाद का कार्य सिर्फ पुराणों, नाटकों, काव्यों एवं काव्यशास्त्रों तक ही सीमित नहीं था अपितु कई और विधाओं में भी अनुवाद कार्य हो रहा था किन्तु उपर्युक्त विधाओं जितना नहीं।

दसवीं शताब्दी से लेकर १९०० तक के समय में कई भाषाओं में *महाभारत, भागवत* आदि ग्रन्थों के अनुवाद किये जा चुके हैं, वे भाषाएँ और उनका समय इस प्रकार है:– असमी (१६वीं शति), उड़िया (१५वीं शती), कश्मीरी (१४वीं शती), गुजराती (११वीं शती), पंजाबी (१५वीं शती)। इसी प्रकार मराठी, कन्नड़, तेलुगु, तमिल, बंगला आदि समस्त भाषाओं में ये ग्रन्थ पहले ही अनूदित हो चुके हैं। इन्हें अनुसृजन माना जाता है जो कि अनुवाद के करीब है। दसवीं शताब्दी में अनुवाद की स्थिति इस प्रकार थी:–

(i) संपूर्ण काव्य का अनुवाद
(ii) काव्य–वस्तु अपनी पर विचार को अन्य स्रोतों से ग्रहण कर अनुवाद करना, और
(iii) मुक्तक रचनाओं में अनुवाद

हिन्दी साहित्य के प्रथम चरण की शुरुआत में प्रसिद्धि प्राप्त ग्रन्थों के अनुवाद ग्रन्थ नहीं मिलते, किन्तु, तेलुगु, कन्नड़ आदि साहित्यों में अनुवाद के युग को देखा जा सकता है। हिन्दी में काव्यशास्त्र का अवतरण संस्कृत के काव्यशास्त्रों के आधार पर हुआ है। संस्कृत के आधार ग्रन्थों पर अनुवाद, अनुसरण और अनुसृजन की प्रक्रिया भारतीय भाषाओं में देखी जा सकती है। संस्कृत के मुक्तक भी भारतीय भाषाओं में अनूदित हुए हैं और आज ऐसे कई साहित्यों, और उसकी विभिन्न विधाओं में अनुवाद का कार्य पहले की तुलना में कहीं अधिक सफल रूप से किया जा रहा है क्यों कि आज अनुवाद की आवश्यकता बहुआयामी हो चुकी है तथा एक–दूसरे को जानने की, संपर्क स्थापित करने की आवश्यकता आज के युग में अधिक है।

६.२ कर्नाटक में अनुवाद की परंपरा : हिन्दी के संदर्भ में

प्रायः किसी भी साहित्य के नये आयाम के लिए अनुवाद या भाषांतर बुनियाद काम करता है।

एज्रा पौण्ड (Ezra Pound) का कथन है कि– A great age of literature is perhaps always a great age of translation.

कन्नड़ भाषा ने भी अनुवाद के माध्यम से अपनी भाषा को समृद्ध किया है। संस्कृत, बंगला, मराठी, अंग्रेजी, हिन्दी से कई कृतियों का अनुवाद कन्नड़ में हुआ है और कन्नड़ से हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी आदि भाषाओं में भी अनुवाद किया गया है साथ ही कन्नड़ विद्वानों ने मूल हिन्दी ग्रन्थों की रचना भी की है। हिन्दी भारत की जनभाषा, सम्पर्क भाषा, राजभाषा और राष्ट्रभाषा है। हिन्दी का विकास एक हज़ार ई. से माना गया है। राष्ट्रीय आंदोलन के समय जब गाँधीजी ने एक भाषा 'हिन्दुस्तानी' को अपनाने पर बल दिया तब से ही कर्नाटक में हिन्दी भाषा का विकास होने लगा था परन्तु इससे पहले कर्नाटक में दक्खिनी भाषा जो कि आज कि खड़ी बोली हिन्दी या परिनिष्ठित हिन्दी का ही एक रूप थी उसका प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है और दक्खिनी से भी पहले मुसलमान शासकों के कारण कर्नाटक में उर्दू का भी बोल-बाला था। आगे चलकर कई संस्थाओं और व्यक्तियों ने हिन्दी के प्रयोग एवं प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसी का परिणाम रहा कि कई विदुषी लोगों ने हिन्दी सीखकर उसे साहित्य रचनाएँ की, महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुवाद हिन्दी से कन्नड़ और कन्नड़ से हिन्दी में किया और अपनी मौलिक रचनाओं के द्वारा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में योगदान दिया।

यूँ तो कर्नाटक में अनुवाद की परंपरा बहुत समृद्ध है और हिन्दी से कन्नड़ में कई कृतियों का सफल अनुवाद भी किया जा चुका है लेकिन खेद का विषय है कि कन्नड़ से हिन्दी में बहुत कम कृतियाँ ही अनूदित हो पायी हैं।

कन्नड़ से हिन्दी में अनूदित काव्य के प्रति असंतोष प्रकट करते हुए डॉ. तिप्पेस्वामी ने कहा है कि:-

(i) कन्नड़ मातृभाषी अनुवादकों के लिए हिन्दी एक सीखी हुई भाषा है, इस कारण हिन्दी भाषा, संस्कृति से उनका परिचय गहरा नहीं है अतः अनुवाद करते समय उनसे त्रुटियाँ हो सकती हैं। इससे लक्ष्य भाषा में मूल काव्य का सौंदर्य उसी प्रकार या रूप में नहीं रह पाता है।

(ii) साथ ही उत्तर भारत से जो लोग कर्नाटक आते हैं उन्हें कन्नड़ सीखकर कन्नड़ की कृतियों का हिन्दी में अनुवाद करने में कोई दिलचस्पी नहीं होती है।

(iii) कन्नड़ से अधिक से अधिक हिन्दी में अनुवाद हो सके इसके लिए कर्नाटक सरकार को भी कुछ जिम्मेदारी का निर्वाह करना चाहिए। वह यह कि

कर्नाटक सरकार अनुवादकों को हिन्दी प्रांतों में भेजकर वहाँ की सभ्यता, संस्कृति को जानने का उन्हें अवसर प्रदान करे। मगर दुःख की बात है कि इस दिशा में कोई कदम नहीं उठाए जा रहें हैं।

(iv) कन्नड़ से हिन्दी में अनूदित कृतियों के प्रकाशन में हिन्दी प्रकाशकों की उदासीनता। अगर अनूदित रचनाओं को पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाय तो और बात होगी।[५]

अगर तिप्पेस्वामी द्वारा बताए गये इन कारणों पर ध्यान दिया गया तो निश्चय ही इस क्षेत्र में भी अच्छी और सफल अनूदित रचनाएँ देखने को मिलेंगी।

भले ही अब तक कन्नड़ से हिन्दी में अनूदित रचनाएँ कम हों फिर भी इस दिशा में किये गये उन लेखकों, अनुवादों के प्रयास को नकारा नहीं जा सकता जिन्होंने अपना बहुमूल्य योगदान इस कार्य में दिया है।

'कर्नाटक का सत्याग्रह' नामक कृति को कन्नड़ से हिन्दी में अनूदित पहली गद्य कृति होने का गौरव प्राप्त है। इसके रचनाकार हर्डेकर मंजप्पा हैं। इस कन्नड़ कृति का हिन्दी में अनुवाद लक्ष्मण रघुनाथ भिड़े ने किया है। यह कृति १९२४ में संपन्न हुए अखिल भारतीय काँग्रेस अधिवेशन के अध्यक्ष महात्मा गाँधीजी को समर्पित है।[६]

६.३ काव्य के क्षेत्र में अनुवाद

कन्नड़ से हिन्दी में अनूदित काव्य सूची[७]

क्रं.सं.	शीर्षक	लेखक	अनुवादक
१.	श्री प्रभुदेव के वचनामृत	प्रभुदेव	शिवकुमार देव
२.	पुरंदरदास के भजन	पुरंदरदास	बाबुराव कुमठेकर
३.	सतीधर्म	संची होन्नम्मा	एम. देवेगौड
४.	सर्वज्ञ के वचन	सर्वज्ञ	दत्तात्रेय राव हेरुर
५.	भक्ति भंडारी बसवेश्वर के चुने हुए वचन	–	एम. राजेश्वरय्या
६.	महात्मा बसवेश्वर के वचन	–	आर.सी. भूसनूरमठ एवं शकुंतला भूसनूरमठ

७. भक्ति भंडारी बसवेश्वर के वचन	–	एस. रामचंद्र, षण्मुखय्या कुंदगोल एवं श्रीमती गायत्री वर्मा
८. श्री रामायण दर्शनम् (भाग-१)	कुवेंपु	सरोजिनी महिषी
९. मूढ़ तिम्म का दर्शन	डी.वी.जी.	सरोजिनी महिषी
१०.कवि कुवेंपु	कुवेंपु	एम.एस. कृष्णमूर्ति
११.कवि बेंद्रे	बेंद्रे	एम.एस. कृष्णमूर्ति
१२.जयगीत	जयदेवीताई लिगाड़े	एस. शिवमूर्ति शास्त्री
१३.आधुनिक कन्नड़ काव्य		मैसूर विश्वविद्यालय
१४.आज की कन्नड़ कविताएँ		धरणेंद्र कुरकुरी
१५.चार तार	द.रा. बेंद्रे	वी.बी. पुत्रन
१६.वचन		भालचंद्र जयशेट्टी
१७.एकोत्तर शत वचन		राम अधार सिंह
१८.वचनोद्यान	सिद्धय्या पुराणिक	ललितांबा
१९.अक्कमहादेवी		उमापति शास्त्री
२०.अक्कमहादेवी		भालचंद्र जयशेट्टी
२१.अक्कमहादेवी के वचन		नंदिनी गुंड्डुराव
२२.शिवयोगिनी अक्कमहादेवी		भगवानदास तिवारी
२३.अक्कमहादेवी के वचन		के मुद्धण्णा
२४.वचन सौरभ		सुलोचनादेवी आराध्य
२५.महात्मा बसवेश्वर		पी.एन. भट्टतिरि
२६.बसव वचनामृत		उमापति शास्त्री
२७.महात्मा बसवेश्वर के वचन		बी. श्रीनिवास मुनि एवं एम.सी. शिवानंद शर्मा
२८.बसव दर्शन		टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'
२९.तोंटद श्री सिद्धलिंगेश्वर		उमापति शास्त्री
३०.जेड़र दासिमय्या		भालचंद्र जयशेट्टी
३१.शून्य संपादन		गायत्री वर्मा

३२.अल्लम प्रभु के वचन	तिप्पेस्वामी
३३.अल्लम प्रभु	अजय कुमार सिंह
३४.अंगार की चोटी पर	धरणेंद्र कुरकुरी
३५.शरणों के चुने हुए वचन	टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'
३६.बसवेश्वर के चुने हुए १०८ वचन	"
३७.अक्कमहादेवी के चुने हुए १०८ वचन	शकुंतला आर. भूसनूरमठ
३८.अंतर्रात्मा से	रंगनाथ दिवाकर

सरकारी संस्था एवं पत्रिकाओं के माध्यम से अनुवाद

'केन्द्रीय साहित्य अकादमी' द्वारा 'भारतीय कविता' शीर्षक नाम से कन्नड़ काव्य हिन्दी में प्रकाशित हो रहा है।

'*भारतीय कवयित्रियाँ*-II तथा और एक संग्रह जिसका अनुवाद सोमशेखर 'सोम' और एच.बी. चौधरी द्वारा किया गया है, वह 'केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय' द्वारा प्रकाशित है।

'*समकालीन भारतीय साहित्य*' साहित्य अकादमी की द्विमासिक पत्रिका है। इस पत्रिका में अनूदित कन्नड़ काव्य प्रकाशित हो रहे हैं।

गुरुनाथ जोशी द्वारा कन्नड़ से हिन्दी में अनूदित कुछ किताबों की सूची इस प्रकार हैं:– 'जलरंग', 'एकलव्य' (टी.पी. कैलासम् की कृति), 'मृत्यु के बाद' (शिवराम कारंत की कृति), 'कन्नड़ की लघु कथायें' (एल.एस. शेषगिरिराव द्वारा संपादित कृति), 'बाल-विज्ञान' (एस.वी. भट्ट के सहयोग से अनूदित) 'सामान्य-विज्ञान' (एस.वी. भट्ट के सहयोग से अनूदित), 'कानूरु हेग्गडति' (एस.वी. भट्ट के सहयोग से अनूदित)।

गुरुनाथ जोशी द्वारा हिन्दी से कन्नड़ में अनूदित कुछ रचनाएँ

सनातन धर्म, संरक्षक, तूरया (प्रेमचंद की कहानियाँ), *सालुदीप, दुर्गा-मंदिर* (प्रेमचंद की कहानियाँ), *कर्मभूमि* (प्रेमचंद का उपन्यास) *उर्दू कथावली, नन्नकथे* (जवाहर लाल नेहरु की आत्म-कथा), *अहिल्याबाई, गुरु नानकवाणी, जेबुगळ्ळरु* (अमृता प्रीतम का उपन्यास), *प्रेमचन्द साहित्य हागू विमर्शे* (अन्य अनुवादकों के सहयोग से अनूदित)[८]

इनकी अन्य भाषा से भी अनूदित कृतियाँ इस प्रकार है। बंगला और हिन्दी से- शरत् के उपन्यास *देवदास, षोडशी, चंद्रनाथ, चरित्रहीन, श्रीकांत, वृंदावन*, शरत् की कहानियाँ- *मंगलसूत्र, मंदिर, महरे, अनुराधा, प्रेमपथ, गुरुचरण, राजलक्ष्मी*। गुजराती से- *गाँधी विचार दोहन* (किशोर लाल मश्रुवाला की कृति) गुरुनाथ जोशी द्वारा रचित हिन्दी मौलिक कृतियाँ इस प्रकार है- *पत्रपुष्प, कन्नड़ साहित्य की रूपरेखा, कन्नड़ रीडर, आलूर वेंकटराव*।

गुरुनाथ जोशी द्वारा संपादित ग्रंथ- *पाँच एकांकी, गल्फमाला, हिन्दी-कन्नड़ शब्द-कोश, कन्नड़-कन्नड़-हिन्दी शब्द-कोश*।

६.४ उपन्यास के क्षेत्र में अनुवाद

कुवेंपु के दो कन्नड़ उपन्यास '*कानूरु हेग्गडती*' और '*मनेगळल्लि मदुमगळु*' का बी.आर. नारायण ने हिन्दी में अनुवाद किया है। साथ ही एस.एल भैरप्पा, यू.आर. अनंतमूर्ति, कृष्ण आलनहळळी आदि की रचनाओं का भी इन्होंने हिन्दी में अनुवाद किया है। साहित्य अकादमी, नई दिल्ली द्वारा शंकर मुकाशी पुणेकर की कृति '*गंगव्वा गंगाबाई*' का हिन्दी अनुवाद हुआ है।

एच.वी. रामचंद्र राव ने बहादुर द्वारा रचित कृति '*ग्रामायण*' का अनुवाद हिन्दी में किया है।

अनंतमूर्ति की रचना '*अवस्थे*' का हिन्दी अनुवाद भालचन्द्र शेट्टी ने किया है और '*भारतीपुर*' का अनुवाद तिप्पेस्वामी और पट्टणशेट्टी ने किया है।

वासु बी. पुत्रन ने एस.एल भैरप्पा के उपन्यासों '*वंशवृक्ष*', '*ताई नेरळु*', '*गृहभंग*', '*दाटु*' और '*आदिपुराण*' का अनुवाद हिन्दी में किया है।

अनन्तमूर्ति के '*संस्कार*' और श्रीकृष्ण आलनहल्ली के '*काडु*' उपन्यास का हिन्दी अनुवाद चंद्रकांत कुसनूर ने किया है।

'*शांतला*' उपन्यास का अनुवाद हिरण्मय ने किया है। इस उपन्यास की रचनाकार के.वी. अय्यर हैं।

एन.एस. दक्षिणामूर्ति ने '*रत्नाकर*' नामक उपन्यास का हिन्दी अनुवाद किया। इस उपन्यास को लिखने वाले हैं- जी. ब्रह्मप्पा और एम.वी. श्रीनिवास।

अ.न.कृ. के '*संध्याराग*' का हिन्दी अनुवाद हुआ है। प्रभात सुधाकर ने त.रा.सु. के '*हंसगीते*' का अनुवाद किया है। इसी प्रकार '*मरळि मण्णिगे*' (शिवराम

कारंत कृति) अनुवादक बाबुराम कुमठेकर, *'चोमनदुडि'* (शिवराम कारंत कृति) अनुवादक इंदिरा कृष्णमूर्ति और हिरण्मय ने किया है।

अश्वथ की कृति *'हम्बल'* का अनुवाद एस. रामचंद्र ने किया है, *'हौसला'* शीर्षक से।

रसिक पुत्तिगे ने *'कृष्णदेवराय'* उपन्यास का हिन्दी अनुवाद किया है। इसके रचयिता सूर्यनाथ कामत हैं।

नागप्पा ने, श्रीरंग की रचना *'अनादि अनंत'* का अनुवाद किया है।

'उदयरवि' उपन्यास का अनुवाद एन.डी. कृष्णमूर्ति ने किया है। इसकी रचना बी. पुट्टस्वामय्या ने की है।

त्रिवेणी की कृति *'अपजय'* और *'अपस्वर'* का अनुवाद एस.एम रामचंद्रास्वामी ने किया है।

'अळिदमेले' नामक उपन्यास का अनुवाद गुरुनाथ जोशी ने किया है इसके रचनाकार शिवराम कारंत हैं।

इसं प्रकार कई अन्य उपन्यासों के भी अनुवाद हुये हैं पर जितनी जानकारी हासिल हो पायी उसकी जिक्र यहाँ की गयी है।

६.५ नाटक के क्षेत्र में अनुवाद

कर्नाटक में नाटकों के क्षेत्र में भी कई लोगों ने अनुवाद किये हैं, जिनमें प्रमुख हैं– बी.वी. कारंत, प्रभाशंकर 'प्रेमी', प्रधान गुरुदत्त, हिरण्मय, भालचंद्र जयशेट्टी आदि। इनके द्वारा अनूदित नाटकों की एक झलक यहाँ प्रस्तुत की जा रही है।

'तुगलक' नाटक का अनुवाद बी.वी. कारंत ने किया है, नाटककार हैं गिरीश कर्नाड।

'केळु जनमेजय' का और *'चालेश'* नाटक का हिन्दी अनुवाद रसिक पुत्तिगे ने किया है और नाटककार हैं क्रमशः श्रीरंग और चन्द्रशेखर कंबार, टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी' ने और एम.एन. मृत्युंजय ने *'आदि जिनतनय'* का अनुवाद किया है। इस नाटक के रचनाकार हैं जी. गुण्डण्णा, प्रभुशंकर की रचना *'अंगुलीमाल'* का हिन्दी अनुवाद एम. राजेश्वरय्या और प्रधान गुरुदत्त ने किया है।

'महाशिल्पी' को हिन्दी में अनुवाद एस. रामचंद्र ने किया है, रचना एच.बी. ज्वालनय्या की है।

कुवेंपु की रचना *'रक्ताक्षि'* का अनुवाद हिरण्मय ने किया है।

'हूलीशेखर' जो कि हूली शेखर की रचना है, इस नाटक को हिन्दी में अनुवाद कन्हैयालाल मिश्र ने किया है।

'सुल्तान टिपु' इसके अनुवादक हैं भालचंद्र जयशेट्टी और रचनाकार हैं एच.एस. शिवप्रकाश।

टी.एन. सीताराम द्वारा रचित *'नम्मोळगोब्ब नाजूकय्या'* का अनुवाद मंगल देसाई ने किया है।

पी. लंकेश की कृति *'संक्रांति'* के अनुवादक हैं बी.आर.नारायण। देवनूर की रचना *'ओडलाल'*- सी.जी. कृष्णस्वामी का नाटक का हिन्दी अनुवाद तिप्पेस्वामी ने किया है।

भारती हिरेमठ ने विजया के तीन नुक्कड़ नाटकों का हिन्दी अनुवाद किया है।

'मेला' तथा अन्य दत्तात्रेय रामचंद्र बेंद्रे की एकांकियों का अनुवाद नंदिनी गुंडुराव ने किया है।[१]

६.६ कथा संग्रह का अनुवाद

कहानी के क्षेत्र में भी कर्नाटक में कुछ अनुवाद हुए हैं जो इस प्रकार हैं- कहानीकार अश्वत्थ के *'सात कहानियाँ'* का अनुवाद एस. रामचंद्र ने *'गल्पविहार'* नाम से किया है।

एम. राजेश्वरय्या ने कन्नड़ की प्रमुख कहानियों का अनुवाद *'कन्नड़ की प्रतिनिधि कहानियाँ'* के रूप में किया है। कुवेंपु द्वारा रचित कहानी संग्रह *'मलेनाड चित्रगळु'* का अनुवाद एस. शिवमूर्ति स्वामी ने किया है।

त्रिवेणी की सात कहानियों का अनुवाद *'त्रिवेणी सप्तक'* के नाम से प्रकाशित हुआ है। इसके अनुवादक हैं एस.एम. रामचन्द्र स्वामी।

इसी प्रकार मैसूर विश्वविद्यालय ने भी कहानियों के कुछ अनूदित संग्रह प्रकाशित किये है। कुवेंपु की कुछ रचनाओं को अनूदित कर कुवेंपु विश्वविद्यालय ने प्रकाशित किया है।

'कन्नड़ कहानियाँ' नामक कथा संग्रह जिसके संपादक एल.एस शेषगिरिराव हैं, इसका अनुवाद गुरुनाथ जोशी ने किया है।

६.७ अन्य अनूदित रचनाएँ

'उर्मिला आलोचना' का अनुवाद राजेश्वरय्या और प्रधान गुरुदत्त ने किया है।

शंकरराव कप्पिकेरी और एस. शिवमूर्ति स्वामी ने सरस्वती गौडर की रचना *'कर्नाटक शिवशरणेयरु'* का अनुवाद हिन्दी में किया है।

'प्रमथाचार दीपिका' का अनुवाद मंजप्पा हर्डेकर ने किया है इसके लेखक हैं मृत्युंजय स्वामी। एच.एस. कृष्णा स्वामय्यंगार की रचना *'व्यावहारिक कन्नड़'* का हिन्दी अनुवाद प्रधान गुरुदत्त ने किया है।

'पंपायात्रे' जो वी. सीतारामय्या की कृति है इसका अनुवाद नागप्पा ने किया है। बी.एम. दाळप्पा, ए.एम. रामचंद्र ने *'दे.ज.गौ : व्यक्ति साहित्य'* (भाग I) नामक रचना का आंशिक अनुवाद किया है।

'मूजगं' के भाषणों का हिन्दी अनुवाद *'विविधता में एकता'* नाम से हुआ है। इसके संपादक हैं एम.वी. महाले[१०]

'मेडलेरी चरखा' का अनुवाद सुमंगला मुम्मिगट्टी ने किया है। साथ ही भारतीय अनुवाद परिषद् की पत्रिका *'अनुवाद'* में भी कन्नड़ से संबंधित लेख, अनूदित कहानियाँ आदि छप रही हैं। कई अनूदित रचनायें नेशनल बुक ट्रस्ट की तरफ से भी प्रकाशित हो रही है।

उपरोक्त कन्नड़ साहित्य हिन्दी में पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुए हैं इसके अलावा अन्य निबंध या प्रबंध अलग-अलग पत्रिकाओं में विभिन्न अनुवादकों द्वारा हिन्दी में अनूदित हुए हैं जो निम्न है।

एन. प्रहलादराव के *'मधुरऋतु'* का तथा सभी प्रबंधों का अनुवाद भालचंद्र जयशेट्टी ने किया है।

उत्तर भारत की पत्रिकाओं में *'भारतीपुर'* उपन्यास हिन्दी के लोगों के लिए प्रकाशित हुआ। पूर्णचंद्र तेजस्वी, अनंतमूर्ति, श्रीकृष्ण आलनहळ्ळी, सिद्धलिंग पट्टणशेट्टी, इनके कहानियों को हा.मा. नायक, एच.एस.के, और रामराव के प्रबंधों को भालचंद्र जयशेट्टी और तिप्पेस्वामी ने हिन्दी में अनुवाद करके हिन्दी भाषी लोगों में कन्नड़ साहित्य के लोगों को परिचित कराया। इससे स्पष्ट है कि हिन्दी के प्रचार-प्रसार में कर्नाटक के विद्वानों ने अपना योगदान किया है।

इसके अलावा हिन्दी की अनेक पत्रिकाओं में कन्नड़ की कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं मगर संग्रह के रूप में प्रकाशित होने के कारण यह कहना बहुत कठिन है कि

कन्नड़ से हिन्दी में कितने अनुवाद हुए हैं। आगे कुछ महान सन्तों एवं प्रसिद्ध लेखकों के बारे में जानकारी देते हुए साथ-साथ उनके वचनों एवं कृतियों की अनूदित रचनाओं की चर्चा किया गया है।

बसवेश्वर : एक परिचय

महाकवि, लिंगायत (वीरशैव) धर्म के प्रचारक, प्रसिद्ध समाज सुधारक, श्रेष्ठ वचनकार, सत्य, धर्म, न्याय के पुजारी, मृदुभाषी, सहृदयी, जन हितैषी बसवेश्वर का जन्म सन् ११२८ में बीजापुर जिले के बागेवाडी नामक गाँव में हुआ था। धार्मिक विषयों के प्रति इनकी विशेष रुचि थी। इन्होंने प्रचलित परंपराओं एवं प्रथाओं का विरोध कर अपनी एक नयी विचार दृष्टि लोगों के समक्ष रखी।

गृह त्याग कर जब वे कूडलसंगम आये तब उनका संपर्क यहाँ जातवेद मुनि से हुआ और उनके विचारों से प्रभावित होकर वे पथप्रदर्शक बने। करीब बारह साल का समय उन्होंने कूडलसंगम में व्यतीत किया। यहाँ रहकर उन्होंने वेद ,दर्शन, धर्मशास्त्र, पुराण, आदि का अध्ययन किया।

बलदेव की मृत्यु के बाद बिज्जल ने जो कि चालुक्य वंश नरेश था बसवेश्वर को मंत्री के पद पर नियुक्त किया और बाद में अपनी राजधानी मंगलवेडा से हटाकर कल्याण में स्थापित किया। यहीं पर बसवेश्वर ने अपने आदर्शों, विचारों को कार्यान्वित करने की दृष्टि से 'अनुभव मंडप' की स्थापना की।

बसवेश्वर के विचार

बसवेश्वर का विचार था कि वंश, वर्ण, लिंग, जाति, धन के आधार पर ऊँच-नीच के भेद-भाव को मिटाकर सारी मानव जाति एक आपस में मिलजुलकर रहे। उन्होंने धर्म के द्वार सभी के लिए खोल दिये। उन्होंने समान भाव का अनुभव कर सभी को अपनी उन्नति स्वयं करने का प्रकाश मार्ग दिखलाया। यह उनकी धार्मिक क्रांति थी।

उनका कहना था कि- "खान-पान में कुल को न देखो, सदाचार को देखो"। जो समाज छुआछूत, शूद्रता, स्त्रीत्व जैसे अभिशापों में जकड़ा हुआ था और मृतप्राय बना हुआ था उन्हें अपने विचारों से जगाकर अपनी शरण में लिया। यह उनकी विस्मयकारी सामाजिक क्रांति थी। अपने विचारों के कारण बसवेश्वर लोकप्रिय होते जा रहे थे। सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्रों में उनके द्वारा किये गये सुधार क्रांतिकारी थे।

बसवेश्वर ने जाति की रीढ़ तोड़कर एक ज्यात्यातीत राष्ट्र का निर्माण किया। और उस नये राष्ट्र को धर्म व्यवहार योग्य बना दिया।

इतिहास गवाह है कि जब-जब समाज में ऐसे क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं तब-तब समाज के कुछ संकीर्ण विचारधारा वाले लोगों ने इस परिवर्तन के खिलाफ प्रदर्शन किया, उसका घोर विरोध किया। बसवेश्वर ने जब एक निम्न जाति के लड़के का विवाह एक ब्राह्मण जाति की लड़की से कराया तब कुछ लोगों द्वारा इसका विरोध किया गया, बसवेश्वर के समझाने पर भी जब वे नहीं माने तब बसवेश्वर कल्याण को छोड़कर कूडलसंगम आये और अन्त में उन्होंने यहीं संगम में समाधि ली।

बसवेश्वर के वचनों की अनूदित सूची

क्र.सं.	शीर्षक	अनुवादक	वर्ष	अनूदित वचनों की संख्या
१.	बसवेश्वर के चुने हुए वचन	एम. राजेश्वरय्या	१९५२	२२८
२.	महात्मा बसवेश्वर	पी.एन. भट्टतिरि	१९६२	१९-२०
३.	बसव वचनामृत	उमापति शास्त्री	१९६७	१०८
४.	महात्मा बसवेश्वर के वचन एवं एस.आर. भूसनूरमठ	आर.सी. भूसनूरमठ, १९७०	 २००	
५.	भक्ति-भण्डारी बसवेश्वर के वचन-I गायत्री वर्मा	एस. रामचंद्र, के. षणमुखय्या एवं –	१९७६ –	३९३
६.	भक्ति भण्डारी बसवेश्वर के वचन-II	"	१९७७	–
७.	बसवदर्शन	टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	–	–
८.	एकोत्तर शत वचन	राम अधार सिंह	१९८८	२६
९.	वचन	भालचंद्र जयशेट्टी	१९९८	६०
१०.	महात्मा बसवेश्वर के वचन	ए.वी. श्रीनिवास मूनि एवं एम.सी. शिवानंद शर्मा	–	–
११.	बसवेश्वर और उनका वचन साहित्य	सरोजिनी महिषि	–	–
१२.	विश्वमानव बसवेश्वर	डॉ. भगवानदास तिवारी	२००१	५०१
१३.	बसवेश्वर के चुने हुए १०८ वचन	डॉ. टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	१९७३	७०
१४.	शरणों के चुने हुए वचन	टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	२००५	१०५

अक्कमहादेवी

कर्नाटक के वीरशैव संतों के इतिहास में शिवयोगिनी अक्कमहादेवी का नाम बड़े सम्मान एवं आदर के साथ लिया जाता है। महिला विमोचनकारी आंदोलन की आरंभकर्त्ता के रूप में इन्हें जाना जाता है। माना जाता है कि इनका जन्म उड़ुतडी ग्राम में हुआ था। इनका विवाह उड़ुतडी के जैन शासक कौशिक से कुछ शर्तों के आधार पर हुआ था किन्तु शर्तों का उल्लंघन होने पर अक्कमहादेवी विवाह बंधन एवं वस्त्रांबर से मुक्त होकर कल्याण के लिए निकल पड़ीं। वहाँ पहुँचकर प्रभु की शरण में आने के लिए इन्हें कई परीक्षाओं से गुजरना पड़ा। अन्त में 'अनुभव मंटप' में इनका आदर-सत्कार के साथ स्वागत किया गया। बसवेश्वर के आँखों की पुतली, चिक्कय्या प्रिय सिद्धलिंग की बहन एवं चन्नमल्लिकार्जुन की अर्धांगिनी महादेवी अपनी साधना में लग गयीं। 'श्रीशैल', 'त्रिकूट', 'कदली' शब्दों के प्रति इनका विशेष आकर्षण था, अतः इस आकर्षण के कारण वह कल्याण से श्रीशैल की ओर चल दी और अपने प्रियतम मल्लिकार्जुन के विराट रूप में समा गईं।

इनकी चार रचनाएँ उपलब्ध हैं:-

(i) अक्क महादेवी के वचन
(ii) योगरंग त्रिविधि
(iii) सृष्टिय वचन (सृष्टि के वचन)
(iv) अक्कगळ पीठिके (अक्का की पीठिका)

"*कर्नाटक कवि चरित्रे*" में नरसिंहाचार्य ने अक्कामहादेवी के वचनों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है।

कुल वचन संख्या	–	४१०
षट्स्थल वचन	–	३४०
सृष्टि के वचन	–	०१
योगांग त्रिविधि	–	६९

अक्कमहादेवी के हिन्दी में अनूदित वचन

क्र.सं.	शीर्षक	अनुवादक	वर्ष	अनूदित वचनों की संख्या
१.	अक्क महादेवी के वचन	गौ.म. उमापति शास्त्री	१९६४	६३

२.अक्क महादेवी के वचन	के. मुद्दण्णा	१९८७	–
३.अक्क महादेवी के वचन	नंदिनी गुंडुराव	१९८७	३३१
४.एकोत्तर शत वचन	राम अधार सिंह	१९८८	२७
५.वचन भालचंद्र जयशेट्टी	१९९८	४९	
६.वचन सौरभ	सुलोचनादेवी आराध्य	१९८८	३४०
७.अक्क महादेवी	भालचंद्र जयशेट्टी	१९९६	–
८.शिवयोगिनी अक्कमहादेवी	भगवानदास तिवारी	२००३	३६१
९.अक्कमहादेवी के चुने हुए १०८ वचन	शकुंतला आर. भूसनूरमठ	२००५	१०८
१०.शरणों के चुने हुए वचन	टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	२००५	१९

अल्लमप्रभु

बसवेश्वर के समकालीन शरणों में इनका नाम आदर के साथ लिया जाता है। इनका जन्म वर्तमान शिमोगा जिले के शिकारीपुर तहसील के अन्तर्गत बळ्ळिगाँवि नामक ग्राम में हुआ था। पत्नी कामलता की अकाल मृत्यु के कारण इन्हें जीवन से विरक्ति हो गयी और सब कुछ त्यागकर यह गुरु की खोज में निकल पड़े। इनका परिचय अनिमिषदेव जी से हुआ और गुफा में ध्यान समाधि में बैंठे अनिमिषदेव की हथेली पर शिवलिंग को देखकर उसे अनुग्रह मानकर अल्लमप्रभु ने अपनी हथेली पर ले लिया। जगह-जगह यात्रा कर इन्होंने कई विषयों का ज्ञान हसिल किया। जब वे वापस कल्याण लौटे तो 'अनुभव मंटप' के 'शून्य-सिंहासन' पर इनको बैठाया गया। इनके मार्गदर्शन में शरणों ने आध्यात्मिक एवं सामाजिक चिंतन-मनन किया। लोगों को भ्रम की स्थिति से निकालकर उन्हें सत्य का मार्ग दिखाना, भटके हए लोगों को सही मार्ग पर लाने का कार्य अल्लमप्रभु ने बखूबी निभाया। अपने जीवन की अन्तिम यात्रा में वे श्रीशैल के शिखर प्रांत में गुफा में समाधि में लीन रहे और वहीं उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया। कहा जाता है कि नयी विचारधारा को अपनाना तो दूर उसे सहन करने की परिपक्वता समाज में नहीं थी इस तथ्य से उन्होंने शरणों को पहले ही आगाह कर दिया था। इनकी प्रमुख रचनाएँ थी- (i) *षट्स्थल ज्ञान चरित्रे* (ii) *शून्य संपादने* (iii) *मंत्रगोप्य* (iv) *सृष्टिवचन* (v) *बेडगिन वचनगळु* (vi) *कालज्ञानद वचन* आदि।

अल्लमप्रभु के अनूदित वचन

क्र.सं.	शीर्षक	अनुवादक	वर्ष	अनूदित वचनों की संख्या
१.	श्री प्रभुदेव वचनामृत	शिवकुमार देव	१९६०	
२.	शून्य संपादन-१	गायत्री वर्मा	१९७८	
३.	शून्य संपादन-२	गायत्री वर्मा	१९८२	
४.	एकोत्तर शतक	राम अधार सिंह	१९८८	२७
५.	वचन	भालचंद्र जयशेट्टी	१९९८	३८
६.	अल्लमप्रभु के वचन	तिप्पेस्वामी	२००२	१११
७.	शरणों के चुने हुए वचन	डॉ. टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	२००५	३८

जेडर दासिमय्या

जेडर दासिमय्या का समय ११वीं सदी के उत्तरार्द्ध से १२वीं सदी के प्रथम चरण की शुरुआत तक माना जाता है। इनकी जीवनी से संबंधित तथ्य *'बसव पुराण'*, *'चन्नबसव पुराण'*, *'शंकर-दासिमय्या चरित्रे'* आदि किताबों में वर्णित है। इन्हें आदि वचनकार माना गया है और इनके परवर्ती वचनकारों पर इनका प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। इनका जन्म वर्तमान जिला गुलबर्गा तालुक शोरापुर के मुदनूर गाँव में जेडर (जुलहा) जाति में हुआ था। समय की दृष्टि से वे बसवेश्वर के निकटवर्ती और कोंडगळी केशिराज के समकालीन माने जाते हैं।

जेडर दासिमय्या के अनूदित वचन

क्र.सं.	शीर्षक	अनुवादक	वर्ष	अनूदित वचनों की संख्या
१.	जेडर दासिमय्या	भालचंद्र जयशेट्टी	१९७९	१५१
२.	वचन	भालचंद्र जयशेट्टी	१९९८	१३
३.	शरणों के चुने हुए वचन	टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	२००५	१४

तोंटद श्री सिद्धलिंगेश्वर

कर्नाटक में पंद्रहवीं शती के उत्तरार्द्ध और सोलहवीं शती के पूर्वार्द्ध में अद्वितीय शिवयोगी, द्वितीय प्रभुदेव, बसवोत्तर युग के अग्रगण्य वचनकार के रूप में

कीर्तनकार तोंटद श्री सिद्धलिंगेश्वर का नाम प्रमुख है। इन्होंने भी जाति-पाति, ऊँच-नीच का भेद-भाव मिटाकर सबको एक समान भाव से रहने की शिक्षा दी। इन्होंने एडेयूर नामक स्थान में शिवयोग की सजीव समाधि ली। एडेयूर में स्थित सिद्धलिंगेश्वर का यह मंदिर सभी धर्म के अनुयायियों के लिए है। सभी धर्म के लोग श्रद्धा भाव से यहाँ आकर अपनी आत्मा की शुद्धि कर लौटते हैं। सिद्धलिंगेश्वर ने *'षट्स्थल ज्ञानामृत'* नामक ग्रंथ की रचना की। जिसमें ७०१ वचन और ७ वृत्त नामक छंद है। इन्होंने 'महालिंग गुरुशिव सिद्धेश्वर प्रभु' नाम से काव्य रचना की। इनके १०८ वचनों का अनुवाद उमापति शास्त्री ने किया है।

सर्वज्ञ

इनका जन्म धारवाड़ जिले (अब हावेरी जिले) के अबलूर नामक स्थान में हुआ था। मुख्यतः यह गीतकार थे। इनके गीतों को 'त्रिपदि' के नाम से जाना जाता है। जिसका अर्थ होता है 'तीन पदों वाला गीत'। इनके त्रिपदियों में गागर में सागर भरने की क्षमता है। इनके नाम से प्राप्त वचनों की संख्या २००० से भी अधिक है। मगर इनमें से १००० वचन ही इनके होंगे ऐसा माना जाता है। सर्वज्ञ के वचनों में 'कांतासम्मिति भाव' की झलक दिखलायी पड़ती है। कन्नड़ साहित्य में इनका वही स्थान है जो तमिल में तिरुवळ्ळ एवं तेलुगु में वेमन का है। गुलबर्गा के दत्तात्रेय राव सुब्बराव हेरुर ने *'सर्वज्ञ के वचन'* नाम से सर्वज्ञ के १००३ वचनों का अनुवाद किया है। जिसका प्रकाशन १९७२ में हुआ है।

जयदेवीताई लिगाडे

'जयगीत' जयदेवीताई की बहुमुखी जीवन का दर्पण है। इस रचना में उनके जीवन, आध्यात्मिक प्रतिभा का परिचय, भक्तियोग का अनुभाव, जनसेवा और देशप्रेम का दर्शन एक साथ प्राप्त होता है। इसमें वीरशैव संत-शिवशरणों की आध्यात्मिक अनुभूति भी देखने को मिलती है। जयदेवीताई की यह पहली काव्यकृति है। *'जयगीत'* उनके भाव गीतों का संग्रह है। इस रचना के हिन्दी अनुवादक हैं एस. शिवमूर्ति स्वामी।

डी.वी. गुंडप्पा

कन्नड़ साहित्य पत्रकार जगत् एवं सार्वजनिक जीवन में डी.वी. गुडंप्पा का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय एवं लोकप्रिय हैं। उनरख्यात की 'रूबाईयों' का

इन्होंने अनुवाद किया है। इनकी रचनाएँ जो प्रकाशित हो चुकी हैं वे हैं 'मैक बेथ का अनुवाद', *'अंतः पुरगीत'*, *'श्रीराम परीक्षणम्'*, *'राजनीति के विज्ञान'*, *'मंकु तिम्मन कग्ग'*। इनमें *'मंकु तिम्मन कग्ग'* एक दार्शनिक काव्य है। 'कग्ग' का अर्थ कन्नड़ में लंबा-चौड़ा भाषण होता है। 'मंकु तिम्मन कग्ग' का हिन्दी अनुवाद सरोजिनी महिषि ने *'मूढ़ तिम्म का दर्शन'* नाम से किया है। मूढ़ के ९४५ पंक्तियों का हिन्दी अनुवाद हुआ है।

सिद्धय्या पुराणिक

'स्वतंत्र धीर सिद्देश्वर' नाम से पुराणिक ने काव्य रचना की है। *'जलपात'*, *'करुणा श्रावण'*, *'मानस सरोवर'*, *'कल्लोल माले'*, *'मोदलु मानवनागु'*, *'चरग'*, *'हाल्देने'*, *'मरुळ सिद्धन कन्ते'* इनके काव्य संकलन हैं। वचन (गद्य गीत) हैं- *'वचनोद्यान'*, *'वचन नंदन'*, *'वचनाराम'*। इनके अतिरिक्त पुराणिक के ४ नाटक, २ कहानी संग्रह, १ उपन्यास, ७ बाल साहित्य, ८ जीवनियाँ, १२ कृतियों का संपादन, ४ अनूदित कृति तथा अन्य ४ रचनाएँ हैं। *'वचनोद्यान'* नामक इनकी कृति को भारतीय भाषा परिषद द्वारा १९८० में पुरस्कृत किया गया। कन्नड़ के आधुनिक वचनकारों में इनका नाम सम्मान एवं आदर के साथ लिया जाता है। ललितांबा ने इनकी कृति *'वचनोद्यान'* का हिन्दी अनुवाद किया है।

द्वारकानाथ एच. कबाडी

'होन्निन मडिलल्ली' उपन्यास से साहित्य जगत् में प्रवेश कर अंग्रेजी सारस्वत लोक में प्रतिष्ठित, कई अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कारों से विभूषित द्वारकानाथ एच. कबाडी सहृदयी और संवेदनशील व्यक्तित्व के कवि हैं। कन्नड़ एवं अंग्रेजी दोनों भाषाओं में काव्य रचना इन्होंने की है। *'गीत-गंगोत्री'*, *'मिंचिन बुट्टि'*, *'स्वप्न सोपान'*, *'कोलिंमिचिन दारियल्लि'* (कन्नड़), *'लॉम्पस ऑफ होय'*, *'रै ऑन द राविन्स'*, *'सिंफनी ऑफ स्केलिटन'* (अंग्रेजी) इनकी काव्य कृतियाँ हैं। टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी' ने इनकी त्रिपदियों का अनुवाद हिन्दी में *'मुट्ठी भर आकाश'* नाम से किया है।

पी.एस. रामानुजम्

'मिणुक', *'आयन'*, *'बेळकु हरिदंते'*, *'इवरु ई जनरु'*, *'दूकूल'*, *'रुचिर सप्तम'*, *'कावेरिइन्द कडलिनवरेगे'* नामक कृतियों के रचनाकार पी.एस. रामानुजम् कन्नड़ के श्रेष्ठ कवि, कथाकार, निबंधकार, नाटककार, संस्मरणकार, आलोचक संशोधक

एवं संगीतकारों में से एक हैं। (टी.आर. भट्ट ने इनकी जिस कविताओं का अनुवाद किया है वे हैं– *'कावेरी से सागर तक,* नदी के साथ बहते।)

बी. चिन्नस्वामी

हिन्दी साहित्य में धूमिल का जो स्थान है वही कन्नड़ साहित्य में चिन्नस्वामी का है। (*'अंगार की चोटी पर'* नामक शीर्षक से इनकी कविताओं का हिन्दी अनुवाद धरणेंद्र कुरकुरी ने किया है।) इतना ही इस कविता में दलित वर्ग की पीड़ी को अक्षरबद्ध करने का प्रयास किया है।

आज की कन्नड़ कविताएँ

'आज की कन्नड़ कविताएँ' नामक शीर्षक कविता में कुछ प्रमुख कवियों की रचनाएँ संग्रहित हैं जिनमें प्रमुख हैं– चेन्नवीर कणवी, जी.एस. शिवरुद्रप्पा, के.एस. निसार अहमद, यू.आर. अनंतमूर्ति, चंद्रेशेखर कंबार, चंद्रेशेखर पाटील, पी.एस. रामानुजम्, धरणेंद्र कुरकुरी, बी.आर लक्ष्मणराव आदि। ये काव्य संग्रह 'केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय' द्वारा पुरस्कृत है। *'आज की कन्नड़ कविताएँ'* के अनुवादक एवं संपादक धरणेंद्र कुरकुरी हैं।

कुवेंपु एवं उनकी कृति *'श्री रामायण दर्शनम्'*

कन्नड़ साहित्य में वर्डसवर्थ के नाम से जाने वाले कवि कुवेंपु को कई साहित्यिक सम्मान प्राप्त हो चुके हैं साथ ही इन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार से भी सम्मानित किया जा चुका है। इनका पूरा नाम के.वी. पुट्टप्पा है। कुवेंपु की कृतियों में सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान *'श्री रामायण दर्शनम्'* का है। यह इनकी श्रेष्ठ रचना है। *'श्री रामायण दर्शनम्'* के लिए कुवेंपु को केंद्रीय साहित्य अकादमी का पुरस्कार, 'भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार' और कर्नाटक सरकार के द्वारा संस्थापित 'पंप पुरस्कार' प्रदान किया गया है। *'श्री रामायण दर्शनम्'* का हिन्दी अनुवाद प्रधान गुरुदत्त ने किया है। इसके लिए गुरुदत्त को भी 'केंद्रीय हिन्दी निदेशालय' ने सम्मानित कर पुरस्कार प्रदान किया है। इस कृति में पारंपरिक विचारधारा के साथ, समकालीन विचारों एवं मनोधर्म के मेल को दर्शाया गया है। साथ ही नये दर्शन को भी आत्मसात किया गया है।

मूल *'श्री रामायण दर्शनम्'* ८८५ पन्नों का है। इसे ४ खंडों में विभाजित किया गया है। इसका अनुवाद प्रधान गुरुदत्त के अतिरिक्त डॉ. सरोजिनी महिषि ने *'पुर्वरंग'* नाम से किया है।

बेन्द्रे और उनकी रचना *'नाकु तंति'*

दत्तात्रेय रामचंद्र बेंद्रे जिनका काव्यनाम 'अंबिकातनय दत्त' है मूलतः धारवाड़ के रहने वाले हैं। कन्नड़ साहित्य को समृद्ध करने की दृष्टि से *'गेळेयर गुम्पु'* (मित्र मंडली) की स्थापना बेन्द्रे जी ने की। गेळेयर गुम्पु की मुख पत्रिका *'जय कर्नाटक'* जो कि मासिक पत्रिका है इसकी कल्पना का श्रेय बेन्द्रे जी को जाता है। इन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। इनकी मुख्य रचना है– *'नाकुतंति'*, इसके अलावा २५ कृतियाँ और हैं। इनकी कविता *नाकुतंति* सभी कविताओं में श्रेष्ठ है। इस कृति को १९७३ में भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्रदान किया गया है। इसका हिन्दी अनुवाद *'चार-तार'* नाम से वी.बी. पुत्रन ने किया है। इसमें ४४ कवितायें हैं और दस सॉनिट हैं।

बेन्द्रे की कुछ कविताओं का हिन्दी अनुवाद एम.एस. कृष्णमूर्ति ने किया है।

वीरप्पा मोयली की रचना– *रामाश्वमेधम्*– का अनुवाद प्रधान गुरुदत्त ने किया है।

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा द्वारा अनूदित *'कवि श्रीमाला'*

सन् १९६१ में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ने अपने स्थापना दिवस के २५ वर्ष पूरे किये। इस रजत-जयंती महोत्सव के उपलक्ष्य में समिति ने सभी भारतीय भाषाओं के जाने-माने कवियों उनकी काव्य का परिचय *'कवि श्रीमाला'* के अंतर्गत गद्यों के अनुवाद सहित प्रकाशित करने की योजना बनाई। इसके अंतर्गत कुवेंपु और बेन्द्रे की कन्नड़ भाषा की कविता को चुनकर उसका हिन्दी अनुवाद एम.एस. कृष्णमूर्ति द्वारा किया गया है। और भी ऐसे अनुवाद कार्य समिति की ओर से चल रहें हैं।[११]

६.८ कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड़ द्वारा अनूदित कृतियाँ

कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड़ में 'श्री बसवेश्वर पीठ' की स्थापना की गयी है। १९७२ में यह पीठ अस्तित्व में आया। इस पीठ के चार विभाग हैं (१) बसवेश्वर अध्ययन डिप्लोमा (२) वीरशैव ग्रंथालय (३) भाषामाला तथा (४) ग्रंथ प्रकाशन। इस पीठ से अनुवाद योजना के अन्तर्गत प्राचीन ग्रन्थों के अनुवाद के साथ-साथ आधुनिक ग्रन्थों के अनुवाद पर भी ध्यान दिया जा रहा है। अब तक इस पीठ से हिन्दी की निम्न कृतियाँ अनूदित हुई हैं– (i) *भक्ति भंडारी बसवेश्वर के वचन* (ii) *अक्क महादेवी* (iii) *शून्य संपादन* – दो भागों में (iv) *अक्क महादेवी के वचन*।

शून्य संपादन

वीरशैव मत में 'शून्य' अन्तिम और आदि स्थिति का द्योतक है। इसे उपनिषद् में वर्णित 'ओं पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णस्य पुर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते' पूर्ण का पर्याय कहा जा सकता है।[१२]

बौद्ध दर्शन एवं वीरशैव धर्म में शून्य भिन्न रूपों में व्यक्त है। वीरशैव धर्म में संसार को सत्य माना गया है। जबकि बौद्ध दर्शन में असत्य, वीरशैव मत के अनुसार आत्मा ही षट्स्थलों से गुजरती हुई परमात्मा में लीन हो जाती है अर्थात् आत्मा-परमात्मा एक है। भक्त एवं साधक का चरम लक्ष्य इसी अवस्था अर्थात् शून्य की प्राप्ति है। जिस पुस्तक में इस शून्य की प्राप्ति के संबंध में विचारों का संपादन किया गया है उसका नाम ही *शून्य संपादन* है।[१३]

कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड़ के कन्नड़ विभाग द्वारा १९५८ में *शून्य संपादन* का प्रकाशन किया गया। इसको संपादित किया एम.बी. कोट्रशेट्टी ने एवं इसका अनुवाद किया गायत्री वर्मा ने। यह दो भागों में प्रकाशित है प्रथम भाग १९७८ तथा द्वितीय भाग १९८२ में। प्रथम भाग में अल्लमप्रभु, मुक्तायक्का और सिद्धराम सन्तों का परिचय एवं उनके वचनों को संग्रहित किया गया है, द्वितीय भाग में बसवेश्वर, चेन्नबसवण्ण, प्रभुदेव और मरुळशंकरदेव के व्यक्तित्व एवं दार्शनिक विचारों की विवेचना है।

६.९ मैसूर विश्वविद्यालय द्वारा अनूदित कृतियाँ

मैसूर विश्वविद्यालय के प्रकाशन विभाग 'प्रसारांग' की तरफ से कई कृतियों का प्रकाशन कार्य किया जा रहा है। *'आधुनिक कन्नड़ काव्य'* का प्रकाशन मैसूर विश्वविद्यालय ने उत्तर प्रदेश सरकार के आर्थिक सहयोग से संपन्न किया है। इसमें बीस प्रमुख हस्ताक्षरों के ४३ कविताओं के हिन्दी अनुवाद संकलित हैं। मैसूर विश्वविद्यालय की तरफ से २००५ में कन्नड़ कहानियों का हिन्दी अनुवाद भी प्रकाशित किया गया है।

६.१० केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा अनूदित कृतियाँ

केन्द्रीय हिन्दी निदेसालय द्वारा 'भारतीय कवयित्रियाँ' (भाग-II) नाम से पुस्तक का प्रकाशन किया गया है। यह निदेशालय की 'साहित्यमाला' योजना का एक सार्थक प्रयास है। इसमें भारतीय कन्नड़ कवयित्रियों की रचनाओं का हिन्दी

अनुवाद प्रस्तुत है। इन कवियित्रियों की रचनाओं की अनूदित पुस्तकों की सूची यहाँ प्रस्तुत है।

क्र.सं.	कवियित्रियों के नाम	अनुवादक	कविता का शीर्षक
१.	एच.एस. मुक्तायक्का	टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	याद है ?
२.	कमला हम्मिगे	टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	इसकी ख़बर है
३.	च. सर्वमंगला	तिप्पेस्वामी	देवी का पहाड़
४.	प्रतिभा नंदकुमार	तिप्पेस्वामी	रंगोली
५.	बी.टी. ललिता नायक	टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	वेदावती नदी में डूब मरी वेश्या
६.	मालती पट्टणशेट्टी	तिप्पेस्वामी	मै स्वयं बनूँगी प्रकाश
७.	विजया दब्बे	टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	पास की ज़िदंगी
८.	शशिकला वीरय्यास्वामी	तिप्पेस्वामी	गुड़ और पत्थर
९.	शैलजा ब. उडचण	टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	हिस्सेदार
१०.	सुकन्या मारुति	तिप्पेस्वामी	अहल्या

६.११ साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित अनूदित साहित्य

भारतीय कविता– १९५६–५७

यह कृति साहित्य अकादमी, नई दिल्ली से प्रकाशित है। भारतीय कविताओं का चयन कन्नड़ के संदर्भ में वी. सीतारामय्या ने किया है। इन कविताओं का अनुवाद ना. नागप्पा ने किया है। 'साहित्य अकादमी का लक्ष्य है सभी भारतीय भाषाओं को विकसित कर उसमें पारस्परिक सहयोग की भावना को प्रोत्साहित करना। हम जितना ही अधिक दूसरी भाषाओं को समझेंगे, जानेंगे उतना ही अधिक अपनी भाषा का मर्म समझ सकेंगे। १९५३ की भारतीय कविता काव्य संग्रह में बेंद्रे, कुवेंपु, गोपाल कृष्ण अडिग, चन्नवीर कणवी, जयदेवीताई लिगाडे, के.एस. नरसिंहस्वामी, जी.एस. शिवरुद्रप्पा, बी.एच. श्रीधर, आर–एस मुगळि, वी.के गोकाक की रचनाओं को स्थान दिया गया है, इनके अनुवादक हिरण्मय है।

१९५४–५५ की भारतीय कविता काव्य संग्रह में बेंद्रे, कुवेंपु, चन्नवीर कणवि, जयदेवी ताई लिगाडे, के. नरसिंह मूर्ति, के.एस. नरसिंहस्वामी, पु.ति. नरसिंहचार्य, रामचंद्र शर्मा, वी.के. गोकाक की रचनाओं की संग्रहित किया गया है। बी.आर. नारायण इन कविताओं के अनुवादक है।

१९५८-५९ में गोपाल कृष्ण अडिग, एम. गोविंद पै., के.एस. नरसिंहस्वामी, कुवेंपु, गंगाधर चित्ताल, चन्नवीर कणवी, जी.एस. शिवरुद्रप्पा, बेंद्रे, डी.एस. कर्की, दिनकर देसाई, पु.ति.न., आनंदकंद, वी.जी. भट्ट के काव्य संग्रहों को भारतीय कविता में प्रकाशित किया गया है। सोमशेखर 'सोम' और बी.वी. कारंत ने इन कविताओं का अनुवाद किया है।[१४]

१९८६ में जी.एस. शिवरुद्रप्पा की रचना *'यदि प्रेम न पलातो'* का अनुवाद वी.डी. हेगडे ने किया है।

बी.आर. लक्ष्मणराव की रचना 'स्यमंतक' का अनुवाद तिप्पेस्वामी ने किया है।

१९८८ में वी. मुनिवेंकटप्पा की कृति *'कविता'* का हिन्दी अनुवाद तिप्पेस्वामी ने किया है।

चंद्रशेखर कंबार की रचना *'बाद, गोडसे ने कहा'* का हिन्दी अनुवाद टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी' ने किया है।

"समकालीन भारतीय साहित्य" पत्रिका के ३७वें अंक में १९८७ के जुलाई-सितम्बर माह में अनूदित सूची इस प्रकार है जिसमें कन्नड़ कवियों के हिन्दी में अनुवादित कविताएँ प्रकाशित हैं।

क्र.सं. कवियों के नाम	अनुवादक	कविता हिन्दी अनुवाद का शीर्षक
१.कुवेंपु	बी.आर. नारायण	बहुत हुआ बलात्कार
२.के.वी. तिरुमलेश	मुकुंद जोशी	बरगद का पेड़
३.के.एस. निसार अहमद	टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	बुरका
४.के.एस. नरसिंहस्वामी	कमल नारायण	संध्या राग
५.गोपाल कृष्ण अडिग	टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	बेघर
६.चंद्रेशखर कंबार	अजय कुमार सिंह	मैं और रंगमंच
७.चंद्रेशेखर पाटील	लीला काशीनाथ	हुतात्मा एवं महात्मा
८.चन्नवीर कणवी	काशीनाथ अंबलगे	पीठ के पीछे सूरज है
९.जी.एस. सिद्धलिंगय्या	कमल नारायण	कविता की पंक्ति
१०.जी.एस. शिवरुद्रप्पा	काशिनाथ अंबलगे	चक्रगति
११.जयंत कैकिणी	मुकुंद जोशी	नाटक

१२.प्रतिभा नंदकुमार	मुकुंद जोशी	हम लड़कियाँ ही ऐसी...
१३.बी.आर. लक्ष्मणराव	मुकुंद जोशी	दो सवाल
१४.बरगूर रामचंद्रप्पा	कमल नारायण	इतिहास
१५.रमजान दर्गा	काशीनाथ अंबलगे	घोषणा पत्र
१६.रामचंद्र शर्मा	कमल नारायण	चीन की एक प्राचीन कथा
१७.वेंकटेशमूर्ति	मुकुंद जोशी	एक ही दोपहर
१८.शिवप्रकाश	मुकुंद जोशी	याद
१९.सिद्धलिंगय्या	कमल नारायण	हजारों नदियाँ

१९८९ में *समकालीन भारतीय साहित्य पत्रिका* के ३८वें अंक में अक्टूबर-दिसंबर माह में अनूदित सूची:-

क्र.सं.	कवि का नाम	अनुवादक	शीर्षक
१.	चंद्रशेखर कंबार	टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी'	पेड-एक तट पर दूसरा पानी में
२.	बी. आर. लक्ष्मण राव	एन. श्रीनाथ	घसनी, मैं, चिड़िया, रहस्य, कराटा, घड़ी, आतंक

२००४ में समकालीन भारतीय साहित्य पत्रिका में सितंबर-अक्टूबर माह में अनूदित पुस्तकों की सूची:-

क्र.सं.	कवि का नाम	अनुवादक	कविता का शीर्षक
१.	गोपाल कृष्ण अडिग	अजय कुमार सिंह	कुछ न कुछ करते रहो भाई
२.	चंद्रशेखर कंबार	अजय कुमार सिंह	मैं और रंगमंच
३.	प्रतिभा नंदकुमार	मुकुंद जोशी	हम लड़कियाँ ही ऐसी
४.	के.वी. तिरुमलेश	मुकुंद जोशी	सौ लोग

युग स्पंदन

२००२ का यह विशेषांक अक्टूबर-दिसंबर माह का समकालीन कन्नड़ कविता विशेषांक है। भ.प्र. निदारिया इसके संपादक हैं। तिप्पेस्वामी, काशीनाथ अंबलगे, टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी', बी.वी. ललितांबा तथा मंगल देसाई द्वारा अनूदित कविताओं को संग्रहीत किया गया है। इस कृति में नये पुराने ७६ कवियों की कविताओं का अनुवाद किया गया है।

६.१२ कर्नाटक के साहित्यकारों द्वारा रचित हिन्दी मौलिक साहित्य

गाँधीजी के हिन्दी प्रचार-प्रसार आंदोलन के तहत कर्नाटक के कई लोगों ने हिन्दी सीखी। हिन्दी सीखकर हिन्दी भाषा में मौलिक रचनाएँ भी कई विद्वानों ने की। मातृभाषा हिन्दी न होने के बावजूद हिन्दी में मौलिक रचनाएँ कर हिन्दी भाषा साहित्य, संस्कृति से लोगों का परिचय कराकर, हिन्दी के प्रयोग-प्रसार को बढ़ावा देने का प्रयास सरगु कृष्णमूर्ति, विष्णु हेब्बार जैसे कवियों ने कर्नाटक के मौलिक नाटककार जी.जे. हरिजीत और कर्नाटक के मौलिक उपन्यासकार एम.एस. कृष्णमूर्ति के अतिरिक्त गुरुनाथ जोशी आदि विद्वानों ने किया है। यहाँ इनके द्वारा रचित हिन्दी की मौलिक कृतियों की जानकारी दी जा रही है।

६.१२. १. हिन्दी में लिखे गये मौलिक काव्य

श्रीकृष्ण गाँधी चरित

कर्नाटक के बेल्लारी नगर के रहने वाले डॉ. सरगु कृष्णमूर्ति ने हिन्दी में *'श्रीकृष्ण गाँधी चरित'* नामक महाकाव्य की रचना की। यह इनकी मौलिक रचना है। यह दो अर्थवाला महाकाव्य है। इस महाकाव्य में आरंभ से लेकर अंत तक दो कहानियाँ साथ-साथ चलती हैं। एक कहानी श्रीकृष्ण की और दूसरी गाँधीजी की, इस महाकाव्य की शैली सरल और सुबोध है। छन्दों और अलंकारों का प्रयोग कृषणमूर्ति ने इस काव्य में बड़ी सुंदरता और सफलता के साथ किया है। इनकी यह कृति हिन्दी की मौलिक सफल कृति है।

पन्ना

सरगु कृष्णमूर्ति द्वारा रचित *'पन्ना'* एक खण्डकाव्य है। *'श्रीकृष्ण गाँधी चरित'* के जैसे *'पन्ना'* भी एक सफल रचना है। यह काव्य ग्यारह भागों में विभक्त है। ममता और त्याग की प्रतिमूर्ति पन्ना के चरित्र को कृष्णमूर्ति जी ने बड़े ही प्रभाव ढंग से उजागर किया है। इस काव्य में भी कृष्णमूर्ति जी ने रस, अलंकार, छंद का बड़ी सूझ-बूझ के साथ सफल प्रयोग किया है।

अग्निपथ

साहित्य जगत् में 'मेघमित्र' नाम से प्रसिद्ध कवि पी.वी. वज्रमट्टी कन्नड़ एवं हिन्दी दोनों भाषाओं में साहित्य रचना करते हैं। वज्रमट्टी द्वारा रचित *'अग्निपथ'* काव्य

एक मुक्तक काव्य है। यह चार खण्डों में विभक्त है। (१) मेरी कविता (२) चुनौती (३) प्रतिगामी शक्तियाँ (४) निर्णय। इस काव्य में कवि ने समाज के उस शोषित वर्ग का किसान मजदूर, गरीब, करुण चित्र खींचा है जो सदियों से पूँजीपतियों, राजनेताओं ज़मीनदारों द्वारा शोषित होता आ रहा है। कवि की यह कविता अच्छी बन पड़ी है किन्तु कहीं-कहीं भाषा का प्रयोग उचित न होने के कारण कुछ भाषागत त्रुटियाँ काव्य में दिखाई पड़ती है।

विराटनगर

'विराटनगर' एक खण्डकाव्य है। बापुगौड़ा पाटील की यह कृति *महाभारत* की एक प्रसिद्ध घटना पर आधारित है। इसमें पाण्डवों के अज्ञातवास का वर्णन किया गया है। काव्य की भाषा सरल-सहज है। *'विराटनगर'* काव्य में नारी की मूक पीड़ा को वाणी देने का सफल प्रयास कवि ने किया है।

आवाज

बापुगौड़ा पाटील की कुल ७७ कविताओं का संग्रह है *'आवाज'*। इस काव्य संग्रह में जीवन से जुडी अनेक सच्चाईयाँ, असमानताओं, समाज में व्याप्त कुरीतियों, बुराईयों, सुख-दुःख, अमीर-गरीब, सच-झूठ के साथ-साथ प्रकृति के मनोहारी दृश्यों का वर्णन कवि ने किया है। भाषा सरल होने के कारण सहज ही पाठकों के समझ में आती है तथापि भाषागत त्रुटि इस काव्य संग्रह में देखने को मिलती है।

काव्य-बाला

कन्नड़ मातृभाषी टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी' कवि होने के साथ-साथ एक अनुवादक और निबन्धकार भी है। प्रेमी कृति *'काव्य-बाला'* एक कविता संग्रह है। इस काव्य संग्रह में जीवन, देशभक्ति, सुन्दरता, प्रेम, चिंता आदि कई विषयों को लेकर कविताएँ की गई हैं। रस-अलंकार, छंद का प्रेमी ने बखूबी प्रयोग किया है।

अज्ञातवासी

'अज्ञातवासी' विष्णु हेब्बार की प्रथम काव्य रचना है। इस कविता संग्रह में ३३ कविताएँ हैं। यह कृति कवि की अपनी स्वयं की अनुभूतियों का चित्रण है। अनुभूतियों के साथ-साथ कवि के संवेदनशील हृदय की झलक इस काव्य संग्रह में देखने को मिलती है। विष्णु हेब्बार ने भाव-भाषा, शिल्प आदि का प्रयोग अच्छे ढंग से किया है जिससे उनकी यह रचना अच्छी बन पड़ी है।

टुटते पत्तों के बीच

विष्णु हेब्बार ने अपने काव्य संग्रह *'टुटते पत्तों के बीच'* में कुछ नये कवियों की रचनाओं को संकलित कर संपादित किया है। तमिल भाषी बी. नारायणन्, हेमलता राजन्, नंदकुमार, मलयालम् भाषी, जयलक्ष्मी, पंजाबी भाषी, सुखबीर, गुजराती भाषी दक्षिणा पटेल के अलावा कन्नड़ भाषी विष्णु हेब्बार, गीताराव और शरेश्चन्द्र चुलकीमठ की रचनाओं का यह काव्य संग्रह है।

काँटे उगते हैं

'टुटते पत्तों के बीच' की तरह ही *'काँटे उगते हैं'* काव्य संग्रह में दस कवियों की कविताओं को विष्णु हेब्बार ने संग्रहित कर संपादित किया। विष्णु हेब्बार के इस काव्य संग्रह में हेमलता राजन, दक्षिणा पटेल, नंदकुमार, गीताराव, नागलक्ष्मी, रमारानी, वसन्ता, जयलक्ष्मी कलैवाणन और स्वयं हेब्बार की कविताएँ हैं।

आधुनिक युग में बदला हुआ मनुष्य का रूप, उसकी मजबूरियाँ, अधूरी इच्छाएँ, शहर की व्यस्त ज़िंदगी प्रकृति आदि का वर्णन इस काव्य संग्रह की कविताओं में देखने को मिलता है।

शैल और सागर

अप्पासाहेब सनदी और सिद्धलिंग पट्टणशेट्टी का काव्य संग्रह *'शैल और सागर'* दो भागों में है। पहले भाग का शीर्षक है *'लहर एक'* और दूसरे भाग का शीर्षक है *'लहर दो'*। *'लहर एक'* भाग में कवि सनदी की कविताओं का संकलन हैं जिनमें अधिकांश कविताएँ उनके विद्यार्थी जीवन के समय की हैं। इनकी कविताओं की भाषा स्पष्ट एवं सरल है।

वहीं दूसरी तरफ *'लहर दो'* में सिद्धलिंग पट्टणशेट्टी की २३ कविताएँ संग्रहित हैं। इनके कवि जीवन के प्रारंभिक कविताओं पर प्रसाद एवं बच्चन की कविताओं का प्रभाव है। भाषा संबंधी कुछ दोष होने के बावजूद भी पट्टणशेट्टी की कविताओं में एक अच्छे कवि के दर्शन होते हैं।

६.१२.२. हिन्दी में लिखे गये मौलिक नाटक

कर्नाटक में काव्य रचना की तरह हिन्दी में भी नाटक के क्षेत्र में अपनी लेखनी द्वारा लेखकों ने अपनी प्रतिभा को उजागर किया है। यूँ तो हिन्दी में भी कई मौलिक नाटकों की रचना हुई है परन्तु इधर-उधर बिखरे होने के कारण, उनका एक

स्थान पर संग्रह न होने के कारण या अप्रकाशित होने के कारण उन सभी की चर्चा यहाँ संभव नहीं है अतः जो रचनाएँ उपलब्ध हैं उनकी चर्चा यहाँ की जा रही है।

नाटक के क्षेत्र में जी.जे. हरिजीत का नाम उल्लेखनीय है। अब तक उनके ८ नाटक प्रकाशित हो चुके हैं और दो-तीन नाटकों को पुरस्कार प्रदान कर सम्मानित भी किया गया है। इनके ८ नाटकों में ६ नाटक हैं और दो एकांकी संग्रह हैं। संक्षेप में इनका वर्णन किया जा रहा है।

एक और विक्रमोर्वशीय

जी.जे. हरिजीत की नाट्य रचना है *'एक और विक्रमोर्वशीय'*। शिक्षा के क्षेत्र में व्याप्त अनैतिकता, गुटबाजी, महिलाओं पर होने वाले अत्याचार, शोषण अधिकारियों की मनमानी, अध्यापकों की लापरवाही भ्रष्ट राजनीति आदि की सच्ची तस्वीर पेश करने वाला हरिजीत का यह नाटक संवाद, भाषा कथानक, पत्रादि सभी दृष्टि से सफल बन पड़ा है। साहित्य कला परिषद, दिल्ली द्वारा इस नाटक को श्रेष्ठ मानकर तृतीय पुरस्कार प्रदान किया गया है।

हुमायूँ

हरिजीत द्वारा रचित दूसरा नाटक है *'हुमायूँ'*। यह एक ऐतिहासिक नाटक है। यह नाटक तीन अंकों में बँटा है। हुमायूँ को राखी भेजना, हुमायूँ का बहन कर्मवती की रक्षा करने के लिए आना, हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष एवं एकता को समेटे यह नाटक नाटककार की प्रतिभा को उजागर करती है।

संभवामि युगे-युगे

नाटककार हरिजीत का यह नाटक राजनीतिक जीवन का सामाजिक जीवन पर प्रभाव और उसके दुष्प्रभावों से नागरिक को सचेत करने की दिशा में एक सार्थक प्रयास है। नाटक में पात्रों का चुनाव *महाभारत* से किया गया है लेकिन घटनाएँ और कथोपकथन को आज के सामयिक परिवेश से जोड़कर दर्शाया गया है। संवाद संक्षिप्त होने के साथ-साथ रोचक है। भाषा सरल एवं सीधी है तथा उसमें सहज़ प्रवाह है।

उत्तर मृच्छकटिक (एक और मिट्टी की गाड़ी)

उत्तर मृच्छकटिक हरिजीत द्वारा रचित एक ऐतिहासिक नाटक है। मृच्छकटिकम् "मिट्टी की गाड़ी" नाम से कई हिन्दी अनुवाद हो चुके हैं अतः नाटककार हरिजीत ने

अपने नाटक का उपशीर्षक एक और मिट्टी की गाड़ी रखा है। नाटक के पात्र संस्कृत नाटक "मृच्छकटिकम्" से लिए गये हैं। नाटक में परिवेश अतीत का ही है पर कहानी स्वतंत्रता और उसके बाद की परिस्थितियों पर ठीक बैठती है। नाटक में पन्द्रह दृश्य है नाटक के संवाद सरल और बोलचाल की भाषा में है।

महाराज नंदकुमार

इस नाटक की कहानी ईस्ट इंडिया कंपनी के गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स द्वारा महाराज नंदकुमार पर झूठे आरोप लगाकर मृत्युदंड से संबंधित है। सिर्फ एक घटना को लेकर पूरे नाटक की रचना करने का उद्देश्य नाटककार को नहीं था अपितु इस पूरे नाटक को रचने का कारण सत्य और न्याय के पक्ष और विपक्ष के द्वन्द्व को प्रस्तुत करना था। संवाद की दृष्टि से नाटक अच्छा बन पड़ा है। संवाद छोटे एवं रोचक हैं। अभिनय की दृष्टि से हरिजीत का यह नाटक उत्तम कहा जा सकता है।

एक नाटक : मूक नाटक

हरिजीत की इस कृति में दो नाटक हैं, पहले नाटक का शीर्षक 'रेल सत्याग्रह' है और दूसरा नाटक एक मूक नाटक है जिसका शीर्षक है 'खामोश एमर्जेन्सी जारी है'। हिन्दी नाटक जगत में यह नाटक एक नया प्रयोग है। दोनों ही नाटक राजकीय व्यंग्य हैं और छोटे भी हैं। दोनों ही नाटकों की भाषा सरल एवं बोलचाल की भाषा है। संवाद अच्छे बन पड़े हैं। विषय और प्रयोग की दृष्टि से हरिजीत का यह नाटक उल्लेखनीय है।

रंगायन

हरिजीत द्वारा रचित *"रंगायन"* छः एकांकियों का संग्रह है जिसमें हिम-मानव रचना एक रेडियो फैंटसी है। *'रंगायन'* हरिजीत का प्रथम प्रकाशित संग्रह है। इस संग्रह के सभी एकांकी में नाटककार हरिजीत की प्रतिभा निखर कर सामने आयी है। इस एकांकी संग्रह की एक रचना 'सांझ के भूले' को हरियाणा सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया है। भाषा, कथावस्तु, संवाद, पात्रादि सभी दृष्टि से हरिजीत का यह संग्रह सफल कहा जा सकता है।

खरगोश की नौकरी

यह भी पाँच एकांकियों का एक संग्रह है। यह एकांकी संग्रह सोवियत गणतंत्र के विभिन्न प्रदेशों की लोक कथाओं पर आधारित है। हरिजीत के इस एकांकी संग्रह

में प्रधान वस्तु संवाद है। भाषा शैली संक्षिप्त और स्वाभाविक है। अभिनय की दृष्टि से सभी एकांकी सफल हैं।

आगे का रास्ता

मा.भ. पेर्ला द्वारा रचित *'आगे का रास्ता'* एक एकांकी संग्रह है। इसमें लेखक ने सामाजिक जीवन में घटने वाली घटनाओं, समस्याओं को बड़ी बारीकियों से दर्शाने का प्रयास किया है। जिसमें वह सफल भी हुआ है। पात्र, भाषा, संवाद, रंगमंच की दृष्टि से यह एकांकी सफल है।

६.१२.३. हिन्दी में लिखे गये मौलिक उपन्यास

मौलिक उपन्यास के क्षेत्र में एम.एस. कृष्णमूर्ति का नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय है। इनका काव्य नाम 'इंदिरेश' है। इन्होंने कुछ ऐतिहासिक और सामाजिक उपन्यासों की रचना की है जिसका वर्णन यहाँ किया जा रहा है।

अपराजित

इंदिरेश द्वारा रचित प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास *'अपराजित'* है। इतिहास के आलोक में भारत के हिन्दू राजाओं पर हुए अत्याचारों और आक्रमणों को एक महागाथा के रूप में इस उपन्यास में दिखाया गया है। इस उपन्यास को भारत सरकार ने पुरस्कृत किया है।

राग कानड़ा

यह भी एक ऐतिहासिक उपन्यास है। इंदिरेश ने 'छिताई चरित' को आधार बनाकर इस उपन्यास की रचना की है। लेकिन इस उपन्यास का आधार छिताई चरित का होने पर भी इसे उपन्यासकार ने अपने दृष्टिकोण से ही रचा है।

ज्योतिकलश

इंदिरेश के *'ज्योतिकलश'* उपन्यास को *'अपराजित'* उपन्यास की अगली कड़ी के रूप में देखा जा सकता है। *अपराजित* उपन्यास की बहुत सी घटनाओं का पुनः उल्लेख *ज्योतिकलश* उपन्यास में किया गया है।

उपुर्यक्त तीनों ऐतिहासिक उपन्यासों में संवाद बोलचाल की भाषा में हैं तथा सरल एवं सहज ही सबके समझ में आने वाले हैं।

परशुराम की बहनें

इंदिरेश द्वारा रचित *'परशुराम की बहनें'* एक सामाजिक उपन्यास है जो १९७६ में लिखा गया। सामाजिक यथार्थ के कटुसत्य के आलोक में देवदासी प्रथा की गंभीर समस्याओं को मनोवैज्ञानिक रूपसे चित्रित किया गया है। उपन्यास की भाषा सरल है, वाक्य रचना भी छोटी है। प्रस्तुत उपन्यास में कर्नाटक में प्रचलित देवदासी परंपरा को प्रमुख रूप से उजागर किया गया है। साथ ही वेश्या समस्या, आर्थिक समस्या एवं अन्तर्जातीय विवाह समस्या के द्वारा उत्पन्न उसके दुष्परिणामों को भी इस उपन्यास के माध्यम से लेखक ने बताने की एक सफल कोशिश की है।

६.१२.४ हिन्दी में लिखे गये मौलिक आलोचनाएँ

मोहन राकेश का साहित्य : समग्र मूल्यांकन

यह एक आलोचनात्मक कृति है। शरेश्चन्द्र चुलकीमठ की इस कृति में मोहन राकेश के जीवन और व्यक्तित्व के साथ-साथ उनकी रचना के विविध आयाम जैसे कहानियाँ, उपन्यास, नाटक आदि सभी विधाओं को उजागर करने का प्रयत्न करते हुए उनकी आलोचना भी की गई है।

मोहन राकेश की कहानियाँ : नयी कहानी के संदर्भ में

एक कहानीकार या उपन्यासकार के रूप में जितनी चर्चा मोहन राकेश की नहीं हुई उतनी नाटककार के रूप में उनकी चर्चा की जाती रही है। इस बात को ध्यान में रखकर चुलकीमठ ने अपनी इस कृति में मोहन राकेश की कहानियों का न केवल विश्लेषण भर ही किया है अपितु उनकी रचना प्रक्रिया के संदर्भ में उनकी कई कहानियों के एक साथ रखकर संकेतात्मक रूप से उनकी मुख्य विशेषताओं को आलोचनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत किया है।

कर्नाटक संस्कृति

कर्नाटक राज्य की संस्कृति एवं उसके विविध रूपों, प्राचीन काल से लेकर अब तक की सारी गतिविधियों, साहित्य के क्षेत्र में उपयोगी एवं मूल्यवान वस्तुओं, विश्व में प्रचलित सभी धर्मों की चर्चा यहाँ संक्षिप्त रूप से प्रस्तुत पुस्तक *'कर्नाटक संस्कृति'* में शरेश्चन्द्र चुलकीमठ ने की है। चुलकीमठ की इस रचना को १९७३-७४ में केन्द्र सरकार की तरफ से प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ है।

अंधेर नगरी : एक अनुशीलन

'अंधेर नगरी : एक अनुशीलन' नंदिनी गुंडुराव की सफल मौलिक कृति कही जा सकती है। इस अनुशीलन में प्रहसन, अंधेर नगरी की प्रेरणा, कथानक, वस्तुविवेचन, पात्र, चरित्रचित्रण, संवाद, भाषाशैली, वातावरण, उद्देश्य, गीत, देशकाल आदि सभी विषयों का विवरण देते हुए एक अनुशीलन प्रस्तुत किया गया है। साथ ही कृति के आरंभ में भारतेंदु हरिश्चंद्र के जन्म, परिवार, शिक्षा, संस्थाओं की स्थापना, जीवन आदि का विस्तृत उल्लेख भी 'नंदिनी गुंडुराव ने किया है। भारतेंदु के नाटक 'अंधेर नगरी' का अनुशीलन कर उसे आलोचनात्मक रूप में प्रस्तुत कर लेखिका ने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। इस अनुशीलन के निष्कर्ष में अनेक आलोचकों की आलोचनाएँ *अंधेर नगरी* के संदर्भ में रखी गयी हैं।

६.१२.५. हिन्दी में लिखे गये मौलिक जीवनियाँ

श्री शारदा देवी

प्रस्तुत कृति के लेखक एस. रामचन्द्र हैं। सदियों से स्त्री-पुरुष के संबंध को लेकर चर्चाएँ की जाती रही हैं और आज भी स्त्री-पुरुष का संबंध चर्चा का विषय बना हुआ है। वास्तव में स्त्री और पुरुष एक-दूसरे के पूरक हैं, एक के बिना दूसरे के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती है और जब इन दोनों के संबंध में अनुराग, विश्वास, स्नेह, वासना रहित प्रेम आदि का भाव समाहित होता है तब एक स्वच्छ समाज का निर्माण होता है। प्रस्तुत कृति में साध्वी स्त्री शारदा देवी के वासना रहित प्रेम, वात्सल्य, सेवा-भाव, करुणा, कर्त्तव्य आदि के भाव को लेखक ने बड़े ही भावपूर्ण दृष्टि से रेखांकित करते हुए उनके जीवन से संबंधित तथ्यों की इस कृति में उजागर किया है। आत्मीय भाव, अतिरंजना, परित्याग, सहृदयता आदि सभी दृष्टि से एस. रामचन्द्र की यह रचना उत्तम कही जा सकती है।

आलूर वेंकटराव

गुरुनाथ जोशी की मौलिक कृति *'आलूर वेंकटराव'* में वेंकटराव के जीवन के समस्त घटनाओं से लेकर शिक्षा, दीक्षा, उनके समाज सेवा के विभिन्न पहलुओं को दर्शाया गया है।

श्रेष्ठ जीवनियाँ

श्रेष्ठ जीवनियाँ पुस्तक नौ महापुरुषों के व्यक्तित्व उनके आदर्शों से सजी कृति है जिसके लेखक टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी' एवं टी.एस. राजगोपाल हैं। इस कृति में

रानी चेन्नम्मा, भारतरत्न मोक्षगुंडम् विश्वेश्वरय्या, केंपेगौड़ा, भारतरत्न चन्द्रशेखर वेंकटरामन, स्वामी विवेकानन्द, गोस्वामी तुलसीदास, सरोज़िनी नायडू, इंदिरा गांधी और राजेन्द्र प्रसाद इन सभी के व्यक्तित्व एवं आदर्शों को बड़े ही सुंदर ढंग से दोनों लेखकों ने चित्रित किया है।

बुआजी

बुआजी मूलत: रेखाचित्रों का एक संग्रह है, इसकी रचना नागप्पा ने की है। बुआजी, इंदिरा, माली, कालैया, मैसूर आदि रेखाचित्रों में नागप्पा ने अपनी अनुभूति को शब्दों के माध्यम से प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है।[१५]

६.१३ हिन्दी से कन्नड़ में अनूदित रचनाएँ

६.१३.१ उपन्यास के क्षेत्र में

पंचाक्षरी हिरेमठ ने हिन्दी से कन्नड़ में जिन उपन्यासों का अनुवाद किया है वे इस प्रकार हैं– *'नारी'* (सियाराम शरण गुप्त के हिन्दी उपन्यास *'नारी'* का कन्नड़ अनुवाद), *'मग्ग चल्लिद बेळ्कु'* (रांगेय राघव के हिन्दी उपन्यास *'लोई का ताना'* का कन्नड़ अनुवाद), *'दरोडेगारन मग'* (हरिकृष्ण देवसरे के हिन्दी उपन्यास *'डाकु को बेटा'* का कन्नड़ अनुवाद), *'सुरखाबद गरीगळु'* (हरिकृष्ण देवसरे के हिन्दी उपन्यास का कन्नड़ अनुवाद), *'कत्तलेयोंदिगे'* (इब्राहीम शरीफ के हिन्दी उपन्यास का कन्नड़ अनुवाद)।

हजारी प्रसाद द्विवेदी की रचना *'बाणभट्ट की आत्मकथा'* को कन्नड़ में कृष्णमूर्ति ने अनुवाद किया जो साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित की गई है।

६.१३.२ नाटक के क्षेत्र में

सियाराम शरण गुप्त द्वारा 'रचित नाटक *'चन्द्रगुप्त'* का अनुवाद आद्य रंगाचार्य ने कन्नड़ में अनुवाद किया है। यह ग्रन्थ शारदा मंदिर मैसूर द्वारा प्रकाशित है।

धर्मवीर भारती और मोहन राकेश के बहुत से नाटकों का कन्नड़ अनुवाद सिद्धलिंग पट्टणशेट्टी ने किया है।

६.१३.३ काव्य के क्षेत्र में

पंचाक्षरी हिरेमठ ने काव्य के क्षेत्र में जिन रचनाओं का हिन्दी से कन्नड़ में अनुवाद किया है वे इस प्रकार हैं– *'मित्र देशद कवितेगळु'* (१९८८ में पूरे दक्षिण

भारत में सोवियत लैंड नेहरु अवार्ड प्राप्त एक मात्र रचना), *'बयल बानिनल्लि'* (हिन्दी से अनूदित मुक्तक संग्रह), *'ओंदु मत्तु ओंदु-एरडु'* (हिन्दी से अनूदित काव्य संग्रह), *'इंद्रधनुस्सु'* (हिन्दी से अनूदित काव्य संग्रह), *'आशे तुंबिद् उसिरुगळु'* (हिन्दी से अनूदित काव्य संग्रह) क्रांतिकारी कविमुनि रुपचंद्र की कविता *'खुले आकाश में'* और *'भूमा'* का कन्नड़ अनुवाद पंचाक्षरी हिरेमठ ने किया है।

६.१४ कर्नाटक के साहित्यकारों द्वारा हिन्दी में अनूदित कुछ अन्य साहित्य

काव्य

अरविन्द नाडकर्णी की कविताओं के संग्रह का अनुवाद *'आत्मभारत'* नाम से भालचन्द्र जयशेट्टी ने किया है।

कन्नड़ की कुछ कविताओं का अनुवाद *'आज की कन्नड़ कविताएँ'* नाम से तथा *'अंगार की चोटी पर'* नाम से धरणेंद्र कुरकुरी ने किया है। टी.आर. भट्ट ने पी.एस. रामानुजम् की कन्नड़ कविताओं का हिन्दी अनुवाद *'नदी के साथ बहते'* और *'कावेरी से सागर तक'* नाम से किया है।

उपन्यास

धरणेंद्र कुरकुरी ने *'पर्यटन'*, *'अंत'*, *'चामुंडराय वैभव'*, *'ओंनमो'* नामक हिन्दी शीर्षक, से कन्नड़ उपन्यासों का हिन्दी में अनुवाद किया है।

नाटक

'कठपुतली का विद्रोह' नाम से कन्नड़ नाटक का हिन्दी अनुवाद धरणेंद्र कुरकुरी ने किया है।

कथा संग्रह

भालचन्द्र जयशेट्टी ने कुछ कन्नड़ की कहानियों का हिन्दी अनुवाद भी किया, जिसका शीर्षक है– *'कन्नड़ की प्रतिनिधि कहानियाँ'*, *'कर्नाटक की महिलाओं की कहानियाँ'*, *खद्दर की साड़ी'* ।

कन्नड़ की कहानियों की हिन्दी अनुवाद धरणेंद्र कुरकुरी ने *'पत्थर पिघलने की घड़ी'* और *'जुर्माना'* नाम से किया है।

जीवनी तथा अन्य

'जेडर दासिमय्या के वचन', सिद्धय्या पुराणिक की रचना *'अक्क महादेवी'*, श्रीकृष्ण आलनहल्ली की रचना का हिन्दी अनुवाद *'दुःख भरा राग'* नाम से बी.वी. वैकुंठराजु की रचना का हिन्दी अनुवाद *'उद्भव'* नाम से, वीणा शान्तेश्वर की रचना का हिन्दी अनुवाद *'मर्दमाने'* और *'मोड़'* नाम से, एस.एल. भैरप्पा की रचना का हिन्दी अनुवाद *'छोर'* और *'जिज्ञासा'* नाम से भालचन्द्र जयशेट्टी ने किया है।

वी.के. गोकाक की कन्नड़ पुस्तक पर आलोचनात्मक हिन्दी अनुवाद *'सौंदर्य मीमांसा'* नाम से टी.आर. भट्ट ने किया है। शिवराम हेगड़े की आत्मकथा का हिन्दी में *'स्मृतियों की रंगभूमि'* नाम से टी.आर. भट्ट ने अनुवाद किया है।

निबंध

हा.मा. नायक की कन्नड़ पुस्तक का हिन्दी अनुवाद *'चिन्तन-चषक'* नाम से भालचन्द्र जयशेट्टी ने किया है। यह एक ललित निबंध है। एन. प्रहलादराव की भी कन्नड़ पुस्तक का हिन्दी अनुवाद *'मधुव्रत'* नाम से इन्होंने ही किया है।

के.वी. सुब्बण्णा की कन्नड़ पुस्तक *'रंगभूमि मत्तु समुदाय'* का हिन्दी अनुवाद *'रंगभूमि और जन समाज'* नाम से टी.आर. भट्ट ने किया है। यह एक आलोचनात्मक निबंध है।

६.१५ कर्नाटक के साहित्यकारों द्वारा रचित कुछ अन्य मौलिक हिन्दी रचनाएँ

काव्य

भालचन्द्र जयशेट्टी ने एक मौलिक हिन्दी हास्य व्यंग्य की कविता रची है जिसका शीर्षक हैं– *'फूहड़बाज़ी'* । यह कृति अभी प्रकाशित होनी है।

कहानी या कथा संग्रह

'यल्लम्मा का भोग' एवं *'गिरनार के खण्डहर'* यह दोनों भालचन्द्र जयशेट्टी की स्वतंत्र मौलिक हिन्दी रचनाएँ हैं।

जीवनी तथा अन्य

'विभूतियाँ' भालचन्द्र जयशेट्टी की मौलिक हिन्दी रचना है। इस कृति को १९८५ में गुलबर्गा विश्व विश्वद्यालय द्वारा पुरस्कृत किया गया है। साथ ही भालचंद्र

जयशेट्टी ने पण्डित शिवचन्द्रजी पर एक मौलिक जीवनी भी लिखी है– जिसका शीर्षक है– *'पण्डित शिवचन्द्र जी : जीवनी'*। इस कृति का प्रकाशन अभी नहीं हुआ है। कन्नड़ की कहानियों को *'कन्नड़ की श्रेष्ठ कहानियाँ'* नाम से तिप्पेस्वामी ने सम्पादित किया है।

६.१६ कुछ अन्य साहित्यकारों की अनूदित रचनाएँ

६.१६.१ हिन्दी से कन्नड़ में

एम.एस. कृष्णमूर्ति

'मीरा–पदावली', *'मृगनयनी'*, *'जय सोमनाथ'*, *'सूरज का सातवाँ घोड़ा'*, *'मेघदूत एक पुरानी कहानी'*, *'आत्माराम का पोथा'*, *'कोमल गांधार'* (नाटक), *'रामचरितमानस का गद्यानुवाद'*, *'विनय–पत्रिका'* (काव्यानुवाद)' *'कबीर–पदावली'* (काव्यानुवाद), *'सूर–पदावली'* (काव्यानुवाद), *'बिहारी–सतसई'* (काव्यानुवाद), *'चिदंबरा संचयन'*, इन सब ग्रन्थों का कन्नड़ में अनुवाद एम.एस. कृष्णमूर्ति ने किया है।

एच.वी. रामचन्द्रराव

एच.वी. रामचन्द्रराव ने हिन्दी के कुछ ग्रन्थों का कन्नड़ में अनुवाद किया है जो इस प्रकार हैं– तुलसीदास की कृति *'रामचरितमानस'* के *'सुन्दरकाण्ड'* का कन्नड़ अनुवाद, कबीर की ८०९ साखियों का *'कबीर रचनावली'* नाम से कन्नड़ अनुवाद, *'सत्याग्रह मत्तु इतर कथेगलु'* नाम से प्रेमचन्द्र की कहानियों का कन्नड़ अनुवाद तथा *'यशपाल'* का कन्नड़ अनुवाद (इस कृति को साहित्य अकादमी ने प्रकाशित किया है)।

एम. के भारतीरमणाचार्य

'श्री रामचरितमानस' के दस संपुटों का कन्नड़ में अनुवाद एम.के. भारतीरमणाचार्य ने किया है।

काशीनाथ अम्बलगे

रामधारी सिंह दिनकर की कहानियों का कन्नड़ में अनुवाद काशीनाथ अम्बलगे ने किया है।

प्रधान गुरुदत्त

प्रधान गुरुदत्त ने नगेन्द्र के हिन्दी कृति *'रस–सिन्द्धान्त'* का तथा उनके निबन्धों का *'नगेन्द्र श्रेष्ठ प्रबन्धगलु'* नाम से कन्नड़ में अनुवाद किया है, साथ ही आर.डी.

सिन्हा एवं दिनकर की कृति *'लोकदेव नेहरु'*, एन.सी. ज़मींदार की हिन्दी रचना को कन्नड़ में *'मत्ते हरिदलु शिप्रा'* नाम से, आचार्य विद्यानन्द की हिन्दी कृति को *'मोहनजोदड़ो : जैन परंपरे मत्तु शाष्यगलु'* नाम से मदनलाल मधु रचित रचना को *'गोर्की मत्तु प्रेमचंद : एरडु अमर प्रतिभेगलु'* शीर्षक से, मदन गोपाल की रचना *'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र'* का यशपाल की अनेक कृतियों जैसे– *'दिव्या'*, *'अमीता'*, *'दादा कामरेड'*, *'गीता : पार्टी कामरेड'*, *'देशद्रोही'* आदि को कन्नड़ में अनूदित किया है।

६.१६.२ कन्नड़ से हिन्दी में

सी. सदाशिवय्या

बसवण्णा के जीवन इतिहास को *'विश्वगुरु बसवण्णा'* शीर्षक से तथा बसवण्णा से ही संबंधित एक संक्षिप्त परिचय *'विश्वविभूति बसवण्णा'* नाम से सी. सदाशिवय्या ने हिन्दी में अनुवाद किया है। इसके अतिरिक्त आक्कमहादेवी के पुनीत जीवन पर आधारित बृहत सृजनात्मक कन्नड़ उपन्यास का हिन्दी में *'तरंगिणी शरणी'* नाम से तथा आध्यात्म पर आधारित सृजनात्मक सामाजिक कन्नड़ उपन्यास *'हेप्पिट्ट–हालु'* का हिन्दी में *'जामन दूध'* नाम से सी. सदाशिवय्या ने किया है। एक और इनके द्वारा हिन्दी में अनूदित सौ कहानियों का संग्रह है *'दृष्यंत सरसी'* ।

एच. वी. रामचन्द्रराव

कन्नड़ के आंचलिक उपन्यास का हिन्दी में अनुवाद *'ग्रामायण'* नाम से तथा देवुडु नरसिंह शास्त्री के कन्नड़ उपन्यास का हिन्दी अनुवाद *'महाब्राह्मण'* नाम से एच.वी. रामचन्द्रराव ने किया है।

इस अध्याय में मौलिक एवं अनूदित साहित्य द्वारा कर्नाटक में किस तरह हिन्दी का प्रचार–प्रसार हुआ इसकी विस्तार से चर्चा की गई है।

अंत में यह निश्चित तौर पर कह सकते हैं कि कर्नाटक में हिन्दी का प्रयोग और प्रसार का कार्य अन्य अहिन्दी भाषी राज्यों के मुकाबले में बहुत अच्छी तरह से हो रहा है। लेकिन इसमें और सुधार की जरूरत है।

संदर्भ ग्रन्थ

१. भारती हिरेमठ : *कन्नड़ से हिन्दी में अनूदित काव्य : एक अनुशीलन* (यू.जी.सी. माइनर रिसर्च प्रोजेक्ट) २००५, पृ. २

२. "If one denies the concept of translation, one must give up the concept of language community."
३. Samuel Johnson : *A Dictionary of English Language*
४. Peter Newmark, P.I. : *Approaches to Translation*
५. तिप्पेस्वामी : *नागवल्ली*, पृ. २१०-२११
६. प्रभाशंकरः *भारतीय भाषाओं में बसव साहित्य*, पृ. २३
७. भारती हिरेमठ : *कन्नड़ से हिन्दी में अनूदित काव्य ; एक अनुशीलन*।
८. वही, पृ. २८
९. वही, पृ. ३०-३१
१०. वही, पृ. ३२-३३
११. वही.
१२. एम.बी. कोट्रशेट्टी (संपा) : *शून्य संपादन*, प्रस्तावना, पृ. ३
१३. वही.
१४. तिप्पेस्वामी : *नागवल्ली*, पृ. २१२-२१३
१५. एस.टी. मेरवाड़े : *कर्नाटक में हिन्दी लेखन*, पृ. २३-१४८



अध्याय ७

उपसंहार

जिस प्रकार मनुष्य अपने भावों और विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए किसी एक विशिष्ट भाषा का प्रयोग करता है, उसी प्रकार एक राष्ट्र भी अपने सरकारी काम-काज संपन्न करने के लिए भाषा के एक विशिष्ट रूप से ग्रहण करता है। भाषा का यही विशिष्ट रूप 'राजभाषा' के नाम से जाना जाता है। भारत में समय-समय पर भिन्न-भिन्न राजभाषाओं का प्रयोग हुआ है। मुगलकाल में राजभाषा के रूप में फ़ारसी का प्रयोग प्रचलित था, तो अंग्रेजों के शासनकाल में अंग्रेजी को यह सम्मान प्राप्त हुआ। वस्तुतः सदियों से भारतवासियों को एकता के सूत्र में बाँधने का कार्य हिन्दी भाषा ने ही किया है। आरंभ में हिन्दी केवल बोलचाल की भाषा थी, किन्तु समन्वयवादी एवं लोकव्यापक प्रकृति के फलस्वरूप इसके अनेक रूप प्रचलित हो गये। आज हिन्दी का प्रयोग साहित्यिक रूप में, पत्रिकारिता के रूप में, खेल-कूद की भाषा के रूप में तथा कार्यालयी भाषा के रूप में हो रहा है। स्वतन्त्रता के पश्चात् हिन्दी का एक अन्य रूप विकसित हुआ, जिसका प्रयोग न्यूनाधिक रूप से सरकारी कार्यालयों में होने लगा।

७ जून १९५५ को राजभाषा आयोग का गठन हुआ। इसमें हिन्दी को संघ की राजभाषा घोषित किया गया। संविधान द्वारा हिन्दी को राजभाषा का दर्जा देने के बावजूद कुछ अंग्रेज़ी समर्थकों के ज़िद के कारण हिन्दी के प्रयोग में कुछ रूकावटें उत्पन्न हुयीं, किन्तु काफ़ी वाद-विवादों से गुजर कर हिन्दी राजभाषा के सिंहासन पर स्थापित हो गई। सरकारी कार्यालयों में अधिक से अधिक हिन्दी को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने समितियों की स्थापना की। इनमें केन्द्रीय हिन्दी समिति प्रधानमन्त्री की अध्यक्षता में काम करती है। इस समिति का उद्देश्य भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों द्वारा हिन्दी के विकास और भारत सरकार के संबंध में चालू कार्यक्रमों में समन्वय स्थापित करना है। प्रत्येक मंत्रालय में संबंधित मंत्रियों की अध्यक्षता में

सलाहकार समितियाँ गठित की गयी है। इसी प्रकार अन्य अनेक मंत्रालयों, विभागों, निगमों एवं कार्यालयों में राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की भी स्थापना की गई है। इस दिशा में मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा उठाये गये कदम विशेष उल्लेखनीय हैं। हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार के लिए इस मंत्रालय ने अनेक महत्त्वपूर्ण योजनाएँ बनायी हैं, जिनमें हिन्दी शिक्षण, स्वैच्छिक हिन्दी संगठन, हिन्दी माध्यम में परीक्षाओं को मान्यता, संगोष्ठियों एवं पुस्तक प्रदर्शिनियों का आयोजन, हिन्दी पुस्तकों का निःशुल्क वितरण, हिन्दी प्रचार के लिए राज्य सरकारों को वित्तीय सहायता, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग की स्थापना तथा पत्राचार पाठ्यक्रम के माध्यम से हिन्दी की शिक्षा देने पर विशेष बल दिया गया है। ये सभी योजनाएँ अंग्रेज़ी की प्रभुता को समाप्त कर हिन्दी के उत्तरोत्तर प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए प्रयत्नशील हैं।

गाँधीजी ने कहा था कि 'राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना देश की एकता और उन्नति के लिए आवश्यक है।' गाँधीजी ने तो अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में हिन्दी के प्रचार–प्रसार को भी रखा था। किसी भी भाषा का विकास उसको व्यवहार में लाने से होता है। व्यवहार में लाने का काम आम जनता करती है। यदि हिन्दी को सच्चे अर्थों में राजभाषा बनाना है, उसे जीवित भाषा बने रहने देना है, उसे 'बहता हुआ नीर' बनाना है, तो हमें इस भाषा को कृत्रिमता से मुक्त करना होगा। हिन्दी को अखिल भारतीय स्वरूप देने के लिए इसमें अन्य भारतीय भाषाओं के शब्द लिये जाने चाहिए। यह एक व्यावहारिक आवश्यकता है। अन्य भाषाओं के संपर्क में आने से भाषा समृद्ध होती है। इसमें भाषा का स्वरूप बनता है तथा उसमें वह ताकत पैदा होती है कि वह ज़्यादा से ज़्यादा लोगों की ज़बान पर चढ़ सके।

गाँधीजी ने राष्ट्रभाषा के महत्त्व को गहराई से समझा था। उनके लिए तो राष्ट्रभाषा का प्रश्न स्वराज के प्रश्न से जुड़ा हुआ था। वह हिन्दी को सत्याग्रह और सत्य से जोड़कर देखते थे। बम्बई में १९१८ में हिन्दी सम्मेलन की प्रारंभिक बैठक में उन्होंने कहा था, 'सत्य की लड़ाई के लिए सत्याग्रह ज़रूरी है। यदि हममें सत्य के प्रति सम्मान है, तो हमें यह स्वीकार करना होगा कि केवल हिन्दी ही वह भाषा है, जिसका हम राष्ट्रभाषा के रूप में उपयोग कर सकते हैं।'

हिन्दी देश की सर्व स्वीकृत भाषा है। हिन्दी को राजभाषा का स्थान इसलिए नहीं मिला क्यों कि उसके समर्थक संविधान सभा में अच्छी संख्या में थे और न

हिन्दी इसलिए राजभाषा बनी क्योंकि गाँधीजी जैसे देश के बड़े नेता उसकी पीठ पर थे और यह समझना भी गलत है कि हिन्दी भाषियों की संख्या बहुलता के कारण हिन्दी को संविधान में स्वीकृति मिली। वास्तविकता तो यह है कि हिन्दी हर तरह से समर्थ होने के साथ-साथ देश के अधिकांश भाग में प्रचलित होने या समझे जाने के कारण राजभाषा बनी। हिन्दी में अनेक विशेषताएँ हैं। एक प्रमुख विशेषता तो यह है कि हिन्दी सभी भारतीय भाषाओं की अपेक्षा सीखने में सरल है और उसमें शब्द निर्माण की भी बड़ी सुविधा है। हिन्दी में हमारी सांस्कृतिक आकांक्षाओं और भावात्मक अभिवृत्तियों की अभिव्यक्ति की पूर्ण क्षमता है साथ ही इसका साहित्य भी उत्कृष्ट एवं विशाल है। राजकाज के योग्य बनाने के लिए सरकारी स्तर पर भी हिन्दी को विकसित करने का प्रयास किया गया है तथा हिन्दी को प्रयोग एवं व्यवहार में लाकर इसे सरकारी आदेशों, निर्देशों, नियमों आदि की अभिव्यक्ति का साधन बनाने में पूर्ण सफलता मिल चुकी है। सरकारी फाईलों पर हिन्दी में लिखा जा रहा है। जनता से हिन्दी में प्राप्त होने वाले सभी पत्रों का उत्तर नियमतः हिन्दी में ही दिया जाता है। हिन्दी राज्यों तथा उन राज्यों को जिन्होंने केन्द्र सरकार के साथ हिन्दी में पत्राचार करना स्वीकार कर लिया है, उन्हें सभी मूल पत्रादि हिन्दी में भेजे जाने का नियम है। सामान्य आदेश, अधिसूचनाएँ, संकल्प, प्रेस विज्ञप्तियाँ, संविदाएँ करार संसद के समक्ष प्रस्तुत किये जाने वाले कागज़ात तथा गज़ट में प्रकाशित होने वाली सामग्री आदि सभी अंग्रेज़ी के साथ-साथ हिन्दी में भी जारी की जाती है। अंग्रेज़ी से हिन्दी में रूपांतरण करने के लिए प्रत्येक मंत्रालय विभाग एवं कार्यालय में हिन्दी अनुभाग होता है, जिसमें आवश्यकतानुसार हिन्दी अनुवादक एवं अधिकारी रखे जाते हैं।

हिन्दी को हमारे संविधान में राजभाषा का दर्जा दिया गया है। संविधान के ३४३वें अनुच्छेद में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि संघ की राजभाषा हिन्दी एवं लिपि देवनागरी होगी। भारत एक बहुभाषी देश होने के साथ-साथ विभिन्न संस्कृतियों, रीति-रिवाज़ों और धार्मिक मान्यताओं का देश सदा से ही रहा है। इसलिए इस देश की केन्द्रीय भाषा में इस देश की मूलभूत विशेषताएँ भी प्रतिबिंबित होनी चाहिए। हमारे संविधान के अनुच्छेद ३५१ में इन बातों को ध्यान में रखते हुये हिन्दी भाषा के विकास के लिए स्पष्ट निर्देश दिये गये हैं कि- "संघ का यह कर्त्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रचार बढ़ाये, उसका विकास करें, जिससे वह भारत की सामासिक

संस्कृति के सभी तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किये बिना हिन्दुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक या वांछनीय हो वहाँ उसके शब्द भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।"

हिन्दी का विकास अब भारत तक ही सीमित नहीं है। विश्व के कई देशों में हिन्दी का प्रचार और प्रसार बहुत तेज़ी से हो रहा है। विदेशों में हिन्दी के बढ़ते कदम को देखकर हमें आश्चर्य होता है कि फिलहाल विदेशों के १४० से ज़्यादा विश्वविद्यालयों में हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन एवं अनुसंधान की व्यवस्था है। इसके अलावा कितने ही विद्यालय तथा अन्य निजी संस्थाएँ हैं, जहाँ हिन्दी सीखने एवं सिखाने की व्यवस्था की गई है। मॉरीशस, सूरीनाम, त्रिनिदाद-टुबेगो जैसे अप्रवासी भारतीय मूल के लोगों के देशों तथा भारत के पड़ोसी देशों के अलावा अमेरीका, यूरोप, अफ्रीका, एशिया और ऑस्ट्रेलिया महाद्विपों के अन्तर्गत लगभग ५० देशों के १४० विश्वविद्यालयों में हिन्दी के उच्चस्तरीय अध्ययन एवं शोध कार्य की सुविधा है। यह भी विश्वस्तर पर हिन्दी के विकासात्मक इतिहास का मुख्य चरण है। अब तक हुये सात विश्व हिन्दी सम्मेलनों में से पाँच विश्व हिन्दी सम्मेलन विदेशों में हुआ है। इससे अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि हिन्दी विश्व भर में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान पा चुकी है। लेकिन अभी हिन्दी के प्रचार और प्रसार के कार्य जिस तेज़ी से विश्व भर में होने चाहिए, उतनी तेज़ी से प्रचार का कार्य नहीं हो पा रहा है। इस पर ध्यान देना आवश्यक है। विश्व के कई अन्य देशों में जहाँ हिन्दी भाषियों या भारतवासियों की बड़ी संख्या है, वहाँ लम्बे समय से किसी न किसी स्तर पर हिन्दी को उचित स्थान दिलाने के लिए संघर्ष चल रहा है। उनके संघर्ष के प्रति विश्व हिन्दी समुदाय के द्वारा समर्थन मिलना चाहिए तथा उनकी भावनाओं, साहस एवं धैर्य की प्रशंसा कर उनका आत्मबल बढ़ाना भी हम सबों का कर्त्तव्य बनता है।

आज निश्चय ही हिन्दी का दायित्व अधिक बढ़ गया है, उसे भारत की राष्ट्रभाषा होने के अतिरिक्त एक सशक्त अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में भी विकसित होना है। इस दोहरे दायित्व को अच्छी तरह और समय की गति के साथ तेज़ रफ्तार में ढो सकने की क्षमता हिन्दी की वर्तमान आवश्यकता है। इस आवश्यकता को हमें समझना होगा और हिन्दी को समयानूकूल दायित्व निर्वाह योग्य बनाने में हमें आज से ही

जुट जाना होगा इसके विपरीत यदि ऐसा न किया गया, तो कुछ संभावनाएँ जो दृष्टिगत होती हैं उनका भी उल्लेख कर देना यहाँ उचित जान पड़ता है। वे कुछ संभावनाएँ इस प्रकार हैं–

(१) यदि ऐसा न किया गया तो हिन्दी समय की धारा में पीछे छुटती चली जायेगी।

(२) यदि गंभीरता के साथ इस तरफ न सोचा गया, तो हिन्दी एक भावनात्मक भाषा तो रह जायेगी मगर प्रयोजनात्मक भाषा कभी नहीं बन पायेगी।

(३) हिन्दी की जड़ उसके अपने मूल देश भारत में ही यदि कमज़ोर पड़ गयी तो अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में विकास की जिस तेज़ गति से वह आज आगे बढ़ रही है वह सब बेमानी हो जायेगा।

उपर्युक्त इन सभी दृष्टिकोणों और संभावनाओं पर गंभीरता के साथ विश्व हिन्दी सम्मेलनों में विचार किया जाना चाहिए तथा तदनुरूप ठोस निष्कर्षों के आधार पर हिन्दी का वर्तमान राष्ट्रीय एवं विश्वस्तरीय दायित्व निर्धारण करना अपरिहार्य हो गया है।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधीजी ने दूरदर्शिता के साथ भारत को एक सूत्र में बाँधने के लिए एक अभूतपूर्व तारक मंत्र दिया था, वह यह है कि– "एक राष्ट्रभाषा हिन्दी हो, एक हृदय हो भारत जननी।" उक्त मंत्र को हर भारतीय के हृदय में प्रतिष्ठित करने के लिए सन् १९१८ में पूज्य बापू ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन के इन्दौर अधिवेशन में घोषणा की कि भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा हिन्दी हो और उसका प्रचार दक्षिण में ही पहले होना चाहिए। "१९१८ में इसी शहर में इसी सम्मेलन की छाया में दक्षिण भारत हिन्दी सभा का उद्भव हुआ। सम्मेलन में बोया गया यह बीज आज विशाल वटवृक्ष बनकर दक्षिण के चारों प्रान्तों में फैल गया है। उसी से स्फूर्ति एवं प्रेरणा पाकर केरल हिन्दी प्रचार सभा, हिन्दी प्रचार सभा–हैदराबाद, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति–वर्धा, कर्नाटक प्रान्तीय (पूर्व मैसूर रियासत हिन्दी प्रचार समिति) मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद्, बम्बई हिन्दी विद्यापीठ आदि अनेकों संस्थाएँ स्थापित हुईं और काफ़ी विकसित भी हुई। अपनी पीढ़ी दर पीढ़ी की इन स्वैच्छिक संस्थाओं पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन गर्व कर सकता है। आज भारत में दो पंजीकृत हिन्दी स्वैच्छिक संस्थाएँ हैं, जो अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ से सम्बद्ध है। उनकी परीक्षाओं

को मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के शिक्षा विभाग ने मान्यता दी है। ये संस्थाएँ स्नातक व स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा व प्रशिक्षण देती है।

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा को हिन्दी साहित्य सम्मेलन के समान भारत सरकार के अधिनियम (२१, १९६४) के द्वारा राष्ट्रीय महत्त्व की संस्था घोषित किया गया। इसके फलस्वरूप वह मान्य विश्वविद्यालय के समान एम.ए., एम. फिल तथा पीएच. डी. की उपाधियाँ प्रदान करती है, जिसकी मान्यता देश के सभी विश्वविद्यालयों के द्वारा होती है।

दक्षिण के हिन्दी प्रचार के बारे में सोचते समय खासकर हिन्दीतर भाषी प्रदेश के हिन्दी प्रचार के बारे में सोचते समय स्व. पं. हरिहर शर्मा, देवदूत विद्यार्थी जैसे निःस्वार्थ प्रचारकों का स्मरण होता है। हिन्दी के प्रचार की दिशा में अब जोरों से काम हो रहा है। हिन्दी पढ़ने का विरोध, पढ़ाने का विरोध बहुत कम हो रहा है। तथाकथित हिन्दी विरोधी आज भी हैं। राजनीतिक लाभ से और अन्याय तत्त्वों से विवस होकर राजनीतिक नेताओं को हिन्दी का विरोध करना पड़ता है। परन्तु विडंबना यह है कि तथाकथित हिन्दी विरोधियों की संतानें चुपचाप हिन्दी पढ़ाने में लगी हैं, जो सन् १९६३ व १९६५ के हिन्दी विरोधी आन्दोलन के समय छिप-छिप कर हिन्दी पढ़ते थे, वह अब खुल्लम-खुल्ला पढ़ने लगे हैं। यही नहीं कट्टर से कट्टर हिन्दी विरोधी भी आज जान चुके हैं कि हिन्दी पढ़ना कोई पाप नहीं है, कोई द्रोह नहीं है, कोई विद्रोह नहीं है।

दक्षिण में हिन्दी के प्रचार में अभूतपूर्व काम हुआ। हिन्दी के प्रचार और प्रसार से दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा जैसी स्वैच्छिक संस्थाएँ आजकल पहले से अधिक संतोषजनक स्थिति में हैं। इनका विकास यथेष्ट हो रहा है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा अपने छापखाने को "ऑफसेट" में परिवर्तित करके काफ़ी अच्छा काम कर रही है। पहले हज़ारों की संख्या में पुस्तकें छपती थीं आजकल लाखों में छपती हैं। जब हिन्दी का प्रचार आरंभ हुआ तब हिन्दी के व्यावहारिक पक्ष पर ध्यान दिया जाना चाहिए था। हिन्दी को व्यवहार व संपर्क भाषा के रूप में ही मानकर गाँधीजी ने उसे राष्ट्रभाषा घोषित किया था, परन्तु समय के चलते-चलते हिन्दी के साहित्यिक पक्ष पर ज़ोर डाला गया। फलतः आज साहित्यिक हिन्दी का प्रचार खूब हो गया है। मगर आज उसके प्रयोजन पक्ष पर प्रश्नचिन्ह लगा है। दक्षिण के हिन्दी प्रचार क्षेत्र के अग्रणी एम. सत्यनारायण ने प्रयोजनमूलक हिन्दी के प्रचार की ओर

हमारा ध्यान आकृष्ट किया। विश्वविद्यालय अनुदाय आयोग ने उनके सुझाव को स्वीकार किया, इस कारण हिन्दी पाठ्यक्रम में साहित्यिक अंश को कम करके प्रयोजनमूलकता को मद्देनज़र रखकर आवश्यक संशोधन किया जाना चाहिए।

कुछ स्वैच्छिक संस्थाओं ने हिन्दी प्रचार के क्षेत्र में पर्याप्य विस्तार से काम किया है। आज दक्षिण की स्वैच्छिक संस्थाएँ अपनी साहित्यिक पत्रिकाओं के द्वारा अपने प्रदेश के उत्तम साहित्य को प्रस्तुत करती है, जिसका प्रचार उत्तर में भी होना चाहिए। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के समान हिन्दी प्रदेश की सरकारें इस कार्य में सहायता कर सकती है। आजकल कम्प्यूटर जैसे वैज्ञानिक साधन उपलब्ध हैं। कम्प्यूटर द्वारा प्रशिक्षण की व्यवस्था हो सकती है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा जैसी कुछ संस्थाएँ इस ओर कार्य कर रही हैं। वर्ड प्रोसेसर, स्टाइल बिल्डर आदि अत्याधुनिक साधन व 'साफ्टवेयर' आदि का उपयोग करने के लिए स्वैच्छिक संस्थाओं को सरकारी अनुदान मिलना चाहिए।

दक्षिण में खासकर तमिलनाडु में यह हौआ दिखाया जाता है कि हिन्दी अंग्रेज़ी का स्थान लेगी। अंग्रेज़ी हटेगी तो उसके स्थान पर हिन्दी बैठेगी। इससे गुमराह होकर तमिलनाडु सरकार ने त्रिभाषा नीति से अंग्रेज़ी को ही परोक्षरूप से प्रोत्साहन व राजाश्रेय दिया है। इससे तमिल को ही राजभाषा के रूप में पनपने का अवसर नहीं मिल रहा है। हिन्दी साम्राज्यवाद की भाषा नहीं बनेगी, अंग्रेज़ी के समान भारतीय भाषाओं के विकास में बाधक नहीं बनेगी। उक्त तथ्य को पुष्ट करने के लिए आज हिन्दीतर भाषी प्रदेश की स्वैच्छिक हिन्दी प्रचार संस्थाओं के पाठ्यक्रम में क्षेत्रीय भाषाओं को समान व श्रेष्ठ स्थान दिया गया है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में तमिल, तेलुगु, मल्यालम् व कन्नड़ का अध्ययन अनिवार्य रूप से करना पड़ता है, इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दी अन्य भारतीय भाषाओं की बहन है और उनके विकास में अवश्य योगदान देगी।

हिन्दी के मौलिक लेखन के क्षेत्र में तमिलनाडु पिछड़ा हुआ है इस तरफ ध्यान देना आवश्यक है। आन्ध्र की जनता ने स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। हिन्दी सीखना और सिखाना उस आन्दोलन का अभिन्न अंग बन गया था। गाँधीजी से प्रेरणा लेकर अनेक स्वैच्छिक संस्थाएँ हिन्दी के प्रचार कार्य के लिए स्थापित की गयी। स्वतंत्रता के बाद हिन्दी का प्रचार और प्रसार बहुत तेज़ गति से आन्ध्र प्रदेश में होने लगा। आन्ध्र प्रदेश की जनता को हिन्दी सीखने और सिखाने में कोई कठिनाई

इसलिए नहीं हुई क्योंकि वहाँ पहले से उर्दू भाषा का प्रभाव रहा है। साहित्यिक क्षेत्र में आन्ध्र प्रदेश में हिन्दी का वर्चस्व है। फिर भी केन्द्र सरकार और राज्य सरकार को चाहिए कि हिन्दी के प्रचार और प्रसार के लिए आवश्यक अनुदान स्वैच्छिक संस्थाओं को प्रदान करे।

तमिलनाडु एवं आन्ध्र प्रदेश राज्यों के जैसे ही केरल में बीसवीं सदी में सन् १९२० के बाद तिरुवनंतपुरम् में हिन्दी प्रचार का अध्याय प्रारंभ होता है। जब गाँधीजी दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटे और भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की बागडोर अपने हाथ में ली तब हिन्दी प्रचार सन्देश की लहरें नगर-नगर में फैल गयी। तिरुवनंतपुरम् त्रावणकोर रियासत की राजधानी था। स्वतंत्रता आन्दोलन में नयी पीढ़ी की रुचि सहज थी। अतएव चरखा, खादी, हिन्दी, ग्राम-सेवा आदि नये विषय लोकप्रिय होने लगे। उसी माहौल में मद्रास की दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा स्थापित हुई। कुछ केरलीय युवक वहाँ से हिन्दी प्रचारक उपाधि प्राप्त कर केरल के गाँवों में हिन्दी प्रचार करने पहुँचे। अनेक प्रकार से हिन्दी प्रचार होता गया। जब दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा ने तिरुवनंतपुरम् में अपना कार्य शुरु करना चाहा तब वहाँ कई उत्साही युवकों ने इसका स्वागत किया। एम.के. दामोदरन उण्णि और देवदूत विद्यार्थी तिरुवनंतपुरम् में हिन्दी प्रचार का सन्देश ले आये थे। दोनों आदर्श प्रचारक थे साथ ही अच्छे कार्यकर्त्ता भी। सन् १९३७ तक दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के कार्यकलाप में व्यवस्थित ढंग से काफी उन्नति हुई। १९३१ का वर्ष तिरुवनंतपुरम् के हिन्दी प्रचार के इतिहास में चिरस्मरणीय है। उसी वर्ष त्रावणकोर लेजिस्लेटिव कौंसिल में ए.एस. दामोदरन आशान ने स्कूलों में अनिवार्य हिन्दी को पेश करने का प्रस्ताव रखा। प्रसिद्ध राजनैतिक नेता पट्टम ताणुपिल्लै, साहित्यकार ई.वी. कृष्णपिल्लै आदि विधायकों ने इसका पूरा समर्थन किया। आशान के सौम्य और लोकप्रिय व्यक्तित्व को भी इसका श्रेय है। सरकार की तरफ से आपत्ति उठाई गई फिर भी बहुमत से प्रस्ताव पास हुआ। प्रस्ताव को लागू करने में कठिनाईयाँ हुईं पर कर्मठ हिन्दी प्रचारक एवं प्रेमी इसके पीछे लगे रहे। आख़िर १९३४ में तिरुवनंतपुरम् के हाईस्कूल में हिन्दी अध्ययन प्रारंभ हो सका। तिरुवनंतपुरम् में हिन्दी के उच्चतर शिक्षण का प्रबंध है। १९५७ से यूनिवर्सिटी, कॉलेज में एम.ए. पाठ्यक्रम शुरु हुआ। इधर कुछ वर्षों से महिला कॉलेज में भी एम.ए. का पाठ्यक्रम है। केरल विश्वविद्यालय का अपना नया स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग भी शुरु हुआ। वहाँ एम.ए., एम.फिल एवं

पीएच.डी. के पाठ्यक्रम भी चलते हैं। केरल में कई हिन्दी संस्थाएँ हिन्दी के प्रचार-प्रसार के कार्य में लगे हैं– (१) केरल हिन्दी प्रचार सभा (२) दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा (३) हिन्दी विद्यापीठ (४) केरल हिन्दी साहित्य अकादमी।

साक्षरता की दृष्टि से भारत में केरल का स्थान पहला है। अपने सीमित विस्तार के मुकाबले में इस छोटे राज्य में चार-चार सामान्य विश्वविद्यालय हैं। करीब २०० से ज़्यादा सम्बद्ध कॉलेज हैं, इन सभी संस्थाओं में हिन्दी को स्थान मिला है। केरल के कॉलेजों में द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी लेने का शौक बड़ी तेज़ी से बढ़ा है। जब से केरल में बड़े पैमाने पर हिन्दी कॉलेजों का अध्ययन विषय बनी तब से इसका व्यापक प्रभाव पड़ा है। अब हजारों की संख्या में हिन्दी छात्र केरल में देखने को मिलेंगे। इस राज्य के कॉलेज में औसत कक्षाओं में जितने छात्र हिन्दी पढ़ते मिलेंगे उतने छात्र शायद हिन्दी प्रदेश में भी नहीं मिलेंगे।

केरल के लिए हिन्दी अन्य भाषा है पर अंग्रेजी की तरह विदेशी या उतनी कठिन नहीं। इसलिए केरल की जनता हिन्दी को सीखने और सिखाने में रुचि लेती है। केरल में भी काफ़ी मौलिक और हिन्दी साहित्य उपलब्ध है।

कर्नाटक में विगत आठ दशकों से हिन्दी का प्रचार-प्रसार हो रहा है। हिन्दी के प्रचार और प्रसार में शिक्षण तथा प्रशिक्षण में कर्नाटक सरकार एवं लोक शिक्षा विभाग तथा स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं का योगदान उल्लेखनीय है। त्रिभाषासूत्र को अपनाकर स्कूलों के पाठ्यक्रमों में हिन्दी को उचित स्थान देने में और विभिन्न रचनात्मक कार्यों द्वारा छात्र-छात्राओं को हिन्दी लेखकों को और अनुवादकों को प्रोत्साहित करने में कर्नाटक सरकार, लोकशिक्षा विभाग, विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग और स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं ने समय-समय पर जो कार्य किये हैं, वह सचमुच सराहनीय एवं अनुकरणीय हैं।

कर्नाटक में हिन्दी का प्रचार-प्रसार १९२४ में बेलगाँव के अधिवेशन से शुरु हुआ। इसी अधिवेशन में गाँधीजी ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित किया। तब से पूरे कर्नाटक में हिन्दी का प्रचार-प्रसार जोरों से होने लगा।

हिन्दी के प्रचार-प्रसार में तीव्रता लाने की दृष्टि से कर्नाटक में कई स्वैच्छिक संस्थाओं की स्थापना भी हुई। आरंभ में इनका रूप छोटा था परन्तु आज ये विशाल वृक्ष बन गये हैं जो कि कर्नाटक में हिन्दी के प्रचार-प्रसार को बढ़ावा देने में

महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इनमें से चार संस्थाएँ 'कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति', 'कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति', 'मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद' और 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' धारवाड़ शाखा हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने में अपना विशेष योगदान दे रहे हैं। इनके अलावा भी कई छोटी-बड़ी संस्थाएँ हिन्दी का प्रचार-प्रसार कर रही हैं।

सन् १९३६ में गाँधीजी की सलाह से काका कालेलकर की उपस्थिति में कर्नाटक प्रान्तीय सभा की बेंगलोर में स्थापना हुई थी। इस सभा के मन्त्रीपद का कार्यभार पं. सिद्धनाथ पंत एवं संगठन का कार्यभार हिरण्मय ने संभाला था। १९३७ में भारत के ग्यारह प्रान्तों में काँग्रेस के मंत्रिमंडल बने। उस समय बम्बई प्रान्त के काँग्रेस सरकार के मुख्यमंत्री वै. बालासाहब खेर थे। बालासाहब खेर ने तब शिक्षण विभाग में भाषा विषय के अन्तर्गत हिन्दी का प्रवेश कराया। शिक्षण विभाग में हाईस्कूलों में हिन्दी को अनिवार्य विषय घोषित किया। हिन्दी की पाठ्यपुस्तकें तैयार करवायी गईं। हिन्दी शिक्षकों के लिए बम्बई एवं धारवाड़ में हिन्दी शिक्षक सनद ट्रेनिंग कॉलेज शुरु किये गये। पं. सिद्धनाथ पंत ने बैंगलोर के सभा कार्यालय का स्थानातरण धारवाड़ करवाया, जिससे कि उत्तर कर्नाटक के चारों जिलों के हाईस्कूलों में हिन्दी शिक्षकों की नियुक्तियाँ हो सकें।

जैसे-जैसे प्रचार कार्य का स्वरूप बढ़ता गया वैसे-वैसे हिन्दी को स्कूलों के अलावा, कॉलेजों, विश्वविद्यालयों में भी स्थान दिया जाने लगा। आगे चलकर हिन्दी में एम.फिल., पीएच.डी. करने की सुविधा भी कर्नाटक के कई विश्वविद्यालयों में दी गई।

इन सब के अलावा कर्नाटक में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में पत्र-पत्रिकाएँ भी महत्त्वपूर्ण योगदान प्रदान कर रही हैं। कर्नाटक में हिन्दी पत्रकारिता का रूप व्यवहारिक नहीं है बल्कि वह एक संस्था या संगठन से जुड़कर पल्लवित हुई है। हिन्दी पत्रकारिता का क्षेत्र कर्नाटक में अन्य प्रान्तों के मुकाबले समृद्ध नहीं है। फिर भी *'भारत वाणी'*, *'हिन्दी सुधा'*, *'हिन्दी वाणी'* जैसी पत्रिकाओं ने कर्नाटक में हिन्दी पत्रकारिता को एक आयाम दिया है। दुःख का विषय है कि आज यह तीनों पत्रिकाएँ अस्तित्व में नहीं हैं। कर्नाटक में आज हिन्दी पत्रकारिता को सुदृढ़ बनाने में उसे जीवत रखने में *'हिन्दी प्रचार वाणी'*, *'मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् पत्रिका'* तथा *'भाषा पीयूष'* महत्वपूर्ण दायित्व का निर्वाह कर रही हैं। इसके अलावा कई और पत्रिकाएँ

भी हैं जो हिन्दी के प्रचार-प्रसार में योगदान दे रही हैं पर साथ ही अफसोस भी है कि कर्नाटक से प्रकाशित कई हिन्दी की पत्र-पत्रिकाएँ आज अस्तित्व में नहीं है। कर्नाटक सरकार एवं केन्द्र सरकार को चाहिए कि उन बन्द हुई पत्रिकाओं की तरफ समुचित ध्यान दे ताकि हिन्दी के प्रयोग एवं प्रसार में और तेज़ी आ सके।

वहीं दूसरी ओर कर्नाटक में मौलिक हिन्दी लेखन तथा अनूदित साहित्य के द्वारा भी प्रचार-प्रसार का कार्य बखूबी हो रहा है। एम.एस. कृष्णमूर्ति, टी.जी. प्रभाशंकर 'प्रेमी', ना. नागप्पा, जी.जे. हरिजीत, गुरुनाथ जोशी, शरेश्चन्द्र चुलकीमठ, टी.आर. भट्ट, प्रधान गुरुदत्त, भालचन्द्र जयशेट्टी, सिद्धलिंग पट्टणशेट्टी, तिप्पेस्वामी आदि ऐसे कई साहित्यकार हैं जो अपनी मौलिक एवं अनूदित कृतियों के द्वारा कन्नड़ एवं हिन्दी के आदान-प्रदान की दिशा में अपना हर संभव योगदान दे रहे हैं।

रेडियो और दूरदर्शन जो आजकल की जिन्दगी का महत्त्वपूर्ण हिस्सा हैं, इनके द्वारा भी कर्नाटक में हिन्दी के प्रयोग-प्रसार को बल मिल रहा है। कर्नाटक में कई आकाशवाणी केन्द्रों से हिन्दी के कार्यक्रम प्रस्तुत किये जाते हैं। इन कार्यक्रमों की अवधि लगभग १०-१५ मिनट की होती है। आज घर-घर में दूरदर्शन के माध्यम से लोग हिन्दी सीख रहे हैं। दूरदर्शन द्वारा आज अधिक से अधिक हिन्दी कार्यक्रम प्रस्तुत किये जाते हैं, जिन्हें देख-सुनकर लोग दैनिक जीवन में हिन्दी के शब्दों का प्रयोग करने लगे हैं।

इतना ही नहीं उत्तर भारत से आये हुए छात्र-छात्राओं की बड़ी संख्या के कारण तथा व्यापारियों आदि के कारण भी कर्नाटक में हिन्दी का वर्चस्व बढ़ता ही जा रहा है।

कर्नाटक में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीयकृत बैंकों ने कारगर कदम उठाये हैं। हिन्दी शिक्षण से लेकर हिन्दी कम्प्यूटर प्रशिक्षण के लिए बैंकों ने अपनी निजी संस्थाएँ कायम की हैं। बैंकों में सामान्य प्रशिक्षण कार्यक्रमों को भी हिन्दी माध्यम द्वारा चलाया जाता है। भारत सरकार के अन्य उपक्रम और कार्यालयों की तुलना में बैंकिंग क्षेत्र में काफी सुधार हिन्दी में हुआ है। कर्नाटक राज्य के बैंकों में हिन्दी के प्रचार-प्रसार का योगदान स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है। कॉर्पोरेशन बैंक द्वारा हिन्दी के प्रचार के उद्देश्य से *'मंगला'* नामक हिन्दी त्रैमासिक पत्रिका तथा *'क्षेम'* नामक द्विभाषी (हिन्दी-अंग्रेज़ी) त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है। कुल मिलाकर कर्नाटक के बैंकों में हिन्दी की प्रगति बहुत ही अच्छी है।

कर्नाटक के मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालयों में भी हिन्दी का प्रयोग एवं प्रसार का कार्य प्रशंसनीय है। हुबली मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालय केन्द्र सरकार का एक प्रमुख एवं हुबली-धारवाड़ का सबसे बड़ा प्रशासनिक मण्डल कार्यालय है। इसके अधीन एक हिन्दी अनुभाग कार्यरत है। कुल मिलाकर मण्डल रेल कार्यालय में हिन्दी के प्रयोग और प्रसार का कार्य संतोषजनक है। महात्मा गाँधीजी की प्रेरणा एवं राष्ट्रीय भावना से हिन्दी भाषा का प्रचार कर्नाटक को भी सम्मिलित करके समूचे दक्षिण भारत में जो एक आन्दोलन के रूप में शुरु हुआ था, आज वह पल्लवित एवं पुष्पित हुआ है। निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि आज कर्नाटक में हिन्दी की स्थिति अच्छी है। कर्नाटक के लोग अपनी मातृभाषा कन्नड़ के समान हिन्दी को एक राष्ट्रभाषा, समर्थ संपर्क भाषा एवं व्यवहार भाषा के रूप में अपनाकर इस भाषा के विकास की दिशा में योगदान दे रहे हैं। कर्नाटक में हिन्दी विकास की दिशा की ओर निरन्तर अग्रसर हो रही है।

कर्नाटक में हिन्दी की स्थिति को और भी सुदृढ़ करने हेतु कुछ सुझाव निम्नलिखित हैं :

सुझाव

(१) कर्नाटक सरकार द्वारा जारी किए गये सरक्यूलर सं. जेडीसीइ/डीआर/९६-९७ दिनांक २५.३.९६ में कहा गया है कि स्नातक कक्षाओं में किसी भी विषय की पढ़ाई मूल अथवा ऐच्छिक विषय के रूप में जारी रखने के लिए कम से कम १५ छात्र होना अनिवार्य है (संस्कृत और उर्दू को छोडकर जिसमें मूल विषय के लिए न्यूनतम संख्या होना आवश्यक नहीं है, लेकिन एच्छिक विषय में न्यूनतम ५ की संख्या अनिवार्य है)। जिन महाविद्यालयों में उर्दू नहीं पढ़ाई जाती है, वहाँ पर हिन्दी पढ़ाने के लिए यह छूट दी जा सकती है। (परिशिष्ट ४ देखें)

इस तरह के सरक्यूलर से हिन्दी के प्रचार-प्रसार के काम में बाधाएँ आती हैं। एक ओर सरकार राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का प्रचार करना चाहती है, तो दूसरी ओर महाविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाने के लिए न्यूनतम संख्या निर्धारित करती है, यह ठीक नहीं है। जितने भी छात्र हिन्दी पढ़ना चाहते हैं उनके लिए हर तरह की सुविधा मिलनी चाहिए।

(२) बी.सी.ए. तथा बी.बी.एम्. के पाठ्यक्रमों में, कन्नड़ भाषा को छोड़, अन्य भाषाओं की पढाई बंद कर दी गयी है। इससे जो छात्र हिन्दी पढ़ना चाहता है उसे उनके अधिकार से वंचित कर दिया गया है। इसलिए कर्नाटक सरकार को इस ओर ध्यान देकर तुरन्त उपरोक्त पाठ्यक्रमों में कन्नड़ के अलावा अन्य भाषाओं की पढ़ाई प्रारम्भ करानी चाहिए। खास तौर पर हिन्दी की ओर ध्यान देना चाहिए।

(३) कर्नाटक में इधर कुछ वर्षों से सरकार बी.एड. कॉलेजों को चलाने के लिए जिस तादाद में अनुमति दे रही है इससे छात्रों में स्नातकोत्तर स्तर पर हिन्दी पढ़ने की रुचि कम हो रही है, क्योंकि हर छात्र यह सोचता है कि बी.एड. कर लेंगे तो जल्दी नौकरी मिल जायेगी।

अगर स्नातकोत्तर स्तर पर छात्र धीरे-धीरे कम हो जायेंगे तो आगे पीएच.डी. स्तर पर इसका बुरा असर होगा और हिन्दी में शोध कार्य कम होने लगेंगे। इसलिए कर्नाटक सरकार इस बात को गंभीरता से लेते हुए हिन्दी में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए छात्रों को प्रोत्साहित करे और उन्हें छात्रवृत्ति भी दे।

(४) जो लोग हिन्दी पढ़कर नौकरी के तलाश में कर्नाटक से बाहर जाते हैं उन्हें उतनी सफलता नहीं मिलती जितनी हिन्दी भाषी क्षेत्र के लोगों को मिलती है। इसलिए कर्नाटक सरकार इस ओर ध्यान दे और कर्नाटक में ही उन लोगों को रोज़गार का अवसर प्रदान करे।

(५) हाईस्कूल हिन्दी अध्यापकों को प्रशिक्षित करने के उद्देश्य से हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालय भारत सरकार के शत-प्रतिशत अनुदान से १९५६ में मैसूर और गुलबर्गा में और १९६३ में बागलकोट में आरंभ किए गये थे। लेकिन किसी कारणवश १९८०-८१ में इन महाविद्यालयों को बंद कर दिया गया। बाद में १९८३-८४ के वित्तीय वर्ष से भारत सरकार के शत-प्रतिशत वित्तीय अनुदान से सरकारी हिन्दी शिक्षक प्रशिक्षण कॉलेज मैसूर में फिर से आरंभ किया गया है।

कर्नाटक सरकार भारत सरकार से तुरन्त अनुरोध करे कि गुलबर्गा और बागलकोट में बन्द किए गंये कॉलेजों को फिर से आरंभ करने के लिए शत-प्रतिशत आर्थिक सहायता प्रदान करे साथ ही कुछ अन्य जगहों पर हिन्दी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों को प्रारंभ करने में भी आर्थिक सहायता दे।

(६) एक योजना के तहत सन् १९८३ से १९८७ तक कर्नाटक के हिन्दी लेखकों के मूल हिन्दी ग्रन्थों को तीन पुरस्कार, हिन्दी से कन्नड़ में और कन्नड़ से हिन्दी में अनूदित ग्रन्थों को भी तीन-तीन पुरस्कार सरकार की ओर से दिये गये। अब यह योजना बन्द है।

यह खेद का विषय है कि सरकार ने इस अच्छी योजना को बन्द कर दिया। इसे अविलम्ब फिर से चालू करे और लेखकों का मनोबल बढ़ावें।

(७) कर्नाटक एक अहिन्दी भाषा क्षेत्र है इसके बावजूद यहाँ की जनता हिन्दी पढ़ने में उत्सुक है। इसको ध्यान में रखकर कर्नाटक से बहुत सारे पत्र-पत्रिकाएँ हिन्दी में प्रकाशित होने लगी। मगर आर्थिक तंगी के कारण बहुत सी पत्र-पत्रिकाएँ बीच-बीच में दम तोड़ती गईं। कुछ पत्रिकाएँ किसी तरह जीवित हैं। (परिशिष्ट ३ देखें)

अगर वाकई हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में अहिन्दी प्रान्तों में प्रचार-प्रसार करना है, तो भारत सरकार को चाहिए कि तुरन्त कर्नाटक में बन्द हुई तथा और नये पत्र-पत्रिकाओं को हिन्दी में प्रकाशित करने के लिए आर्थिक सहायता प्रदान करे। अवश्य कुछ पत्रिकाएँ भारत सरकार की आर्थिक सहायता प्राप्त कर रहीं हैं। लेकिन यह काफी नहीं है। एक योजनाबद्ध तरीके से सभी पत्र-पत्रिकाओं को आर्थिक सहायता मिलनी चाहिए।

(८) उत्तर प्रदेश सरकार ने मैसूर विश्वविद्यालय में एक एन्डोमेंट की स्थापना की है। इस एन्डोमेंट की आर्थिक सहायता से मैसूर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग द्वारा सन् १९७७ से २००४ के बीच चार पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। यह एक अच्छी शुरुआत है।

अगर इसी तरह उत्तर प्रदेश के अलावा बाकी अन्य हिन्दी भाषी सरकारें भी कर्नाटक के विभिन्न विश्वविद्यालयों में एन्डोमेंट की स्थापना करेंगे तो हिन्दी के प्रचार-प्रसार के कार्य में तेज़ी आयेगी। कर्नाटक सरकार सभी हिन्दी भाषी सरकारों से संपर्क स्थापित करे औ पहल करे कि वे भी कर्नाटक के विभिन्न विश्वविद्यालयों में एन्डोमेंट स्थापित करे।

अगर उपरोक्त सभी सुझावों पर निष्ठा से अमल किया गया तो निश्चित तौर पर कर्नाटक में हिन्दी की स्थिति में और उसके प्रचार-प्रसार में मजबूती आयेगी।

●●●

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

कर्नाटक में भारत सरकार की ओर से अनुदान प्राप्त स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाएँ

(i) मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद्, बेंगलोर
(ii) कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति, बेंगलोर
(iii) कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति, बेंगलोर
(iv) दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, धारवाड़
(v) श्री ज्ञानज्योति एजुकेशन सोसाइटी, बेंगलोर
(vi) श्री निधि शिक्षण समिति, बेंगलोर
(vii) भारतीय संस्कृति विद्यापीठ, बेंगलोर
(viii) आदर्श महिला विद्यालय, बेंगलोर
(ix) गुरु हिन्दी शिक्षा मण्डल, बेंगलोर
(x) श्री जयभारती हिन्दी विद्यालय, बेंगलोर
(xi) सरस्वती हिन्दी विद्यालय, बेंगलोर
(xii) राष्ट्रीय हिन्दी विद्या भवन, धारवाड़
(xiii) हिन्दी विद्यापीठ, हुबली
(xiv) आदर्श हिन्दी विद्यापीठ, हुबली
(xv) जनता शिक्षण समिति, हुबली
(xvi) हिन्दी प्रचार समिति, मुधोळ
(xvii) जनता सेवा संघ, हंसभावी
(xviii) गाँधी हिन्दी विद्यापीठ, कुन्दगोळ
(xix) भारती हिन्दी विद्यालय, मैसूर
(xx) भारती हिन्दी विद्यालय, भद्रावती
(xxi) हिन्दी शैक्षणिक सेवा समिति, बिजापुर
(xxii) जिला हिन्दी प्रेमी मण्डल, बेल्लारी

●●●

परिशिष्ट २

कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति, बेंगलूर के प्रकाशन

	ग्रन्थ का नाम	*लेखक*
(i)	कर्नाटक साहित्य और संस्कृति	एन.एस. दक्षिणामूर्ति
(ii)	कर्नाटक दर्शन	"
(iii)	दानचिन्तामणि (उपन्यास)	मूल कन्नड़ लेखक ब्रह्मय्या हिन्दी अनुवादक एम.के भारतीरमणाचार्य
(iv)	कथा भारत	एस.एम. रामचंद्रास्वामी
(v)	चंद्रगुप्त	चंद्रशेखर
(vi)	पम्पा-यात्रा	मूल कन्नड़ लेखक वी. सीतारामय्या हिन्दी अनुवादक ना. नागप्पा
(vii)	तीन महावीर	अवधनन्दन
(viii)	रजत-जयन्ती ग्रन्थ	संपा. भारतीरमणाचार्य
(ix)	कर्नाटक में हिन्दी प्रचार	ना. नागप्पा
(x)	ध्रुव-तारा	एन.एस. दक्षिणामूर्ति
(xi)	कर्नाटक के शिल्पी	एस. एम. रामचंद्रास्वामी
(xii)	संस्कृती	मूल कन्नड़ लेखक डी.वी.जी. हिन्दी रूपान्तर एस.एम. रामचंद्रस्वामी
(xiii)	स्वर्ण जयंती ग्रंथ	संपा. ना. नागप्पा
(xiv)	राजभाषा सुमन (भाग-I)	डी. तंगवेलन
(xv)	राजभाषा सुमन (भाग-II)	एस.एम. रामचंद्रस्वामी
(xvi)	राजभाषा सुमन (भाग-III)	एच.एस. के. विश्वेश्वरय्या
(xvii)	अनुग्रह	संपा. डी. तंगवेलन
(xviii)	सरल हिन्दी रचना और अनुवाद (भाग-I)	डी. तंगवेलन एवं रामचन्द्रराव
(xix)	सरल हिन्दी रचना और अनुवाद (भाग-II)	डी. तंगवेलन एवं रामचन्द्रराव



परिशिष्ट ३

कर्नाटक से हिन्दी में प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं की सूची

पत्रिका का नाम	अवधि	स्थान	प्रकाशन शुरु वर्ष	प्रकाशन बंद वर्ष
हिन्दी वाणी	मासिक	बैंगलोर	अक्टू. १९५४	अप्रैल १९५७
भानूदय	मासिक	बैंगलोर	१९५६	१९५८
भारतवाणी	मासिक	धारवाड़	अगस्त १९५५	
हिन्दु सुधा	मासिक	बैंगलोर	१९५६	१९५७
अपना देश	साप्ताहिक	गदग	१९५८	१९५८
मानसी	वार्षिक १९७६ तक छमाही १९९३ तक	मैसूर	दिसंबर १९६५	१९९३
मैसूर हिंदी प्रचार परिषद् पत्रिका	मासिक	बैंगलोर	अक्टू. १९६१	–
दमन	साप्ता./द्वि. साप्ता, दैनिक १९७१ से	बीदर	जनवरी २६, १९७०	–
धीर	साप्ताहिक	बैंगलोर	१९७०	–
साहित्य सौरभ	मासिक	बैंगलोर	जनवरी १९७२	जून १९७२
सप्तांशु	मासिक	बैंगलोर	मई १९७२	मार्च १९७३
तीर	साप्ता/सांध्य दैनिक १९८३-८८	बैंगलोर	नवम्बर १९७७	–
बीदर की आवाज़	साप्ता-१९७९-८१ दैनिक-अगस्त १९८१	बीदर	१९७९	–
अहिंसा दर्शन	मासिक	बैंगलोर	१९७९	१९८८
हिन्दी प्रचार वाणी	मासिक	बैंगलोर	मई १९८०	–
अर्चना	त्रैमासिक	बैंगलोर	१९८०	१९८१
भाषा-पीयूष	त्रैमासिक	बैंगलोर	दिसंबर १९८०	–
दक्षिण द्वीप	साप्ताहिक	बैंगलोर	१९८१	१९८२
कुंतल भारती	वार्षिक	बैंगलोर	१९८२	–
कारण	पाक्षिक-१९८३-८६ दै.-२ अक्टू. १९८६ से पाक्षिक १९८७ से साप्ता. १९९१-९२	बैंगलोर	१९८३	१९९२
टैक्स पत्रिका	मासिक	बैंगलोर	१९८५	–

आदर्श	दैनिक	बैंगलोर	१९८७	१९८७
बीदर संदेश	तीन अंक साप्ताहिक दैनिक अगस्त १९८८	बीदर	जुलाई २१, १९८८	–
मानस	मासिक	बीदर	नौवें दशक में	नौवें दशक में
बसव मार्ग	छमाही	बैंगलोर	अक्टू. १९९०	–
उद्योग व्यापार विकास पत्रिका	मासिक	बैंगलोर	जनवरी १९९२	१९९६
मोक्षद्वार ज्ञान पत्रिका	पाक्षिक	बैंगलोर	अगस्त १९९२	–
राष्ट्रमत	पाक्षिक	बैंगलोर	अगस्त १९९३	१९९३
आदित्य	दैनिक	बीदर	१९९३	१९९५
विप्र विचार	मासिक	बैंगलोर	१९९४	१९९५
विश्व सेतु निर्माण	साप्ताहिक	बैंगलोर	१९९४	१९९७
सरिता संगम	साप्ताहिक	बैंगलोर	अप्रैल १९९५	–
जागृति दौर	साप्ताहिक	बैंगलोर	१९९५	१९९९
राजस्थान पत्रिका	दैनिक	बैंगलोर	जनवरी २६, १९९६	–
जनप्रिय भारत वार्ता	साप्ताहिक	बैंगलोर	अगस्त १५, १९९६	२००१ से स्थगित
नानक टाइम्स	दैनिक	बीदर	पिछले दशक	–
महाकयास	दैनिक	बीदर	पिछले दशक	–
मनसुबा	दैनिक	बीदर	पिछले दशक	–
वेद तरंग	मासिक	बैंगलोर	–	–
जनप्रिय अंदाज़	साप्ताहिक	बैंगलोर	अगस्त १५ १९९६	–
नाना वाणी	पाक्षिक	बैंगलोर	१९८८	–
मरुधर केसरी	पाक्षिक	बैंगलोर	१९९९	–
हरी धरती नीला आकाश	त्रैमासिक	बैंगलोर	अप्रैल ४, १९९९	एक अंक प्रकाशित
सत्य सटीक	पाक्षिक	बैंगलोर	२०००	–
कंचन कावेरी	अनियमित	बैंगलोर	पिछले दशक में	प्रकाशन स्थगित
साउथ टुडे	साप्ताहिक	बैंगलोर	पिछले दशक में	स्थगित
राजस्थान	अनियमित	बैंगलोर	पिछले दशक में	स्थगित
चंद्रदीप	साप्ताहिक	बैंगलोर	पिछले दशक में	कुछ अंक बाद बंद
जैन पत्रिका	मासिक	मैसूर	पिछले दशक में	स्थगित
सत्यार्थ दर्पण	अनियमित	गुलबर्गा	पिछले दशक में	–
दक्षिण ध्वज	साप्ताहिक	बैंगलोर	जुलाई ३, २००२	–



परिशिष्ट ४

GOVERNMENT OF KARNATAKA

No. JDCE/DR/96-97

Office of the
Jt. Director of Collegiate
Education, Dharwad Dt. 25/3/96

CIRCULAR

ADMISSIONS

Academic activities in a college start with admissions. To ensure that they are smooth throughout the year, admissions shall be made carefully observing the rules and regulations issued by the Government from time to time. Roster system shall be strictly followed, and weaker sections shall be given proper representation.

All the applications for admission shall be considered for declaring general merit seats, students who seek reservation seats shall also be considered for general merit seats if they have a good percentage of marks at the qualifying examination.

The intake of students to each class and section shall not exceed the number permitted by the University and the Directorate. It is important to note that a college cannot open an additional section, because of the large demand for seats. Prior permission of the University and the Directorate is essential for opening additional sections.

While making admissions a round college seal shall be stamped on the back side of the original marks card of the qualifying examination. This would prevent a student from getting admission in another institution. A small percentage of students may try to get admission in more than one college located in different places for obvious advantages.

The claims of students with a gap of one year or more after the qualifying examination shall be carefully scrutinized before giving them admissions. They might have studied in the same class in a different college previously. If it is proved that they have already studied in the same class, they must not be admitted.

The students who have studied one course and want to get admission to another course (i.e., after studying B.A. for three years want to get admission to B.Com.) shall not be given admission unless they have passed the previous course.

There shall be a minimum of 15 students for a subject to justify continuation of the subject as either basic or optional subject. Admissions made in contravention of this regulation will be viewed seriously. Work load arising out of such violations will not be considered for grants. Exception to this rule is given in the case of Sanskrit and Urdu. There is no minimum of students studying any one of these two subjects as basic subjects. However as optional subjects they shall have a minimum of 5 students. This concession to these two languages is given as it is the policy of the Government to promote Sanskrit as a classical language, and Urdu as a language of the largest minority. In colleges where Urdu is not taught similar concession is to be given to Hindi, as students who would have opted for Urdu had it been taught are likely to opt for Hindi.

In the final year or part III as it is called in this University if there is provision to offer an alternative paper for the IV paper (II paper of part III) there shall be a minimum of 15 students for the same. Otherwise such alternative papers shall not be offered. Such alternative paper shall be offered only when the total number of students for the subject in the class exceeds 50.

Colleges which ignore these regulations will face punitive action.

Sd/-
Joint Director of
Collegiate Education, Dharwad

"Ture Copy"

सहायक ग्रन्थ सूची

हिन्दी पुस्तक एवं लेख

अय्यर, एन.ई. विश्वनाथ : *केरल में हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास*। वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन, १९९६.

अहमद, इकबाल : *दक्खिनी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास*। इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन, १९८६.

कंसल, हरिबाबू : *राजभाषा नीति कार्यान्वयन*। दिल्ली : सुधांशु बन्धु, १९९३.

खाडिलकर, रामकृष्ण रघुनाथ : *आधुनिक पत्रकार कला*। काशी : ज्ञानमण्डल प्रेस, १९५३.

गुप्त, अवधेश मोहन एवं श्रावन्ती, सुशीला : *राजभाषा का चरखा*। दिल्ली : अभिरुचि प्रकाशन, १९९७.

गौतम, सुरेश एवं गौतम, वीणा (संपा) : *हिन्दी पत्रकारिता ; कल, आज और कल*। दिल्ली : सत्साहित्य प्रकाशन, २००१.

चटर्जी, सुनीति कुमार : *भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी*।

चुलकीमठ, शरेश्चन्द्र : *कर्नाटक संस्कृति* : मद्रास : दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, १९७३.

तिप्पेस्वामी : कन्नड़ पत्रकारिता। सुरेश गौतम एवं वीणा गौतम (संपा) : *भारतीय पत्रकारिता ; कल आज और कल*। दिल्ली : सत्साहित्य प्रकाशन, २००१.

तिप्पेस्वामी : कर्नाटक में हिन्दी पत्रकारिता। सुरेश गौतम एवं वीणा गौतम (संपा) : *भारतीय पत्रकारिता ; कल, आज और कल*। दिल्ली : सत्साहित्य प्रकाशन, २००१.

तिवारी, अर्जुन : *आधुनिक पत्रकारिता*। वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन, १९९४.

तिवारी, अर्जुन : *जनसंचार और हिन्दी पत्रकारिता*। इलाहाबाद : जयभारती प्रकाशन, २००४.

तिवारी, अर्जुन : *स्वतंत्रता आन्दोलन और हिन्दी पत्रकारिता ; पूर्वी उत्तर प्रदेश के संदर्भ में*। वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन, १९८२.

तिवारी, उदयनारायण : *हिन्दी का उद्गम और विकास*। इलाहाबाद : भारती भण्डार, १९६९.

तिवारी, मोहनलाल : *माध्यम भाषा ; सिद्धांत और समीक्षा*। वाराणसी : नागरी प्रचारिणी सभा, १९७३.

दीक्षित, प्रवीण : *जनमाध्यम और पत्रकारिता*, भाग-२। कानपुर : सहयोगी साहित्य संस्थान, १९८०.

दुबे, उदयनारायण : *राजभाषा के सन्दर्भ में हिन्दी आन्दोलन का इतिहास*।

दुबे, चन्दूलाल (संपा) : *हिन्दी कन्नड़ साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन*। नई दिल्ली : एस.चन्द एण्ड कम्पनी, १९८३.

द्विवेदी, सुधाकर : *हिन्दी ; अस्तित्व की तलाश*। नई दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन, १९८२.

नगेन्द्र : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*। (२६ वाँ संस्करण) नोएडा : मयूर पेपरबैक्स, १९९९.

नागप्पा, ना. : *कर्नाटक में हिन्दी प्रचार*। बैंगलोर : कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति, १९९९.

नागप्पा, ना. : कर्नाटक में हिन्दी प्रचार। एन. वेंकटेश्वरन (संपा) : *दक्षिण में हिन्दी प्रचार आन्दोलन का इतिहास*। मद्रास : दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, १९९४, पृ. १२८-१७४.

नारायण कुमार : गयाना में भारतीय संस्कृति और हिन्दी। मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् स्वर्ण जयन्ती समारोह विशेषांक, १९९५, पृ. १४५-१४८.

नारायण कुमार : हिन्दी का वैश्विक स्वरूप। नारायण कुमार (संपा) *हिन्दी भाषा कुम्भ ; स्मारिका*। बेंगलूर : मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् एवं अखिल कर्नाटक हिन्दी साहित्य अकादमी, २००४, पृ. ११८-१२१.

नारायण कुमार (संपा) : *हिन्दी भाषा कुम्भ ; स्मारिका* । बेंगलूर : मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् एवं अखिल कर्नाटक हिन्दी साहित्य अकादमी, २००४.

पठोरिया, राजेन्द्र : विश्व हिन्दी सम्मेलन तब से अब तक। ए.एम. रामचंद्र (संपा) *ज्ञान सरिता ; हीरक जयंती स्मारिका* । बेंगलूर : मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद्,२००३, पृ. १४७–१५३.

पाण्डेय, राजबली (संपा) : *हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहास* । वाराणसी : नागरी प्रचारिणी सभा, १९५७.

बेचन : *स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य* । दिल्ली : राष्ट्रभाषा प्रकाशन, १९६७.

ब्रह्मानंद : *भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन और उत्तर प्रदेश की हिन्दी पत्रकारिता* । नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, १९८६.

भट्ट, टी.आर. एवं नंदिनी : *हिन्दी कन्नड़ साहित्य ; दशाएँ एवं दिशाएँ* । धारवाड़ : ज्ञानोदय प्रकाशन, १९९३.

भारत सरकार : *भारत का संविधान* । नई दिल्ली : भारत सरकार.

भारत सरकार : *राजभाषा आयोग का प्रतिवेदन* । नई दिल्ली : भारत सरकार, १९५६.

महालिंगम, एस. : दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास। एन. वेंकटेश्वरन (संपा) : *दक्षिण में हिन्दी प्रचार आन्दोलन का इतिहास*, १९९४, पृ. २०–५७.

मटियानी, शैलेश : *राष्ट्रभाषा का सवाल* । इलाहाबाद : आशु प्रकाशन, १९९०.

मिश्र, रामेश्वर : *राष्ट्रभाषा हिन्दी का स्वरूप विधान* । दिल्ली : भारती ग्रन्थ निकेतन, १९७५.

मिश्र, शिवसागर : *हिन्दी हम सबकी* । दिल्ली : प्रभात प्रकाशन, १९८२.

मेरवाड़े, एस.टी. : *कर्नाटक में हिन्दी लेखन* । कानपुर : अभय प्रकाशन, १९९८.

मेहता, श्यामलाल : *बैंकों में व्यावहारिक हिन्दी प्रशिक्षण* । जयपुर : पंचशील प्रकाशन, १९८७.

रामेश्वर प्रसाद : *राजभाषा हिन्दी ; प्रचलन और प्रसार* । पटना : अनुपम प्रकाशन, १९८८.

लोहिया, राममनोहर : *भाषा* । हैदराबाद : नवहिन्द प्रकाशन, १९६५.

वर्मा, धीरेन्द्र (संपा) : *हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास*। वाराणसी : नागरी प्रचारिणी सभा, १९५७.

वार्ष्णेय, लक्ष्मीसागर : *स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य का इतिहास*। दिल्ली : राजपाल प्रकाशन, १९८८.

वेंकटेश्वरन, एन. (संपा) : *दक्षिण में हिन्दी प्रचार आन्दोलन का इतिहास*। मद्रास : दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, १९९४.

शर्मा, अशोक कुमार : *संचारक्रान्ति और हिन्दी पत्रकारिता*। वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन, १९९७.

शर्मा, देवन्द्रनाथ : *राष्ट्रभाषा हिन्दी ; समस्याएँ और समाधान* : इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन, १९६५.

शर्मा, राजमणि : *हिन्दी भाषा ; इतिहास और स्वरूप*। नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, १९९८.

शर्मा, रामविलास : *भारत की भाषा समस्या*। नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, १९७८.

शर्मा, श्रीराम : *दक्खिनी हिन्दी का उद्भव और विकास*। प्रयाग : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, १९६४.

शर्मा, श्रीराम : *दक्खिनी हिन्दी का साहित्य*। हैदराबाद : दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, १९७२.

शुक्ल, रामचन्द्र : *हिन्दी साहित्य का इतिहास*। काशी : नागरी प्रचारिणी सभा, १९६१.

शुक्ल, हनुमान प्रसाद : *हिन्दी भाषा पहचान से प्रतिष्ठा तक*। इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन, १९९४.

श्रीवास्तव, रविन्द्रनाथ : *भाषाई अस्मिता और हिन्दी*। नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, १९९६.

सक्सेना, द्वारिका प्रसाद : *भाषा विज्ञान के सिद्धान्त और हिन्दी भाषा*। (आठवां परिवर्द्धित संस्करण) मेरठ : मीनाक्षी प्रकाशन २०००).

सक्सेना, बाबूराम : *दक्खिनी हिन्दी*। इलाहाबाद : हिन्दुस्तानी एकेडेमी, १९५२.

सिंह, अमर बहादुर (संपा) : *बैंकिंग हिन्दी ; पाठ्यक्रम*। (पुन : प्रकाशन) आगरा : केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, १९८८.

सिंह, जोगेन्द्र : *हिन्दी के गतिमान क्षितिज*। नई दिल्ली : तक्षशिला प्रकाशन, १९९७.

सिन्हा, सुखसागर : *समस्याओं के सलीब पर टंगी राजभाषा हिन्दी*। गोरखपुर : वैशाली प्रकाशन, १९८९.

सिरोही, बलराज सिंह : *संघीय राजभाषा के संदर्भ में पारिभाषिक वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण की समस्याएँ*। नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, १९८७.

सिरोही, बलराज सिंह एवं अग्रवाल, सावित्रि : *हिन्दी समस्या और समाधान*। दिल्ली : प्रभात प्रकाशन, १९८४.

सुंदर रेड्डी : *दक्षिण की भाषाएँ और उनका साहित्य*। लखनऊ : हिन्दी साहित्य भण्डार, १९६७.

सीताराम शास्त्री : *आंध्रप्रदेश में हिन्दी भाषा शिक्षण की समस्याएँ*। आगरा : केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, १९८३.

हिरण्मय : *हिन्दी और कन्नड़ में भक्ति आन्दोलन का तुलनात्मक अध्ययन*। आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर, १९५९.

शोध प्रबंध/रिसर्च प्रोजेक्ट

जयशंकर बाबू, सी. : *दक्षिण भारत में हिन्दी पत्रकारिता ; एक अध्ययन* (शोध प्रबन्ध) मैसूर : मैसूर विश्वविद्यालय।

हिरेमठ, भारती : *कन्नड़ से हिन्दी में अनूदित काव्य ; एक अनुशीलन* (यू.जी.सी. माइनर रिसर्च प्रोजेक्ट), २००५.

पत्र-पत्रिकाएँ

दमन, दैनिक (बीदर)

धीर (बेंगलूर)

नानक टाइम्स, दैनिक (बीदर)

नाना वाणी (बेंगलूर)

बसव मार्ग (बेंगलूर)

बीदर की आवाज़, दैनिक (बीदर)

बीदर संदेश, दैनिक (बीदर)

भारतवाणी (धारवाड)

भाषा-पीयूष (बेंगलूर)

मंगला (मंगलूर)

मरुधर केसरी (बेंगलूर)

मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् पत्रिका (बेंगलूर)

मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् : *ज्ञान सरिता*, हीरक जयन्ती स्मारिका-२००३.

मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् : *स्वर्ण जयन्ती समारोह विशेषांक*, १९९५.

मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् एवं अखिल कर्नाटक हिन्दी साहित्य अकादमी : *हिन्दी भाषा कुम्भ : स्मारिका*, २००४.

राजस्थान पत्रिका, दैनिक (बेंगलूर)

सत्यार्थ दर्पण (गुलबर्गा)

सरस्वती, फरवरी, १९१७.

स्पंदन (बेंगलूर)

हिन्दी प्रचार वाणी (बेंगलूर)

हिन्दी प्रचार वाणी (स्वर्ण जयन्ती विशेषांक) २००३.

क्षेम (मंगलूर)

English Books/Articles/Periodicals

Elphinstone, Mount Stuart : *The history of India*, . London : John Murray, 1889.

Gandhi, M.K. : *Thoughts on national language*. Ahmedabad : Navajivan Pub. House, 1961

Gupta, Jyotirindra Das : *Language confilict and national development ; group politics and national language policy in India*. Bombay : Oxford University Press, 1970.

Gupta, R.C. et. al. : *Language and the state ; perspectives on the eighth schedule.* New Delhi : Creative Books, 1995.

Hamid, K.A. : *What is Hindi?*

Harrison, Selig S. : *India ; the most dangerous decades.* Delhi : Oxford University Press, 1960.

India, Ministry of Information and Broadcasting : *India 2006; A reference annual.* The Author, 2006.

India, Ministry of Information and Broadcasting. *Mass media in India ; 2003.* New Delhi : The Author, 2003.

Newmark, Peter P.I. : *Approaches to translation.*

Philip, H. : *Some aspects of Indian education ; past and present.*

Prabhu, R.K. (Comp) : *Gandhi ; India of my dreams.* Ahmedabad : Navajivan Publishing House, 1947.

Suresh Kumar : *Hindi in advertising ; a study in linguo-stylistic method.* Chandigarh : Bahri Publications, 1978.

Thippeswamy : Department of studies in Hindi. *In* : V.G. Talawar and B.S. Kirangi (Eds.) *Legacy of learning.* Mysore : University of Mysore, 2002.

Bombay Gazetteer, 1896.

Time (Magazine)

Times of India, 7 June 1982.

●●●



डॉ. अंजलि कागतिकर (पूर्व में अंजलि केण्डदमठ) संप्रति बेंगलूर विश्वविद्यालय से संबद्ध इण्डियन अकादमी डिग्री कॉलेज में हिन्दी प्राध्यापिका है। इनका जन्म भारत की सांस्कृतिक एवं विद्या की राजधानी वाराणसी में हुआ। इनकी शिक्षा नर्सरी से लेकर एम.ए. तक महामना पंडित मदन मोहन मालवीय द्वारा स्थापित विश्वविख्यात काशी हिन्दू विश्वविद्यालय (बी.एच.यू.) में हुआ। ई. सन् २००३ में इन्होने प्रथम श्रेणी में हिन्दी साहित्य से एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। तदुपरान्त, धारवाड़ स्थित कर्नाटक विश्वविद्यालय से ई. सन् २००६ में पीएच्.डी. की उपाधि प्राप्त किया।

डॉ. अंजलि हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अनवरत रूप से क्रियाशील है। देश की भाषाई एकता और अखण्डता हेतु इस दिशा में अपने योगदान स्वरूप **कर्नाटक में हिन्दी का प्रचार और प्रसार** नामक इस ग्रन्थ का रचना की है।

किसी भी लोकतान्त्रिक देश में जनता और सरकार के बीच लोकभाषा ही संपर्क भाषा के रूप में सार्थक कार्य करती है। बहुभाषी देश की संप्रेषण व्यवस्था में यह संपर्क भाषा ही ऐसी होती है जो राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा दोनों की भूमिकाएँ निभाने में समर्थ होती है। इसीलिए भारत के संविधान निर्माताओं ने संविधान में देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी की संघ की राजभाषा का सम्मान दिया। हिन्दी को सम्मान इसलिए दिया गया क्योंकि भारत में इस भाषा को बोलने एवं समझने वाले बहुसंख्यक हैं। राजभाषा के रूप में हिन्दी राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से सम्पूर्ण राष्ट्र की वाणी है, जो भारत को एकता के सूत्र में बाँधने का कार्य कर रही है। सरकारी काम-काज की भाषा के रूप में यह सरकार और जनता को मिलाती है। लेकिन इसके बावजूद हिन्दी को आजतक पूर्णरूप से राष्ट्रभाषा का दर्जा नहीं मिल सका यह अत्यंत खेद का विषय है। हमें अपने निजी स्वार्थ से ऊपर उठकर राष्ट्र हित के लिए हिन्दी को राष्ट्रभाषा की मान्यता हेतु विशेष प्रयास करना होगा। इस दिशा में हर प्रान्त में हिन्दी का प्रयोग और प्रसार तेजी से होनी चाहिए।

उपरोक्त विषय को ध्यान में रखते हुए लेखिका ने **कर्नाटक में हिन्दी का प्रचार और प्रसार** नामक इस ग्रन्थ को प्रस्तुत किया। दक्षिण भारत के सभी राज्यों की तुलना में कर्नाटक ही एक ऐसा राज्य है जहाँ पर हिन्दी का विकास बहुत तेजी से हो रहा है। लेखिका ने अपने अथक प्रयास से कर्नाटक में हिन्दी की वर्तमान स्थिति का चित्रण बहुत सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है। सम्भवतः यह ऐसी पहली पुस्तक होगी जिसमें विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे हिन्दी के प्रचार और प्रसार को गहराई से अध्ययन कर लिखा गया है। यह ग्रन्थ हिन्दी भाषा के अध्येताओं के लिए सर्वथा उपयोगी सिद्ध होगा। फलतः सभी ग्रंथालयों में यह ग्रंथ संग्रहणीय है।



GANGA KAVERI PUBLISHING HOUSE

D. 35/77 JANGAMWADIMATH

VARANASI - 221001

ISBN 81-85694-60-5

Rs. 400